# पारापार

शीर्षेन्दु मुखोपाध्याय

अनुवाद वीरेन्द्र नाथ मिश्र

PAARAPAAR

Novel

by

Shirshendu Mukhopadhyay

□

Translation from Bengali

by

Virendra Nath Misra

प्रकाशक

प्रबीर कुमार मजुमदार

न्यू बंगाल प्रेस ( प्रा० ) लि०

68, कालेज स्ट्रीट,

कलकत्ता-700073

□

आवरण गौतम राय

प्रथम प्रकाश—1985

मुद्रण

वी० सी० मजुमदार

न्यू बंगाल प्रेस ( प्रा० ) लि०

68, कालेज स्ट्रीट,

कलकत्ता-700073

मूल्य सत्तर रुपये

Price : Rupees Seventy Only

संघर्ष या संप्रीति एक विवादास्पद प्रश्न है। मानव उत्थान को दृष्टि म रखते हुए लेखक ने इस प्रश्न को सुलझाने की कोशिश की है। लोक कल्याण की भावना से अनुप्राणित तेज-तर्रार दलित श्रेणी संघर्ष के माध्यम से समाज का आमूल परिवर्तन चाहता है, पर मानवता का पुजारी रमेन प्यार का रास्ता अपनाता है। पारापार में सांस लेते चरित्रों म शायद आप भी एक चरित्र हैं।

—प्रकाशक

रा

पूज्य पिता मनीन्द्रलाल मुखोपाध्याय एवम् पूज्यनीया माँ गायत्री मुखोपाध्याय के चरण कमलों में सादर समर्पित।

—लेखक

## एक

*

ललित को अस्पताल से लिवाने सिर्फ दो आदमी आये—उसका लंगोटिया यार तुलसी और मकान मालिक का लड़का शंभू। उसने और किसी को खबर भी नहीं दी थी, अगर देता तो और भी लोग आते। उसने सोचा है, बहुत सोचा है और सोच-सोच कर इतना ही समझा है कि ऐसे वक्त लोगों की भीड़ लगाना बेकार है। हालांकि डाक्टरों ने साफ-साफ तो कुछ भी नहीं कहा, फिर भी वह जानता है कि वह रोग-मुक्त नहीं हुआ है। सिर्फ चंद दिनों की राहत मिली है, बस। इसमें खुशियां मनाने जैसी कोई बात नहीं।

पेट का वह पुराना दर्द तो अब नहीं रहा, मगर बिस्तर से लिफ्ट तक आने में टांकों की टनक वह महसूस कर रहा था। पुराने दर्द की तुलना में आज की टनक कोई अहमियत नहीं रखती। यही कारण है कि शंभू या तुलसी के कंधों का सहारा लिये बगैर वह आहिस्ते-आहिस्ते लिफ्ट तक आया।

लंबे अरसे से अस्पताल के बिस्तर पर लेटा पड़ा ललित सोचता रहा है कि अस्पताल की चौहद्दी पार करते ही वह तरोताजा हो उठेगा। खुली हवा और खुली रोशनी की छुअन उसे नयी जिंदगी देगी। लोगों की आपाधापी और ट्राम-बसों की भाग-दौड़ में अचानक उसका पुराना ललित उभर आयेगा। उसके तन मन में उसका चिरपरिचित कलकत्ता तार-यंत्र की तरह झंकृत हो उठेगा।

लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। विदा लेते सूरज की रोशनी उसकी आंखों में समा गयी। ट्राम-बसों की भाग-दौड़ और लोगों की रेल-पेल में चारों तरफ एक विचित्र किस्म का संगीत झंकृत हो रहा है; पर उसे अपने अंग-प्रत्यंग शिथिल होते महसूस हो रहे हैं। न तन में स्फूर्ति है, न मन में उमंग। हथेली की आड़ से उसने देखा, सड़क के उस पार कालेज की विशाल इमारत पर जहां-तहां लाल स्याही से लिखे पोस्टर चिपके हैं, टेलीफोन के तार पर बैठा एक कौआ कांव-कांव कर रहा है। बस, वही पुराना-धुराना कलकत्ता।

तुलसी थोड़ा आगे बढ़ कर फुटपाथ के किनारे खड़ा टैक्सी का इन्तजार कर रहा था। ललित हांफने लगा था। सीधे खड़ा रहने में उसे तकलीफ महसूस हो रही थी। उसने शंभू के कंधों का सहारा लिया। आश्चर्य है, मनभावन शरद में भी ललित पसीना-पसीना हो रहा था। शंभू का एक हाथ पीठ की ओर से उसे थामे था।

भागती-दौड़ती जिंदगी के बीच खड़ा ललित सब कुछ भूल गया। अब तो उसका मन भी यह मानने को तैयार नहीं कि पिछले दो महीनों से वह अस्पताल की चहार-दीवारी में कैद था, बल्कि उसे तो अब ऐसा लग रहा है कि आज सुबह-सुबह वह इसी रास्ते से पैदल गुजरा है। कितना पुराना, कितना अपना कलकत्ता! न जाने क्यों ललित को कलकत्ता कभी पुराना नहीं लगा। कलकत्ता में उसने सिर्फ आज देखा है, कल नहीं।

पिछले दो महीनों से वह सिर्फ मां की चिंता में घुलता रहा है। इस दरमियान मां कई बार उससे मिलने आयी है। शंभू या तुलसी के आते ही वह मां की खोज-खबर लेता। लेकिन आज वह भूल गया। आज का दिन ही कुछ और है—सब कुछ भुलाया जा सकता है। लेकिन टैक्सी खड़ी कर तुलसी ने जब दरवाजा खोल कर आवाज दी, 'आओ ललित' अचानक उसे मां याद हो आयी और वह पूछ बैठा, 'मां कैसी है शंभू?'

'अच्छी हैं!'—शंभू मुस्कुराया।

मन-ही-मन 'अच्छी-अच्छी' दुहराता हुआ ललित टैक्सी में बैठा। कम्पवात और गठिया से पंगु बनी मां चल-फिर नहीं सकती। उसने कभी मां का ख्याल भी न रखा। मां दिन-रात घर रहती थी और वह सुबह से काफी रात गये तक बाहर। अभी-अभी टैक्सी में पसरा ललित सोच रहा है कि अब वह ज्यादा-से-ज्यादा वक्त मां के साथ गुजारेगा। तुलसी की ओर मुड़ कर वह बोला, 'सिगरेट है?'

'है!'—

'लोगे?'

'दो न!'

तुलसी ने थोड़ा सोचा, फिर चारमीनार की डिबिया और माचिस बढ़ाते हुए बोला, 'लो, अब क्या होगा! अब तो अच्छे हो गये हो।

'अच्छे हो गये हो'—उसने मन-ही-मन दोहराया और एक फीकी मुस्कान उसके चेहरे पर एक अजीब-सा दर्द छोड़ गयी। मन-ही-मन वह फुसफुसाया, 'कैंसर कभी अच्छा नहीं होता तुलसी। यह जिसे लग जाय, उसे अपने साथ लिए जाता है। देखना, दो-चार महीनों में ही तुम्हें मेरी अरथी उठानी होगी।'

सिगरेट का स्वाद उसे याद नहीं आता। धुआं कड़ुआ लगता है और गंध बर्दाश्त नहीं होती। उसने देखा, सामने की सीट पर बैठा शंभू एकटक रास्ते की ओर देख रहा है। तुलसी भी मुंह बाहर किये बैठा है। दोनों गंभीर हैं, चिंतित हैं। लेकिन वह खुद को हल्का रखना चाहता है। गंभीरता का बोझ अब बर्दाश्त नहीं होता। चुप्पी में वह घुटन महसूस करता है।

'क्या शंभू, जिमनासियम जाते हो न? श्री-फ्री कुछ मिली है?'—चुप्पी भंग करने की खातिर वह बोला।

ललित की ओर मुंह घुमा कर शंभू सिर्फ मुस्कुराया, कुछ बोला नहीं।

अकेले ललित बोले जा रहा है। 'तुलसी, इस गरीब देश में शंभू अकेले चार आदमी का खाना डकार जाता है। सरकार को जिमनासियम बंद कर देना चाहिए। सुबह से शाम तक बासी भात, पालक साग, लाल आटा की रोटी और न जाने क्या-क्या। यह तो अपनी सेहत बना रहा है और सारा घर इसकी फरमाइशें तले दब-दब कर दुबला हो रहा है। अच्छा शंभू, मौसी क्या अभी भी तेरी फरमाइशों से परेशान हो खिचखिच किया करती हैं?'

शंभू हंसते-हंसते बोला, 'नहीं। कुछ दिनों से मां की किचकिच बन्द है। मैं सार्जेंट के लिए चुना गया हूं न। अब खूब खिलाती हैं।'

शंभू ने बड़ा सटीक जवाब दिया था। बातों का सूत्र पकड़ कर वह मुस्कुराते हुए बोला, 'सार्जेंट। यानी लाल मोटर साइकिल और कमर में लटकती पिस्तौल। छि यह भी कोई नौकरी है।'

'क्या?'

'क्या क्या, कलकत्ता के सार्जेंट ट्राफिक कंट्रोल के सिवा और करते ही क्या हैं?'

शंभू ठहाका मार कर हंस पड़ा। तुलसी ने हाथ बढ़ा कर ललित की कलाई दबाई, 'ज्यादा बात न कर ललित।'

'क्या?'

तुलसी चुप रहा। ललित ने कनखियों से उसे देखा। शायद डाक्टर ने उसे कुछ कहा है। क्या कहा है—उसका चेहरा देखते ही वह समझ गया। आजकल के बच्चे भी इस रोग का अंजाम जानते हैं। तुलसी इसलिए इतना गंभीर है। वह तो इतना चिन्तित है कि ललित को भुलाए रखने का औचित्य तक भूल गया।

रासबिहारी एवेन्यू की लाल बत्ती जली और टैक्सी रुक गयी। आगे डबल डेकर, पीछे डबल डेकर और न जाने कितनी गाड़ियां। अचानक ललित की टैक्सी के दायीं ओर एक भारी-भरकम ट्रक आ खड़ा हुआ और उसे अपनी टैक्सी असहाय प्रतीत होने लगी। क्या पता उसे पीली बत्ती इतनी प्यारी भाती है। पीली बत्ती जलते ही वह अपने

अन्दर एक अजीब सी गुदगुदी महसूस किया करता है। दो महीने बाद वह कलकत्ता देख रहा है। पीली बत्ती देखने को आँखें आतुर हो उठी हैं।

शम्भू टैक्सीवाले से सीधे चलने कह रहा था कि ललित बोल उठा, 'नहीं, शम्भू, बायें लेने कहो।'

'क्या ?

'बहुत दिनों से कलकत्ता नहीं देखा, थोड़ा घूम-फिर कर चलेंगे।'

'फालतू का मीटर उठेगा।'

'उठने दो।'—तुलसी पलट कर बोला।

शम्भू का कोई दोष नहीं। शम्भू ने टैक्सी सीधे ले चलना सीखा है। जरूरत पड़ने पर ही शम्भू वगैरह टैक्सी पर चढ़ते हैं। इसलिए टैक्सी पर बैठ कर भी वे शांत नहीं रहते। हमेशा खयाल रहता है कि ड्राइवर घुमा-फिरा कर न ले चले। यही कारण है कि तुलसी की ओर देख कर ललित मुस्कुराया।

पता नहीं तुलसी ने समझा या नहीं। सिर्फ आहिस्ते से बोला, कहाँ जाओगे ?

ललित ने जवाब नहीं दिया। वह मन-ही-मन तुलसी के बारे में ही सोच रहा था। उसे सदेह हो रहा था कि तुलसी अब उसका दोस्त रहा या नहीं। दो महीनों में तुलसी बहुत बदल गया है। वह अब बाप-दादे जैसा व्यवहार करने लगा है। दो महीनों में वह ललित का अभिभावक बन बैठा है। उसे इच्छा हुई कि तुलसी से पूछे, तुलसी तुम्हें क्या कहूँ, 'चाचा या ताऊ ?' लेकिन उसने पूछा कुछ नहीं। सिर्फ मन-ही मन मुस्कुराया।

तुलसी कलकत्ता से बाहर एक स्कूल में नौकरी करता है। रोज आता-जाता है। पिछले महीने जब कि ललित अस्पताल में ही था, तुलसी की शादी हो गई। इतनी सारी व्यस्तताओं के बीच भी तुलसी अक्सर अस्पताल में उससे मिलने आया है। उसकी माँ की भी खोज-खबर लेता रहा है। अस्पताल में तुलसी ही उसका एकमात्र भरोसा था। अभी तुलसी का चेहरा-मोहरा देख कर उसे इच्छा हो रही थी कि तुलसी को साला कहे या उसकी पत्नी को लेकर मजाक करे। लेकिन उसने कुछ भी न किया। उसे शर्म आ रही थी।

'कहाँ जाओगे ?'—तुलसी ने फिर पूछा।

'ज्यादा दूर नहीं। गड़ियाहाट से लेक होते हुए साउथर्न एवेन्यु पकड़ कर घर चलेंगे।'

पलट कर शम्भू बोला, 'मौसी आपके इन्तजार में बैठी हैं। जल्दी-से-जल्दी आपको साथ ले वापस आ जाऊँगा—कह कर रखवाने पर बैठा आया हूँ। बिना आपको देखे, दरवाजे से नहीं टलेंगी।

अलसायी आंखों से ललित ने शंभू की ओर देखा और अचानक उसे इच्छा हुई कि बोले, मां तो तब से मेरे इन्तजार में बैठी हैं, जब मैं पैदा भी नहीं हुआ था। इतनी-सी देर मां बर्दाश्त कर लेगी।

लेकिन इस तरह की दार्शनिक बातें शंभू के पल्ले नहीं पड़तीं—सोच कर वह चुप रहा। सिर्फ उसके चेहरे पर मलिन मुस्कान बिखर गई। आंखें बंद हो गयीं। और टैक्सी उसकी इच्छानुसार चलती रही।

बीच बीच में ललित आंखें खोल कर देख लेता था। गड़ियाहाट पीछे छूट गया। लेक के किनारे वाली सड़क पर टैक्सी भागी जा रही है। बायीं ओर मुड़ी और टालीगंज रेल-पुल के नीचे से निकल गयी। ललित की आंखों में प्रसन्नता उभर आयी। बाबू मार्केट, भवानी सिनेमा, मस्जिद—सब कुछ पहले जैसा है। ललित को लगा कि वह लम्बी कैद के बाद अपनी दुनिया में आया है। अनवरशाह रोड पर टैक्सी दौड़ पड़ी और कुछेक क्षण में ही एक तंग गली में शंभू के मकान के सामने आ रुकी।

तुलसी उतरा और दरवाजा खोल कर दरवाजा पकड़े खड़ा रहा। न जाने क्यों तुलसी का व्यवहार ललित को अच्छा न लगा। तुलसी अति पर उतर गया है। अति भला किसे अच्छा लगता है! इसलिए जमीन पर पैर रखते ही ललित ने जोर से दरवाजा बन्द किया—भड़ाक।

मकान के बरामदे पर आरामकुर्सी में पसरे राय बाबू आंखों के सामने से किताब नीचे उतार कर बोले, 'अरे ललित! तुम!'

ललित मुस्कुराया।

वह बोले, 'तुम तो अब एकदम अच्छे हो गये हो। सेहत भी अच्छी हो गई है।'

ललित चुप रहा, सिर्फ मुस्कुराया।

राय बाबू सिर हिला कर बोले, 'वाह! बहुत अच्छा।'

टैक्सी का दरवाजा बंद करने की आवाज सुन कर सामनेवाले कमरे का दरवाजा भी खुल गया था। दरवाजे पर खड़ी शंभू की मां मधुर मुस्कान में बोलीं, 'आ गये ललित।'

ललित हंसा। खुले दरवाजे से अन्दर का माहौल दीख रहा था। बहू-बेटियां की भीड़ लगी थी। और उस भीड़ में मां की ऐनक के दोनों शीशे झकमका उठे। मां पड़ोसिनों में घिरी बैठी है।

अब ललित को थोड़ी-थोड़ी शर्म लगने लगी थी। शंभू के कमरे में पड़ोसिनों के बीच बैठी मां उसे पाकर क्या करेगी—वह सोच नहीं पाता। उसे छाती से लगा कर रोयेगी, विलाप करेगी—मां कुछ भी कर सकती है।

लज्जा और संकोच से बाभिल कदमों में वह दरवाजे पर आ खड़ा हुआ। शंभू की मा ने आवाज दी, 'आओ ललित, अन्दर आओ।'

लेकिन वह चुप खड़ा रहा। दरअसल अन्दर जगह भी नहीं है। मां एक कुर्सी पर बैठी है। फर्श और चौकी पर मां की हमउम्र औरतें बैठी हैं। इनमें कोई सधवा है, कोई विधवा। मां का खालीपन इन औरतों से ही भरता है। जब वह घर पर नहीं होता तब मां के साथ इन औरतों की बैठक जमती है। इसलिए ललित मां की ओर से निश्चिन्त रहता है। आज ये आयी हैं ललित को देखने। ललित कैसा अच्छा होकर आया है?

ललित ने मा को देखा। एक झलक में ही पता चलता है कि मां बहुत बदल गयी है। ऐसी बात नहीं कि मां पहले से ज्यादा दुबली या बुड्ढी हो गयी है। नहीं, ऐसी बात कतई नहीं। लेकिन न जाने क्या अचानक उसे लगा कि मां और ज्यादा बेवकूफ बन गयी है। थोड़ा खुला मुंह और आंखों में बाघ बुद्धिहीन दृष्टि। निचला होठ थोड़ा कांप रहा है। मां की आंखें उसके चेहरे पर जमी हैं। अचानक उसका दिल धक कर उठा, 'मां सच्चाई जान गयी है क्या?'

मरियल हाथों से कुर्सी के हत्थों पर भार डालती हुई मा उठने की कोशिश कर रही थी। बैठने पर मां आसानी से उठ नहीं पाती। गठिया कमर जकड़ लेता है। मा के पास खड़ी हो शंभू की मां मुस्कुरा कर बोलीं, 'देखो दीदी, ललित कैसा लाल होकर आया है।'

सब उसे देख रहीं हैं और ललित उनकी आंखों में निश्चिन्तता देख रहा है। उसे सन्देह होता है कि इनमें से कोई भी उसकी बीमारी के बारे में सही-सही जानती है या नहीं। मां को भी नहीं बताया गया है। बताने पर भी वह समझ पाती या नहीं, कौन जानता है। वह तो सिर्फ यही जानती है कि उसे कोई असाध्य रोग हुआ था जो अब अच्छा हो गया है।

चश्मा खोलकर मां अपने थान के पल्लू से अपनी आंखें पोंछ रही थी। न जाने यह दृश्य वह कितनी बार देख चुका है। मा जरा-जरा सी बात पर रो पड़ती है। आंखों में जैसे आंसुओं का सागर लहराता है। ललित कभी मा के आंसुओं से विचलित नहीं हुआ। लेकिन आज उसका हृदय विलख उठा।

'मा के पास आओ ललित।'—ठंडी-ठंडी आवाज में बोलीं मितु की दादी मां। हां, मितु को वह कभी बेहद चाहता था। पल दो पल उनकी आंखें एक एक चेहरे पर जम जाती थीं। सबकी आंखों में वह था। उसकी आंखों में सब थीं। इनमें से कोई मितु की दादी थीं, कोई मुनु की फूफी, कोई बीरु की मां। इन दिनों में ही इनका परिचय सिमटा है। नाम पुकारनेवाला कोई नहीं। बुढ़ापा से

जर्जर शरीर। ये हृदय से आशीर्वाद देती हैं, अभिशाप देती हैं पर न आशीर्वाद फलता है, न अभिशाप लगता है। उसके सिवा उसकी माँ का और कोई नहीं। मा के सिवा उसका अपना कोई नहीं। इन अपराधों के बीच उसे अपनी मा सबसे ज्यादा असहाय प्रतीत हुई। मा के भविष्य की चिंता कर वह काँप उठा।

अन्दर जाने की इच्छा उसे नहीं हो रही थी। अन्दर बुढ़ापा था, घुटन थी। वातावरण बड़ा बोझिल था। और फिर तुलसी भी तो बाहर खड़ा था।

मा का रोना दुख का रोना नहीं था—यह समझते उसे थोड़ी देर लगी। उसने और कभी मा को सुख में रोते नहीं देखा था।

डगमगाते शरीर से मा उठ खड़ी हुई। घिसे पिटे पोपले चेहरे पर अद्भुत मुस्कान बिखेरती हुई मा ने सबसे अनुमति मागी, 'ललित को घर ले जाऊं'

ललित समझ गया कि अनुमति माग कर मा ने उसके लिए सबसे आशीर्वाद की भीख माग ली। सबने मां के प्रति आंतरिकता प्रकट की। दरवाजे तक सब मां को पहुँचा गयीं। मितु की दादी मुह बढ़ाकर बोलीं, 'ललित की मा, अब लड़के की शादी कर दो।'

ललित के सहारे चलते-चलते मा मुह घुमा कर बोली, 'ललित तुम्ही लोगों का लड़का है बहन। मैं न चल फिर सकती हूँ, न आंखों से देख सकती हूँ। लड़की देख सुन कर शादी करा दो।'

सब बोल उठीं। ललित बहुत अच्छा लड़का है। सबने ललित के लिए लड़की देखने का आश्वासन दिया। मितु की दादी मा बोलीं, ललित किसी को पसंद करता हो तो पता लगा कर कहना।

ललित का मन बुदबुदाया, 'पसंद थी मितु। उसकी तो शादी हो गयी।'

मा ने तुलसी की ओर एक हाथ बढ़ाया, 'बेटे, ललित को वापस ले आये।'

शंभू के घर के पीछे ललित का घर है। तंग गली से होकर जाना पड़ता है। ताला खोलते-खोलते मां तुलसी से बोलीं, 'बेटा, दिन-रात घर पर पड़ी रहती हूँ। ललित बाहर घूमता रहता है। कलकत्ता में कितना कुछ है। कालीघाट, रामकृष्ण मठ, भजन-कीर्तन, भागवत पाठ। सब जाती हैं, सिर्फ मैं चुपचाप पड़ी रहती हूँ। घर में बैठे-बैठे सारा शरीर गठिया से जकड़ गया। ललित के लिए कोई अच्छी-सी लड़की देख न।'

गठिया से भरा मा का शरीर, फिर भी सफाई में कोताही नहीं। साफ-सुथरा झकझकाता कमरा। ललित के तख्त पर साफ-सुथरी चादर।

ललित थोड़ा हांफ रहा था। बिस्तर पर बैठते-न बैठते लम्बा हो गया। बोला, 'मां, एक गिलास पानी।'

'देती हूँ।'—कह कर तुलसी से बतियाने लगी, तुम इसे समझाओ तुलसी। क्यों, मास्टर क्या शादी नहीं करते ? तुम ने नहीं की ? बेटे, अपने गाल का शादी के लिए तैयार करा। तुम्हारे समझाने से ही समझेगा। मेरी न कभी सुनी है, न सुनेगा। तुम ता

खिड़की के बाहर अमरूद की एक हरी भरी डाल। खिड़की से लगता पुराने माडल का पखा घर घर घूम रहा है। दीवार पर सूर्यास्त और तीन नौकाओं वाला कैलेंडर फड़फड़ा रहा है। सब कुछ पहले जैसा ही है। कुछ भी नहीं बदला। आच्छन्न आंखों से ललित कैलेंडर देख रहा था।

और कुछ महीनों बाद इसी कमरे में, इसी बिस्तर पर साढ़े-साढ़े वह मर सकता है।

मां तुलसी से बोल रही थी। ललित की समझ में कुछ भी नहीं आ रहा था। सिर्फ मां की आवाज उसे सुनायी पड़ रही थी। अचानक आज उसे महसूस हुआ, यह आवाज उसे बेहद प्यारी है। और भी बहुत कुछ उसे प्रिय था। उनमें से कोई झरोखों पर झुकी अमरूद की डाली या दीवार पर फड़फड़ाती सूर्यास्त की तस्वीर जैसा कुछ था। अपने दायरे में उसे बहुत कुछ प्रिय था। दायरे के बाहर वह सोचता भी कम था।

करवट में लेटा वह मां को देख रहा था। बुढ़ापे गठिया की मारी एक बुढ़ी औरत। रह रह कर पल्लू से नाक पोंछने की आदत। यही उसकी मां है।

उसने एक गिलास पानी मांगा था। मां देना भूल गयी। फिर मांगने की इच्छा न हुई। उसने करवट ली और आहिस्ते-आहिस्ते तंद्रा में डूब गया।

मा तुलसी से बोल रही थी। एक ही जैसी आवाज में बोले जा रही थी। अब ललित सुन नहीं रहा था। पलकें बोझिल होते-होते ठीक शिशु के होठों की तरह एक दूसरे से चिपक गयी थीं। लेकिन अंदर से वह सजग था। उसकी सारी चेतनाएं सजग थीं। वह सोच रहा था, एक तल्ले मकान के इस तंग कमरे में गठिया की मारी बुढ़िया मां के साथ अपनी जिंदगी के चन्द दिन वह क्यों कर गुजारेगा। शायद वह खुद को बड़ा अकेला महसूस करेगा। बीच-बीच में प्रवीण मुखर्जी लिए चिन्तित तुलसी अभिभावक की भूमिका अदा करने आयेगा। मजाक का जवाब फीकी मुस्कान में देगा।—बैठक नहीं जमेगी। मां रसोईघर की चौखट तक तुलसी को खींच ले जायेगी। पीढ़े पर बैठायेगी। और फिर शुरू हो जायेगी। दुखड़ा रोयेगी और न जाने क्या क्या बोलती रहेगी। तुलसी गंभीर बना सुनता रहेगा। बीच-बीच में हां-हूँ करेगा। तुलसी से मां की अच्छी पटती है। अक्सर वह ललित को तुलसी का उदाहरण दिया करती है। हाँ, वह

खुद को अकेला महसूस करेगा। हो सकता है वह कभी-कभार मुहल्ले में निकले। दो-चार घर से मां की संगिनियों में से कोई आवाज देगी, 'ललित! कहां जा रहा है? आ बेटा, अंदर आ!'—और फिर मां का रोना शुरू होगा। आदमी बनने की नसीहत देगी। 'बेटा, आदमी को सब कुछ करना चाहिए। कुछ भी छोड़ने का नहीं। हर काम का मतलब होता है बेटा। जरा मां को देखो। बेचारी के जीवन में अब क्या है? तुम्हीं बोलो, क्या है? इतना बड़ा ग्रह कट गया। अब जल्दी-से-जल्दी विवाह कर ले बेटा। कम से कम बेचारी बहू का मुंह देख कर तो मरेगी। ललित यह जानता है गली की किसी सुनसान जगह खड़ा हो वह छोटी-छोटी बच्चियों का एक्का-दुक्का खेलना देखेगा। हो सकता है कुछेक क्षण देखने के बाद पीछे से किसी की चोटी खींच लेगा। बच्ची खीझ कर देखेगी और वह बोल उठेगा, 'कैसी है री टगर?' मुहल्ले के टी-स्टाल में भी वक्त गुजारा जा सकता है। वहां मुहल्ले की छोकरों की बैठक जमी रहती है। उनमें से कोई उसका दोस्त नहीं है। सब परिचित हैं। थोड़ा अदब करते हैं। फिर भी उनके साथ वक्त तो गुजर ही सकता है। स्कूल से उसने लम्बी छुट्टी ले रखी है, हो सकता है थोड़ा और अच्छा महसूस करते ही वह स्कूल जाय। शायद पहले जैसा ही उसे स्कूल जाना अच्छा न लगे, पर वक्त तो गुजर ही जायेगा। वक्त! अब वक्त ही भला कितना है!

वह मां और तुलसी की आवाज सुन रहा था। चाय के प्याले में चम्मच चलाने की आवाज। मां तुलसी के लिए चाय बना रही है। उसने उधर ताका तक नहीं। उसकी पलकें परस्पर चिपकी रहीं। यह ठीक है कि दो महीने बाद आज की वापसी में जरा भी खुशी नहीं। लेकिन मितु अगर उसकी घरवाली होती! सोचते ही उसके तन-बदन में पुलक की लहर दौड़ गयी। मितु होती तो—मितु होती तो—लेकिन मितु तो उसकी हुई नहीं।

होने की बात भी न थी। मितु बड़े घर की बेटी है। गेट पर बोगनबेलिया की झाड़ और गैरेज में एक छोटी-सी गाड़ी। खुद का बड़ा हताश महसूस करता था ललित। कभी-कभार स्कूल जाते वक्त मितु दीख जाती थी। उसे ऐसा लगता था कि वह मितु के लिए सब कुछ कर सकता है। सब कुछ! जरूरत पड़ने पर दो-चार कत्ल कर सकता है, बम मार कर दो-चार मकान उड़ा सकता है। मितु के लिए वह हजारों आदमियों से लोहा ले सकता है। आश्चर्य है, मितु के साथ वह कभी दो-चार बात भी न कर सका। बड़ा अच्छा लड़का था ललित—धीर, शांत, लजीला और डरपोक। मितु से बात करने जैसा पाप वह कभी न कर सका। हां, मितु को देखते ही उसका मन मचल जाता, मुंह का पानी सूख जाता। और मु... वह मन-ही-मन मितु का संग पकड़ता, मन-ही-मन आवाज देता, 'मितु,

मा पहले भी शादी की बात उठाती—सात साल पहले भी। वह जवाब नहीं देता, सिर्फ मन-ही-मन मितु को याद करता। मितु होने पर—मितु होने पर—'

शायद मा को पता चल गया था। कैसे चला था—वह नहीं जानता। शायद किसी ने कहा होगा कि स्कूल जाते वक्त ललित रास्ते पर मुंह हा किये खड़ा रहता है। यह भी हो सकता है कि नींद में वह कभी मितु-मितु बक रहा हो। उन दिनों की दीवानगी में उसने कब क्या किया था, कौन जानता है।

खैर, जैसे भी हो, मा को पता चल गया था। मां ने ललित से कुछ नहीं कहा था। एक दिन जब ललित घर पर नहीं था, मा मितु को बुला लायी थी।

उसे बुलाने का नतीजा अच्छा नहीं हुआ। अब तक जो सिर्फ उसका अपना था, बड़े भद्दे ढंग से वह पूरे मोहल्ले में फैल गया। मा ने मितु से क्या कहा वह नहीं जानता। वह तो सिर्फ यही जानता है कि मितु राजी नहीं हुई थी।

शायद मितु बेहद खफा हुई थी। खरी-खोटी सुना कर मां से बोली थी, 'घर बुला कर इस तरह की बातें करते आपको शर्म नहीं आती। पिताजी सुनेंगे, तो बेहद नाराज होंगे।'

लेकिन ललित की बेवकूफ मां खुशामद कर रही थी, 'जरा आंख उठा कर मेरे ललित का चेहरा देख मितु। बच्चा कितना मुरझा गया है। राजी हो जा बेटी, तेरे मां-बाप को मैं मना लूंगी।

यह सब सुन कर मितु शायद और गुस्सा गयी थी। उसका गुस्साना जायज भी था। वह तो बचपन से जानती थी कि वह बड़े घर की बेटी है और बड़े घर जायगी। निश्चित भविष्य से अपने को इस तरह चुराये जाने की कोशिश करते देख वह शायद आपे से बाहर हो गयी होगी, 'छि मौसी! आपको शर्म आनी चाहिए। मा सुनेगी, तो बहुत गुस्सा होगी।'

लेकिन मां फिर भी गिड़गिड़ायी होगी, 'देखना मितु, तेरा संसार बड़ा सुखमय होगा। ललित की कुंडली में तीस के बाद राज-सुख है। तुम रानी की तरह रहोगी। मैं तुम दोनों के सारे दुख-कष्ट साथ ले जाऊंगी। मैं तो अब चंद दिनों की मेहमान हूं बेटी।

और फिर वह शायद रो पड़ी होगी। किसी जादूगरनी की तरह बुढ़िया उसे अपने जाल में फंसा रही है, यह सोच कर शायद गिड़गिड़ायी होगी, 'पांव पड़ती हूं मौसी। मुझे जाने दो।' या गुस्से में तिलमिला कर बोली होगी, 'आप हमारे घर से कोई सरोकार मत रखिये। पिता जी से कहूंगी, तो आप मुसीबत में पड़ जायगी। भाभी मां से कह दूंगी कि वह आप से मेल-जोल न रखें।'

उस दिन मितु के जाने के बाद मां बहुत भयभीत हुई थी। ललित को अगर पता चल जाय? रात म घर वापस आने पर ललित ने देखा था, गरमी म भी मां चादर ओढ़े सोयी है।

'क्या हुआ मां?'

'मुझे बुखार है ललित। खाना रखा है, निकाल कर खा ले।'

कपाल पर हाथ रख कर ललित बोला था, 'कहां, बुखार तो नहीं है।'

'है रे है। जोरों की ठंड लग रही है। दोपहर से पड़ी हूं।'

उस रात न जाने मां क्या-क्या बोल रही थी। ललित ठीक-ठीक समझ नहीं पाया था। जानने पर ललित दुखायेगा, यह सोच-सोच कर उस रात बुढ़िया को सचमुच म बुखार आ गया था।

तंद्रा भंग होने पर ललित ने देखा, कमरे म कोइ नहीं है। तुलसी चला गया है। वह आहिस्ते-आहिस्ते उठा। अब उसे ताजगी महसूस हो रही है। वह अदरवाले दरवाजे के पास जा खड़ा हुआ। उसने देखा, अमरूद के पेड़ तले मड़ैयानुमा रसोई घर म मां बुत बनी बैठी है। शायद वह अपने सुखद अतीत म डूबी है। दरअसल अब मां उसे बुजुर्ग महिला नजर नहीं आती। दिन भर गाय-बछड़ी की तरह कुबड़ी बनी मां घर सम्हालती रहती है। खोज-खाज कर गदगी निकालती है। न जाने कितनी बार झाड़ू बुहारू करती है। अकारण ही बिस्तर की चादर ठीक करती है। और कभी कभी उसकी आखों म अजीब-सा खालीपन उभर आता है। उस समय मां का पोपला चेहरा बच्चों सा मासूम हो जाता है। उस समय उसकी समझ म कुछ भी नहीं आता। कभी कभार उसने मां को सोयी हालत म भी देखा है। घुटने समेट कर वह बेहोश सोती है। कभी कभार उसके सोये चेहरे पर मुस्कान बिखर जाती है। उस समय ऐसा लगता है कि मां सपना देख रही है— अपने सुखद अतीत का सपना। दूर, बहुत दूर के किसी शहर या गांव का सपना— हकीकत से जिसका कोई सबंध नहीं।

मां अक्सर भूल जाती हैं। तीसरे पहर ललित ने एक गिलास पानी मांगा था, वह भूल गयी।

और कुछ महीनों म अगर ललित मर जाय, कौन उसकी इस शिशु मां को देखेगा।

उसने मां को आवाज न दी। फिर कमरे म वापस आ गया। अकेला लगता है, बहुत अकेला।

## दो

*

शंभू गली के नुक्कड़ पर खड़ा था। तुलसी को आते देख साथ हो लिया।

'जा रहे हैं तुलसी दा?'

'हूं।'

तुलसी ने जरा गौर से देखा, शंभू का हुलिया बदल गया है। सस्ते पैंट और बुशशर्ट में वह अस्पताल गया था। अब वह गाढ़े रंग के पैंट और टेरीलीन शर्ट में था। चेहरा भी थोड़ा चमक रहा था। शायद साबुन लगा कर नहाया हो, स्नो पाउडर भी लगाया हो। शंभू के चेहरे पर मूर्खों जैसी तृप्ति का भाव चिपका रहता है। उसके चौकोर चेहरे और मोटे मोटे होठों में एक दबी हुई नृशंसता झलकती है। यह तुलसी का दृष्टि-दोष भी हो सकता है। दरअसल अच्छी तन्दुरुस्ती की वजह से शंभू कभी-कभार दैत्य-सा भयंकर लगता है। चौड़ी छाती मुग्दर जैसे हाथ, पतली कमर और भैंसा जैसे कंधे। कंधों तक घने लंबे बाल। सज धज कर भी शंभू जितना सुंदर लगता है, उससे ज्यादा भयंकर दीखता है।

'आप ढाकुरिया रहते हैं न?'

तुलसी ने सिर हिलाया। शंभू साथ साथ चल रहा था।

'कैसा देख रहे हैं?'

'अच्छा। फिलहाल कोई चिंता नहीं।'

'डाक्टर क्या कहता है?'

'अगर कुछ होना हुआ, तो कुछ महीनों में रिलैप्स करेगा।'

'आपको कैसा लगता है?'

तुलसी असहाय-सा बोला,- 'क्या बताऊं!'

'ललितदा इस उम्र में मर गये, तो बड़ा बुरा होगा।'

तुलसी चुप रहा। शंभू के साथ-साथ चलना उसे बड़ा अजब लग रहा था। वह दुबला पतला, काला-कलूटा और ठिगना था। हां, शादी के बाद उसके चेहरे

पर थाडी रौनक आयी है, रग भी थोडा साफ हुआ है। लेकिन फिर भी कमरती शभू के साथ चलना उसे अजीब-सा लग रहा था।

गापाल की मनिहारी दुकान म पट्रोमैक्स जल रहा है। मुहल्ले के छोकरा की भीड लगी है। तुलसी शभू से बोला, जरा सिगरेट ले ल।'

कधे उचका कर शभू छोकरा के दल म भिड़ गया।

सिगरेट लेते-लेते अचानक तुलसी ने देखा, पजाबी पहने एक मरियल-सा आदमी उसे देख रहा है। आदमी के चेहरे पर बेचारगी और बुढ़ापे का भाव चिपका है। वह डरा-डरा सा लगता है। वह चौंक उठा। दूसरे ही क्षण उसे अपनी गलती महसूस हुइ। ऐसी जगह आईना टागने का कोइ तुक है।

छोकरा के दल से थोडी दूर पर खडा हो तुलसी ने पूछा, 'शभू, तुम चलोगे ?'

शभू छोकरा से बातें कर रहा था। पलट कर बोला, 'एक मिनट।'

शायद मुहल्ले मे काई झमेला हुआ है। शभू इन छोकरा का नेता है। उसके हाव-भाव से ही नेतागिरी टपकती है। तुलसी ने खीझ कर एक सिगरेट जलायी। शभू के लिए खडा रहा।

ललित को वापस ला सका है, भले ही कुछ दिनों के लिए—यह सोचना तुलसी को बड़ा अच्छा लग रहा था। अब ललित का भाग्य। जहा तक हा सकता है, उसने किया है। वह नहीं करता, तो कोइ और करता। न करने पर भी काई नुकसान नहीं था। इलाज ता अस्पताल म हा ही रहा था। वह ता सिर्फ ललित का ढाढस देने जाता था कि ललित टूट न पड़े। लेकिन कुछ ही दिनो म वह समझ गया था कि ललित का अतिरिक्त मनोबल की जरूरत नहीं। उसने अपनी बीमारी स्वीकार कर ली थी। वह जानता था कि च द दिना बाद ही वह इस ससार से विदा ले जायगा। इसलिए वह गभीर या उदास नहीं दीखता था, बल्कि तुलसी से मजाक किया करता था, 'क्या बेग, बड़ा गभीर दीखता है ? हाने वाली बीबी टली-झगड़ी ता नहीं ? भैया ने शादी के नाम से कहीं घर से ता नहीं निकाल दिया ?' यह सच है कि तुलसी कभी हस बाल नहीं सकता। उसे यह भी पता है कि वह गभीर स्वभाव का नहीं है। उसकी असली बीमारी यह है कि वह जरा-जरा-सी बात पर चिन्तित हो उठता है। छोटी-बड़ी हजारा चिंतायें उसे घेरे रहती हैं। उसका मन कभी दुश्चिन्ता मुक्त नहीं हाता। जिस दिन स्कूल नहीं जाता, उस दिन वह यही साचता रहता है कि दूसरे दिन स्कूल जाने पर हेडमास्टर उसका अपमान तो नहीं करेंगे। यह चिंता उसे इतना धर दबाचती है कि दिन भर वह उत्तेजित रहता है। अकेले म वह हेडमास्टर के साथ एक कल्पित सलाप तैयार करता रहता है

'क्या बात है, कल नहीं आये ?'

# दो

*

शभू गली के नुक्कड़ पर खड़ा था। तुलसी को आते देख साथ हो लिया।

'जा रहे हैं तुलसी दा?'

'हूँ।'

तुलसी ने जरा गौर से देखा, शभू का हुलिया बदल गया है। सस्ते पैंट और बुशशर्ट म वह अस्पताल गया था। अब वह गाढ़े रग के पैंट और टेरीलीन शर्ट म था। चेहरा भी थोड़ा चमक रहा था। शायद साबुन लगा कर नहाया हो, स्नो पाउडर भी लगाया हो। श भू के चेहरे पर भूखों जैसी तृप्ति का भाव छिपा रहता है। उसके चौकोर चेहरे और मोटे मोटे होठों म एक दबी हुइ हृगमना झलकती है। यह तुलसी का दृष्टि-दोष भी हो सकता है। दरअसल अच्छी तदुरुस्ती की वजह से शभू कभी-कभार दैत्य-सा भयकर लगता है। चौड़ी छाती मुग्दर जैसे हाथ, पतली कमर और भैंसा जैसे कधे। कधा तक घने लबे बाल। सज धज कर भी श भू जितना सु दर लगता है, उससे ज्यादा भयकर दीखता है।

'आप ढाकुरिया रहते हैं न?'

तुलसी ने सिर हिलाया। श भू साथ-साथ चल रहा था।

'कैसा देख रहे हैं?'

'अच्छा। फिलहाल कोइ चिंता नहीं।'

'डाक्टर क्या कहता है?'

'अगर कुछ होना हुआ, तो कुछ महीना म रिलैप्स करेगा।'

'आपको कैसा लगता है?'

तुलसी असहाय-सा बोला,- 'क्या बताऊ!'

'ललितदा इस उम्र मे मर गये, तो बडा बुरा होगा।'

तुलसी चुप रहा। शभू के साथ-साथ चलना उसे बड़ा अजब लग रहा था। वह दुबला-पतला, काला-कलूटा और ठिगना था। हा, शादी के बाद उसके चेहरे

पर थाडी रौनक आयी है, रग भी थोडा साफ हुआ है। लेकिन फिर भी अमरती शभू के साथ चलना उसे अजीब-सा लग रहा था।

गोपाल की मनिहारी दुकान मे पट्रोमैक्स जल रहा है। मुहल्ले के छोकरा की भीड लगी है। तुलसी शभू से बाला, जरा सिगरेट ले ल।'

कधे उचका कर शभू छोकरा क दल म भिड गया।

सिगरेट लेते-लेते अचानक तुलसी ने देखा, पजाबी पहने एक मरियल-सा आदमी उसे देख रहा है। आदमी के चेहरे पर बेचारगी और बुढ़ापे का भाव चिपका है। वह डरा-डरा-सा लगता है। वह चौंक उठा। दूसरे ही क्षण उसे अपनी गल्ती महसूस हुइ। ऐसी जगह आईना टागने का काइ तुक है।

छोकरा के दल से थोडी दूर पर खडा हो तुलसी ने पूछा, 'शभू, तुम चलोगे?'

शभू छोकरो से बातें कर रहा था। पलट कर बोला, 'एक मिनट।'

शायद मुहल्ले मे कोई झमेला हुआ है। शभू इन छोकरा का नेता है। उसके हाव-भाव से ही नेतागिरी टपकती है। तुलसी ने खीझ कर एक सिगरेट जलायी। शभू के लिए खडा रहा।

ललित को वापस ला सका है, भले ही कुछ दिना के लिए—यह सोचना तुलसी को बड़ा अच्छा लग रहा था। अब ललित का भाग्य। जहा तक हा सकता है, उसने किया है। वह नहीं करता, तो कोइ और करता। न करने पर भी कोइ नुकसान नहीं था। इलाज तो अस्पताल म हो ही रहा था। वह तो सिर्फ ललित का ढाढस देने जाता था कि ललित टूट न पड़े। लेकिन कुछ ही दिना म वह समझ गया था कि ललित को अतिरिक्त मनोबल की जरूरत नहीं। उसने अपनी बीमारी स्वीकार कर ली थी। वह जानता था कि चन्द दिना बाद ही वह इस ससार से विदा ले जायगा। इसलिए वह गभीर या उदास नहीं दीखता था, बल्कि तुलसी से मजाक किया करता था, 'क्या बात, बड़ा गभीर दीखता है? होने वाली बीबी लूली-लगडी ता नहीं? भैया ने शादी के नाम से कहीं घर से तो नहीं निकाल दिया?' यह सच है कि तुलसी कभी इस बोल नहीं सकता। उसे यह भी पता है कि वह गभीर स्वभाव का नहीं है। उसकी असली बीमारी यह है कि वह जरा-जरा-सी बात पर चिन्तित हो उठता है। छोटी-बड़ी हजारा चिंतायें उसे घेरे रहती हैं। उसका मन कभी दुश्चिन्ता मुक्त नहीं हाता। जिस दिन स्कूल नहीं जाता, उस दिन वह यही सोचता रहता है कि दूसरे दिन स्कूल जाने पर हेडमास्टर उसका अपमान तो नहीं करेंगे। यह चिंता उसे इतना धर दबोचती है कि दिन भर वह उत्तेजित रहता है। अकेले में वह हेडमास्टर के साथ एक कल्पित सलाप तैयार करता रहता है

'क्या बात है, कल नहीं आये?'

'जी नहीं।'

'क्या ?'

'काम था।'—तुलसी खीझ कर जवाब देगा।

'काम तो खैर रहेगा ही। लेकिन सिर्फ तीन महीना में आप सात रोज नागा कर चुके हैं। और भी तो काम पड़ सकता है, उस समय क्या करेंगे? और फिर आप तो जानते ही हैं कि कितने कम स्टाफ के साथ मैं स्कूल चलाता हूँ। समरजित बाबू भी कल नहीं आये। पूछने पर बोले, वक्त पर रसोई नहीं बनी इसलिए नहीं आये। बच्चों जैसी सफाई शिक्षकों के मुंह शोभा नहीं पाती तुलसी बाबू।'

और फिर तुलसी आग बबूला हो उठेगा। उबल कर बोलेगा, 'आप तो सिर्फ दूसरों का दोष देखते हैं। आप में भी सैकड़ों दोष हैं।'

'जैसे ?'

'ग्रांट के रुपयों से आपने साइंस लेबोरेटरी बनाई और हम सात महीनों की तनख्वाह नहीं मिली। विद्यार्थी नहीं हैं, फिर भी आप तीनों स्कीम चलाते हैं क्योंकि हर स्कीम के लिए आप पचीस रुपये भत्ता पाते हैं। साठ-सत्तर विद्यार्थी डिफाल्टर हैं लेकिन गार्जियन को खुश रखने की खातिर आप कोई स्टेप नहीं लेते।' ऐसी ही ढेर सारी बातें वह सोच लेता है। लेकिन हकीकत में ऐसा कुछ भी नहीं होता। हेडमास्टर कभी नहीं पूछते कि वह कल क्यों नहीं आया? ज्यादा-से-ज्यादा हेडमास्टर इतना ही पूछते हैं, 'आप कल नहीं आये न?' और वह संकोच में उत्तर देता है, 'जी नहीं।' हेडमास्टर उपेक्षा में मुंह फेर लेते हैं, 'ठीक है।'

चिंता कभी तुलसी को नहीं छोड़ती। तुलसी कभी चिंता को नहीं छोड़ता। एक-से एक चिंता हमेशा उसके दिमाग में कुलबुलाती रहती है। एक दिन सुबह भैया-भाभी में झगड़ा हुआ। गुस्से में तिलमिलाते भैया दफ्तर जाने लगे और भाभी कमरे से चीख पड़ीं, 'जाओ, जाओ। आने पर मेरा मरा मुंह देखना।' सुबह स्कूल जाने की जल्दी थी। दिन विद्यार्थियों को पढ़ाने में कट गया। छुट्टी होते ही भागा-भागा स्टेशन आया। लेकिन लोकल ट्रेन में बैठते ही भाभी की धमकी उसे याद हो आयी और वह आकाश-पाताल सोचने लगा। घर पहुँचते ही वह देखेगा, भाभी का कमरा बंद है। बच्चों को दूसरे कमरे में सुला कर भाभी अपने कमरे में फंदे से झूल रही होंगी। तब क्या करेगा तुलसी? दरवाजा खटखटायेगा, आवाज देगा, पर अंदर से कोई आवाज नहीं आयेगी। दरवाजा तोड़ डालेगा नहीं, पहले पड़ोसियों को खबर देगा, पुलिस और एंबुलेंस बुलायेगा। ओह भाभी का मरा मुंह कैसा होगा? भैया को फोन करेगा। बच्चों का रोना-धोना शुरू हो जायेगा। पोस्टमार्टम होगा। दूसरे दिन शाम तक भी लाश मिल जाय, तो गनीमत है। भाभी के मरने

के बाद भैया क्या करेंगे ? पत्नी-भक्त भैया निश्चित रूप से सन्यास ले लेंगे। बच्चों की जिम्मेवारी उसके मत्थे पड़ेगी। वह दुश्चिन्ता में छटपटाता रहा। भाभी की आत्म-हत्या के बाद घर में क्या कर रहेगा वह ? अकाल-मृत्यु में मरी भाभी प्रेतिनी बन घर में मडराती रहेगी। ठिठुरती सरदी में भी तुलसी पसीना-पसीना हो गया। उस दिन काफी रात गये वह वापस आया। अपने घर के बाहर उसने कई चक्कर लगाये और फिर बोझिल कदमों से अंदर दाखिल हुआ। भैया, भाभी और बडी भतीजी उसके इंतजार में चिन्तित बैठे थे।

तुलसी कभी निश्चिन्त नहीं रहता। उसके भाग्य में शान्ति नहीं। ट्राम या बस में वह खिडकी के पास बैठा है। कोई खूंखार चेहरा उसकी बगल में आ बैठा या कोई बैठते ही नाक-कान खुजलाने लगा। बस, तुलसी की चिंता शुरू हो गयी। अगर किसी कारण से बगल में बैठे आदमी से झगड़ा हो जाय। या बगल में बैठा आदमी उसकी जेब में हाथ डाले। तब क्या होगा ? यह सोचते ही तुलसी का मन दो भागों में बट जायगा और वह मन-ही-मन पास बैठे आदमी के साथ होनेवाले वार्तालाप का प्रारूप तैयार करता रहेगा।

अब ललित की चिंता उसे चैन नहीं लेने देती। अभी से वह सोचने लगा है कि ललित की मां के लिए वह कोई आश्रम खोजेगा।

सिगरेट खत्म हो आयी थी। छोकरों की भीड़ से निकल कर शंभू बोला, 'चलिये, आपको बस तक छोड आऊं।'

'चलो।'

दो-चार कदम बढते ही अचानक शंभू बोला, 'मां तो पहले विश्वास ही नहीं करती थी कि रोग छुआछूत का नहीं है। मां की धारणा है कि उस कमरे के लिए अब किरायेदार नहीं मिलेगा।

तुलसी मतलब समझ गया। वह चुप रहा।

शंभू ठहाका मार कर हसा, 'औरतों का दिमाग ही अनूठा होता है।'

तुलसी जानता है कि कुछ महीनों बाद ही ललित का कमरा खाली हो जायगा। दस साल पुराना भाड़ा है—सिर्फ पचीस रुपये। अब कोई भी सौ-सवा सौ देने को तैयार हो जायगा। उसे इच्छा हुई कि एक बार शंभू से पूछे, अब वह कितने किराये पर देगा ? लेकिन दूसरे ही क्षण उसने खुद को एक गंदी गाली दी और सभल गया। गनीमत है, मुंह नहीं खुला था। अगर खुलता तो शंभू व्यंग की हंसी हंस कर बोल उठता 'क्यों, ललितदा के मरने पर आप लेंगे क्या ?'

अनवरशा रोड के मोड़ पर खड़ा हो तुलसी ने थोड़ा सोचा। बस या रिक्शा से जाने की इच्छा नहीं हो रही थी। हालांकि वह थका-मांदा था और घर पर

मृदुला—उसकी पत्नी—उसका इन्तजार कर रही होगी, फिर भी उसका मन कर रहा था कि उसे अपने आपको थोड़ी सजा देनी चाहिए। ललित के कमरे का किराया अब क्या हो सकता है—यह सवाल आखिर उसके दिमाग म आया ही क्या? यह ठीक है कि वह मुह से नहीं बोला, लेकिन मन म तो यह बात उठी ही थी। मन के इस असयम के लिए दो मील चलने का कष्ट उसे उठाना ही चाहिए।—'शभू मैं पैदल जाऊँगा।

शभू हसा, 'पैदल जायगे! ठीक है, थोड़ा एक्सरसाइज भी होगा। थोड़ा चलना-फिरना सेहत के लिए ठीक है।'

न जाने क्या तुलसी को लगा कि शभू उसे उपदेश दे रहा है। यह ठीक है कि सेहत के मामले म वह शभू से बहुत पिछड़ा हुआ है, लेकिन है तो आखिर पढा लिखा। रूखी आवाज म बोला, 'तुम किधर जाओगे?'

'सिनेमा जाने की इच्छा थी, लेकिन मुहल्ले में झमेला हो गया है।'

'झमेला, कैसा झमेला?'

'मामला साफ-साफ समझ म नहीं आता। हमारे मुहल्ले में एक सज्जन अकेले रहते हैं। उन्हें कल रात बाहर के कुछ आदमियो ने आकर खूब पीटा है। मुहल्ले म वह किसी से मिलते-जुलते नहीं। हा, कभी-कभार किताब-कापी लिए एक लड़की उनके पास आया करती है। हो सकता है कि प्यार-व्यार का मामला हो। खैर, कुछ भी हो। समझते ही हैं, मुहल्ले की इज्जत का सवाल है। बाहर का आदमी मुहल्ले म आकर मार जायगा इतना बोल कर शभू हसा—आत्म-विश्वास की हसी।

'तब मैं चलू।'—तुलसी चल पड़ा।

कल रात जोरों की बारिश हुई थी। ऊबड़-खाबड़ सड़क बुरी तरह से घायल सड़क। सड़क के घावों म अब तक पानी जमा था। तुलसी सभल-सभल कर चल रहा था। मुसलमानो की बस्ती। मस्जिद। कब्रिस्तान। अब मृदुला उसे बेहद याद आ रही थी।

चलते-चलते तुलसी सोच रहा था कि पैदल चलने की सजा उसे भोगनी ही चाहिए। मृदुला के पास पहुँचने म भी उसे देर होगी। हो, थोड़ी बहुत देर होनी ही चाहिए। अब ललित के कमरे का किराया क्या होगा।—यह बात उसे मन म नहीं लानी चाहिए थी। लेकिन आश्चर्य तो यह है कि जानबूझ कर उसने ऐसी घृणित इच्छा मन म नहीं लायी थी। नहीं, स्वेच्छा से वह इतना कुत्सित विचार अपने मन म नहीं ला सकता। वह स्वय नहीं जानता कि ऐसा विचार उसके मन म आया क्यों कर? बस, आ गया। वह अपने मन की विचित्र गति पर सोचने लगा। मन पर उसका जरा

भी अधिकार नहीं ! कभी-कभार अपने मन के सामने वह स्वयं को बड़ा असहाय महसूस करता है। उसका मन अपनी इच्छानुसार एक-से-एक गंदे विचार पेश किये जा रहा है और वह कुछ नहीं कर पाता। उस समय तुलसी की स्थिति कितनी दयनीय हो जाती है, यह तुलसी ही जानता है। सारी शक्ति बटोर कर वह अपने आप से चीख-चीख कर कहता है, 'शैतान! नीच !' लेकिन कुछ भी असर नहीं होता। मन अपना काम करता रहता है। अपने कुत्सित मन के कारण तुलसी बड़ा सहमा-सहमा सा रहता है। वह समझ सकता है कि उसके अन्दर एक शैतान और घमंडी 'मैं' है, जिसे निकाल फेंकना जरूरी है।

तुलसी का चैन कहाँ। दुनियां भर की चिंताएं उसे घेरे रहती हैं। मृदुला के कारण भी नयी-नयी चिंता जन्म लेती रहती है।

एक दिन मृदुला बोली थी, 'जानते हो, इतनी जल्दी मेरी शादी नहीं होती ?'

तुलसी थोड़ा अवाक् हुआ था, 'फिर हुई क्या ?'

मृदुला हँस-हँस कर बोली थी, 'बस हो गयी, अब क्या किया जाय।'

तुलसी पलंग पर लेटा पड़ा था। मृदुला उसके बालों में उंगलियां फेर रही थी। वह उठ बैठा था और स्निग्ध आंखों से मृदुला की बड़ी-बड़ी आंखों में झांकते हुए बोला था, 'तुम शादी करना नहीं चाहती थी न ?'

'शायद नहीं।'—आंखों में नजाकत भर मृदुला बोली थी, 'जब हो गयी, तो बुरा नहीं लगता। एक छोटा-सा प्यार देकर एक अजीब अन्दाज में वह मुस्कुरायी थी, 'अब बहुत अच्छा लगता है।'—और फिर मृदुला ने उसे बहुत-बहुत प्यार किया था। वह गल गया था पर उसकी चिंता न गली थी, बेचैनी न टली थी। अगली रात वह बड़ी चालाकी से बोला था, 'तुम्हारे पिता ने अच्छा नहीं किया।'

'क्या ?'—मृदुला की आंखों में प्रश्न खड़ा था।

'यही कि जबर्दस्ती तुम्हारी शादी कर दी।'

मृदुला अवाक् हुई थी, 'जबर्दस्ती ! मैंने ऐसा कहा है क्या ?'

'फिर ?'

'फिर क्या ? पिताजी तो खुद ही इतनी जल्दी मेरी शादी करना नहीं चाहते थे। गाना सीख रही थी। कालेज में पढ़ रही थी।—कोई मेरी शादी के बारे में सोच भी नहीं रहा था। लेकिन देखो, झटपट शादी हो गयी।'

'क्या ? 'आखिर क्या ?'

'सुन कर तुम्हें दुःख होगा।'

'फिर भी सुनूं तो।'

'नहीं, कोई जरूरत नहीं।

'बताओ न मृदु। तुम्हें मेरी कसम, बताओ न।' पति-पत्नी के बीच किसी किस्म का रहस्य नहीं रहना चाहिए, इससे सम्बन्ध खराब होता है

तुलसी की व्यग्रता देख कर मृदुला हँस कर बोली थी, 'ऐसी कोई बात नहीं, तुम निश्चिंत रह सकते हो।'

'तुम्हारे पाँव पड़ता हूँ मृदु, बताओ न।'

'छि!'—कह कर मृदुला उसे कुछेक क्षण देखती रही थी फिर मुस्कुरा कर बोली थी, 'तुम बड़े बुजदिल हो।'

लेकिन तुलसी को चैन कहाँ! उसने तो जिद पकड़ ली थी। वह व्याकुल हो उठा था। उसकी जिद से परेशान होकर आखिरकार मृदुला बोली थी, 'कुछ लड़के मेरा चक्कर लगाया करते थे।

'क्या?'

'क्यों?'—बड़े भोले हो तुम, इतना भी नहीं जानते कि लड़की के पीछे लड़के क्यों घूमते हैं!'

तुलसी जानता है। खूब अच्छी तरह जानता है। लेकिन फिर भी उसके दिमाग में 'क्यों' कुलबुलाता रहा था। क्यों कुछ लड़के मृदुला के पीछे घूमते थे? किसी लड़की के पीछे घूमने का उन्हें क्या अधिकार है? यह तो अन्याय है, सरासर अन्याय है।

'कौन थे वे?'

'सब मुहल्ले के ही लड़के थे। उनमें से एक था बिभु। पढ़ना-लिखना छोड़ चुका था। बाप दूध बेचता था। अच्छा पैसा था। शुरू-शुरू में बिभु मुझे देखते ही आँखें झुका कर बगल से निकल जाता था। कभी-कभार साइकिल पर सवार हो बगल से सों कर निकल जाता था। साइकिल चलाने, तैरने और फुटबाल खेलने में उसका नाम था। शायद इसलिए पढ़-लिख नहीं सका। मुहल्ले में वह बड़े बिगड़ैल दिमाग का लड़का समझा जाता था। इसलिए जब वह मुझे देख कर चुपचाप बगल से निकल जाता, तब मुझे सन्देह होता कि अब वह बदल गया है। ऐसे लड़के अगर लड़कियों के मामले में सीरियस हो जाय, तो बड़ी मुश्किल होती है। कालेज आते-जाते भी वह मेरा पीछा करने लगा। सुबह-शाम न जाने कितनी बार साइकिल से हमारे घर का चक्कर लगाता। लेकिन कभी आगे बढ़ कर मुझ से बात करने का साहस उसमें नहीं हुआ। जब उससे अकेले कुछ न हुआ, उसने अपने कुछ दोस्तों का सहारा लिया। वह अपने दोस्तों के साथ बस स्टाप पर मेरा इन्तजार करता। मुझ पर नजर पड़ते ही उसके दोस्त दबी जुबान में बोलते, 'ऐ बिभु, देख, तेरी वो जा रही है।' कभी-कभी वह अपने दोस्तों के साथ बस पर आ बैठता।। कालेज तक फोलो करता। आखिरकार एक दिन मैंने माँ से कहा। माँ ने चुप रहने की सलाह दी। मन में आया कि पिता जी से कहूँ

पर पिता जी को कहना व्यर्थ था। वह तुम जैसा ही डरपोक और भले आदमी हैं। सुनते ही नर्वस हो जाते। क्या पता, डर के मारे निभु का ही अपना दामाद बना लेते। मैं चुप रही लेकिन उन लोगों की बदतमीजी बढ़ती गयी। मेरे छोटे भाई पर नजर पड़ते ही उसके दोस्त आवाज कसते, 'अरे ऐ निभु का साला! कहां जा रहा है बे?' एक दिन शाम को पिताजी बाहरवाले कमरे में मुवक्किल से बातें कर रहे थे कि एक छोकरा अन्दर झांक कर बोला, 'चचा, जरा माचिस तो देना।' दिन-दिन उन लोगों की बदतमीजी बढ़ती गयी और एक दिन कुछ लड़के विभु का प्रस्ताव लेकर पिताजी से मिलने आये। पिताजी घबरा गए, घर वाले, 'यह कैसे हो सकता है? हम ब्राह्मण हैं। वह हमारे जाति का नहीं।' लड़के वापस चले गये। लेकिन दो दिन बाद ही निभु के दोस्त दल बांध कर आये। सब के सब छटे हुए थे। बड़े-छोटे का ज्ञान नहीं, बात करने की तमीज नहीं। हर के चेहरे पर शैतानियत नाच रही थी। कमरे में दाखिल होते ही वे बोले, 'जात-पात छोड़ो चचा। आप खुद बराहमन हो, इसका क्या सबूत है। पाकिस्तान से आये ढेर सारे खुद को बराहमन बताते हैं। सब साले एफिडेविट मार्का बराहमन हैं—हम जानते हैं।—और छोकरी पढ़ी-लिखी है तो क्या हुआ। अपना निभु भी कम नहीं। साला नम्बर वन स्पोर्टसमेन है चचा।—तैरने में बेजोड़, साइकिल रेस में हमेशा फर्स्ट। फुटबाल के मैदान में उसे देखोगे न चचा, तो देखते ही रह जाओगे।—क्या खेलता है साला!—स्पोर्ट्समेन की आजकल बड़ी कदर है चचाजान। पढ़े-लिखे को पूछता कौन है! सब साले बेकार घूमते हैं।—अगर आप चाहते हो कि निभु एक सर्टीफिकेट वाले से लड़का ले कोई बात नहीं हम साले को फिर से स्कूल में डाल आयेंगे, चार-पांच मास्टर रख कर पास करा देंगे। सब हो जायगा। बस, अपनी छोकरी का हाथ निभु के हाथ दे दो। यह सब सुन कर पिताजी घबरा उठे और दूसरे ही दिन मुझे कालेज से टैक्सी में बैठाया और दमदम वाली बुआ के घर ले गये। पिता जी को मेरी शादी की जल्दी मच गयी। निभु के दोस्तों ने उत्पात मचाना शुरू कर दिया। अक्सर सुनती, घर में ढेले फेंके जाते हैं। कूड़ा-कर्कट घर के सामने जमा कर दिया जाता है। पिताजी की बैठक के दरवाजे पर पैगाना रख आते हैं और, महीने भर के अन्दर ही पिता जी को एक बहुत अच्छा लड़का मिल गया। तुम उनकी पारखी आंखों में शान प्रतिशत खरे उतरे। चरित्रवान! निष्ठावान!—फिर क्या था झट मंगनी, पट विवाह।

मृदुला की कहानी सुन कर भी तुलसी को शांति कहां! मृदुला इतनी सुन्दर तो है नहीं कि छोकरों का झुंड उसके पीछे घूमा करे! काली-कलूटी, चेहरे पर मुंहासों के धब्बे, मोटे-मोटे होंठ। हां, मृदुला की आंखें बड़ी सुन्दर हैं। हिरनी-सी बड़ी-बड़ी आंखों में विचित्र आकर्षण है, अद्भुत मादकता है। हर सुन्दर चेहरा आकर्षक तो नहीं

होता। लेकिन मृदुला म आकर्षण शक्ति है। काली लड़की अगर सुन्दर आकारवाली हो, तो गोरी-चिट्टी लड़की से ज्यादा आकर्षक होती है। सिर्फ आँख ही क्यों, मृदुला के अंग-अंग म मादकता है काले-काले रूप वाला म नशा है।—धुली-धुली आवाज म तुलसी बोला था, 'समझ म नहीं आता, तुम्हारे पीछे-पीछे यह छोकरा क्यों घूमता था

'हाँ, मैं बड़ी खूबसूरत हूँ न!'— तुलसी का मनोभाव समझ कर मृदुला तुनक कर बोली थी।

मृदुला हँस रही थी। लेकिन तुलसी को कुछ अच्छा नहीं लग रहा था। उसने बड़ी रूखी आवाज म कहा था, 'मैंने ऐसा कुछ नहीं कहा, लेकिन—'

'लेकिन क्या—तुलसी आज भी नहीं जानता। पिछले डेढ़ महीने से वह सोच रहा है कि मृदुला की कहानी म ऐसी कौन-सी बात है कि वह इन दिनों अक्सर मृदुला पर गुस्सा जाता है। न जाने क्या उसका मन उसे बार-बार कहता है कि मृदुला म यदि आकर्षण शक्ति न होती, तो अच्छा होता। स्त्रियों म आकर्षण शक्ति या उग्र सौंदर्य का होना अहितकर है। अगर वह छोकरा यानी बिशु मृदुला को तलाशता हुआ उसके घर आ धमके, तब क्या होगा? ऐसी बात तो है नहीं कि बिशु को देखते ही वह मृदुला को छोड़ देगा, मृदुला को भूल जायेगा। हालांकि बिशु उसके मुहल्ले म नहीं रहता, फिर भी प्यार का मारा बिशु कुछ भी कर सकता है। अपने गुण्डे दोस्तों को साथ ले उसके घर पर हमला कर सकता है। ऐसी बात नहीं कि अब वे तुलसी के घर सिर्फ टट्टी फेंक कर शांत हो जायगा। अब तो तुलसी ही उसका सबसे बड़ा दुश्मन है। अखबारों म अक्सर प्यार के मामले म एसिड बल्ब और छुरेबाजी की घटना वह देखता है।

इसलिए इन दिनों घर के बाहर वह बड़ा चौकन्ना रहता है। आगे-पीछे देख कर चलता है। आते-जाते चेहरों पर नजर रखता है। उसे ऐसा लगता है कि मृदुला ने ही उसकी शांति खत्म कर दी है। और जब वह यह सोचता है कि मृदुला के पीछे कोई दीवाना था, उस समय मृदुला के प्रति उसका प्यार दीवानगी की हद तक जा पहुँचता है।

घर आने पर उसने देखा कमरों की बत्तियाँ गुल ह। भैया-भाभी और बच्चे घर पर नहीं हैं। धक्का देते ही सामने वाले कमरे का दरवाजा खुल गया। उसने बत्ती जलायी और चौंक पड़ा। फर्श पर बैठी मृदुला दीवार से उठंग कर सुबकियां ले रही है।

खुद को सम्भाल कर वह बोला, 'क्या हुआ मृदुला?'

'तुम से कुछ जरूरी बात है।'—भर्रायी आवाज म मृदुला ने जवाब दिया।

ललित ने चैन की सास ली। वह उठ बैठा। पल-दो-पल चुप रहा, फिर उसने पूछा, 'रात भर वर्षा हुई है न मा '

'धुत् वर्षा कहा ! नींद म चौआ रहे थे।'

ललित उठ कर बैठ गया। थोडी देर तक सोचता रहा।— न, अब कोई आवाज सुनायी नहीं पडती। नहीं, बारिश नहीं हुई। उसकी छाती जोरों से धड़क रही थी। अचानक नींद से उठ बैठने पर ऐसा होता है फिर से सोने की इच्छा भी होती है। लेकिन वह सोया नहीं। उसने टटोल कर सिगरेट और माचिस उठायी। माचिस जलने की आवाज पर मा फिर बोली, 'उठ गये ललित।'

'हु।'

'तबीयत कैसी है '

'ठीक है। तुम सोओ।'

'मुझे नींद कहा।'—निढ-निढ़ करती मां ने करवट ली। ललित ने मां की जभाइ सुनी। उसे लगा कि अब मां बोलना शुरू करेगी। बुढ़ापे म आदमी बातूनी बन जाता है। और फिर ललित से तो बहुत कुछ कहना है मा को। मां की अधिकाश बातें अर्थहीन होती है। पुराने दिनों की बातें करते-करते मा अकसर भूल जाती है। बातो में कोइ मेल नहीं रहता। अभी ललित की शादी की चर्चा शुरू करेगी, तो दूसरे ही क्षण अपने अतीत म खो जायेगी। ललित चौन्ह कट्ठा जमीन म तुम घर बनाना। घर के सामने आम कटहल का बाग होगा। नारियल और सुपारी के गाछ होंगे। पिछवाड़े म सब्जी का बाग होगा। कागजी नीबू भी लगाना बेटा। तुम्हें सीम पसन्द है, सीम भी लगायेंगे। गोहाल के ऊपर पर लौकी की लत फैल जायगी। मा अपने सुदूर अतीत की तस्वीर भविष्य के गर्भ म लगाने की कोशिश करती है। मां की बातो म भूत और भविष्य इस प्रकार मिल जाते है कि दोना को अलग करना मुश्किल हो जाता है। बातें बोलते मां हल्की हो जाती है और तब उसका एकाकी जीवन भी थाड़ा-बहुत सरस हो जाता है।

अभी मां की बात सुनने की इच्छा ललित को न थी हो रही थी। उसकी इच्छा हो रही थी कि मसहरी से निकल कर वह बाहर खुली हवा म थोड़ा घूमे-फिरे। लेकिन वह मसहरी के अदर बैठा-बैठा सिगरेट फूकता रहा। बायीं तलहथी म वह राख झाड रहा था। गरम राख मानों उसे बता रही थी कि वह जगा हुआ है। सारी रात तद्रा म कटी थी और वह खुद को बड़ा सुस्त महसूस कर रहा था। उसकी आखों म गाढ़ी तरह नींद छिपी थी फिर भी अब उसे सोने की इच्छा नहीं हो रही थी। सिगरेट की लाल आभा म उसने देखा, मसहरी पर एक नन्हा-सा तलचट्टा रेंग रहा है। वह सिगरेट करीब ले गया। तलचट्टा रेंगता हुआ भागा। वह उसे मार सकता था, पर न जाने क्यों

उसने उसे छोड़ दिया। दो-चार खटमल अगर काट ही लें, तो क्या आता-जाता है। सम्भव है, खटमल पर की गई दया उसकी ज़िन्दगी में दो-चार दिन जोड़ दे। हर काम का कुछ-न-कुछ फल तो है ही।

सिगरेट का टुकड़ा फेंकने की खातिर ललित उठा। माँ खर्राटे ले रही है। आहिस्ते से दरवाजा खोल कर वह बाहर आया और मुग्ध हो गया। होश सँभालने के बाद शायद ही उसने और कभी इस तरह चुपके-चुपके रात का विदा लेना और सुबह का हौले-हौले आते देखा है। तारों भरा आसमान। पूरब के आकाश में मयूरकंठी रंग। हल्की-फुल्की ओस पड़ी है। ओस में नहायी सहमी-सहमी हवा। पवित्र और निष्पाप हवा। सूनी गलियाँ, सुनसान रास्ते। नींद में सोया कलकत्ता कितना विशाल है। जगते ही कलकत्ता फिर मलीन हो जायेगा।

दरवाजे की सीढ़ी पर ललित बैठ गया। चौखट पर उसने अपना थका-माँदा सिर रख दिया। आहिस्ते-आहिस्ते पलकों में लिपटी नींद अंग-अंग में फैलती गयी। सामने तारों भरा आकाश। आनेवाले सूरज से उसने प्रार्थना की, 'भगवान, ऐसे ही समय मुझे मृत्यु देना।' और फिर वह सो गया।

ललित की नींद टूटी तो, जब सामने की दीवार पर पसरी धूप उसका सिर चूमने लगी। माँ ने उसे जगाया। आँखें खुलीं। पायजामा और अधमैली कमीज में शम्भू हाथ में थैला लिए सामने खड़ा था। वह जब से बीमार पड़ा है, शम्भू ही उसकी माँ के लिये साग-सब्जी ला देता है।

शम्भू के चौकोर चेहरे पर मुस्कान फैल गयी, 'तबीयत कैसी है?'

ललित की आँखें शम्भू की पिंडलियों पर जम गयीं। कितनी अच्छी सेहत है शम्भू की! ललित ने कभी व्यायाम नहीं किया है। लेकिन कभी-कभार वह सोचता है कि अगर वह कसरती बदन का होता तो कितना अच्छा होता। उसे अपने सेहतमन्द यार बेहद पसन्द हैं, भले ही वे बुद्धि के मामले में पिछड़े हों। शम्भू का हँसता-मुस्कराता चेहरा इस बात का गवाह है कि रात में वह गहरी नींद सोया था। उसके चमकते दाँत बताते हैं कि उसका लीवर भी काफी दुरुस्त है। हाँ, शम्भू की बुद्धि प्रखर नहीं है। वह खुद को शम्भू के समक्ष अस्वस्थ महसूस कर रहा है। जम्हाई लेकर वह बोला, 'करीब चार बजे बाहर आया था। अच्छा लगा, यहीं सो गया।'

'मैं तो रोज सुबह चार बजे उठता हूँ। अगर पता होता तो आपको बुला लेता।'

'इतनी सुबह उठकर तुम क्या करते हो?'

'दौड़ता हूँ'

ललित हँसा। शरीर के अलावा शम्भू और कुछ नहीं समझता। खुद को तरोताजा रखना ही उसके लिये सब कुछ है। 'रोज रोज दौड़ते हो। कितना?'

'अनवरत्ता रोड का एक चक्कर लगा लेता हूँ।'

ललित अचानक बोल उठा, 'तुम्हें शर्म नहीं आती ?'

शंभू अवाक हुआ, 'क्यों शर्म क्यों आयेगी ?'

'क्या पहनते हो '

अब शंभू से रहा न गया। वह ठहाका मारकर हंस पड़ा 'आप न आप न—' फिर बोला, 'वही शार्ट्स, गंजी, मफलर और केन्स। ट्रैक सूट आदि। थोड़ी तबीयत ठीक हो जाय, आपको भी ले जाऊँगा। देखेंगे, रोज दौड़ने पर कितनी ताजगी महसूस होती है।'

'धुर, मुझे तो बड़ी शर्म आती है। मैं तो निकल ही नहीं पाऊंगा।'

'कपड़ा आप कुछ भी पहनिये, मतलब तो दौड़ने से है। बस, दौड़ने लायक कपड़ा होना चाहिये।' बोलते-बोलते शंभू उकड़ूं बैठ गया, 'मैं कहता हूँ न ललितदा, थोड़ा दौड़कर देखिये।'

ललित मुस्कराया 'दौड़ कर क्या होगा ?'

'बस वही ताजगी।'

'उसके बाद ?'

'उसके बाद आसन सिखाऊंगा। अपने जिमनासियम के ट्रेनर के पास ले जाऊंगा। आपकी सारी बीमारी खतम हो जायेगी ललितदा। योग से असंभव संभव हो जाता है। आसन—प्राणायाम है ही ऐसी चीज। आपका कुछ नहीं हुआ है। मैं गारंटी देकर कहता हूँ आप बिल्कुल ठीक हो जायेंगे।

अन्दर से माँ बोलीं, 'हां शंभू इसे तुम रोज ले जाना। मैं इसे जगा दिया करूंगी। जवान लड़के को रात में नींद नहीं आती, यह भी कोई बात है। आठ नौ बजे के पहले उठ नहीं सकता, खान-पान में थोड़ी देर-सबेर होते ही तबीयत खराब हो जाती है। अरे इस उमर में तो लोग पत्थर चबा कर पचा जाते हैं। तू इसे ले जाया कर शंभू। अगर न जाय तो अपने दोस्तों को साथ लाना और जबर्दस्ती खींच ले जाना। इसे अच्छा कर दे बेटा। जब देखो, कोई-न-कोई रोग लगा है।

शंभू के मन में ताकत है और है गवारों जैसा विश्वास। अपनी बुद्धि से जो ठीक समझता है, वही करता है। बहस में दिमाग नहीं खपाता। तर्क में वक्त नहीं गंवाता। संभव-असंभव पर विचार नहीं करता। बस जो मान लिया, सो मान लिया। ललित जानता है, सब कुछ समझता है फिर भी न जानें क्यों अभी उसे शंभू की बात पर विश्वास करने की इच्छा हो रही थी। योगाभ्यास से सब कुछ ठीक हो जाता है। वह भी एक बार कोशिश करेगा क्या। कोशिश करने में हर्ज ही क्या है!

अगर अच्छा हो जाय—सचमुच मैं अच्छा हो जाय । योग-प्राणायाम की रहस्यमय विधियों में कौन-सी प्राण-शक्ति छिपी है, क्या पता ! खास कर जब कोई विश्वास दिला रहा है, तो विश्वास करने में हर्ज ही क्या है ?

वह हँस कर बोला, 'इयलाग मुश्किल होने पर नहीं कर सकूँगा । कभी किया नहीं है न ।'

शंभू ने झट ललित का हाथ पकड़ लिया, 'विश्वास करो दादा, एकदम आसान है । आसन-प्राणायाम की विधियाँ बड़ी सरल हैं । बस, साँस लेना और छोड़ना । शरीर का विधिपूर्वक टेढ़ा-सीधा करना । मैं कह रहा हूँ न आप कुछ ही दिनों में सीख जायेंगे । कुछ दिनों के अभ्यास के बाद ही आप महसूस करेंगे कि बीमारी खत्म हो रही है । हमारे जिमनासियम में कितने ही रोगी आते हैं—आर्थराइटिस, पोलिओ, टी० बी०, कैंसर, अल्सर और न जाने क्या-क्या—'

'सब ठीक हो जाता है ?'

'सब । लेकिन जल्दबाजी में नहीं । यह कोई साधारण चीज तो है नहीं । यह योग है । योग जिसमें संयम चाहिए, धैर्य चाहिए । धीरज रखना होगा, संयम से रहना होगा, नियम से चलना होगा ।' शंभू की आँखें विश्वास और भक्ति से चमक कर उठीं । उसका चेहरा देख कर ललित का मन भर गया । शंभू और कुछ जाने या न जाने पर अपने क्षेत्र में वह पण्डित है । ललित की इच्छा हो रही थी कि शंभू के सामने वह आत्म-समर्पण कर दे ।

ललित में अब मजाक करने की इच्छा नहीं थी फिर भी चेहरे पर मजाक पात कर वह बोला, 'नियम क्या है ?'

'कुछ नहीं, बस, वक्त पर खाना, सोना, नहाना-धोना, साफ-सुथरा रहना, आचरण अच्छा रखना, अच्छी बात सोचना—आपको सब कुछ बता दिया जायेगा ।

'धुत, यह सब मुझ से नहीं होगा । सिगरेट नहीं पिऊँगा, रात में देर तक जगूँगा, नहीं, दोपहर में सोऊँगा नहीं—यह सब विधवाओं और सिद्ध महात्माओं का काम है ।'

शंभू हँसा, 'होगा ललितदा, सब होगा । जब जान पर आती है तो आदमी सब कुछ करता है ।

ललित को धक्का लगा । थोड़ा उत्तेजित होकर बोला, 'नहीं रे, यह सब मुझ से नहीं होगा । आज तक न कर सका, अब क्या होगा ?'

माँ दरवाजे पर बैठी सब सुन रही थी । बोली, कौन सा मुश्किल काम है ! शंभू कहता है न ! उसका चेहरा देख कर आँखें जुड़ा जाती हैं । और तुम्हारी हड्डियाँ गिनी

जा सकती हैं। कितना गोरा-चिट्टा था और अब क्या हो गया! दूर कर सकोगे! मैं तुम्हें नियम से चलाऊँगी। शंभू, इसे अपने साथ ले ले।

शंभू कंधे उचका कर बोला, नियम मानना जरूरी है। अब देखिये न मेरा कॉनिक फैरेनजाइटिस नहीं छूट रहा है। सुबह शाम मैं सफाई करके कर चलता हूँ। सर्दी की एलर्जी है। अंडा, झींगा और हिल्सा मछली खाना मना है फिर भी खा लेता हूँ। अगर नियम मान कर चलूँ तो ये सारे रोग फटाफट भागते नजर आयेंगे। मगर मेरे रोग इतने भयंकर नहीं, इसलिए ध्यान नहीं देता। लेकिन आपकी बीमारी

देर हो रही है कह कर शंभू उठ खड़ा हुआ, 'कल सुबह आपको जिमनास्टियम ले जाऊँगा।'

ललित राजी नहीं हुआ, 'नहीं रे शंभू, सबके सामने नंगे बदन मुझ से यह सब नहीं होगा। पहले तू घर पर ही सिखा, बाद में जिमनास्टियम चलेंगे।

शंभू जब गली के नुक्कड़ तक जा पहुँचा, तब ललित को अचानक इच्छा हुई कि शंभू से पूछे, 'क्या रे शंभू, मेरी उम्र में यह सब संभव है? देरी तो नहीं हो गयी? अब क्या कोई फल होगा?'—लज्जावश वह पूछ न सका। लेकिन सोचते ही छाती धक कर उठी। अगर फल न हो!

करीब दस बजे नाक दबा कर ललित एक गिलास दूध पी गया। दूध की गंध उसे बर्दाश्त नहीं होती। दूध देखते ही उसे उल्टी आने लगती है। वह चटपटा खाना ज्यादा पसन्द करता है। मिर्च मसाले का तीखा स्वाद उसे प्रिय है। लेकिन इन दिनों उसे दूध, फल का रस, दूध-भात, उबाली हुई साग-सब्जी वगैरह खाना पड़ता है। उसने मन-ही-मन सोच रखा है कि वह पहले जैसा लापरवाह बन जायेगा। खान पान में पाबन्दी, चलने-फिरने में बंदिश—यह भी कोई जिन्दगी है। और फिर अब डर किस बात का। बाजार से झींगी मछली और कच्चा पपीता खरीद कर शंभू दे गया है। दोनों से उसे चिढ़ है।

माँ के पान की डिबिया से चुन-चुन कर भुने साफ और धनिया निकाल कर उसने मुँह में डाला। उसके बाद धुला पायजामा और कुरता पहन कर तैयार हो गया। माँ चौके से मसाला लेने कमरे में आयी और उसे तैयार देखकर बोली, 'कहाँ जा रहा है?'

'जरा स्कूल से हो आऊँ।'

'कोई जरूरत नहीं। कल ही अस्पताल से आये हो। सिर चकरा कर कहीं गिर पड़े'

नहीं, अब घर में रहना असंभव है। बाहर जाड़े की मीठी धूप मुस्कुरा रही है। आदमी चल फिर रहे हैं। बाहर जिन्दगी है और कमरे के अन्दर घुटन। दम घुट रहा है ललित का। इस वक्त चाहिए उसे खुली हवा, खुला आसमान और भागती-दौड़ती

ज़िन्दगी की ताज़गी। लम्बे अरसे तक वह मौत की छाया तले सोया था। उसका शरीर दुर्बल है।—चल-फिर नहीं सकता। लेकिन उसका मन भागते-दौड़ते लोगों की भीड़ में शामिल होने की खातिर छटपटा रहा है। माँ ने कहा था कि वह अच्छा हो गया है। लेकिन उसे तो अभी चमड़ी का पीलापन नजर आता है। उसका अंग-अंग धूप, बारिश और मिट्टी के लिए मचल रहा है। स्कूल, चाय की दुकान पर लम्बी नवाब-चौकड़ी चाय की चुस्कियाँ और सिगरेट के छल्लों में दुनिया भर की बहस, गन्दी गालियों की गुदगुदी, राह चलती लड़कियों को देख आह भरना—और न जाने क्या-क्या उसके मन को बेचैन कर रहा है। सहसा उसे महसूस होता है कि कितनी छोटी-छोटी बातों से उसे प्यार था। बीमारी से पहले वह कभी सोच भी न सका था कि वह कितनी प्यारी ज़िन्दगी जी रहा है। लेकिन अब उसे महसूस होता है कि उसकी ज़िन्दगी कितनी हसीन थी।

ललित ने माँ का सीधा-सादा जवाब नहीं दिया। बोला, 'स्कूल में थोड़ा हिसाब है। बी० ए० भी आ गया होगा। टैक्सी से जाऊँगा। क्लास तो लेना नहीं है।'

फिर भी माँ बड़बड़ाती रही। ललित ने कान नहीं दिया। बाहर निकल कर बोला, 'दरवाज़ा बन्द कर लो।'

चलने में उसे तकलीफ हो रही है। झुक कर चलना पड़ता है। सीधा होते ही आपरेशन की जगह तनाव महसूस होता है। पेट के अन्दर का वह जानलेवा दर्द अब नहीं है, जिसकी वजह से वह कभी-कभार बेहोश हो जाता था। एक दिन क्लास में और एक दिन फुटपाथ पर उसे लम्बा होना पड़ा था। जब दर्द उठता, वह हाथों-कमान सा बैठता। भगवान न करे वैसा दर्द किसी को हो। अब दर्द तो नहीं है पर दर्द की जगह एक नाड़ी झूलती हुई महसूस होती है। और महसूस होता है कि पेट के अन्दर एक टुकड़ा आकाश समा गया है।

अपना मुहल्ला। गली के नुक्कड़वाला लेटर बाक्स पार कर गया ललित। कारपोरेशन के नल के सामने गोपालदा की मनिहारी दुकान। दायीं ओर गैरेज में क्लब। क्लब अभी बन्द है। कभी-कभार आँधी-बारिश में और कहीं न जाकर ललित मुहल्ले के हमउम्र युवकों के साथ क्लब में ताश-शतरंज खेल चुका है। क्लब के बाद चौधरियों के बगीचे की लम्बी दीवार शुरू होती है। नारियल, सुपारी और आम-जामुन की फुनगियाँ दीवार के ऊपर से झाँकती रहती हैं। माँ का बड़ा शौक है कि ललित एक सुन्दर-सा बगीचा लगाये। बगीचा के अन्दर एक खूबसूरत-सा मकान हो। चौदह-पन्द्रह कट्ठा जमीन में बगीचा लग जायगा, मकान बन जायगा। ज्यादा नहीं, सिर्फ चौदह-पन्द्रह कट्ठा। बायीं ओर ताले का कारखाना। कितने ही परिचित चेहरे नजर आ रहे हैं। 'कैसे हो ललित? कहाँ जा रहे हो?'—ललित सिर्फ

मुस्कुराकर आगे बढ़ जाता है। इनमें से शायद ही कोई ललित की बीमारी के बारे में जानता है। दो महीने वह कहाँ था, यह भी किसी ने नहीं पूछा। अगर सोचा जाय तो दो महीने का वक्त कोई ज्यादा वक्त नहीं होता। लेकिन उसे तो ऐसा लगता है कि वह मुद्दत बाद वापस आया है। उसे महसूस होता है कि यहाँ की हर चीज बदल गयी है, लेकिन आँखों में कोई परिवर्तन नजर नहीं आता। शायद परिवर्तन इतना सूक्ष्म व रहस्यमय है कि आँखें पकड़ नहीं पाती। वह हर चीज गौर से देखता हुआ बढ़ रहा है। आश्चर्य है, उसे आज तक यह भी पता नहीं था कि अग्रवाल बाबू की छत पर कबूतर ने घोंसला बनाया है। अभी-अभी उसकी नजर घोंसले पर पड़ी थी। अभी-अभी उसने गोनिया की बस्ती के शिव मन्दिर का दूर से नजर आता शिखर देखा है। ऐसे ही छोटे मोटे आविष्कार करता हुआ वह रानी-मार्ग के करीब आ पहुँचा। नहीं, अब नहीं चला जाता। पैर जवाब दे रहे हैं, सिर चकरा रहा है, जोरों की मितली आ रही है। नहीं, अब नहीं चला जाता।

वह रही जगदम्बा रोड। नुक्कड़ पर रिक्शों की लाइन। और कुछेक कदम चल पाता वह। रिक्शे पर पसर जाता। रिक्शा उसे ट्राम-बस के रास्ते पर छोड़ देता। और फिर ललित ट्राम या बस पकड़ लेता। कुछेक कदम, सिर्फ कुछेक कदम। नहीं, ललित ने कदम बढ़ाने की कोशिश न की। कोशिश का परिणाम भयंकर हो सकता है। सारे अंग शिथिल होते महसूस हो रहे हैं। जीभ सूख रही है। जोरों की ठंड लग रही है। ललित की नजर एक जाने-पहचाने लड़के पर पड़ी। मुहल्ले का लड़का होगा। उसका विद्यार्थी भी हो सकता है। अक्खड़ चेहरा, हाथ में सिगरेट। ललित ने उसे ही हाथ से अपनी ओर आने का इशारा किया। उसके करीब आते ही वह बोला, 'मेरे लिए रिक्शा ला दोगे भाई, मैं अस्वस्थ हूँ।'

लड़के ने सिगरेट छिपाने की कोशिश न की। वह दौड़ कर गया और रिक्शा ले आया। उसने ललित को पकड़ कर रिक्शे पर बैठाया। रिक्शा चालक से बोला, 'आहिस्ते ले जाना।'

उतने छोटे लड़के को धन्यवाद देते उसे शर्म महसूस हुई। सिर्फ उसके चेहरे पर कृतज्ञता की हल्की फुल्की मुस्कान बिखर आयी। रिक्शा चल पड़ा। ठंडी हवा की हल्की-फुल्की छुअन में आहिस्ते-आहिस्ते मन कुछ ठीक होता गया। ललित ने आँखें खोलीं। दायीं ओर छोटी मोटी दुकानें, गन्दा बाजार, गन्दी बस्ती। कच्ची नाली में बरसाती पानी बह रहा है। बायीं ओर रेलिंग से घिरा पुराना पोखर और पुरानी मस्जिद।

ललित रिक्शा से उतर पड़ा। ट्राम और बस में यात्रियों की खचाखच भीड़। इस वक्त टैक्सी मिलना भी भाग्य की बात है। ट्राम स्टाप पर वह असहाय-सा खड़ा रहा। अपने रोग-जर्जर शरीर के लिए उसे अपने आप पर बड़ी घृणा हो रही थी। शरीर—हां, शरीर के बगैर कोई अस्तित्व नहीं। जब तक सांस है, तब तक अस्तित्व है।

ललित के सामने से एक ट्राम जा रही थी। अचानक सेकेंड क्लास से आवाज आयी, 'ललितदा!'

इतनी भीड़ में किसी को पहचानना मुश्किल है। ललित सिर्फ ट्राम की ओर देखता रहा। एक आदमी चलती ट्राम से उतर गया। हंसता हुआ वह उसकी ओर बढ़ आया। साफ-सुथरा टेरीलीन पैंट-शर्ट, हाथ में पोर्टफोलियो बैग और गर्दन में टाई। देहातियों जैसा व्यवहार। चाल-ढाल और पोशाक में कहीं कोई मेल नहीं। ललित पहचान नहीं रहा था। वह जब ललित के सामने आ खड़ा हुआ, उसने उसे पहचान लिया। पान की पीक से सने दांत और कपाल पर लाल चन्दन का टीका—देख कर वह लक्ष्मीकांत को पहचान गया। लक्ष्मीकांत कभी इस बात की परवाह नहीं करता कि लोग उसके बारे में क्या सोचते हैं। लोगों का भाग्य है कि वह अब तक कपड़े पहन कर बाहर निकलता है।

पोर्टफोलियो बैग बायें हाथ से बायें हाथ में लेकर लक्ष्मीकांत ने बड़ी गरमजोशी से हाथ मिलाया, 'ललितदा, याद है न अपना वादा?'

पूछने का लहजा ऐसा था कि मानो कल ही ललित से मिला हो। ललित मुस्कुराया, 'कैसे हो लक्ष्मीकांत?'

'सब ऊपरवाले की दया है भैया!'—कह कर उसने ललित का हाथ छोड़ा और असली बात पर आ गया, 'क्या ललितदा याद है न अपना वादा?'

लक्ष्मीकांत क्या करता है, ललित नहीं जानता। चेहरे-मोहरे से वह दलाल लगता है। पर असल वह है भी काला कलूटा, मोटा-मोटा चेहरा—सिर पर चांद। अपनी उम्र से वह ज्यादा दीखता है। लेकिन ललित से वह कम-से-कम पांच साल बड़ा तो होगा ही। फिर भी वह ललित को दादा कहता आया है और ललित जिसे आप से तुम तक उतरने में ज्यादा समय लगता है, वह भी शुरू से उसे तुम कहता आया है। इसकी वजह है लक्ष्मीकांत का स्वभाव। वह जिससे मिलता है, दिल खोल कर मिलता है। सबसे बोलता जाता है। किसी को अच्छा लगे या बुरा, लक्ष्मीकांत इसकी परवाह नहीं करता। वह आत्म-सम्मान नहीं जानता। व्यवसाय में आत्म-सम्मान का कोई मूल्य भी नहीं। कलकत्ता के विशाल बाजार में वह चुग कर खानेवाला पंछी है। वह कई किस्म की दलाली करता है। आदमी पटाना ही उसका काम है।

इसलिए पुण्य का ढोंग बनाये रखना उसका स्वभाव बन गया है। बीमे के धंधे का हर गाहक उसका दोस्त है। उसे देखकर ऐसा लगता है कि सम्मान का सम्मान उसे शायद ही मिलता है। इस बात का उसे दुःख भी नहीं है। दुःख होना भी नहीं चाहिए। दलाली का धंधा ही कुछ ऐसा है। जब और जहाँ कहीं से उसका परिचय हुआ था, ललित को अब याद भी नहीं। लक्ष्मीकांत के पाँवों में शनीचर का वास है। सारे शहर का चक्कर लगाता रहता है। कभी-कभार ललित भी मिल जाता है और वह बोल उठता है, 'ललित जी, याद है न अपना वादा?'

ललित को याद है। उसका वह पाँच हजार का जीवनबीमा करना चाहता है और चार साल से उसके पीछे पड़ा है। जीवनबीमा की उपयोगिता या जीवनबीमा न कराना एक सामाजिक अपराध है—यह सब न समझाकर वह सीधे-सादे शब्दों में कहा करता है, 'अगर आप ने बीमा न कराया तो मेरी एजेंसी चली जायगी। मैं जानता हूँ आप यह कभी पसंद नहीं करेंगे कि मेरे बाल-बच्चे भूखों मरें। बस, आप लोगों की दया से गृहस्थी की गाड़ी चल जाती है। एक भी बच्चा काम का नहीं निकला। सब साले नालायक हैं। यहाँ तो रोज कुआँ खोद कर पानी पीना है भाई। आज अगर बंद हो जाय, सालों को आटे-दाल का भाव मालूम पड़ेगा। मैं कहाँ-कहाँ सम्भालूँ, अब देखिए न सरकार से भी मुकदमा चलने वाला है।'

बालीगंज में लक्ष्मीकांत ने लावारिस जमीन दखल कर रखी है। करीब चालीस पैंतालीस हजार की जमीन होगी। ध्यान भी नहीं देता। उसका बारह साल का लड़का मुर्गीखाना चलाता है। मुर्गीखाने के पास ही उसने काली मन्दिर बनाया है। रोज पूजा होती है। बगीचा भी लगाया है, ताकि सरकार उसे सहज ही उठा न सकी। वह बाकुड़ा का है, फिर भी उसने रिफ्यूजी कार्ड बना रखा है। उसकी धारणा है कि उसे जमीन से बेदखल करना आसान बात नहीं।

यह सब ललित ने लक्ष्मीकांत से ही सुना है। इतना सब कुछ जानते हुए भी लक्ष्मीकांत से चार-चार मिनट बात करना उसे बुरा नहीं लगता। शायद इसी गुण के कारण लक्ष्मीकांत टिका है, टिका रहेगा।

ललित मुस्करा कर बोला, 'धंधा कैसा चल रहा है?'

'आप जैसे पढ़े-लिखे लोग अगर बीमा न करायें, तो धंधा क्या चलेगा सार! दफ्तर बैठा नहीं रहता ललित जी। आज-कल करते-करते बरसों बीत जाते हैं। वक्त रहते ही इंसान को अपना काम करना चाहिए। अच्छा वक्त यूँ ही गुजर जाय, तो फिर पछतावा ही हाथ लगता है। आप ही सोचिये, अगर चार साल पहले बीमा करा लिया होता, तो बीमा चार साल मैच्योर हो जाता। बीस पच्चीस साल बाद कितने रुपये

एकसाथ

बीस पचीस साल ! स्वप्न-सा लगता है । लेकिन फिर भी ललित हस कर बोला, 'पचीस साल बाद रुपया का मूल्य बहुत कम जायगा लक्ष्मीकांत । आज का मूल्य भी नहीं मिलेगा । यह तो घाटे का सौदा होगा भाइ !'

हताश होकर बोला लक्ष्मीकांत, 'बस, आप लोगो न मु ह तो सिर्फ एक ही बात है, बीस साल बाद मूल्य घट जायेगा, कल क्या होगा, कोइ नहीं जानता, बीस साल की बात कौन कहे ! यह भी तो हो सकता है कि आपका पांच हजार बीस साल बाद पाच लाख हो जाय ।

'सो तो है । लेकिन मुझ म इतना सब्र नहीं कि पाच हजार क लिए बीस साल तक मु ह बाए बैठा रहूँ !'

'जब तक जिंदगी है, सब्र तो करना होगा ललितदा । बिना सब्र के कुछ हासिल नहीं होता । मेरी ही बात लीजिये न, चार साल से आपके पीछे पड़ा हूँ और आप कतराते रहे हैं '

ललित मुस्कराया, 'अगर तब तक जिन्दा न रहूँ लक्ष्मीकांत, रुपयो का भोग कौन करेगा बुड्ढी मा के अलावा कौन ह मेरा ?'

जीभ से च च की आवाज निकाल कर लक्ष्मीकांत ने टाइ क फ्लैप से ठुड्डी का पसीना पोछ लिया । और फिर ज्योंही उसके होठ खुले, ललित समझ गया कि अब वह क्या बोलेगा । अब वह उसकी भावी पत्नी और बाल-बच्चो की बातें करेगा । बोलेगा, 'आप सिर्फ 'हां' करो ललितदा, दो दिन म शादी हो जायगी । मेरी जानकारी म एक लड़की है । जैसी सुन्दर, वैसी सुशील । लोग आप दोनो की जोड़ी देखते ही रह जायेंगे !—ललित ने सुना है कि शादी ब्याह कराना लक्ष्मीकांत का साइड बिजनेस है ।—इसलिए ललित तत्क्षण बोल उठा, 'मेरी तबीयत अच्छी नहीं लक्ष्मीकांत । कुछ ही दिन हुए एक आपरेशन हुआ है । तुम मेरे लिए टैक्सी ला दो ।'

'अभी लाया ।—लक्ष्मीकांत टैक्सी के लिए परेशान हो उठा । ट्राम-बसो क हुजूम मे कइ बार अपना थुलथुल बदन लिए इस पार से उस पार हुआ । भरती टैक्सी को भी हाथ उठा-उठा कर आवाज दी । खाली टैक्सी क पीछे दौड़ा । आखिरकार उसने एक टैक्सी पकड ही ली ।

'उधर ही जाऊगा'—कह कर लक्ष्मीकांत भी टैक्सी म बैठ गया । ललित की ओर देख कर वह हसा और टाइ के फ्लैप से ठुड्डी का पसीना पोछ लिया । शायद उसकी ठुड्डी म ज्यादा पसीना आता है । ललित के समझ म न आया कि टाइ लक्ष्मीकांत की पोशाक का अश है या ठुड्डी का पसीना पोछने के लिए उसने टाइ बाध रखी है ।

लक्ष्मीकांत ने गार्हस्थ्य धर्म की उपयोगिता पर भाषण देना शुरू ही किया था कि ललित बोल उठा, 'तुम क्या मुझे शादी करने की सलाह दे रहे हो ? तुम्हीं सोचो,

बीमा म कितना झमेला है। पाच हजार के वारिस के लिए शादी करना। बड़ा मंहगा सौदा है। मैं अच्छा भला हूँ क्यों मुसीबत म डालना चाहते हो?

स्कूल के सामने ललित ने टैक्सी छोड़ दी। लक्ष्मीकांत टैक्सी से उतर कर बोला, एक दिन आपके घर आऊगा दादा। पता मेरे पास है।'

– 'आना।'—ललित मुस्कुराकर बोला, 'लेकिन मुझे एक भयकर बीमारी हुई है।

'क्या हुआ है ललितदा?'—लक्ष्मीकांत की आतरिक उत्कठा फूट पड़ी।

'कैंसर।' कह कर ललित ने लक्ष्मीकात के चेहरे पर नजर गड़ा दी। उसने आश्चर्य से देखा लक्ष्मीकांत की आंखों म विस्मय उभर आया है।

दु खित स्वर म लक्ष्मीकांत बोला, 'इस कच्ची उम्र में?'

ललित सिर्फ मुस्कुराया। बोलने को था ही क्या!

'फिर मिलेंगे लक्ष्मीकात!'—कह कर ललित चल पड़ा। फिर मिलेंगे, न मिलने से भी कोइ हर्ज नहीं। ललित की इच्छा हुइ एक बार लक्ष्मीकांत को बुला कर कहे, 'तुम मुझे बहुत अच्छे लगते हो लक्ष्मीकात।' लेकिन दूसरे ही क्षण वह सभल गया। पलट कर देखा, लक्ष्मीकांत धीरे-धीरे ट्राम लाइन की ओर बढ रहा है। एक बार उसने भी पलट कर देखा। आखें चार होने के डर से ललित ने मुह घुमा लिया।

राजमार्ग से एक गली और गली म दो-चार कदम पर ललित का स्कूल। पुराने जमाने की जमींदारी इमारत। बाहरी बरामदे पर पत्थर के दो स्तम्भ और नक्काशीदार रेलिंग। स्कूल के करीब पहुँचते-न-पहुँचते चारो तरफ से सैकड़ों विद्यार्थी सर-सर का शोर करते हुए ललित के पास भागे आये। सैकड़ो प्रश्न। कहा थे सर? क्या हुआ था सर? अब कैसे हैं सर?

रास्ते पर ही सर की पद धूलि के लिए धक्कम धुक्का। ललित का रोग जर्जर शरीर धक्के खा रहा था, फिर भी वह हस रहा था। उसकी चिंतन शक्ति गायब हो गयी थी। अपने प्रति विद्यार्थियो के उमड़ते प्यार म वह डूब रहा था। सैकड़ो मासूम हाथ पद धूलि ले रहे थे और उसकी आखें बद हो रही थीं। दुर्बल शरीर जिस किसी क्षण मिट्टी मे लोट सकता है; फिर भी उसे अच्छा लग रहा था, बहुत अच्छा। उसे ऐसा प्रतीत हो रहा था कि चारो तरफ से उछलती-कूदती प्राण-शक्ति उसे अपने आगोश में समाये जा रही है। नहीं, अब वह कहीं नहीं जा सकता। वह खुद को हजारों विद्यार्थियो के बीच घिरा देख रहा था। प्यार का बधन वह क्या कर तोड सकता है।

ललित जानता है कि छात्रों में वह कितना प्रिय रहा है। क्लास में कितने ही दिन पढ़ाने की जगह उसने गप्पें मारी हैं। झूठमूठ में टास्क देकर विद्यार्थियों को बैठाये रखा है और फिर टास्क नहीं देखा है। लेकिन फिर भी ललित सर विद्यार्थियों में बड़े प्रिय हैं। यही कारण है कि छात्रों के शोरगुल के बीच खड़ा ललित महसूस करने लगा कि वह जिंदा है। मन-ही-मन वह बोल उठा, धन्यवाद, तुम लोगों को मेरा बहुत-बहुत धन्यवाद।

ललित की अवस्था देख कर कई शिक्षक दौड़े आये। उसने सुना, 'उद्धव बाबू विद्यार्थियों को ऊंची आवाज में कह रहे हैं, 'छोड़ दो, सर को छोड़ दो। वह अस्वस्थ हैं। पंडित जी विद्यार्थियों को धक्के देकर हटा रहे हैं, 'भागो, सर को मार डालोगे क्या? जाओ, अपने-अपने क्लास में।'

उद्धव बाबू और पंडित जी हाथ पकड़ कर उसे कामन रूम ले आये। उसे देख कर सब उठ खड़े हुए। पंखा चला दिया गया। खिड़की के पास एक कुर्सी पर उसे बैठाया गया।

अब वह लोगों की भीड़ में खुद को महसूस नहीं कर रहा था। उफनते प्यार में पिघल कर वह चारों तरफ बिखर रहा था। बीच-बीच में मुस्कराने के अलावा उसके पास और कुछ करने को नहीं था। 'अब कैसे हैं?'—एक साधारण-सा प्रश्न और उत्तर में सिर हिला कर 'अच्छा हूँ, बहुत अच्छा।'—बस। दरवाजे के पास छात्रों की भीड़। खिड़कियों पर ललित सर को देखने के लिए छात्रों की उतावली। भीड़ हटाने में ऊंचे क्लास के विद्यार्थियों की उत्सुकता। ललित के जाने-पहचाने चेहरे—साधन अमिताभ निशीथ बहुतों के नाम याद नहीं। कानु बेयरा गिलास पर प्लेट ढंक कर पानी ला रहा है। कानु ने और कभी ललित को महत्व नहीं दिया। वह सुनील हालदार को देख रहा था। दो साल पहले हालदार बाबू ने उससे पचीस रुपये लिये थे, आज तक वापस नहीं दिये। कल-कल में दो साल कट गये। वृद्ध प्रताप बाबू के चेहरे पर हंसी खेल रही है। वह अपनी बेटी का हाथ ललित को देना चाहते थे। अब शायद अपने भाग्य को धन्यवाद दे रहे हैं। लेकिन फिर भी ललित सबके प्रति एक प्रकार की कृतज्ञता अनुभव कर रहा है।

वह सोच रहा था, सब अगर उसे इसी तरह चाहें, इसी तरह प्यार करें तब कौन उससे उसकी जिन्दगी छीन सकेगा। तब वह क्यों कर मरेगा।

पांच मिनट का घंटा बज रहा था। दस बज कर पचपन। खिड़कियों से नन्हे-मुन्ने विद्यार्थी लपक लपक कर क्लास की ओर भाग रहे थे। कामन रूम और दरवाजे की भीड़ सरकने लगी थी। अब स्कूल शुरू होगा। घंटा बज रहा था। स्कूल का घंटा

वह अच्छी तरह पहचानता है। न जाने क्यों आज इस घंटे की आवाज में वह किसी बड़े स्टेशन में बजनेवाले घंटे की आवाज सुन रहा था। स्टेशन से ट्रेन छूटने के पहले ऐसी ही आवाज में घंटा बजता है न! भीड़ हटती जा रही है ललित के अस्तित्व से जाने-पहचाने चेहरे खिसकते जा रहे हैं—ट्रेन छूटने में अब देर नहीं।

## चार

*

रात छोटी थी। बहुत छोटी। भोर की नींद में वह सपना देख रहा था, चंदन साबुन के झाग में वह डूब रहा है। दम बंद हो रहा था। आँख खुलते ही उसने देखा, दुधिया रंग की दो सुडौल सख्त छातियाँ थिरक रही हैं। सोने की एक पतली चेन चूचुक को चूमती हुई उसके कपाल को सहला रही है। रिनि, उसकी पत्नी।

संजय मुस्कराया। एक हाथ से उसका माथा अपनी छाती में भींच कर दूसरे हाथ से उसके बालों में उंगलियाँ फेर रही है रिनि। रिनि-रिन्ति-रितु, उसकी पत्नी, उसकी प्रियतमा। एक झीनी चादर के अंदर दोनों नंगे। रिनि की छाती पर संजय अपना माथा और भी अच्छी तरह रख देता है। तकिया अब बसना हो गया है। रात में रिनि ने चंदन का पाउडर लगाया है। चंदन की खुशबू!

रिनि ने उसका सिर तकिये के ऊपर ठेल दिया, 'उठो, उठो न!'

संजय गुनगुनाने लगा, 'रितु, मितु, सिन्तु, तिन्तु!'

सुगन्धित केश संजय के चेहरे पर फैला कर रिनि उसके होंठों में बोली, 'और कुछ? किन्तु, किन्तु? उठो, उठो न!'

'कब से प्यार कर रही हो मुझे?'

'क्या पता!'

'जगाया क्यों नहीं!'

ठीक वक्त पर जगाया है।

दोनों तकिये के नीचे रखी संजय की कलाई घड़ी उठा कर रिनि बोली, 'छह बज!'

'ठीक वक्त! ठीक वक्त!'—केहुनी के सहारे थोड़ा ऊंचा होकर संजय बोला, 'क्यों कर पता चला कि यही वक्त है? कैसा वक्त? किसका वक्त?

'ओफ्फो छह बज कर बारह हो गये!'

'ठीक वक्त छह दस है।' नोलते-चोल्ते सजय ने फिर तकिया पर माथा रोप दिया, 'ठीक वक्त छह बजकर ग्यारह-नारह-तेरह। प्यार का वक्त, बिस्तर छोड़ने का वक्त, चाय का वक्त, अखबार पढ़ने का वक्त

'पगला !'

'पगलामी का वक्त।'

'छि, निभर खटने म असुर और सुबह आलसी नबर वन।'

'आलसी नहीं कोढिया कहो देवी, कोढिया। यह काढियापे का वक्त है। वक्त या सुनहला मौका ?'

देखो पिन्लु को शायद बुखार है।'

'बुखार।'

लग तो रहा है। सारी रात तग करता रहा। सुबह सोया है। तुम्हें तो भगवान ने कुभकर्णी नींद दी है। भूचाल आये तो भी पता न चले।'

रिनि के उस तरफ मोमजामा पर सोया है पिकलु। सजय का बेटा। रिनि का बेटा। उन दोनों का लाडला पिंकलु। रिनि के गदराये बदन के ऊपर से हाथ बढ़ा कर पिकलु की देह छूकर सजय बोला, 'नहीं तो।'

'तुम्हारे कहने से। रात भर बेचारा खांसता रहा।

सजय के हाथ की छुअन से पिकुल के होंठ हिले। एक हल्की ठुनकी के साथ उसने करवट बदली। हाथ हटा कर सजय बोला, 'श्रीमान कल्न, आप आराम करें।' और फिर वह बाऊल स्वर म गुनगुनाने लगा, 'अपना की पहचान नहीं रे । हर इसा मे खुदा बसा है।' बाऊल सजय का प्रेमसिक्त हृदय '

'छि !'

'छि क्या! गीत है देवी गीत। सजय बाऊल की अपनी रचना।

'हूँ, गीत न और कुछ।'

पिकलु की देह पर हाथ फेरती हुई रिनि बोली, 'मेरा मुना जियेगा, जीने के लिए ही आया है।'

फर्श पर अखबार पड़ा था। बिस्तर से हाथ बढा कर सजय ने अखबार उठा लिया। रिनि की ओर अखबार बढ़ा कर बोला, 'देखो तो प्रथम पृष्ठ पर क्या है।'

'खुद देख लो।'

आखें बद कर सजय बोलने लगा, हड़ताल तिलजला के ओ० सी० की हत्या। रेल दुर्घटना म कइ जानें गयीं। बैंक डकैती। बाढ मे कइ गाव लापता। सूखा पीड़ित क्षेत्रों का प्रधान मत्री का आश्वासन। लूट-खसोट मे बढोतरी

'ओफ्फो।'

आखें खोल सजय हसा, 'अब भी आशा है कि बचेगा।'

'चुप भी रहा।'

सजय मुस्कराया, 'वैसे वक्त और भी खराब आ रहा है देवी। पिक्टु के लिए जीना मुश्किल होगा।'

रिनि ने कान नहीं दिया। पिक्टु के कपाल पर गाल रख कर वह बुखार देखने लगी।

'ऐ रिनिया।' सजय अखबार फेंक कर बिस्तर से उतर पड़ा। फर्श पर सीधा खड़ा होते ही उसके तन-बदन से आलस्य झड़ गया। यह उसका बहुत दिना का अभ्यास है। आराम या आलस से छलाग लगा कर वह सीधे काम म डूब जाता है। बिस्तर छोड़ने के बाद वह अगड़ाइ और जभाइ लेने म वक्त बर्बाद नहीं करता। काम का आदमी है सजय। हमेशा वह अपने को जिस किसी काम के लिए तैयार रखता है। इससे आदमी अहकारी न होकर भी स्वय को महत्व देना सीखता है। सजय ने भी सीखा है। हाँ, इस दिशा म वह सीमा का अतिक्रमण नहीं करता। काम के साथ मौज मस्ती भी उसे चाहिए। मन हल्का नहीं रहने से वह काम नहीं कर सकता। मेघाच्छन्न आकाश, गुम्मा चेहरा और गम्भीर चिंता उसे कतइ पसद नहीं।

'वाह' क्या दिन है। झिलमिलाती धूप। मनभावन शरद्। पूजा पूजा भाव। मन-ही-मन मुस्कराया सजय। सुदर, अति सुन्दर उड़ पड़ू, उड़ता हू बाथ रूम के रैक से ब्रश उठा कर सजय ने देखा। ब्रश पुराना हो गया है। अब बदलना चाहिए। वह ब्रश से बाते करने लगा, 'गुडमार्निंग मि० ब्रश। आप तो अब बुड्ढे हो गये। यहीतो आराम का वक्त है हुजूर। आराम? लेकिन आपकी तकदीर म आराम कहाँ। अब तो रिनि क जेवर चमकायेंगे या मेरे जूते साफ करेंगे। जब तक टे नहीं बोल जाय तब तक कुछ न-कुछ करना पड़ेगा हुजूर। दुनिया का यही दस्तूर है सर। मिसेज पेस्ट, आपकी जवानी पर मुझे तरस आता है। बुड्ढे ब्रश के साथ गृहस्थी करनी पड़ती है। खैर आप चिंता न करे, जल्द ही आपके लिए छैल-छबीला दुल्हा आयेंगे।

बाथ रूम क दर्पण म उसका साया पड़ रहा था। ऊपर देख कर सजय हसा, 'कहा यार सजय। पिछली बार तुमने बड़ी तकलीफ उठाइ। अपने धैर्य और अध्यवसाय के कारण इस यात्रा म बच गये। अबतो मने म हो'

कनखी मार कर सजय मुस्कराया, 'क्या, दो पैसा कमा रहे हो न?'

'सो तो है।'—कह कर सजय मुस्कराया। और फिर उसके चेहरे पर बदली छा गयी। मुह के दोनों तरफ पेस्ट का झाग। असुर-सा दीखता है सजय। ब्रश करते-करते वह मुस्कराया। अपने आप से उसने प्रश्न किया, 'अच्छे हो सजय?

शायद वह अच्छा ही है। अच्छा रहना भी अलग-अलग किस्म का होता है। यदि अतीत से तुलना की जाय तो वह अच्छा ही है। मन यह मानता है क्या? नहीं, मन नहीं मानता। इससे कुछ आता-जाता नहीं। तर्कशास्त्र के अनुसार उसे अच्छा रहना चाहिये। इमानदारी, कर्मठता और निष्ठा तीनों उत्तम थी। इन तीनों से ही मनुष्य को सफलता मिलती है। सफलता यानी सुख का मृदु स्वाद। झकझक बाथरूम के चारों तरफ आँखें फेरी। आइने के पास शैंपू, आफ्टरशेव और सिगरेट का पैकेट। रैक पर साफ सुथरा तौलिया। दुधिया बेसिन। कमोड। गीज। दो साल हुए हिंदुस्तान पार्क में उसने तिनसौ रुपये किराये पर डेढ़ कमरे का फ्लेट लिया है। किराया ज्यादा तो नहीं? ज्यादा नहीं, ठीक ठाक है, कोइ भी ज्यादा नहीं कह सकता। सजय फिर हँसा। झाग से उसके दोनों होठ ढक गये हैं। उसका खुला मुँह विशाल लग रहा है। बहुत कुछ बाघ जैसा लगता है न? क्या पता? सजय ने बहुत दिनों से बाघ बाग नहीं देखा है।

ईमानदारी, कर्मठता और निष्ठा तीनो उत्तम थी। अपनी परछाइ की ओर देख कर फुसफुसाया, 'अब दो बची हैं। दूसरी और तीसरी। क्या पता तीसरी भी है या नहीं। तब दोनो को छोड़ो, मान लो सिर्फ एक बची है—कर्मठता। आखिरी वक्त तक एक भी बची रहे तो गनीमत है।

ठीक साढे आठ बजे वह खाता है। रिनि खाना लगा देती है। टोस्ट, उबला अंडा और कोको के साथ एक गिलास दूध। दोपहर में आफिस में भी वह सूखा खाता है। गोश्त रोटी या टोस्ट, अंडा, उबली सब्जी, केला और एक प्याला काफी। दिन में वह भात नहीं खाता। लंबे अरसे का अभ्यास है। बिल्कुल ठेठ कैशोर्य के समय से उसका खान पान ऐसा ही है। बोस एन्ड कम्पनी के शुरू के दिनों में ही उसने भात खाना छोड़ दिया था। दरअसल नानु बोस की कम्पनी सजय के हाथों ही गढी हुई है।

खाने की जगह बहुत छोटी है। एक टेबिल ने सारी जगह ढँक ली है। एक तरफ ग्रिल और ग्रिल के उस पार बगीचा। ग्रिल के पास गधराज नींबू का झाड। खाते वक्त सजय बगीचे के पेड़ पौधे देखता है। वर्षा, धूप या धुंध के खेल देखता है। आज बड़ा अच्छा दिन है। सुहावनी धूप है न गरम, न ठंडा। आज उड़ता उड़ता रहूँगा

आजकल सजय के मन में कभी कभार उदास बादल घिर आते हैं। कभी-कभी वह खुद को थका महसूस करता है। उम्र ढल रही है क्या? दूध का गिलास रख कर सजय बोला, 'बुड्ढा हो रहा हूँ।'

रिनि ने जैसे सुना ही नहीं। बोली,'एक लिपस्टिक और पिक्लु के लिए एक विलायती फीडर ले आना।

-'लिपस्टिक। शेड?'

'रोजी ड्रीम।'

'रोजी ड्रीम रोजी ड्रीम गुलाबी सपना सपनों का गुलाब

'फिर?'

'नाम एकदम मेल नहीं खाता।'

'क्या?'

'गुलाबी सपनों का मुझ से कोई वास्ता नहीं। एकदम वाहियात नाम है।'

'लेकिन मुझे बहुत पसन्द है।'

'आपकी पसंद आपको मुबारक हो देवी। जी भर कर सिंगार करो देवी। तितली बन तुम वन-वन नाचो। अपने हाथों सिंगार करू मैं तेरा उ हूं, अपने हाथों सिंगार न आजकल अक्सर भूल जाता हूं। ढलती उम्र का तकाजा है।

'सच्ची।'

सजय मुस्कराया। पिक्लु को प्यार करता हुआ बोला, विलायती फीडर चाहिए बेटे। मौज करो पुत्तर।'

आज उड़ूंगा। जरूर उड़ूंगा। चकमक दिन। झकमक दिन। रिनि के लिपस्टिक का रंग क्या है। गुलाबी सपना। गुलाबी सपना जैसा दिन। अब तक रिनि को सजना-सवरना बड़ा पसद है। हर चीज उसे विलायती चाहिए। विलायती ब्रा, विलायती लिपस्टिक। सोने से पहले रिनि मजन करती है, पाउडर लगाती है। तीसरे पहर खोंपा बांधती है। नये-नये किस्म का खोंपा। आँखों म काजल लगाती है भौंहों पर पन्सिल फेरती है। किसके लिए इतना साज सिंगार करती है रिनि? किसी के प्यार म तो नहीं फसी? सभल जा रिनिया, वरना रमेन जैसा हाल होगा। बेचारा रमेन। प्यार ने उसे कहीं का न रखा। कहाँ चला गया मैमनसिंह के जमींदार का बेटा रमेन। जाने दो। आज का दिन कितना खूबसूरत है रिनि। जी भर कर सिंगार करो। जब तक जवानी का दौर है, जब तक पिक्लु छोटा है, जब तक पिक्लु के और भाई-बहन नहीं आये हैं, सजो, खूब सजो। वक्त रहते अपना शौक पूरा कर लो। हमारा वक्त गुजरते ही पिक्लु आदि का वक्त शुरू होगा। पिक्लुओं के प्यार-मुहब्बत का वक्त। पिक्लुओं की मौज मस्ती का वक्त। लेकिन वक्त आने तक पिक्लु वगैरह जिंदा रहे तब न, युद्ध और महामारी के चपेट मे न आये तब न, देश और भी न सड़ गल जाय तब न। तुम लोगों को मैं ने सुख से ही रखा है न? नहीं रखा है क्या? मुझ म तीनों चीज थी—सच्चाई, कर्मठता और निष्ठा। पत्नी

और आखिरी शायद पाकेटमार ले उड़ा। तलाशता फिरता हू, पर दोनो में से एक भी दिखाई नहीं देती। काम तो अब भी कर सकता हू, लेकिन कब तक ? उम्र ढलान की ओर बढ रही है। उम्र होने पर मनुष्य के कितने ही सद्गुण झड़ जाते हैं और बदले म बढता है अनुभव। तुम लोगों की खातिर मैं ने अपने दो गुणा की बलि दी है।

लबे अरसे तक मुझ म तीनों गुण मौजूद थे। जब मैं चाय की दुकान मे बच्चा ब्वाय था, जब मैं मोटर गैरेज म छोकरा कारीगर था—तीनो गुण मुझ म मौजूद थे। तब तक मैं ने न कभी चोरी की थी, न कभी झूठ बोला था।

शायद मैं बड़ा धर्म-भीरु था। नानु बोस ने मुझे रास्ता दिखाया। उन दिनों मैं ने आर्डर सप्लाय का काम शुरू किया था। आर्डर के लिए दफ्तरों के चक्कर लगाता था। नानु बोस सरकारी परचेज म थे। दोना हाथ से पैसा लूटते थे। कभी कभार बगैर पैसा लिए मुझे आर्डर दिया करते थे। एक दिन मुझे बुला कर बोले, 'इस तरह कुछ नहीं कर सकेंगे। आप इमानदार और मेहनती हैं। मुझ से हाथ मिलाइये। रगिनी बोस के नाम से कपनी बना रहा हूँ। रगिनी मेरी पत्नी का नाम है। समझ ही रहे हैं, सरकारी नौकर हूँ, अपने नाम से बिजनैस नहीं कर सकता। पूजी मैं लगाऊगा। आप कपनी चलायेंगे। चिंता की कोई बात नहीं।

सचमुच म चिंता की कोइ बात नहीं थी। नानु बोस की कपनी खुली—बोस एण्ड कपनी। डेढ महीने तक एक पैसे का आर्डर नहीं। नानु बोस के एकाध आर्डर के अलावा और कुछ नहीं। छह महीने तक नुकसान-ही-नुकसान। चांदनी मे दफ्तर। दफ्तर का भाड़ा, टेलीफान का बिल। स्टील आल्मारी, टाइपराइटर, रेफ्रिजरेटर, और कुर्सी टेबिल मे फसी मोटी पूजी। नानु बोस ने चिंता करने मना किया था, फिर भी न जाने क्यों चिंता मुझे आ दबोचती थी। चिंता नहीं, दुश्चिन्ता। कपनी चला सकूगा तो ? लेकिन नानु बोस अक्सर कहा करते, 'आप चिंता न करें।' मेरी पूजी और आपकी मेहनत से कपनी खड़ी हो जायगी। हुआ भी ऐसा है। रिनि, तुम्हारी लिपस्टिक का नाम क्या है ? गुलाबी सपना या स्वप्निल गुलाब ? रिनि, रिन्ति, मिन्ति ! रिनिया तेरा चौखटा खूबसूरत है। अगर चौखटा खूबसूरत न होता, तो लिपस्टिक भला क्या कर लेती ! कारोबार मे भी यही सिद्धात लागू है। पूजी की अपेक्षा कारोबार म चरित्र महत्वपूर्ण होता है। मेरे चरित्र म तीनों सद्गुण थे, इसलिए बोस एण्ड कपनी अपने पैरो पर खड़ी हो गयी। शायद नानु बोस चाहते थे कि कारोबार दिखा कर काला धन सफेद करेंगे, लेकिन कपनी का लाभ देख कर आश्चर्यित हुए। उनके मन म कौतूहल जगा, संदेह पैदा हुआ। क्या मैं बोस एण्ड कपनी का बेड़ा नहीं गर्क कर सकता था ? आज के मनभावन दिन की सौगध, अगर मैं चाहता तो बोस एण्ड कपनी म लाल बत्ती जल उठती। लेकिन मेरे सद्गुणों ने कभी मुझे ऐसा सोचने तक नहीं

दिया। आज के झिलमिल दिन की कसम, बोस एण्ड कपनी से मैं ने वेतन के अलावा और कुछ न लिया। मैं ने कपनी के लिए दिन-रात परिश्रम किया। यौवन का प्रथम चरण बोस एण्ड कपनी की खातिर दफ्तरों के चक्कर म बीत गया। कभी किसी युवती का प्यार भरी आखों से देखने का मौका नहीं मिला। प्राकृतिक सौन्दर्य क्षण भर का मुझे प्रभावित न कर सका। कपनी क अलावा मैंने कुछ नहीं सोचा, कुछ नहीं देखा। लेकिन मुझे क्या मिला? कपनी चल निकली और बोस के खाते क्रिडेटार जमा होने लगे। मैं ने जिस कपनी को अपने खून-पसीने से सींचा, उसी कपनी ने मुझे दूध की मक्खी की तरह उठा फेंका। इससे मेरा कोई खास नुकसान नहीं हुआ। बोस एण्ड कपनी ने मुझे निकाल दिया और मैं अपने तीनों गुणों के साथ निकल आया। लेन देन मेरे हाथ था। सब मुझे जानते थे, मुझ पर विश्वास करते थे। थोड़ा कष्ट हुआ पर मैं खड़ा हो गया। मैसर्स एण्ड कपनी ने मुझे नौकरी दी। साल भर बाद पचास रुपये ज्यादा वेतन पर मैं जाहानसन एण्ड ग्याल में घुस गया। दो साल बाद मेरी इमानदारी, कर्मठता और निष्ठा ने मुझे पुरस्कार दिया। मुझे परचेज में जूनियर आफिसर की कुर्सी मिली। परचेज की कुर्सी पर बैठते ही मेरी हालत पके कटहल जैसी हो गयी। चारों तरफ मक्खियां भिनभिनाने लगीं। अपने सद्गुणों के बदौलत मैं लाभ पर विजय पाता गया। लेकिन शत्रु-पक्ष दुर्बल नहीं था। सद्गुणों की रक्षा के लिए मैं ने ऊपरवाले स प्रार्थना की कि मुझे मेरी पुरानी जगह सेक्शन एडमिनेशन म वापस ले लिया जाय। ऊपरवाले ने पहले भौंह सिकोड़ कर मेरा मुआयना किया फिर मुस्करा कर बोले, 'आपकी परेशानी हम समझते हैं। आप जहाँ हैं, वहीं डटे रहें। और मेरी एक सलाह मानिये, कपनी का बचा कर पैसावाला बनना चाहें, तो जरूर बनिये, हम तब भी आपको इमानदार ही समझेंगे। कपनी आपको चार सौ रुपये वेतन देती है, आज के बाजार म चार सौ से कुछ नहीं होता। यही पैसा कमाने की उम्र है। सिर्फ इतना खयाल रखिए कि कपनी को कोई नुकसान न हो।

दरअसल मेरा वह दार्शनिक ऊपरवाला मुझ पर खासा टाल्ना चाहता था। बचपन से मेरे पास तीन चीज थी। तीनों को मैं सीने से चिपकाये था। इन तीनों के लिए मैं सब कुछ त्याग सकता था। लेकिन ऊपरवाला जानता था कि परचेज में सच्चरित्र होना खतरे से खाली नहीं। सहयोगी उसे रोड़ा समझेंगे, उस पर सदेह करेंगे।

मैं परचेज म टिक गया। दो साल पहले तुम आयी। बुजुर्गों ने ठीक ही कहा है कि शादी-ब्याह एक सयोग है। हां, मेरी जिन्दगी म तुम्हारा आना एक सयोग ही तो है। तुम्हारे पिता आर्डर लेने आये थे। मझियल काठी, गोरा रग। तीखे नाक नक्श। आखों म भिलमिलाता कौतूहल। तुम्हारे दूरदर्शी पिता कपनी को जानते थे। मेरी पद-मर्यादा समझते उन्हें देर न लगी। बस, एक ही नजर म ताड़ गये कि

उल्टे काम का है। गदहे के एकाध गुण यदि झपट लिए जाय, तो दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति करेगा। उन्होंने मुझे कोई उपदेश नहीं दिया। सिर्फ अपनी सुन्दरी कन्या को भिड़ा दिया और झटपट सात फेरे लगवा दिये। मेरा मन कहता है कि मुझ पर नकेल डाल कर तेरा दूरदर्शी बाप मन-ही-मन जरूर हँसा होगा।

रिनि! मेरी रिनि! अर्द्धांगिनी! सहधर्मिनी! माइ स्वीट हार्ट, यह सौ फी सदी सच है कि रुपयों की मुझे सख्त जरूरत थी। शादी के लिए। घर के लिए और घर बसाने के लिए। मेरा गोबर गणेश बड़ा भाई बैंक में पिउन था। उसके आश्रय में थी मेरी विधवा माँ और एक क्वांरी बहन। हर महीने उनलोगों के लिए रुपया भेजना पड़ता था। मैं मेस में रहता था। जिन्दगी मजे में कट रही थी। अब तक मेरे तीनों सद्गुण अपने आप पर गर्व कर रहे थे। बस, आ गयी तुम। अचानक रुपये की जरूरत महसूस हुई और मैं घबरा गया। क्या करूँ? क्या न करूँ? कुछ समझ में नहीं आता था। अचानक ख्याल आया, क्यों न कुछ दिनों के लिए महाजनों से कर्ज ले लिया जाय? और मैं ने महाजनों से कर्ज ले लिया। ये महाजन हमारी कम्पनी का माल सप्लाय करते हैं। मैं भला क्यों कर कर्ज चुकाता। रिनि, मेरी रिनि, अगर कहूँ कि इसके लिए तुम जिम्मेवार हो, तो गलत होगा। न तुम जिम्मेवार हो, न मैं जिम्मेवार हूँ। अगर कोई जिम्मेवार है, तो वह है मेरी उम्र। दरअसल उम्र बढ़ने पर एक-आध गुण झड़ जाते हैं और अनुभव बढ़ जाता है। रिनि, मेरे दिल की मल्लिका, यह मत सोचना कि यह सब अचानक हो गया। अचानक कुछ भी नहीं होता, अगर हो भी जाय तो इन्सान खुद को सम्भाल लेता है। रिनि, रिन्ति, मेरे दिल की रुनझुन, तुम्हारी सौगंध मेरा मन बहुत पहले से तैयार था, सिर्फ अभावजनित लज्जा रोड़े अटका रही थी। जानती हो रुनझुन, मेरे प्राणप्रिय तीन गुणों में से एक मुझे ठेंगा दिखा गया। अब सिर्फ दो रह गये हैं। तुम भी हँस क्या? अरे हाँ, तुम्हारी लिपस्टिक का नाम क्या है? गुलाबी सपना? हाँ, हाँ, गुलाबी सपना ही तो है। देख लिया न, तुम्हारी फरमाइश मैं कभी नहीं भूलता। तुम्हारी लिपस्टिक, विदेशी का पीडर—सब लाऊंगा। तुम्हारी हर फरमाइश पूरी करूंगा देवी। फ्रिज, रेडियोग्राम, आलमारी—एक-एक कर सब ला दिया है न! कौन कहेगा कि इन चीजों की मुझे जरूरत नहीं? कौन कहेगा कि अच्छी तरह नहीं रहना चाहिये? कौन कहेगा कि अपने मुन्ने को देशी पीडर लाना, अपनी बीबी को लिपस्टिक की जगह पान खाने कहना? जब तक मेरे तीनों गुण मौजूद थे, तब तक क्या मैं बहुत अच्छा था? और अब खराब हूँ। अपने तीनों गुणों के लिए मैं संसार त्याग सकता था, लेकिन मैं ने संसार का असल लिया और गुण त्याग दिये। इतना बड़ा त्याग भला कौन करता है? अगर मैं स्वयं को सन्यासी कहूँ, तो तुम हंसोगी न। चकमक रिनि, झलमल रिनि, पर देखाये उड़ी

जा रही है मेरी टैक्सी। नौकरी के अलावा अब मैं एक कंपनी का मालिक भी हूँ। मेरा वही गोबर गणेश भाई कंपनी चलाता है। वह मेरा पार्टनर है। मैं उस कंपनी से माल खरीदता हूँ। कभी-कभी बड़ा आश्चर्य होता है कि अपनी बेची हुई चीज मैं खुद खरीदता हूँ। शायद जिन्दगी के हर क्षेत्र में ऐसा ही होता है। मनभावन दिन मुझे उड़ाये ले जा रहा है मैं उड़ता रहूँगा।

दोपहर को दफ्तर में संजय का एक फोन आया। संजय ने फोन उठाया 'हैलो।'

परली ओर से मरियल-सी मीठी आवाज तैर आयी, 'संजय, तुम संजय हो न? मैं संजय सेन को चाहता हूँ।'

'बोल रहा हूँ।'

'मैं ललित।'

'ललित!'—संजय स्तब्ध हो उठा।

'हाँ। अस्पताल से वापस आ गया हूँ।'

संजय सामान्य होकर हँसा और ऊँची आवाज में बोला, 'कहो प्यारे अब कैसे हो? सिर्फ एक बार तुम्हें देखने अस्पताल गया था, फिर जा ही न सका। साली नौकरी ही ऐसी है कि कहीं आने-जाने का वक्त ही नहीं मिलता। कब आये? तुम भी कमाल हो यार, कम-से-कम खबर तो दे सकते थे।'

'दे तो रहा हूँ। असली खबर यह है कि हाथ में गिनती के कुछ दिन हैं। यार-दोस्तों से थोड़ा मिल-जुल लूँ।'

'बकवास बंद! बोल, कहाँ से बोल रहा है?'

'स्कूल से।'

'आ रहे। तुम स्कूल में रहो। मैं अभी आफिस में कुछ मार कर टैक्सी में उड़ता हुआ आ रहा हूँ। तुम्हें साथ लूँगा।'

'उसके बाद?'

उसके बाद सेलिब्रेशन।

ललित हँसा, 'सेलिब्रेशन की जरूरत नहीं। तीसरे पहर मेरे घर आ जाओ। तुलसी भी आयेगा।'

संजय ने फोन रखा। कुछेक क्षण गुमसुम बैठा रहा। अचानक उसने देखा, टेबिल के शीशे पर रखे हाथ की उँगलियाँ काँप रही हैं।

## पाच

*

ललित ने मानस को उसके दफ्तर मे फोन किया। मानस बड़ी बुआ का पडोसी है। अस्पताल से वापस आने की खबर वह बुआ जी को दे देगा।

ललित ने आदित्य को फोन किया। वह नहीं मिला। कभी मिलता भी नही है। हमेशा पास की टेबिल के कालीनाथ फोन पकड़ते हैं और एक ही बात बोलते हैं, वह अपनी टेबिल पर नहीं हैं। सुबह से नहीं देख रहा हूँ। नहीं, नहीं, आये हैं देखता हू निकल गये आपका शुभ नाम '

ललित ने आज भी अपना नाम बताया।

कालीनाथ परिचय की हसी हस कर बोले, 'अरे आप। कैसे हैं? बहुत दिनों से आपका फोन नहीं आया। सब कुशल तो है?'

'अच्छा हू। आप कैसे हैं?'

'सब ऊपरवाले की दया है।'

'उससे कहेंगे कि तीसरे पहर मेरे घर आये।'

'तीसरे पहर!'—चिन्तित स्वर में कालीनाथ बोले, 'आज मैदान म हमलोगों की मीटिंग है। ठीक है, आदित्य बाबू से कह दू गा।'

'आदित्य भी मीटिंग म जा रहा है क्या?'

कालीनाथ हस कर बोले, 'जाना तो कभी चाहते नहीं। आज ले जाता। बहुत जरूरी काम है क्या?'

क्षण भर सोच कर ललित बोला, 'काइ खास नहीं। मैं बीमार था, आदित्य जानता है। अस्पताल से वापस आ गया हू, उसे कह देंगे। आ जाता तो अच्छा होता। आज वक्त न मिले, ता कल मुझ से मिल ले।'

'क्या हुआ था?'

'पट की बीमारी।'

'पर पेट की तकलीफ तो मैं भी भोग रहा हूँ। मेरा तो क्रानिक है। आपको क्या हुआ था?'

'मेरा भी क्रानिक है। लगता है ठीक नहीं होगा।'

'अल्सर?'

'वैसा ही कुछ। आखिर से कर देंगे।'

'अच्छा। बंगाल तो पेट-रोग घर ही गया साहब! आप एक काम करें। रोज कच्चा पपीता और थानकुनी का शाक खायें। सुबह-सुबह एक गिलास पानी में कागजी नींबू का रस सेवन करें। पानी जितना पी सकें, अच्छा है। नल का पानी नहीं, कलकत्ते के नल का पानी विषाक्त है, ट्यूबवेल का पानी पिया करें।'

'अच्छा!'-कह कर ललित ने फोन रख दिया। कालीनाथ का काला-कलूटा मरियल चेहरा उसकी आँखों के सामने उभर आया। गोल्ड-प्लेटेड फ्रेम की ऐनक लगाता है कालीनाथ। धोती और सफेद शर्ट पहनता है। राउंड गोल्ड फ्रेम की ऐनक लगाने से किसी की उम्र यूँ ही दस-बारह साल बढ़ जाती है। बारहों महीने की सफेदपोशी एक अजीब-सी ऊब पैदा करती है। अगर कोई हर रोज कालीनाथ के साथ घंटा-आध घंटा बिताये, तो निश्चित रूप से उसे मानसिक थकान होगी। आदित्य शायद इसलिए अपनी टेबिल पर नहीं रहता।

तीसरा फोन ललित ने संजय को किया। फोन रख कर वह मन-ही-मन मुस्कराया। उसके दोस्तों में संजय की हालत सबसे अच्छी है। दोस्तों में वही संजय सबसे कम पढ़ा-लिखा है। लेकिन पकड़ में नहीं आता। फर्राटे की अंग्रेजी बोलता है। दुनिया की खबरें रखता है। पहले दर्जे का जिद्दी है संजय। ललित को वह बरसाती रात याद हो आयी। फुटबाल के एक चैरिटी मैच का टिकट के लिए पाँच-सात दोस्त खा-पीकर रात में ही मैदान चले गये थे। बारिश उतर आयी थी। तो छाता और पेड़ की दो डाल गाड़ कर, ऊपर चादर टाँग कर टार्च की रोशनी में वे ताश खेले थे। ठोकरियों के नाम पर चमत्कारपूर्ण गप्पें चली थीं। हँसी ठहाका चला था। फिल्मी गीत गाये गये थे। ललित वगैरह की महफिल जमने से पहले वहाँ बीस आदमियों की महफिल जम चुकी थी। परिचय हुआ था। परस्पर सिगरेट चली थी। बोतल से पानी पीया गया था। रात बढ़ने के साथ-साथ फुटबाल प्रेमियों की संख्या बढ़ती गयी थी। सुबह ललित आदि ने खुद को तीन सौ आदमियों के पीछे पाया था। रात में जब वे पच्चीस-तीस थे, अखबार वाले फोटो ले गये थे। अखबार में उनके धैर्य की तस्वीर छपी। उजाला बढ़ने के साथ फुटबाल प्रेमियों का ज्वार आने लगा। ललित आदि ने देखा कि जगह की खरीद-बिक्री चल रही है। रुपया-दो रुपया, जैसा पट जाय। हजारों की कई लाइनें। सही लाइन खोज निकालना मुश्किल था।

घुड़सवार आये। घोड़ा दौड़ा कर लाइन ठीक करने लगे। लेकिन कौन किसकी सुनता है। ललित आदि हजारों के पीछे। अब टिकट की कोई आशा नहीं। ललित वगैरह लौट पड़े, लेकिन सजय नहीं लौटा। वह बिना मैच देखे नहीं जायेगा। मैदान छोड़ना सजय का स्वभाव नहीं। वह जिद्दी है। उसमे धैर्य है। आखिरकार वह मैच देख कर वापस आया था। पूछने पर उसने एक ही बात कही थी, 'कोई दयावश किसी को कुछ नहीं देता। खुद हासिल करना पड़ता है, धैर्य रखना पड़ता है।' सचमुच में सजय में धैर्य है। ललित यह स्वीकार करता है। सभवत असीम धैर्य और लगन ने सजय को सब कुछ दिया है। एक वक्त था या कभी-कभार ऐसा वक्त आता है जब सजय को ललित अपनी अपेक्षा अत्यधिक निम्न स्तर का समझता है। यह शायद इसलिए कि सजय ज्यादा पढ़ा-लिखा नहीं है। ललित सोचता, अगर थोड़ा परिश्रम किया जाय तो सजय से भी ऊची जगह वह सहज ही पहुच सकता है।

ऊची जगह की बात तो दूर रही, ललित सजय की जगह भी न पहुच सका। एम० ए० करते ही स्कूल में नौकरी मिली। फिलहाल यही सही। जब तक कोई अच्छा मौका नहीं आता, तब तक स्कूल की नौकरी करेगा। स्कूल म सात साल बीत गये, पर कोई मौका नहीं आया। सच कहा जाय तो ललित कभी महत्वाकाक्षी नहीं रहा। परीक्षा मे जितना लिखने से पास मार्क आ जाय, उससे ज्यादा लिखना ललित व्यर्थ समझता था। छुट्टी, हड़ताल और अनुपस्थिति का स्वाद चख कर ललित आलसी और अड्डेबाज बन गया। दस से पाच तक की नौकरी लोग कैसे करते हैं—यह सोचते ही वह सिहर उठता। इसलिए कभी-कभार उसे सजय का परिश्रम भी व्यर्थ प्रतीत होता। लेकिन कभी-कभी—राह चलते शो-केस म कीमती चीज देख कर, या यह जान कर कि कोई दोस्त दूर, बहुत दूर घूमने जा रहा है, या मा घर बनाने कहती है—ललित सोचता कि धनवान होना बुरा नहीं। रुपये होते तो मनमानी गुलछर्रे उडा सकता। कभी-कभार सोचता, कभी भी उसने कुछ बनने की कोशिश नहीं की लेकिन कोशिश करने पर क्या वह बन सकता?

ललित ने सिर हिलाया। नहीं। वह नहीं बन सकता। बड़ा बनने म बहुत झमेला है। वह मजे म है। कोई झझट नहीं। कोई झमेला नहीं। मस्त जिंदगी जी रहा है। यानी मौजूदा हालत ही अच्छी है। अगर वह थोड़ा पैसेवाला होता, कम-से-कम किसी स्कूल का अध्यापक भी होता, तो अब तक शादी हो चुकी होती। भगवान जाने, दो-चार बच्चे हो गये होते। तब! तब क्या होता?

स्कूल से निकलते वक्त गणित के अध्यापक सतीश हालदार ने उसे पकड़ा। एक टिकट बढ़ा कर हालदार महोदय बोले, 'लाटरी टिकट।'

ललित हंसा, 'प्राइज ।'

'एक लाख दस हजार ।'

'इतने से मेरा क्या होगा ?'

कम-से-कम सिगरेट का खर्च तो निकल ही आयगा । टिकट के लिए सिर्फ एक रुपया । लिखिये ।

यह सतीश हाल्दार का साइड बिजनेस है । शायद बीस रुपये का टिकट बेच कर उन्हें छह रुपये का फायदा होता है । ललित ने बड़ी उपेक्षा से अपना नाम लिखा ।

फार्म लेकर हाल्दार महोदय नॉम डिप्लूम देख कर मुस्कराये, 'किसी कन्या का नाम है क्या ?'

'जी हां ।'—

'अहा, क्या नाम है । मितु ।'

लाटरी निकल आयी तो सारे रुपये मितु को देगा । नहीं, मितु को सब नहीं देगा । आधा मां को देगा ।—दूसरे ही क्षण ललित ने सोच कर देखा, 'धत् आधा लेकर भी मितु क्या करेगी ? उसके पास सब कुछ है । शायद उसकी लाटरी के रुपये लेगी ही नहीं ।—सतीश हाल्दार को बुला कर बोला, 'नाम बदलना है ।'

'नाम बताइये ।'

क्षण भर सोच कर ललित बोला, 'धैर्य । वसंत ।'

नाम लिख कर हाल्दार महोदय हंस कर बोले, 'नाम पर लोग बहुत सोचते हैं । दरअसल नाम से कुछ आता जाता नहीं । तकदीर साथ दे, तो जिस किसी नाम पर मिल सकता है ।

चलते-चलते अचानक ललित के मन में आया, हाल्दार साहब क्या उसकी बीमारी के बारे में जानते हैं ?—अगर जानते हैं, तो उसके हाथ टिकट बेचना क्या उचित है ?

दोपहर में खाने के बाद मां को बुला कर ललित बोला, 'अच्छा मां, जब मैं घर नहीं रहता, दोपहर को तुम क्या करती हो ?'

'पास-पड़ोस में जाती हूं । बहू-बेटियों के साथ गपशप करती हूँ । अपने घर भी बैठक जमती है । घर-घर की बातें होती हैं । लूडो चलता है । ताश जमता है ।'

'मां, तुम तो बड़ी अड्डाबाज हो ।'

'आखिर मां किसकी हूँ ।'—मां मुस्करायी ।

'अब समझा, अड्डाबाजी मैं ने तुम से पायी है, पिताजी से नहीं ।'

'तुम्हारा तो खानदान ही बैठकबाजों का है बेटा । घर बैठे रोटी मिल जाय फिर करना क्या है । जेठ जी को भी तो देखती ।'

ललित बीच में ही बोल उठा, अपना लूडो निकालो । दो-चार गेम तुम्हें हरा दूं ।'

'खेलोगे !'—मा अवाक हुई।

'मा, तुम तो यहा की लुडो चैम्पियन हो न!'

दवचौं-सी हसी हस कर मा बोलीं, 'मेरे हाथ द

'सच! तब तो आज तुम्हारी चैम्पियनगिरी छीन लूगा!'

'मैं तुम्हें यू ही दे देती हूँ!'

'नहीं, खेल कर लूगा। व्या नहीं चाहिए।'

'धुत् पगला!'—मा ने फर्श पर सतरजी बिछायी। आचल में ऐनक पोंछ कर लुडो बिछाया।—'थोड़ा आराम कर लेते, धूप में घूमते रहे हो।'—

मा पर कान न देकर ललित ने दान चली, 'देखो मा, छक्का।'

'मुझे क्या दिखाई नहीं देता! पजा है, पजा।'

'एकबार और चलू, यह ट्रायल रहा!'

'ठीक है।'

ललित हस कर बोला, 'नहीं, मैं कमजोर खिलाड़ी नहीं हूँ।|अब तुम्हारा दान।

मा के दान में एक पड़ा। ललित ने ठहाका लगाया, 'यही अच्छे दान का हाथ है!'

ललित ने दान चली, 'छक्का, फिर छक्का!'—मां का चेहरा मुरझा गया, 'ठीक से चलो, तीन छक्का सड़ जाता है!'

फिर छक्का। तीन छक्का। मां थोड़ा झुक कर बोलीं, 'पजा है न? दो छक्का, एक पजा!'

ललित ने सिर हिलाया, 'पजा नहीं। छक्का, तीन छक्का सड़ गया।

'बढ़िया से चल। खाली डिबिया हिलाता है।

ललित को इस बार एक आया। मा जरा भी खुश नहीं हुई।

मा को छक्का आया। दो छक्का। सास बद किये ललित देख रहा था, तीन छक्का न हो जाय। नहीं, दो छक्का तीन। मा की दो गोटियां निकल गयीं। ललित चीख पड़ा, 'वाह अब! आगे बढ़ो मां, आगे बढ़ो!'

मा मुस्करायी, 'खाली मैदान में अकेली मैं क्या करूगी? तुम तो घर ही बैठे हो। मैदान में आओ!'

'पूरी बाजी में अगर छक्का नहीं आये?'

धुत् ऐसा कहीं होता है!'

क्यों नहीं, यह तो चांस की बात है, नहीं भी आ सकता है'

'नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। ठीक से चलो, जरूर आयेगा!'

'जय मां काली, छक्का!'—ललित ने देखा छक्का आया है!'

सचमुच में मां का हाथ अच्छा है। अब देखा, छक्का, पजा।

'मा तुम मतर जानती हो क्या ?'

मां सिर्फ मुस्करायी। खेल आगे बढता गया। मां की एक चाल पर ललित चीख उठा, 'तीन म मेरी गोटी खा लो मां।'

मा ने दूसरी गोटी चल दी। मुस्करा कर बोली, 'अपनी गोटी पक्की करूगी। खाऊगी क्या ?

'यही तुम पक्की खिलाड़ हो, मुह की गोटी नहीं खाती।'

'अपनी गोटी पक्की होती हो तो दूसरे की गोटी कौन खाता है।'

'मैं खाऊगा।'

'खा ले खाने तो दे रही हू। तुम आगे बढो। लेकिन दान ही तो नहीं आता। अच्छा मैं चल दू।'

मा ललित की गोटी नहीं खाती। दूसरी गोटी चल देती है। अपनी गोटी ललित की गोटी क सामने रख देती है ताकि ललित खा ले, ललित आगे बढे। आगे बढ बेटे तू आगे बढ। तू सामने नहीं रहेगा, तो मैं कहां जाऊगी।

खेल नहीं जम पाता। मां आगे बढती जाती है। ललित कछुए की चाल चलता है।

'खेल नहीं जम रहा है मा।'

'तेरा दान मैं चल दू ?'

'खेल तो खेल है मां। तुम चलोगी तो वह तुम्हारा होगा।

जब मां की उम्र और कम थी, मां अक्सर रामप्रसादी गुनगुनती थी। रामप्रसाद क भजन की दो-तीन पक्तियाँ ललित को बड़ी प्रिय थीं। वह मां के मुह से सुनी एक पक्ति गुनगुना रहा था, 'मां बेटे का चला मुकदमा, एक सवाल पर होगी डिग्री'

एक-एक कर मुहल्ले की वृद्धाए दरवाजे पर इकट्ठी होने लगीं। 'क्या हो रहा है ललित की मां ? बेटे के साथ लटा खेल रही हो ? हार-जीत भी है क्या ? ललित तो बड़ा अच्छा लड़का बन गया है।'

ललित मां क कान में फुसफुसाया, 'मां, तुम तो मुहल्ले की बुढ्ढियों की लीडर हो। तुम्हें न देख कर सब यहाँ आ रही हैं।'

कमरे म बुढ्ढियों की महफिल जम गयी। ललित बीच म ही खेल छोड़ कर उठ गया। बोला, 'अब तुम लोग खेलो।'

'तुम भी बैठो न।'

'मैं थोड़ी खुली हवा में जाता हूँ।'

'इस भरी दोपहरी म कहाँ जाओगे।'

'अपनी गली में।'

पास-पड़ोस की बुढ़ियों के रहने पड़ ललित मां के सामने सिगरेट नहीं पीता। उसका खयाल है कि इससे मां का अपमान होता है। तकिया के नीचे से सिगरेट का पैकेट और माचिस लेकर वह बाहर निकल गया। वह मन-ही-मन बुदबुदाया, 'मां तुम अपने दल की लीडर हो और मैं अपने दल म हीरो हूं। आगे बढ़ो मां आगे बढ़ो। देखूं किस तरह तुम मुझे पीछे छोड़ कर आगे बढ़ती हो।' वह मन-ही मन मुस्कराया।

ठंडी-ठंडी छाया म ठंडी ठंडी सांस लेती गली। गली के नुक्कड़ पर चिलचिलाती धूप। धूप और छाया की सीमा रेखा पर ललित आ खड़ा हुआ। आंखें बंद कर के उसने सोचा कि वह नदी के किनारे खड़ा है। ब्रह्मपुत्र के किनारे बसा उसका गांव। गांव का धुंधला-सा चित्र ही वह देख पाता है। उन दिनों वह बच्चा था, मां भी बुड्ढी नहीं हुई थी। पिता जिन्दा थे। उन दिनों वह तैरता था, गाछ पर चढ़ता था। आश्चर्य है, कलकत्ता आने पर उसे कभी गंगा म तैरने की इच्छा नहीं हुई। गांव छूटा और उसके साथ-साथ छूट गया तैरना, छूट गया पेड़ की फुनगिया पर चढ़ना। शायद गांव वापस जाने पर एक बार फिर उसमें तैरने की इच्छा हो सकती है, गिलहिरी की तरह वह गाछ पर चढ़ सकता है। देश-विभाजन के बाद एक दिन वह अपने मां-बाप के साथ रात की गहरी चुप्पी म ट्रेन पकड़ने स्टेशन आया था। वह रात ललित की आंखों म धुंधली है। उसे सिर्फ इतनी ही याद है कि निंदियारी आंखों म उसने अपने आंगन मे लाल चींटियों की बांबी पर पैर रख दिया था। तलवे से जांघ तक बिजली की लहर दौड़ गयी थी। वह तिलमिला उठा था। वह चीख-चीख कर रो पड़ा था। दबी जुबान म उसके पिता ने कहा था, 'चुप कर बेटे, चुप कर।' उसका हाथ पकड़ कर पिता उसे घसीटते हुए ले जा रहे थे। तब तक उसकी आंखों म नींद थी, माथे मे सपनों का राज था। अंधेरी रात म पिता का हाथ पकड़े वह कहां जा रहा है।

हौले-हौले वक्त गुजरता गया और आहिस्ते-आहिस्ते ललित अपना घर भूलता गया, अपना गांव भूलता गया, लेकिन आज भी जहरीली चींटियों के दंशन की याद कभी-कभार सिर उठाती है और उसके अंदर का नन्हा-मुन्ना ललित तिलमिला उठता है। इस आंगन म कितनी उछल-कूद की है उसने पर कभी चींटियों की बांबी नहीं दिखी। लेकिन उसके अपने आंगन म कहां से चींटियाँ आयी थीं? कहाँ से आयी थीं लाल-लाल जहरीली चींटियाँ?

मां अब भी गांव की गप्पें लेकर बैठती है। खेत-खमार, नदी-नाला—ले-देकर बस एक ही गप्प। ललित फिर भी सुनता है। न जाने कितनी बार सुन चुका है फिर भी नहीं ऊबता। मां की आवाज म गांव की मिट्टी की गंध है। मां बोलती है और मिट्टी की सोंधी-सोंधी नमकीन गंध हवा मे घुलती जाती है। लेकिन जहरीली चींटियों के दंशन याद आते ही उस पर दहशत छा जाती है।

## छः

*

सिगरेट अब तक खत्म नहीं हुई थी। ललित ने देखा, आदित्य आ रहा है। वेग, आफिस से भाग आया है। पीछे-पीछे आ रही है एक काली-कलूटी युवती। ललित ने सोचा युवती आदित्य के साथ नहीं बल्कि कहीं और जा रही है। नहीं, वह आदित्य के साथ है।

'माइ लोलिंग!'—आवाज देकर आदित्य हँसा। दुबला-पतला आदित्य। गोरा-चिट्टा आदित्य। घुँघराले बालों और मोटे होंठों का आदित्य। रंगी पोशाक में अग आदित्य। कलकत्ता के एक खानदानी परिवार का नौजवान आदित्य। बागबाजार में उसके परिवार की एक विशाल इमारत है। अंतःपुर में जाना मना है। शोभाबाजार में अभी भी उसके पिता की एक रखैल है। आदित्य और उसके भाई पिता की रखैल को रानी माँ या ऐसा ही कुछ कह कर पुकारते हैं। घर में कदम रखते ही आदित्य आदि डेढ़ सौ साल पुरानी दुनिया में प्रवेश कर जाते हैं। आज भी उसके घर डेढ़ सौ साल पुराने सामान और आचार-व्यवहार बरकरार हैं।

'आओ!'—कह कर ललित एक फीकी मुस्कान मुस्कराया। बोला, 'घर में बुड्ढियों की महफिल जमी है। तुम दोनों को कहाँ बैठाऊँ!'

युवती की ओर मुड़ कर आदित्य बोला, 'यही है मेरा यार लोलिंग यानी ललित। खाटी बांगाल!'—और फिर ललित की ओर पलट कर बोला, 'लोलिंग, सती के एक मौसा को कैंसर हुआ था। आपरेशन के बाद वह अच्छे हो गये।'

'अच्छा!'—ललित मुस्कराया।

ललित ने एक नजर युवती पर डाली। संभवतः आदित्य की प्रेमिका होगी। काला रंग, सलोना चेहरा। बड़ी-बड़ी मासूम आँखें। देखते ही लगता है कि हृदय में दया माया है। कृशांग कोमल काया में माँ-माँ भाव। भाग्य का बली है आदित्य। लेकिन उसकी संगिनी?

---

बांगाल = बंगलादेशवासी

ललित मृदु स्वर में बोला, 'आइये, आपको मा के पास छोड़ आऊ । हम दोना गली म बातें करेंगे ।

आदित्य ने बाधा दी, 'उससे शर्माओ मत ललित । मां कसम तुम बड़े शर्मीले हो । परिचय करा दू । शाश्वती बनर्जी, मैं सक्षेप में सती कहता हू । जल्दी ही हमारी शादी होने वाली है । कालीनाथ से तुम्हारे फान की खबर मिली और इसे कालेज से पकड़ लाया । तुम्हारे बारे म अक्सर इससे चर्चा करता रहा हू इसलिए तुमसे मिलाने ले आया ।'

ललित ने फिर शाश्वती से कहा, 'चलिये, आपको मा के पास छोड़ आऊ ।'

शाश्वती झेंपभरी आवाज म बोली, 'यहीं ठीक हू ।'

आदित्य बोला, 'सती ठीक कह रही है । मौसी अकेली होतीं तो कोइ बात नहीं थी । यहां तो बुढ़ियों का मजमा लगा है । सती को देखते ही उनकी आखे रगीन हो उठेगी । मौसी को बातों की चटनी चखायेगी । हम यहीं ठीक है भाइ । अस्पताल से एकदम गोल गप्पा बन कर आया है लोलिस ।'

'तुम तो एक दिन भी मिलने नहीं आये ।'

'माफ करना यार, अस्पताल के नाम से मुझे बुखार आता है । दवाइयो की गध, चीर-फाड़, रोगियों की चीख-पुकार, दुनिया भर के कीटाणु । मेरा तो तन मन घिनघिना उठता है । अस्पताल शब्द से मुझे डर लगता है । मुझे लगता है कि मैं भी मर जाऊगा । तुम तो जानते ही हो कि हमारे सात पुरखा में से कोई आज तक अस्पताल नहीं गया-। हम फैमिली डाक्टर के हाथो जीते-मरते हैं ।'

'चलो माफ किया ।'—ललित हसा और शाश्वती से बोला, 'आप दोना यहीं रहें, मैं कमीज पहन कर आता हू । यहीं एक चाय की दुकान है । वहीं चल कर बैठेंगे ।'

शाश्वती ने 'हां' म गर्दन झुकायी ।

कमरे में आकर ललित अपनी कमीज ले रहा था कि मां बोलीं, 'बाहर जा रहे हो ?'

'नहीं । चाय की दुकान जा रहा हू ।'

'चाय और चाय ।'

ललित बाहर निकल गया ।

गणेश की दुकान । शीशा के शो केस म छेना की मिठाइयाँ । अदर एक बेंच और एक लबा टेबिल । सुबह-शाम मुहल्ले के छोकरो का मजमा जमता है । अभी दोपहर है इसलिए दुकान खाली है । कैश बाक्स पर सिर रखे गणेश खर्राटे ले रहा है । मक्खियों से बचने के लिए गणेश ने मुह पर गमछा रख लिया है । ललित उसे

उठाने ही वाला था कि आदित्य बोला, सोने दो। हम बातचीत करें। वह जब उठेगा, तब उठेगा।'

शाश्वती मृदु स्वर में बोली, 'हाँ, उसे सोने दीजिए।'

तीनों बैठ गये। बीच में आदित्य। दोनों तरफ ललित और शाश्वती।

आदित्य बोला, 'मैं बड़ी मुसीबत में फँसा हूँ। जिंदगी में सिर्फ एक बार प्यार किया और वह भी एक बांगाल से।'

'बांगाल!' ललित ने शाश्वती की ओर देखा, कहाँ घर था आपका?'

'जशोर। कपोताक्षी नदी के किनारे।'

'कपोताक्षी!'

शाश्वती मुस्करायी, 'सागरदाँड़ी से हमारा गाँव ज्यादा दूर नहीं था। मैं ने कभी अपना गाँव नहीं देखा। मैं कलकत्ता में ही पैदा हुई हूँ। लेकिन परिचय देते वक्त हम अपने को माइकेल मधुसूदन का पड़ोसी कहा करते हैं।'

आदित्य करुण स्वर में बोला, 'शाश्वती बस नाम के लिए बांगाल है। कलकत्ता की मिट्टी में पैदा हुई, कलकत्ता में ही पली-बढ़ी। अब तो यह पूरी तरह कलकतिया है। लेकिन मेरे घरवालों को कौन समझाये। बांगाल की गंध लगते ही सब कुरुक्षेत्र के मैदान में उतर पड़ेंगे। और इधर मैं हूँ कि मेरे सारे दोस्त बांगाल हैं। तुम, तुलसी, संजय—सबके सब बांगाल। अपने मुहल्ले में तो मेरा कोई दोस्त ही नहीं है। लेकिन घर वालों को तो खानदान चाहिए। घुन लगा किसी खानदान की छोकरी मेरे गले बाँध दी जायगी।'

'क्या करोगे?'—ललित मुस्कराया।

'मैं अलग हो जाऊँगा।'—कह कर आदित्य शाश्वती की ओर देखकर मुस्कराया 'जानते हो लोलिता, सती क्या कहती है? वह कहती है कि हमारे घर वह क्रान्ति लायेगी। माँ को टैक्सी में बैठा कर सिनेमा ले जायगी। पिता जी को सोलह इंची घेरे का फुल पैंट और टी शर्ट पहना कर बंग संस्कृति सम्मेलन ले जायगी।—सती, तुम्हें किसी पंडित से अपनी आयु दिखा लेनी चाहिए। मैं इतना बड़ा रिस्क नहीं ले सकता। मैं अलग डेरा लूँगा।'

ललित ने सोचा कि आदित्य से पूछे, तब तुम लोगों का चलेगा कैसे? आदित्य सरकारी नौकरी करता है। हेड क्लर्क है। लेकिन नौकरी तो सिर्फ चाय-पान के लिए है। दरअसल घर खड़ा है बागबाजार की पुश्तैनी इमारत और खानदानी कारोबार पर। अपने घरवालों को आदित्य चाहे जितनी भी गालियाँ दे, लेकिन आदित्य जानता है कि घर छोड़ने पर आदित्य बाहरी दुनिया से शायद ही लड़

---

माइकेल मधुसूदन = एक प्रख्यात बंगला कवि

सकेगा। वह बड़े सुख म पला है। दुनिया म सांस लेना कितना कठिन है, वह नहीं जानता। वह संगमरमर के फर्श पर चलता है। मोटे-गद्दे पर सोता है। उसने जिंदगी म सिर्फ सुख देखा है। कांटों भरी दुनिया म वह क्या कर चलेगा?—

ललित ने सिर्फ सोचा, कुछ कहा नहीं।

आदित्य शास्वती से कह रहा था, 'मेरे पिता घोर पागल हैं, समझी न। एक आदमी को काट लिया था। तुम्हें तो पता है न ललित कि पट्टीदारी के झगड़े म पिता जी ने अन्नु चाचा को दांत काट लिया था।

यह तो खैर मानना ही पड़ेगा कि बैठक जमाने म आदित्य अपना जोड़ नहीं रखता। वह जब शुरू होता है, तब दूसरे चुप बैठे रहते हैं। उसके बोलने का ढंग ऐसा दिलचस्प है कि मामूली बात भी लोग कान लगा कर सुनते हैं। एक और भी गुण है आदित्य म। वह छिपाव-दुराव म यकीन नहीं करता। खुली किताब है आदित्य, जिसका जी चाहे पढ़ ले।

आदित्य ने अभी भूमिका ही बांधी थी कि शास्वती न जाने फुसफुसा कर क्या बोली और आदित्य हां, हां कर ललित से मुखातिब हुआ, 'मां कसम मैं बड़ा मतलबी हूं यार। बस, अपना रोना ले बैठा। तुम्हारी खोज-खबर तक नहीं ली।'

'कब शादी कर रहे हो?'—ललित मुस्कराया।

'जल्दी ही करूंगा। एक बासा खोज दे यार। दो कमरे मिल जायं, तो अच्छा रहेगा।'—इतना कह कर आदित्य संभल गया और बोला, 'लेकिन तुम तो साले बीमार पड़े हो। न जाने कहां से बीमारी बटोर ली है। मां कसम तुम सब कुछ कर सकते हो प्यारे।'—और फिर दबी आवाज म बोला, 'क्या रे लोलिंग' मर-उर तो नहीं जायगा। देख यार मरना मत। तेरे मरने से मैं अनाथ हो जाऊंगा। वचन दो—

'कैसा वचन?'

—'मरोगे नहीं।'

ललित ठहाका मार कर हंस पड़ा। ऐसी हंसी वह महीना बाद हंसा था। हंसना बंद हुआ तो बोला, 'अब मैं सब कुछ दे सकता हूं। चल, दे दिया तुझे वचन।'

'सच! अब तो नहीं मरेगा न! अच्छा, अब सती से उसके मौसे के बारे म सुन ले।

शास्वती ललित से मुखातिब हुई, 'मौसा को कैंसर हुआ था। आपरेशन के बाद अच्छे हो गये। मजे म अपनी नौकरी करते हैं।'

'अच्छा!'—ललित मुस्कराया।

शास्वती ने दृढ़ता अपनाने की कोशिश की, 'मैं कहती हूं न, आप भी अच्छे हो जायेंगे।

सहसा ललित निष्ठुर हंसी हंस कर बोला, 'आप दोनों झटपट अपनी शादी कर डालिये, ताकि मैं देख कर विदा ले सकूं।'

शाश्वती का चेहरा एकदम मुरझा गया। ललित को अपनी निष्ठुरता का आभास हुआ पर तीर तो चल चुका था। उसे केहुनी मार कर आदित्य बोल उठा, 'अरे चल। यमराज के बाप की मजाल है कि तुझे हमसे जुदा कर दे। साले की खटिया न खड़ी कर दूं तो मेरा नाम आदित्य नहीं।'

दोपहर ढलने पर वे उठे। तुलसी और संजय आये थे—ललित ने यह खबर आदित्य को नहीं दी। जानने पर आदित्य रहना चाहेगा। नहीं इससे बेहतर है आदित्य और शाश्वती मैदान में घूमें, गंगा किनारे बैठें, रेस्तरां में चाय की चुस्कियां लें। शाश्वती का उससे मिला कर आदित्य ने अच्छा नहीं किया। बेचारी एक ऐसे आदमी से मिल कर गयी जो कुछ ही दिनों में इस संसार से विदा ले जायेगा। तब कभी-कभार ललित की याद आते ही उसका मन छटपटा उठेगा। शायद ललित की वजह से आज बेचारी की शाम मिट्टी में मिल गयी। ललित शायद उसके सिर दर्द का कारण बन गया। ललित की याद आते ही शायद सारी रात उसकी आंखों में कटेगी।

जशोर में कपोताक्षी तट पर उसका मकान था। सागरदाड़ी से एकदम करीब। गली के नुक्कड़ पर खड़ा हो उसने एक और सिगरेट जलायी और एक कविता गुनगुनाने की कोशिश की। आश्चर्य है, न जाने कितनी बार उसने यह कविता क्लास में पढ़ायी है, आज तक कंठाग्र नहीं हुई।

## सात

*

सारी सुबह मृदुला अकेली नहीं मिली। बाहर वाले कमरे में बच्चों को पढ़ा रही है कालेज में पढ़ने वाली एक कमसिन लड़की। बिचले कमरे में अखबार पसारे बैठे हैं भैया। अंदर के तंग बरामदे में रसोई बनती है। वहाँ भाभी का राज्य है। जरा देखो वहाँ, भैया की गृहस्थी बनी है। यहां सिर्फ दो ही फालतू आदमी हैं, वह और मृदुला —ऐसा ही महसूस करता है तुलसी।

बरामदे के एक कोने में बैठा तुलसी चाय पी रहा था और चोर निगाहों से मृदुला को देख रहा था। मृदुला पीतल के गमले में चावल धो रही थी। सुबह-सुबह नहा धोकर

उसने माग म सिंदूर लगाया है। लाल मिट्टी की पगडडी जैसी रेखा उसकी माग पर चमक रही है। कितनी भोली-भाली लगती है मृदुला। कितना हलका-फुल्का है उसके बैठने का ढग। सुबह की धूप म उसकी मासूम देहयष्टि मा जैसी निष्काम दीखती है।

सिर्फ सुबह के वक्त तुलसी म एक-से एक सुदर बात पैदा होती है। लेकिन सुबह मृदुला नहीं मिलती है। और जब रात म मृदुला अकेली होती है, उस वक्त तुलसी का दिमाग एक भी अच्छी बात नहीं सोच पाता। रात म मृदुला की उपस्थिति उसे गुदगुदा नहीं पाती। बिस्तर पर बैठते ही उसे ऐसा महसूस होता है कि जरा-जीर्ण पृथ्वी की सारी गदगी उसके अग-अग म चिपकी है। उसे अपनी व्यर्थता याद आती है, अपना अपमान याद आता है। प्रधानाध्यापक ने कितनी उपेक्षा से दो चार बात सुनायी थी, शिकाली घोष ने कितना गदा मजाक किया था, दसवीं श्रेणी का वह काला-कलूटा छोकरा 'बेच म खटमल है सर' कह-कह कर उसे परेशान करता रहा था—ये सारी बातें बिस्तर पर उसे चैन नहीं लेने देती थीं। सिर्फ सुबह के वक्त तुलसी का दिमाग साफ-सुथरा रहता है। और साफ-सुथरे दिमाग म ही अच्छी बातें पैदा होती हैं। लेकिन सुबह मृदुला अकेली नहीं मिलती।

सुबह आती-जाती पर सुबह की खटमिट्ठी बात बेचारा मृदुला को नहीं कह पाता और इधर उम्र है की दिन-दिन बढती जाती है।

भैया की गृहस्थी म मुद्दत गुजर गयी। एक नौकरी म पिता ससार से विदा ले गये और उसके साढे तीन साल बाद मां स्वर्ग सिधार गयी। उसके बाद घर आते वक्त उसे कभी महसूस नहीं हुआ कि वह घर जा रहा है। अब कभी-कभार उसे अपना घर बसाने की इच्छा होती है। अपना बासा, अपना घर, मृदुला और वह, वह और मृदुला। कोई देखने वाला नहीं, कोई कुछ कहने वाला नहीं, कोई सुनने वाला नहीं। सुबह वह मृदुला को खटमिट्ठी बात सुना सकेगा। मृदुला को गुदगुदा सकेगा। बच्चों की मास्टरनी आने की चिंता नहीं। कमरा खाली करने की हड़बड़ी नहीं। बिस्तर पर पड़ा है तो पड़ा है। इच्छा होगी तो मृदुला के साथ चोर-चोर खेलेगा। मन कहेगा मृदुला को सीने में भींच ला, भींच लेगा।

बहुत कुछ सोचता है तुलसी पर कुछ भी पूरा नहीं होता। चाय पीकर अन्यमनस्क-सा तुलसी उठा और बाजार की तरफ चल पड़ा। कुछ ही दिन की बात है वह स्कूल जाने के लिए निकल रहा था कि मृदुला क्षण भर के लिए अकेली मिली। बाहर वाले कमरे मे वह मास्टरनी का जूठा कप लेने आयी थी। ठीक उसी समय तुलसी ने उसे दरवाजे की आड़ म खींच कर चूम लिया था। और ठीक उसी समय दो कमरों के बीच वाले दरवाजे का परदा हटा कर बड़ी भतीजी ने चाचा-चाची का कान्ड देख लिया था। पता नहीं उसने यू ही ऐसा किया था या जान बूझकर। बड़ी भतीजी पिछु बारह

साल की उम्र म ही पक गयी है छातियों का उभार फ्राक को ऊपर ठेलने लगा है। आखों मे न जाने क्या खेलता रहता है। छत से पश्चिम जो धापाला की जमीन पड़ी है, वहा लफगे छोकरा का मजमा जमा रहता है। वे गुड्डी उड़ाते हैं, सिगरेट फूकते हैं। दिन भर इसी तरह का लगा रहता है। तुलसी ने कइ बार शाम के वक्त पिंतु को छत की रेलिंग पर झुक कर छोकरा को देखते देखा है। उसने मृदुला से सुना है कि पिंतु चोरी-छिप उसका मुरनेस खोल कर देखती है। देखती हागी कि चाचा ने चोरी छिपे चाची को साड़ी-वाड़ी तो नहीं दी। और ना और वह कभी-कभार चेहरे पर मासूमियत लेप कर मृदुला से पूछती है, 'चाची जी, रात म आप के कमरे म इतनी आवाज क्यों होती है ?' इसलिए कौन कह सकता है कि पिंतु जैसी लड़की ने जानबूझ कर चाचा-चाची का कांड नहीं देखा होगा ?

जिस दिन ललित को अस्पताल से घर पहुचा कर तुलसी वापस आ रहा था, उसी दिन अचानक उसे शभू से पूछने की इच्छा हुइ थी कि ललित के मरने पर ललित का कमरा वह कितने किराये पर देगा ? ऐसी निष्ठुर चिंता उसके दिमाग म कहा कर आयी थी, यह बात उस समय वह नहीं समझ सका था। लेकिन बाद म उसने महसूस किया था कि ऐसा निष्ठुर विचार उसके अवचेतन मस्तिष्क म पल रहा था। और आश्चर्य की बात तो उस दिन यह हुइ थी कि घर लौटने पर उसने देखा था कि बाहर वाले कमरे म फर्श पर बैठी मृदुला रो रही है। पूरा घर अधेरे में डूबा है। तुलसी ने पूछा था, क्या रो रही हो ? इतना सुनते ही मृदुला फफक-फफक कर बोली थी, मैं यहां नहीं रहूँगी जहा मिले एक कमरा लो। कहीं झोपड़ी भी मिल जाय तो ले लो। यहा से मुझे कहीं ले चलो। मेरा जीना दूभर हो गया है।

कुछ समझ म न आने की वजह से तुलसी हडबड़ा कर जाल उठा था, 'आखिर हुआ क्या, मैं भी तो सुनू।'

'तुमतो आख रहते अधे हो। देख कर भी नहीं देखते। दिन-रात कच कच लगा रहता है, फिर भी तुम्हें सुनाइ नहीं देता।'—मृदुला सिसकियों मे बोले जा रही थी, तुम्हें तो पता है न कि मैं पढी लिखी हूँ। गाने-बजाने का शौक है। चौका-बर्तन करना नहीं जानती। बडे लाड़-प्यार म पली हूँ। पिताजी ने कभी एक कड़ी बात नहीं कही और यहा दिन-रात दीदी पीछे पडी रहती हैं। मैं चौका-बर्तन नहीं जानती तो क्या हुआ ? वह सिखा तो सकती हैं न। बडा से ही ता लोग सीखते हैं। घर की नयी बहू सास और जेठानी से ही तो घर का काम-काज सीखती है। मायके म ता हर लड़की दुलारी होती है। प्यार के दो बोल तो दूर रहे, हर ऐरे-गैरे के सामने मेरा अपमान। इतना अपमान अब मुझ से बर्दाश्त नहीं होगा। द्विरागमन म मायके न जाकर बुआ जी के यहाँ गयी थी। इसको लेकर भी दिन-रात

सुनाती रहती हैं। हमारे मुहल्ले में दीदी का कोइ भाई रहता है। वह शायद बिधु की घटना जानता है। भाइ ने नमक-मिर्च मिलाकर अपनी बहन से क्या-क्या कहा है कि दीदी दिन रात ताने मारती रहती हैं, 'आजकल की लड़कियों का क्या ठिकाना! फ्राक छोड़ते-न-छोड़ते अलिफ लैला की कहानी शुरू हो जाती है। राह चलते मजनुओं से आखें लड़ायी जाती हैं।' तुम्हीं बताओ, यह सब सुन कर कौन यहा रहना चाहेगा। तुम्हें तो पता है न कि बिधु के मामले म मेरा कोइ दोष नहीं। कोई गुडा हाथ धोकर किसी लड़की के पीछे पड़ जाय तो बेचारी क्या करे? फिर भी मान लिया कि मैं ही बुरी हू। लेकिन पिंटु! आख रहते दीदी नहीं देखतीं कि उनकी लाडली क्या गुल खिला रही है? स्कूल जाती है, तो मजनुआ का झुंड साथ चलता है। फ्राक पहन कर हुधमु ही बच्ची बनी फिरती है। कभी अपनी लाडली भतीजी के साज-सिंगार पर गौर करना। जब जी चाहा सज-धज कर सिनेमा चल देती है। अरे मेरा जा होना था हो गया, जेठानी अपनी लाडली पर लगाम रखें, तो बेहतर होगा। मैं कहे देती हू, पिंटु अगर सारे खानदान की नाक न कटा डाले, तो मेरे नाम से कुत्ता पालना। इतनी बड़ी लड़की जब देखो रात गये सिनेमा-थियेटर देख कर आती है और दीदी देख कर भी नहीं देखतीं। पिंटु का बक्सा खोल कर देखा, न जाने कितने मजनुआ की चिट्ठियाँ मिलेंगी। उनकी आखों म सारी खामियाँ तो सिर्फ मुझ में हैं। अरे बाबा दूसरों पर कीचड उछालने से पहले अपने आपको देखा। यही तो परखा की बात है। दोपहर को खाना-पीना खाकर बाथरूम म कय कर रही थी। शाम को भैया के आते ही दीदी सुनाने बैठ गयीं, 'छि शादी के महीना न बीता और पट कर बैठी। बेहया और किसे कहते हैं।' मैं तुम्हीं से पूछती हू, दीदी को ऐसी बात करने का क्या हक है? मैं क्या बाझ हू जो मुझे बच्चा नहीं होगा? नयी बहू के पाव भारी होते हैं तो सबको खुशी होती है और एक मेरी जेठानी हैं जिन्हें सिर्फ अपनी देवरानी पर कीचड़ उछालना ही आता है। आज मेरे पिता जी आये थे। दीदी उनसे बोलीं, 'लड़किया का पढ़ना-लिखना, गाना-बजाना किसी काम नहीं आता। यह सब बड़े घरों के चोचले हैं जहा की बहुए किताब लेकर पलग तोड़ती हैं। हम जैसों के घर सरस्वती की कद्र नहीं, लक्ष्मी की कद्र होती है।' दीदी ने घुमा-फिरा कर कहा लेकिन पिता जी इतने बुद्धू तो हैं नहीं कि दीदी के ताने नहीं समझ सकें। पिता जी मुझे एकात मे बुला कर बोले, 'जानती तो हो कि मेहमान के मां-बाप नहीं हैं। भैया-भाभी ही मेहमान के सब-कुछ हैं। उनकी बात पर चलो। ऐसा कुछ मत करो जिससे उन्हें कुछ बोलने का मौका मिले।' अब तुम्हीं कहो, यह सब सुन कर किसे दु ख नहीं होगा। बकना-झकना तो खैर है ही। देख ही रहे हो इतने बड़े घर म मैं अकेली पड़ी हूँ, देवी जी बच्चे बच्चा के साथ

घूमने गयी हैं। दोपहर होते ही देवी जी पड़ोसियों को मेरी निंदा सुनाने जा पहुंचती हैं। कहती हैं, इतने दिनों से घर की पहरेदारी करती रही हूं अब तुम करो।'—तुम्हीं बताओ, नयी बहू को कोई अकेले छोड़ जाता है? दोपहर का कलकत्ता डेंजरस है या नहीं? दुनिया भर के गुंडे-बदमाश ताक लगाये रहते हैं। कोई फेरीवाला के भेष में आता है, तो कोई बिजली मिस्त्री बन कर आता है। टाक्सियों के भेष में गुंडे-बदमाश दरवाजे पर धक्का देते हैं। और जानते हो, बिभु ने अब तक अपनी हरकत नहीं छोड़ी है। मुए को मौत भी नहीं आती। पिता जी कह रहे थे कि अभी तक बिभु अपने दलबल के साथ मुझे हासिल करने की फिराक में है। बेनामी चिट्ठी देकर पिता जी को धमकाता है। और इधर तुम हो कि हर रोज शाम ढलने पर घर पहुंचते हो। मैं अकेली पड़ी रहती हूं। उस हरामजादे का क्या विश्वास! किसी दिन जबर्दस्ती उठा ले जाय, तो मेरा क्या होगा? मुझ पर एसिड बल्ब छोड़ सकता है। मुझे छुरा मार सकता है। नहीं, नहीं, अब मैं यहां नहीं रहूंगी। जहां भी हो एक घर लो।'

इतनी सारी बात तुलसी ठीक ठीक समझ नहीं सका। वैसे समझने की जरूरत भी नहीं थी। वह जानता है कि अब वह जमाना नहीं रहा जब मां और ताई जी चेहरे पर बिल्ली जैसी मासूमियत लेकर एक पत्तल में बासी भात खाती थीं। यह भी उसे पता है कि औरतों में मर्दों जैसा प्यार नहीं होता। औरतों की दोस्ती और मर्दों की दोस्ती में आसमान-जमीन का फर्क है। पता नहीं क्यों कर मां और ताई जी, एक-दूसरे को न देख सकने पर भी बीस साल तक एक साथ रहीं। पुराने जमाने की बात ही कुछ और थी। उस समय सहन शक्ति थी। पसंद न करने पर भी लोग एक दूसरे को बर्दाश्त करते थे। अब तो जमाना ही बदल गया है। कोई किसी को बर्दाश्त करना नहीं चाहता। लेकिन बगैर बर्दाश्त किए तुलसी के लिए और कोई उपाय भी तो नहीं है। स्कूल से नियमित वेतन भी नहीं मिलता। उसके स्कूल में गांव के किसान या खेतिहर मजदूर के बच्चे पढ़ते हैं। नियमित रूप से विद्यालय-शुल्क नहीं देते। विद्यार्थियों से जो कुछ मिलता है, सब आपस में बांट लेते हैं। किसी महीने पचास तो किसी महीने साठ। पांच-छह महीने में सरकारी सहायता के रुपये आते हैं। ऐसी स्थिति में बेचारा क्या कर अलग रहने का साहस करे? माली हालत के अलावा भी एक बात है। मृदुला को अलग बासा में अकेले छोड़कर वह क्या कर स्कूल जायेगा? जब कि दोपहर का कलकत्ता इतना खतरनाक है! जब कि बिभु का दलबल अब तक मृदुला की ताक में है।

सुबह की ठंडी ठंडी हवा में तुलसी बाजार जा रहा था। अचानक उसका दिमाग व्यर्थ की चिंताओं से बोझिल हो उठा।

सुबह के बाजार में अक्सर तुलसी एक प्रौढ़ आदमी को चक्कर मारते देखता है। बड़ा ही दीन-हीन चेहरा है उसका। उसे देख कर तुलसी को दया आती है। दीन-हीन आंखों से बेचारा इस दुकान से उस दुकान जाता है। मोल-भाव करता है। खरीदता है बहुत कम। तुलसी ने उसे बड़ी देर तक बाजार का चक्कर लगाते देखा है। लेकिन कभी उस पर ध्यान नहीं दिया है। आज न जाने क्या उसका ध्यान उस आदमी पर अटक गया। एक छोकरी बेर जैसी छोटी छोटी फूल गोभियों का ढेर लिए शाम से बैठी थी और वह आदमी चुपचाप उसके सामने खड़ा था। यूं तो कोई जरूरत नहीं थी पर स्वयं को चिंतामुक्त करने की खातिर वह आगे बढ़ा और उस आदमी से मुस्करा कर बोला, 'गोभी खरीद रहे हैं?'

तुलसी पर एक नजर डाल कर फीकी मुस्कान में वह बोला, 'नहीं। पिता जी की याद आ रही थी। उन्हें गोभी बहुत पसंद थी।'

'अच्छा!'—तुलसी बुजुर्गियत की मुस्कान मुस्कराया।

'मैं फूल गोभी नहीं खाता।' —साथ-साथ चलते-चलते वह संकोच में बोला, 'पिताजी मरने से पहले नहीं खा सके। उस दिन फूल गोभी, मूली मिला कर मटर की दाल और बैंगन का भुजिया बना था। छुट्टी का दिन था। पिताजी बिस्तर पर बैठे पुराना 'प्रवासी' पढ़ रहे थे। 'प्रवासी' पढ़ते-पढ़ते शायद उन्हें झपकी आयी थी। मां उन्हें नहाने के लिए कहने गयी। वह बिस्तर पर लेटे पड़े थे। खुले प्रवासी के ऊपर चश्मा रखा था। मां ने सोचा कि वह सो रहे हैं। लेकिन जगाने पर वह नहीं जगे।

'च च।'—तुलसी ने दुःख प्रकट किया।

'बाप मां जैसा संसार में कोई नहीं होता।'—वह धीर शांत स्वर में जारी रहा, 'मेरे पिता गरीब थे। एक छोटी-सी दुकान थी। रूखा-सूखा खाना मिलता था। कभी कभार अच्छा खाना नसीब होता था। जब तक वे जिंदा थे, तब तक उनका सम्मान नहीं किया। लेकिन अब। अब तो सिर्फ उनकी याद रह गयी है। कभी-कभार खुले प्रवासी पर रखी उनकी कमानी टूटी ऐनक आंखों के सामने उभर आती है। ऐसा लगता है कि आशा भरी आंखों से उनकी ऐनक मुझे देख रही है।'

बोलते-बोलते उसने अन्यमनस्क-सा तुलसी की ओर देखा। शायद तुलसी को देखे बगैर ही वह फीकी मुस्कान में बोला, 'उनकी मृत्यु के एक अरसे बाद मैं बाप बना। इकलौता लड़का। गुण्डे-बदमाशों के साथ उठना बैठना। ज्यादा लाड़ प्यार का जो नतीजा होता है। लड़का दिन दिन बदलगाम होता गया। अपने लड़के को देखता और अपनी गरीबी पर खीझता। छोटी-सी नौकरी है। दो जून का खाना

एक बंगला मासिक

नसीब हो जाय, यही बड़ी बात है। बेटे को सभाल नहीं पाता। अपनी विवशता पर मन ही मन रोने के अलावा हम गरीबों के पास दूसरा चारा ही क्या है! बाप होना कितना दुखदायक है यह गरीब बाप ही समझता है। लड़का दिन-ब दिन बिगड़ता गया। और एक दिन उन्नीस वर्ष का मेरा इकलौता बेटा साथ म जम रुपये से चिथड़े चिथड़े हो गया।

'आ हा!'—तुलसी मातमी आवाज म बोला।

'अब कुछ भी अच्छा नहीं लगता। मैं अब कुलगामी, मग दाल, मूली और बैंगन नहीं खाता। लड़का मास-मछली लहसुन प्याज पसद करता था। अब तो हमारे घर यह सब चढता भी नहीं। सच्चाइ तो यह है कि हम खाना खाने वाले प्राणियों की जीभ मे कोइ स्वाद ही नहीं रहा। हम तो जिंदा लाश हैं। लाश के लिए ससार का अच्छा-बुरा कोइ मतलब नहीं रखता। लाश तो आखिर लाश ही है न''—क्षण भर रुक कर वह फीकी मुस्कान म बोला, 'बचपन से बाजार कर रहा हू न। इस बाजार म आते-जाते चालीस साल गुजर गये। बिना आये नहीं रह सकता। पहले बड़े शौक से आता था। माल भाव कर के दो-चार आने सेर कमा कर साग सब्जी खरीदता था। पिता जी की पसद और फिर खुद बाप बनने पर बेटे की पसद का ध्यान रखता था। अब तो सिर्फ अभ्यासवश आ जाता हू। सुबह-सुबह हरी-भरी साग-सब्जी देखकर आखें जुड़ा जाती हैं। खरीदता हू कम, घूमता हू ज्यादा। आज के बाजार का रवैया ही कुछ और है। हर चीज की कीमत आसमान छू रही है। दुकानदारों का दिमाग हमेशा सातवें आसमान पर रहता है। वचन म चोरी और मन माना दाम। जमाना ही बदल गया है। जहां जाओ, वहीं आपाधापी। यहां आने को जी नहीं चाहता, फिर भी आ जाता हूँ। आखिर इतना पुराना अभ्यास है न!'

'फिर मिलेंगे!'—कह कर तुलसी ने उससे विदा ली।

वस्लोली हसी हस कर वह बोला, 'हा, फिर मुलाकात होगी। लेकिन अब ज्यादा दिन नहीं। दो-तीन साल बाद ही रिटायर हो जाऊगा। उसके बाद गांव चला जाऊगा। हम तो देहाती है बाबू। यहां तो सिर्फ नौकरी की खातिर पडा हूँ।'

कुछेक क्षण एकटक वह तुलसी को देखता रहा, फिर 'अच्छा' कह कर मायूस आखें फिरा लीं। आहिस्ते-आहिस्ते सब्जी-बाजार की भीड़ मे वह खो गया। तुलसी ने देखा, उसके दायें हाथ म बाजार का सफेद थैला हवा म लपक रहा है।

बात तो यू कुछ भी नहीं थी फिर भी न जाने क्यों तुलसी के दिल पर एक जबर्दस्त धक्का लगा। तुलसी अब तक बाप नहीं बना है लेकिन मृदुला के पेट म बच्चा आ गया है। अकस्मात् ही था तुलसी खरीद-फरोख्त कर रहा था। दो चार बात उसके दिमाग म मक्खियों की तरह भिनभिना रही थीं। बाप होना कितना

दु:खदायक होता है, यह गरीब आप ही समझता है। हम तो देहाती हैं बाबू। गाव चला जाऊगा।' गाव! गाव जाना कैसा होगा!—तुलसी यह सोच कर मन ही मन उत्तेजित हुआ। उल्टी-सीधी चिंता कपूर की तरह उड गयी। इतने दिनो तक गाव म बसने की बात उसके दिमाग मे कभी नहीं आयी थी। क्यों? उसके दिमाग म इतनी अच्छी बात क्या नहीं आयी थी?—यह सोच कर वह अपने आप पर खीज उठा। झूठमूठ म तीन साल तक वह नौकरी पाने की खातिर कलकत्ता के फुटपाथ नापता रहा। आखिरकार दो मुट्ठी अनाज मिला गाव के स्कूल से। हा, टूटा-फूटा गाव का स्कूल ही तो इतने दिनों से पेट भर रहा है। फिर क्यों वह कलकत्ता के सामने गिडगिडायेगा? कलकत्ता म क्या रखा है उसके लिए जो कलकत्ता से चिपका रहेगा? नहीं, अब वह कलकत्ता नहीं रहेगा।

तुलसी को वह आदमी ईश्वर प्रेरित प्रतीत हुआ। अब गाव म रहना ही हर दृष्टि से अच्छा है। यही तो वह आदमी कह गया न? गाव म मृदुला निरापद रहेगी। घर-भाडा भी कम लगेगा। मजे म दोनो रहेंगे। सोचते-सोचते उसने खुद को गाव म पाया। अब वह ग्रामीण-गृहस्थ तुलसी है। चारो तरफ साग सब्जी, पेड़-पौधे, धान के हरे-भरे खेत और आगन म धान की बोरिया।

यह तो ठीक है कि तुलसी की जान कलकत्ता म अटकी पडी है। यहा चाय की दुकान और दोस्तो की बैठक मे उसकी जिन्दगी का सबसे खूबसूरत हिस्सा गुजरा है। कलकत्ता म एक और कलकत्ता है जहां की जिंदगी रगीन है। जहां पार्क स्ट्रीट के बार-रेस्तरा म रात रग-बिरगी हो उठती है, जहा कैमेक स्ट्रीट की इमारतें, आसमान छूती हैं। जहा सितारावाले होटल अपनी शान म इतराते हैं। नहीं, तुलसी इस कलकत्ता को नहीं जानता। तुलसी का कलकत्ता ज्गा की दुकान, कॉफी हाउस, नाइट शो सिनेमा, दोस्तों की महफिल, और आवारागर्दी म सांस लेता है। लेकिन तुलसी क्या करे? उसके दिल म तो कलकत्ता ही धड़कता है। भले ही वह एक देहाती स्कूल म नौकरी करता है। देहाती विद्यार्थियों को पढाता है। देहातियो से दो-चार बात करता है। लेकिन न जाने क्या वह देहातियो को हिकारत भरी आंखों से देखता है। कलकतिया होने की वजह से वह खुद को थोड़ा ऊचे किस्म का इसान समझता है। शायद इसलिए तो नहीं कि कलकत्ता मे रहने की वजह से हर आदमी स्वभावत थोड़ा घमडी बन जाता है। और घमडी बनने का मतलब ही है खुद को न पहचानना। और जो खुद को नहीं जानता, वह दूसरों को कैसे जानेगा! नहीं, अब कलकत्ता नहीं। अभी अभी उस आदमी के जरिये भगवान ने उसे सही रास्ता दिखा दिया है। तुलसी अब गांव म रहेगा।

बाजार से वापस आकर वह मृदुला को अपना फैसला सुनाने के लिए बेताब हो उठा। मौका तलाशने लगा, पर मौका नहीं मिला।

रेल गाड़ी के डिब्बे में बैठा तुलसी अन्य यात्रियों को देख रहा था। फर्शपर बैठे दो मछुए मछलियों के चारे से भरी हाड़ियों मे पानी हिलोर रहे थे। खाली टोकरियां लिए कई व्यापारी बैठे थे। दो बेंचों के बीच गमछा बिछा कर वे ब्रिज खेल रहे थे। गाड़ी पर चढ कर दो फेरी वालों ने हांक-पुकार शुरू की थी। एक कघी बेच रहा था और दूसरा हथकट्टा तेल। धधा मदा देख कर दोनों गप्पें लड़ा रहे थे। डिब्बे में गरीब-दुखियों की भीड़ थी। तुलसी भी तो आखिर इसी वर्ग का है। अपने को गरीब-दुखियों की श्रेणी में रख कर वह मन-ही-मन उत्फुल्ल हो उठा। अचानक उसे याद आया, कलकत्ता के रास्ता-घाट में कितनों ने उससे बीड़ी-सिगरेट जलाने के लिए माचिस मागी है, कितना मे उससे पूछा है, क्या बज रहा है? न जाने कितनों ने अपनी दुख की कहानी सुनानी चाही है। तुलसी ने कभी ऐसे लोगों से भर मुह बात नहीं की। शायद कलकतिया होने की वजह से ही उसने अपने वर्ग की उपेक्षा की है। लेकिन अब ऐसा नहीं होगा। अब तो गांव में रहने का फैसला कर चुका है। ग्रामीण-गृहस्थ तुलसी खेत खमार करेगा। गरीब दुखियों के सुख-दुख म हाथ बटायेगा।

स्टेशन से स्कूल जाने के लिए दो रास्ते हैं। एक है राष्ट्रीय राजपथ और एक धान के खेतों के ऊबड खाबड़ मेड़। तुलसी राष्ट्रीय पथ से नहीं आता-जाता। थोड़ा लबा पड़ता है न। अन्यमनस्क-सा चल रहा था तुलसी। अचानक उसने देखा, एक आदमी दौड़ा हुआ आया और मेंड पर खडा हो हांफने लगा। घुटनों तक धोती, नगा बदन, माथे पर गमछा। तुलसी के करीब पहुँचते ही एक आर उगली से दिखाता हुआ बोला, वह देखिये।

तुलसी रुक गया। प्रश्नभरी आंखों से वह बोला, 'क्या?'

'वह देखिये, देख रहे हैं न?

तुलसी ने देखा। ऊबड़-खाबड़ जमीन और घास की वजह से पहले नहीं देखा था। और जब नजर पड़ी भय की ठडी लहर सिर से पाव तक दौड़ गयी। न जाने क्यों उसका अग-अग भी घिनघिना उठा। खेत के बीचोबीच कोनाकोनी एक सांप जा रहा था। धूप म उसका मटमैला रग चमक रहा था।

वह आदमी अब तक हांफ रहा था। हांफते-हांफते ही बोला, असली गेहुअन है बाबू। साठ भी नहीं गिनने देगा। अभी-अभी किसी को काट आया है। लाल देख रहे हैं न? अपराधी सांप है बाबू। साक्षात काल है।

तुलसी सांप को जाते देख रहा था। सांप की चाल के बारे में उसे कोई जानकारी नहीं थी। हां, साप की गति-प्रकृति देख कर उसे लगा कि सांप चोरों जैसी चाल चल रहा है। मेड़ पार कर सांप धान के खेत मे उतर गया। वह आदमी अब तक सांप की गति का सूक्ष्म निरीक्षण कर रहा था। सांप को मेड़ पार करते देख वह बोल उठा, 'नदी की ओर जा रहा है। अगर नदी पार कर गया, तो जिसे काट आया है, उसे भगवान भी नही बचा सकते। नगेन ओझा को खबर देनी होगी।'—इतना कह कर वह एक दिशा में दौड़ पड़ा।

अचानक तुलसी को मितली आयी। उसे ऐसा लगा कि पट से सब कुछ बाहर आ जायगा। हाथ-पांव सिहरने लगे। तन-बदन घिनघिना उठा। दोनों हाथ से धोती समेट कर वह दौड़ पड़ा। दौड़ता रहा, दौड़ता रहा, फिर तेज कदमा चलने लगा। हांफते हाफ्ते कामन रूम म दाखिल हुआ और धम से एक कुर्सी पर बैठ गया। हाफ्ती आवाज में बाल उठा, 'साप!'

'सांप! कहां है सांप?'—सब एक साथ बाल उठे।

तुलसी हांफ्ते हांफ्ते उस आदमी की नकल करता हुआ बोला, 'असली गेहुअन साठ नहीं गिनने देगा अपराधी सांप साक्षात काल अपराधी साप पहचानते हैं?'

'क्या नहीं, बहुत लाग पहचानते हैं।'

'आपने कहां देखा? किसे काट आया है?'

तुलसी के मुह सारी घटना सुनते ही सब अपनी-अपनी जानकारी बखानने को उतावले हो उठे। नगेन आझा को सभी जानते हैं। जिसने तुलसी का साप दिखाया था, उसे भी सब जानते हैं। राजेश नाम है उस आदमी का। और फिर जैसा हाता है, वैसा ही हुआ। साप और ओझा के किस्से शुरू हो गये। गेहुअन, करैत, करियर, सुगवा, धामन, साखड़ और न जाने कौन-कौन से साप। आझाओ के कारनामे। पीरियड खत्म होने पर तुलसी आता और कामन रूम म अजीबा गरीब किस्से सुन जाता। थर्ड पीरियड के बाद लीजर में तुलसी ने मांधाता युग के विज्ञान शिक्षक हरनाथ घोषाल, बी० एस० सी० की आपबीती सुनी।

विद्यार्थी जीवन मे विज्ञान पढ़ते-पढ़ते घोषाल महादय ने धर्म-कर्म का तिलांजलि दे दी थी। हर चीज को विज्ञान की कसौटी पर कसना उनका स्वभाव बन गया था। जादू टोना, तन्त्र मन्त्र, देवी-देवता पर उन्हे कतई विश्वास नहीं था। विज्ञान का भूत इस कदर सवार था कि एक दिन अपने सहपाठी के साथ उन्होंने गीता जला कर जनेऊ होम कर दिया। पिता कट्टर ब्राह्मण थे। उन्होंने अपने सपूत की करतूत सुनी और उसी दिन उन्हे कपूत कह कर घर से निकाल दिया। घाषाल महोदय पर नयी नयी जवानी का जोश था। घर द्वार छोड़ कर वह गाव के

जमींदार की कचहरी में रहने लगे। रात म कचहरी में गांव के और भी लोग आते थे। जवानी का जोश और वैज्ञानिक नजरिया इतना तगडा था कि पिता की नाराजगी कोइ मायने की नहीं रखती थी। लेकिन एक रात कुछ ऐसा हुआ कि घोषाल महोदय में छिपा वैज्ञानिक दम तोड़ गया। उस रात की घटना आज भी उनमें कपकपी पैदा कर देती है। वह गहरी नींद सोये थे। अचानक उन्हें महसूस हुआ कि उनके बायें कंधे से दायीं कमर की तरफ कोइ चिकनी-चुपड़ी बरफ-सी ठंडी चीज सरक रही है। नींद टूट गयी। गाँव जला कर देखा और बाप रे चीख कर बेहोश हो गये। कचहरी जग गयी और साप मार डाला गया। हालाकि साप ने कोइ नुकसान नहीं पहुचाया था फिर भी न जाने क्यों घोषाल महोदय का कैसा-कैसा न लगने लगा। अपने अग प्रत्यग से उन्हें घिन होने लगी। कुछ रातें तो गर्भवती औरत की तरह उल्टी कर देते। बायें कंधे से दायीं कमर तक एक अजीब-सा ठंडापन, एक अजीब-सा लिजलिजापन महसूस होता। हमेशा दिलो-दिमाग पर एक अजीब सा डर समाया रहता।

अपनी आपबीती सुनाते-सुनाते घोषाल महाशय क्षण भर को रुके और फिर बोले, 'मैं विज्ञान का छात्र हूं। यथार्थवादी हूं। गाव का होने के नाते साँप की गति विधि से परिचित हूँ। फिर भी न जाने क्यों चौबीस घटे मुझे महसूस होता कि नरक का कोइ गदा जीव मुझे छू कर चला गया। तन मन घिनघिनाता रहता। डाक्टर ने मनोबल बढ़ाने की खातिर दवा दी पर कुछ भी असर नहीं हुआ। धीरे-धीरे सारी पृथ्वी मेरे लिए विषादमय होने लगी। फटी फटी आखों से चारों तरफ देखता। न अपनी बात किसी को समझा पाता और न किसी की बात समझ पाता। कई दिन यू ही गुजर गये। दवा-दारू, जादू टोना सब कुछ चलता रहा, लेकिन मेरी हालत ज्यों की त्यों बनी रही। आखिरकार एक दिन पिता जी कुल गुरु को ले आये। गुरुदेव ने प्रायश्चित करा कर मुझे जनेऊ पहना दिया। जनेऊ पहनते ही मुझे महसूस हुआ कि मैं अच्छा हो रहा हू। मैं ने गायत्री जाप शुरू किया। धीरे धीरे स्वाभाविक होता गया।

'आपने तो जनेऊ की महिमा बतायी। यहां साप तो प्रतीक मात्र है।'—एक अध्यापक बोले।

'ऐक्जैक्टली।'—हरनाथ बाबू सामने की ओर झुक कर बोले, 'ऐक्जैक्टली। पूर्वजों की दीर्घकालीन तपस्या और आचरण अर्जित धार्मिक सस्कार का त्यागने से हममें अविश्वास, वचना और भीति का जन्म होता है। मेरा उदाहरण आपके सामने है। सचमुच म मैंने गीता जला कर जनेऊ होम किया था। सांप भी बायें कंधे से रेंगता

वह उस ओर बढा। खूटे मे बधी एक गाय चर रही थी। उसकी पिछली टागों के करीब से वह रेंगता हुआ जा रहा था। गाय की टांग पर कीड़ा बैठा था। कीड़ा भगाने की खातिर उसने अपनी टांग झाड़ी और सांप पर नजर पड़ी। वह बेचैन हो गयी। साप आगे बढ गया। चल नहीं पाता फिर भी चलना पड़ता है। उम्र ढल गयी है। बुड्ढा हो गया है। बेचारा! बुढापा और भारी भरकम शरीर। चल नहीं पाता पर चलना तो पड़ेगा ही। चलते-चलते अचानक वह अपनी जिन्दगी पर विचार करने लगा। सारी जिन्दगी वह भागता रहा है, छिपता रहा है। कभी चैन की सांस नहीं ली। जन्म से आज तक सिर्फ डरता रहा है, भागता रहा है। आज भी एक-एक कदम फूक कर चल रहा है। जब तक जिंदा है, डरता रहेगा, भागता और छिपता रहेगा। आहिस्ते आहिस्ते ढाल जमीन से वह राष्ट्रीय पथ पर आ गया। लबा-चौड़ा व्यस्त रास्ता। धूप म चमकता कोलतार। सनसनाती हुई एक लारी गुजर गयी। उसने देखा और मन-ही मन काप उठा। उसके एकदम करीब से एक बैलगाड़ी गुजर गयी। जरा-सा के लिए बच गया बेचारा। गाड़ी का चक्का उसे कुचलता हुआ पार हो जाता। नहीं, यह लबी-चौड़ी सड़क उसके लिए नहीं बनी है। यहां कदम-कदम पर खतरा है। बुढापे का बोझ लिए वह धीरे-धीरे नीचे उतर गया। थोडी दूर चल कर पुलिया के नीचे से राष्ट्रीय पथ पार कर गया। 'पिड़िक'—अचानक आवाज सुन कर वह सतर्क हो गया। फन काढ़ कर देखा, गागैया। पानी मे उसने अपनी जीभ भिगा ली। नदी की ठडी सुगंधित हवा उसे महसूस हुई। लेकिन नदी अभी भी बहुत दूर है। वह आगे बढा। करीब ही एक सोता बह रहा था। लेकिन नदी तो अब भी बहुत दूर थी। हवा मे मचलती लबी-लबी घास उसे बेहद पसद आयी। लबी घासों में छिप कर उसने कुण्डली बनायी। आह! कितना आराम! थके-मादे शरीर म उसे ताजगी महसूस हुई। कुछेक क्षण वह कुण्डली की मस्ती लेगा। टर्र-टर्र! उसने आखें खोलीं। एक मोटा-सोटा मेढक। दो दिन से उसे खाना नसीब नहीं हुआ था। मेढक पर नजर पड़ते ही जोरों की भूख महसूस हुई। कुण्डली खोल कर वह रेंगने लगा। फिर घूम फिर कर राष्ट्रीय पथ के करीब पहुच गया। ढलान के ऊपर आकर उसने देखा, काली कलूटी सडक पर लारी जा रही थी। वह फिर उतरने लगा। थका मादा शरीर चलना नहीं चाहता लेकिन भूख! जानलेवा भूख! मेढक ने अपना पिछला हिस्सा एक बिल मे घुसा लिया। मोटा-थुलथुल शरीर! वह बिल म घुसने के लिए आप्राण कोशिश करने लगा। साप ने कौतुक भरी निगाहो से मेढक को देखा। झूठमूठ मे कोशिश कर रहा है बेवकूफ। आगे बढ कर उसने मेढक को अपने मुह म दबा लिया। मेढक कांप

उठा। उसने बुड्ढे शरीर पर झटका लगा। झटका बर्दाश्त नहीं होता। उसने देखा, राष्ट्रीय पथ की ओट में सूरज छिप गया है। उसने मेंढक को निगलने की कोशिश की। मेंढक कांपा और उसे झटका लगा। क्यों कर बेचारा झटका बर्दाश्त करे। लेकिन भूख। टर्र-टर्र—मौत से जूझते मेंढक की मरियल आवाज।

राष्ट्रीय पथ पर चलते चलते तुलसी ने यह आवाज सुनी और भागते कदमों चल पड़ा।

उसने मेंढक को निगलने की कोशिश की। मेंढक थोड़ा अंदर गया। लेकिन उसका दम अटक गया। अब न निगलते बनता है, न छोड़ते। आंखों के सामने धीरे-धीरे अंधेरा उतर आया। अधमरा बेंग उसने मुंह में दबा रहा। उसका मृतक शरीर ढलान से लुढ़क कर एक पत्थर में अटक गया। मर गया बेचारा।

## आठ

*

ललित रास्ते पर टहल रहा था। अचानक उसने देखा, उसके सिर पर मच्छरों का झुंड भनभना रहा है। उसने हुम हुम की आवाज निकाली। मच्छरों पर जरा भी असर नहीं पड़ा। वृत्ताकार मच्छरों का झुंड उसके मुंह, नाक, कान, आंख के इर्द-गिर्द छेड़खानी करने लगा।

बरामदे पर लम्बी आरामकुर्सी पर पसरे राय बाबू किताब पढ़ रहे थे। गोरा चिट्टा रंग। भरा-पूरा चेहरा। बुड्ढा शरीर। किताब की जिल्द के ऊपर राय बाबू की ऐनक दीख रही थी। आंखों के सामने से किताब हटा कर राय बाबू बोले, 'क्या है ललित ?

'मच्छर।'—ललित मुस्कराया।

'मच्छर बहुत हो गया है। मेरे बायें अंग में काटता है। बड़े चालाक मच्छर हैं।

बायें हाथ, बायें पांव और बायीं आंख में कोई हरकत नहीं होती। राय बाबू का बायां अंग सुन्न हो गया है। दो बार दिल का दौरा पड़ चुका है, तीसरे का इन्तजार है। दोपहर में खाये पान की पीक बायें होंठ के कोने से बह कर बैंगनी रंग चुकी है। देख कर ऐसा लगता है कि किसी ने चाकू घाव किया हो।

किताब की जिल्द देख कर ललित अवाक् हुआ। हूबहू राय बाबू से मिलता-जुलता चित्र। जहाज के डेक पर सीने में गोली लगा एक आदमी मर रहा है। उसकी छाती लहू-लुहान है। करीब ही खड़ा है हाथ में रिवाल्वर लिए टोपी, मुलौग और ओवरकोट में ढका एक आदमी। आरामकुर्सी पर बैठे राय बाबू का चेहरा अभी गोली लगे आदमी से हूबहू मिलता है।

'क्या पढ रहे हैं?'

जिल्द देख कर राय बाबू बोले, 'डाकू बाग और ऐतिहासिक हीरा।'

ललित हसा।

'मुझे किताब लाकर दिया करो ललित।'

ठीक है।'

'ला देना। और कोई नहीं ला देता।

ललित ने एक ही किताब तीन-चार बार देकर देखा है। राय बाबू हर बार चाव से पढते रहे हैं। इन्हें किताब देना आसान है।

'कैसे हो ललित?'

'अच्छा।'

'क्या बीमारी है?'

'पेट की बीमारी।'

'पेट की बीमारी।'—राय बाबू चिंतित आंखों से देखते रहे।

क्लब बंद है। नल पर औरत-मर्दों की भीड़। शभू की खाली जमीन पर हाथ में लगाई लिए एक छोकरा उलटे पाव चल रहा है। ललित क्लब के दरवाजे तक गया और वापस आ गया। गणेश की दुकान में टगे कैलेंडर की युवती अपनी गदरायी जवानी का नुमाइश कर रही है। हवा के झोंका में मचलता कैलेंडर सुन्दरी के मदमाते यौवन का इजहार कर रहा है। वह निक्कर-चोकर में है। हा, हा, उसकी गदरायी जवानी निक्कर-चोकर में सभाले नहीं सभलती। राय बाबू के सिर के उपरवाले बरामदे पर खड़ी नमिता कघी से केश निकाल कर रेलिंग पर थूकती है और केश फेंक कर अन्दर चली जाती है। मित्त परिवार के तातल्ले की खिड़की खुली है। कमरे में पलग का एक कोना, दीवार पर टगी तस्वीर और स्टैंड में टगी ममहरी नजर आ रही है। लेकिन इन तस्वीरों को ताड़-फाड़ कर अदृश्य में एक और तस्वीर उभर आती है। अदृश्य में ललित देखता है, समुद्र में एक जहाज जा रहा है। समुद्री थपेड़े खा रहा है जहाज। हिचकोले ले रहा है जहाज। विशाल समुद्र, अनत आकाश। डाकू बाग दूरबीन से देख रहा है। समुद्री थपेड़ों में जहाज मचल रहा था। बाग के चेहरे पर शिकन तक नहीं। ऐतिहासिक हीरे की तलाश

है उसे। न जाने कहां, किस देश म, किसके पास रखा है ऐतिहासिक हीरा। कुख्यात डाकू वांग समुद्र पार करता है, मोटर बोट चलाता है, रस्सी के सहारे ऊपर चढ़ता है, बेगुनाहों के खून से हाथ रंगता है। खून देखता है और पैशाचिक अट्टहास करता है। किसी विदेशी बंदरगाह के किसी रहस्यमय गैलरी म वांग कर सन्दिग्ध व्यक्तियों से इशारा म बात कर रहा है।

ललित वांग की कहानी नहीं जानता। जानने की जरूरत भी नहीं। फिर भी न जाने क्यों समुद्र मे थपेड़े खाते जहाज वह देख रहा है। गरजता-लरजता समुद्र। हिचकोले खाता जहाज। वांग दूरबीन से देख रहा है। कुख्यात वांग। खूंखार वांग। किताब पढ़ कर राय बाबू का कभी अंग उत्तेजित होता है, कभी शांत रहता है।

ललित मुस्कराया।

अविनाश जा रहा है। मैला पायजामा और शर्ट। हाथ म कागज से भरी डायरी। दुबला-पतला शरीर।

ललित ने अविनाश को आवाज दी।

'अरे, ललित! क्या खबर है?'

'कहा जा रहे हो?

साढ़े छह बजे एक मीटिंग है। देर हो गयी। जाता हू।'

ललित हंसा। हर रोज अविनाश की कहीं-न-कहीं मीटिंग रहती है। मिलते ही बोल उठता है, 'मीटिंग है। देर हो गयी। चलता हू भाई। अविनाश नौकरी नहीं करता। ट्रेड यूनियन चलाता है। पार्टी से उसे पचहत्तर रुपये मासिक मिलता है। उसकी पार्टी क्या कहना या करना चाहती है, वह नहीं जानता। लेकिन जो कुछ जानता है, उस पर उसे अगाध विश्वास है। सभा म जाता है, लेकिन नेताओं की बात उसके पल्ले नहीं पड़ती। फिर भी वह उत्तेजित होता है। क्या चाहते हो अविनाश? मनुष्य मात्र की मुक्ति! मुक्ति क्यों कर आयेगी? समाजवाद मुक्ति लायेगा। समाजवाद किसे कहते हैं? अविनाश सकपका जाता है। समाजवाद यानी मनुष्य मात्र की मुक्ति भूख से मुक्ति अभाव से मुक्ति श्रेणी वैषम्य से मुक्ति ऐसी ही कितनी बातें बोल जाता है अविनाश। वह मोटी मोटी किताबों के पन्ने उलटता है, हाथ म किताब लिए बैठा रहता है, लेकिन ठीक-ठीक समझ नहीं पाता। फिर भी उसे महसूस होता है कि इसमें कुछ है। ऐसा कुछ है जो सभा या किताब की तरह नीरस नहीं। कभी किसी ने अविनाश को महत्व नहीं दिया, बल्कि उसका मजाक उड़ाया है। बचपन से ही उसके मरियल नाक-नक्श और मद बुद्धि ने उसे मूल्यवान बनने नहीं दिया। लेकिन इन सभाओं म उसे कुछ

बोलने का मौका मिलता है। वह अपने नेताओं के पास बैठ सकता है। हड़ताल का वह कारण बन सकता है। जुलूस के आगे आगे चल सकता है। नारे लगा सकता है। यह सब करने में उसे अपनी महत्ता महसूस होती है। शायद समाजवाद का अर्थ है स्वयं को नगण्य समझने से मुक्ति।

शाम को घर आने पर ललित ने देखा, 'तुलसी पिंडा पर दीया जला कर मा शंख बजाने की कोशिश कर रही है। फिस-फस करके दम निकल रहा है पर शंख नहीं बजता। उसे देख कर मा बोली, 'अब मुझसे नहीं बजता। देखो, तुम बजा सकते हो या नहीं।

ललित ने मा के जूठे शंख में मुंह लगाया। दो तीन बार कोशिश की। बड़ी तकलीफ हुई फिर भी हार न मानी। आखिरकार शंख बज उठा। एक बार नहीं, तीन-तीन बार।

'कितने दिनों बाद यहां शंख बजा है!'—पोपले मुंह से मां बोली और शंख लेकर कमरे में चली गयी।

ललित सीढ़ियां चढ़ शंभू की छत पर आया। सीढ़ियां चढ़ने में कष्ट हुआ पर छत पर फुरफुरी हवा मिली और वह कष्ट भूल गया। साथ में वह एक चादर ले आया था। चादर बिछा कर लेटा हो गया। ऊपर खुला आसमान। अंग अंग से अठखेलियां करती फुरफुरी हवा। कितना सुख। कितना आनंद। आज के आसमान में सप्तर्षि थे, आकाश गंगा नहीं थी। ललित को आकाश-गंगा देखना अच्छी लगती थी। वहां हर दिन आंधी उठती है। आंधी में नक्षत्रों के कण आसमान में बिखर जाते हैं। लेकिन आज आसमान में आकाश गंगा नहीं थी। वह एकटक सप्तर्षि को देख रहा था। शांत, सौम्य, समाधिस्थ सप्तर्षि। प्रश्नचिह्न जैसा सप्तर्षि मंडल। व्यक्त एवं अव्यक्त जगत की सीमा पर समाधिस्थ सप्तर्षि। नहीं, प्रश्नचिह्न जैसा नहीं। सप्तर्षि की उपमा बिच्छू से दी जाय, तो ठीक रहेगा। ललित को अचानक अपनी राशि याद आयी। वह वृश्चिक राशि का है। वृश्चिक का बुढ़ापा सुखमय नहीं होता। लेकिन वह बुढ़ापे की दहलीज पर कदम भी नहीं रख सकेगा। उसकी आंखें सप्तर्षि पर टिकी रहीं। उसे महसूस हुआ कि सप्तर्षि की किरणें उसके अंग प्रत्यंग को चूम रही हैं। उसका राशि-चक्र बता रहा है कि ग्रह-नक्षत्रों के साथ उसका रहस्यमय संबंध है। वह इस पर विश्वास नहीं कर पाता। कभी भी इन बातों पर उसे विश्वास नहीं था। वह अभी भी मृत्यु के बाद किसी प्रकार की चेतना नहीं चाहता। वह नहीं चाहता कि उसका पुनर्जन्म हो। वह सिर्फ नक्षत्रों के बीच आसमान में सोना चाहता है। एक ऐसी नींद जो कभी न टूटे। और उसे कुछ न चाहिए। बचपन में खेल खत्म होने पर वह मैदान में लेटा हा

जाता और आसमान देखता रहता। उस समय किसी प्रकार की पार्थिव चिंता उसे नहीं सताती। संसार से वह सर्वथा पृथक हो जाता। बस, वह होता और होता खुला आसमान। शून्य की विपण्णता में वह डूब जाता। पुरानी बात याद कर वह हंसा। उन दिनों आसमान में देवता निवास करते थे। अपने भक्तों की प्रार्थना से प्रसन्न हो भक्तों की मनोवांछा पूरी करते थे। अब देवता आसमान में नहीं रहते। नहीं रहते। क्या मतलब? नहीं, अभी भी वह सप्तर्षि का स्पर्श अनुभव कर रहा है। उसे महसूस हुआ कि आसमान से भारी-भरकम उदासी उसकी ओर दौड़ी आ रही है। नहीं, आसमानी उदासी उसे दबोच न सकी। आज तक की जिन्दगी में मिली हताशा, निराशा और उदासी ने उसे इस कदर घर दबोचा है कि आसमानी उदासी फीकी पड़ गयी है।

ललित उठा और छत की रेलिंग के किनारे-किनारे टहलने लगा।

ललित ने देखा, उसके घर की तरफ सफेद रंग की एक गाड़ी आ रही है। गाडी रुकी। दरवाजा खोल कर संजय उतरा। ललित अवाक हुआ। संजय ने गाडी खरीद ली।

छत पर से ही वह ऊंची आवाज में बोला, 'संजय! अन्दर आओ, मैं आ रहा हूं।'

रास्ते की रोशनी की वजह से आंखों के सामने हथेली रख कर संजय ने ललित को देखने की कोशिश की और बोला, 'तुम छत पर हो, मैं वहीं आ रहा हूं।'

'छत शंभू की है। यहां संजय को बुलाना ठीक नहीं।'—यह सोच कर ललित बोला, 'मैं नीचे आ रहा हूं। तुम अंदर आओ।'

ललित नीचे उतरा। उसने देखा, संजय अब तक गली में खड़ा है।

ललित को देख कर संजय मुस्कराया, 'क्यों प्यारे, छुट्टी पर हो या जमानत मिली है?'

'चुप बे!'—ललित मुस्कान में बोला।

अरे वाह! तू तो बोल सकता है। फोन पर तेरी आवाज सुन कर सोचा था कि साले को बिस्तर पर पड़ा रिरियाते सुनूंगा। सॉरी, तू तो नख से सिर तक बुलन्द है प्यारे।'

आंख के इशारे से गाड़ी दिखा कर ललित बोला, 'तुम्हारी है।'

पालतू कुत्ते की पीठ पर जिस तरह मालिक प्यार से थप्पड़ मारता है, उसी तरह गाड़ी पर भी थप्पड़ मार कर संजय बोला, 'अब तक तो मेरी नहीं हुई, लेकिन हो जायगी।'

'क्या मतलब!'

'एक मारवाड़ी पार्टी की गाड़ी है। एकदम नयी है। सिर्फ छः हजार मील चली है। पांच हजार में दे देगा। आज तीसरे पहर ट्रायल के लिए दे गया है।'

'पानी के भाव दे रहा है।'

'तुम नहीं समझोगे। गाड़ी पानी के भाव दे रहा है, लेकिन सूद मूल सब वसूल लेगा। कारोबारी कभी नुकसान नहीं उठाता 'समझ गये घोंचू।'

'तुमने बड़ी उन्नति की है।'

'साले, अभी तो मैं ने उन्नति की पहली सीढ़ी भी तय नहीं की और तुझे उन्नति दीख रही है।' निबंध की किताब में पढ़ा था, करोड़पति होने पर मैं दूध भात खाऊंगा।' अब तक दूध नसीब नहीं हुआ। गाड़ी हो गयी। घर होगा। छोकरियों के साथ ऐश करूंगा। गर्मी बिताने के लिए स्विट्जरलैंड जाऊंगा। देखना, गरीबों की बीमारी से मैं नहीं मरूंगा। सर्दी-खांसी, मलेरिया, फ्लू—छि छि। अपन तो मरेगा कैंसर या सेरिब्रल स्ट्रोक से। वियना या अमेरिका के नर्सिंग होम में मि० संजय की मौत होगी। शंभूनाथ और नीलरतन के जेनरल बेड पर नहीं। कुछ समझ में आया घोंचू!'

'संजय तेरी मौत देखने की बड़ी इच्छा होती है।'

'प्रभु, सुना है आप दया के सागर हैं। इतनी-सी दया तो मेरे मित्र पर जरूर करें कि वह मेरी मृत्यु देख सके।'—संजय ने दोनों हाथ जोड़ कर प्रार्थना की और फिर ललित से बोला, सुन लिया न साले, मैं ने भगवान का दरवाजा खटखटा दिया है। मुझे आशा ही नहीं, वरन् दृढ़ विश्वास है कि तुम मेरी राजसी मौत देख कर मुझे कृतार्थ करोगे। और हां, मेरी मौत देखने से तुम्हें फायदा ही होगा। अपने छात्रों को समझा सकोगे कि परिश्रम का परिणाम कितना सुखद होता है। यहां तक कि इंसान अगर चाहे तो वियना या अमेरिका की सुन्दरी नर्सों की गोद में मर सकता है।

जूते बाहर खोल कर कमरे में घुसना संजय अब तक नहीं भूला है। ललित ने देखा, एक पांव पर खड़ा संजय कुबड़ा होकर जूता खोल रहा है।

'जूता पहने आ जाओ। खोल क्यों रहे हो?'

'चुप बे, मौसी के देवी देवता घर छोड़ कर भाग जायेंगे न।'

कमरे में कदम रखते ही संजय ने आवाज लगायी, 'मौसी, ओ मेरी मौसी!'

रसोई से मां की मरियल आवाज आयी, 'कौन संजय। मुद्दत बाद मौसी की याद आयी है।

संजय कमरे में नहीं बैठा। मोजा पहने रसोई में चला गया। ललित ने सुना,

सजय ऊची आवाज म बोल रहा है, 'मौसी, बुढापा तो आप से कोसा दूर है ।'—और फिर फुसफुसाहट मे बातें करने लगा ।

ललित झटपट छत की सीढ़ियाँ उतरा था । थका-थका-सा महसूस कर रहा था । बिस्तर पर वह अधलेटा पड़ा था ।

सजय कमरे में दाखिल हुआ और चौकी पर बैठ कर बोला, 'उल्लू का पट्ठा तुलसी कहाँ मर गया साला, यहाँ आने वाला था न ! आदित्य का भी अब तक पता नहीं ।

'आदित्य नहीं आयेगा। उसे जरूरी काम है । तुलसी अब आने ही वाला है ।'

'चूल्हे भाड़ में जाय आदित्य । तुलसी को चिढ़ा मारेंगे ।'

'क्यों ?'

'साला दिन दिन जोरू का गुलाम बनता जा रहा है । पता नहीं कहा की परी मिल गयी है उसे । दिन रात दिल मे बीबी की तस्वीर लिए घूमता है । मिलते ही पत्नी पुराण ले बैठता है । कुछ दिन पहले शिक्षकों की हड़ताल हुई थी । बेग हड़ताल म शरीक होने एस्प्लेनेड इस्ट गया था और वहा से हमारे दफ्तर आया था । जब तक बैठा था, तब तक पत्नी की प्रशस्ति गाता रहा । अरे बाबा, शादी क्या सिर्फ तुमने की है ? मित्र हो, तो बचपन की बात करो । कब क्या दादागिरी की, कब किस छोकरी को टिटकारी मारी !—यह सब कुछ नहीं, सिर्फ बीबी और बीबी ! जानते हो साला क्या बोला था ?

ललित क्या कर जान सकता है । अस्पताल से आने के बाद सजय से उसकी यह पहली मुलाकात है । इसलिए उसकी आखों मे सिर्फ प्रश्न उभर आया ।

सजय एक सास म बोले जा रहा था, 'बेहया है साला बेहया । बीबी ने उसे अनास्वादित रस म डुबा रखा है । बीबी उसे स्वर्गिक सुख देती है । एक तरफ बीबी उसे अनास्वादित रस चखा रही है और एक तरफ बाबू का हुलिया बिगड़ रहा है ।'—क्षण भर रुक कर सजय फिर बोला, जैसे कोई खास बात याद आ गयी हो, 'अरे, एक बात तो कहना भूल ही गया ।'

ललित की आखो म 'क्या' उभर आया ।

सजय जारी रहा, 'जानते हो साले ने मुझसे क्या कहा ? चेहरे पर मासूमियत और होठों पर खुशामद चिपका कर कहा बोला, 'सजय, तेरे हाथ मे कोई गुण्डा है ?'—सुन कर मैं आश्चर्यित हुआ, पर चेहरे पर थोड़ी गभीरता ला कर मैं ने पूछा, 'क्या, गुण्डों का क्या होगा ? इस पर वह बोला, 'जरूरत है यार, जरूरत है । एक बदतमीज को सबक सिखाना है ।'

इतनी देर की चुप्पी के बाद मरियल मुस्कान म ललित बोला, 'फिर ?'

मृदु मुस्कान म तुलसी बोला, 'मेरी एकदम नयी-नवेली है और भविष्य म भी नयी रहेगी। वह कभी पुरानी हो ही नहीं सकती।

मजय ने ललित की आर देखा, 'सुन रहे हो ललित ?'

और फिर दबी आवाज म बोला, 'मान लिया कि तेरी बीवी हमेशा नयी नवेली बनी रहेगी, लेकिन है तो बदसूरत ही न। और यह तो तुम जानते ही हो कि मेरी बीवी पहले दरजे की खूबसूरत है। भूले-भटके इन्द्रासन की परी उरवशी भी अगर मेरी धर्म पत्नी का देख ले न तो अपनी सु दरता का कासती हुइ भाग खडी होगी। और जब सजती-सवरती है न मा कसम मजय ने हाठा पर जीभ फेरी और अचानक बोल उठा, 'अरे, मैं तो भूल ही गया था।'

'क्या ?'—ललित बोला।

'सजने-सवरने की बात करते ही रिनि की फरमाइश याद आ गयी। उसने लिपस्टिक लाने कहा है। क्या नाम है उसका, गुलाबी सपना ? न-न रोजी ड्रीम! धत् तेरे की, लिपस्टिक का नाम ही भूल गया। अब क्या होगा रिनि, मेरे दिल की मलिका ?—' बोलते-बोलते मजय ने घड़ी देखी, 'साढे सात। जाते-जाते आठ बजेगा। दुकान बन्द हा जायगी। अब क्या किया जाय तुलसी ?'

'बस, फूट पडो। बगैर लिपस्टिक के घर पहुचागे न, तो रिनि के सामने रिरियाना पडेगा।'

'अच्छा ता मैं फूट पड़ू ताकि तेरी बगिया उधेडनेवाला काइ न रहे। मालूम है साले मेरे फूटने पर तुम दोनों क्या करोगे। दोना शतरज के खिलाड़ी की तरह मुह लटकाये आमने-सामने बैठ जाओगे। और अगर मैं बीवी की लिपस्टिक का बहाना कर फूट पड़ू, तो तुम दोना मुझे जारू का गुलाम कहोगे।'

'अच्छा, अब तुम्हें शर्म भी आती है। रिनि देवी की कृपा स एक शुभ लक्षण तो तुम म पैदा हुआ।' तुलसी मुस्कराया।

'शर्म और मैं। तुलसी बेटे, मैं यह जान कर बेहद खुश हुआ कि तेरी बीवी ने तुझे आदमी बना दिया। अब तू मजाक भी कर सकता है।'—मजय क्षण भर के लिए रुका और फिर अचानक आवाज मे मायूसी घाल कर बाल उठा, 'हाय!'

'क्या हुआ ?'—ललित ने प्रश्न किया।

'मत पूछ यार, मत पूछ। उम्र ने मुझे मार डाला। यही देखा न रिनि डार्लिंग ने लिपस्टिक की फरमाइश की और मैं नाम ही भूल गया। गुलाबी सपना है या रोजी ड्रीम ? खुदा जाने। उम्र ने मुझे आलसी बना दिया। अब मुझ में कमी भी आ गयी है। चोरी भी धड़ल्ले मे करता हू। रुपया मे बेहद प्यार हा गया है। जानते हा सबके पीछे किसका हाथ है ? बढती हुई उम्र का हाथ है प्यारे। अच्छा

मृदु मुस्कान में तुलसी बोला, 'मेरी एकदम नयी-नवेली है और भविष्य में भी नयी रहेगी। वह कभी पुरानी हो ही नहीं सकती।

मजय ने ललित की ओर देखा, 'सुन रहे हो ललित ?'

और फिर दबी आवाज में बोला, 'मान लिया कि तेरी बीवी हमेशा नयी नवेली बनी रहेगी, लेकिन है तो बदसूरत ही न। और यह तो तुम जानते ही हो कि मेरी बीवी पहले दरजे की खूबसूरत है। भूले-भटके इन्द्रासन की परी उर्वशी भी अगर मेरी धर्म पत्नी को देख ले न तो अपनी सुन्दरता का कोसती हुई भाग खड़ी होगी। और जब सजती-सँवरती है न मा कसम मजय ने होठों पर जीभ फेरी और अचानक बोल उठा, 'अरे, मैं तो भूल ही गया था।'

'क्या ?'—ललित बोला।

'सजने-सँवरने की बात करते ही रिनि की फरमाइश याद आ गयी। उसने लिपस्टिक लाने कहा है। क्या नाम है उसका, गुलाबी सपना ? न-न रोजी ड्रीम ! धत् तेरे की, लिपस्टिक का नाम ही भूल गया। अब क्या होगा रिनि, मेरे दिल की मलिका ?—' बोलते-बोलते मजय ने घड़ी देखी, 'साढ़े सात। जाते-जाते आठ बजेगा। दुकान बन्द हो जायगी। अब क्या किया जाय तुलसी ?'

'बस, फूट पड़ो। बगैर लिपस्टिक के घर पहुँचोगे न, तो रिनि के सामने रिरियाना पड़ेगा।'

'अच्छा तो मैं फूट पड़ूँ ताकि तेरी बखिया उधेड़नेवाला कोई न रहे। मालूम है साले मेरे फूटने पर तुम दोनों क्या करोगे। दोनों शतरंज के खिलाड़ी की तरह मुँह लटकाये आमने-सामने बैठ जाओगे। और अगर मैं बीवी की लिपस्टिक का बहाना कर फूट पड़ूँ, तो तुम दोनों मुझे जोरू का गुलाम कहोगे।'

'अच्छा, अब तुम्हें शर्म भी आती है। रिनि देवी की कृपा से एक शुभ लक्षण तो तुम में पैदा हुआ।' तुलसी मुस्कराया।

'शर्म और मैं ! तुलसी बेटे, मैं यह जान कर बेहद खुश हुआ कि तेरी बीवी ने तुझे आदमी बना दिया। अब तू मजाक भी कर सकता है।'—मजय क्षण भर के लिए रुका और फिर अचानक आवाज में मायूसी घोल कर बोल उठा, 'हाय !'

'क्या हुआ ?'—ललित ने प्रश्न किया।

'मत पूछ यार, मत पूछ। उम्र ने मुझे मार डाला। यही देखो न रिनि डार्लिंग ने लिपस्टिक की फरमाइश की और मैं नाम ही भूल गया। गुलाबी सपना है या रोजी ड्रीम ? खुदा जाने। उम्र ने मुझे आलसी बना दिया। अब मुझ में रहमी भी आ गयी है। चोरी भी धड़ल्ले से करता हूँ। रुपया से बेहद प्यार हो गया है। जानते हो सबके पीछे किसका हाथ है ? बढ़ती हुई उम्र का हाथ है प्यारे। अच्छा

तुलसी, आते वक्त तुमने एक मकर गाड़ी देखी होगी। वह मेरी है यार। क्यों तुम्हें जलन तो नहीं हो रही है ?'

तुलसी मुह बिचका कर बोला, 'जी नहीं।'

'काश! तुम में जलन पैदा होती। आजकल लोगों को जलते देख मुझे बड़ा आनद आता है।'—क्षण भर रुक कर सजय फिर बोला, उम्र की दुश्मनी बड़ी खतरनाक होती है दोस्त! यह ठीक है कि अब जीवन म अनिश्चितता नहीं है। अब भाग-दौड़ नहीं है। बैठा रहता हू और रुपया खुद चल कर मेरी तिजोरी म घुस जाता है। चरबी बढ़ रही है और मैं उसे रोक नहीं पाता। बढ़ती उम्र ने मजय को निकम्मा बना दिया यार।'—सजय ने एक लम्बी सांस ली।

तुलसी गभीर होकर बोला, 'अब तुम एक काम करो सजय।'

'क्या ?'—

'एक कहावत तो शायद तुमने भी सुनी होगी, 'बूढ़ी घोड़ी लाल लगाम।'

'सुनी है मेरे लाल।'

'बेटे, फल सुनने से नहीं, करने से मिलता है। सारी जिंदगी तो पाप करते रहे, अब गेरुआ पहन कर पुण्य कमाओ।'

'यार कभी तो अक्ल की बात कर। हम दोनों में बड़ा अतर है। तुम मजदूरी वर्ग के हो और मैं पूजीपति बन गया हू। बीबी का एक जेवर देते तुम्हारी जान निकलती है। तुम्हारा बजट पचर हो जाता है। और मुझे हर रोज रिनि की फरमाइश पूरी करनी पड़ती है।

'धत् साला, पाप की कमाई से बीबी का खुश रखता है और बड़ी-बड़ी बातें करता है। मैं परिश्रम की रोटी खाता हू। मैं तुम से महान हू यार।'

बड़े प्यार से तुलसी की पीठ पर हाथ फेरते हुए सजय बोला, 'सचमुच म तू महान है यार। तुमने कभी बड़े-बड़ों की सगति नहीं की, इसलिए तुम महान हो। तुम ने कभी अमीरी नहीं देखी, इसलिए तुम महान हो। कीमती गाड़ी पर बैठने का सौभाग्य तुम्हें नहीं मिला इसलिए तुम महान हो। शादी-ब्याह के निमत्रण के अलावा कभी तुम्हें अच्छा खाना नसीब नहीं हुआ, इसलिए तुम महान हो।'

तुलसी तिलमिला उठा, 'इससे क्या '

अरे, इसी वजह से तो तू महान है। तुमने कुछ देखा-सुना नहीं और मैं रोज देखता हू। रुपयों का ढेर, सुदरी तितलियों के हाव भाव। यही कारण है कि मैं दिन-रात उम्र की चिंता करता हू। भोग की सामग्री चारों तरफ बिखरी पड़ी है। पचास, साठ, सत्तर साल मे इसान कितना भोग सकता है, कितना देख सकता है ?

ससार का अगर भोगना हो, ता न जानें कितनी बार ज म लेना पड़ेगा। अब तो तेरी मोटी अक्ल म मेरी बात घुस गयी होगी कि मैं उम्र की बात क्या कर रहा हू ?'

ललित हस रहा था। उसकी ओर मुह कर सजय बोला, 'यू तो तुलसी को चिढाने की खातिर बोल रहा हूँ पर न जाने क्यों कभी-कभी यह सब सोच कर मुझे कैसा-कैसा न लगता है। आज सुबह अचानक रमेन याद आ गया। पत्नी क भागने पर घर द्वार छोड़ कर जो गया, सो गया। किस बात का दु ख था उसे ? किसी चीज की कमी ता थी नहीं। एक की जगह दस-बीस औरत रख सकता था, फिर वह स यासी क्या बना ? आज दिन भर रमेन की याद सताती रही और मैं नर्वस होता रहा। लम्बे सघर्ष के बाद अब सुख देख रहा हू, अचानक यदि दु ख का पहाड़ टूट पड़े ता ? सब कुछ छोड़ कर यदि मैं भी सन्यासी बन जाऊ! यह सोचते ही मन कांप जाता है। दोपहर म तुम्हारा फोन मिला, तुम्हारी बीमारी की बात जानता था—फिर भी मैं क्या चौंक उठा, बता सकते हो ? फोन रख कर मैंने देखा, मेरे दोना हाथ काप रहे हैं।'

तुलसी और ललित ध्यान से सजय की बात सुन रहे थे। अचानक सजय का लज्जा आयी। तुलसी से बोला, 'चल यार, तेरी बीवी के सामने आज तेरी प्रेस्टिज बढ जायेगी। आज मैं अपनी गाड़ी से तुम्हे घर छोड़ आऊगा।

ललित की नजर मा पर पड़ी। दरवाजे पर खड़ी मा आचल से हाथ पोछ रही थी। पोपले चेहरे पर एक टुकड़ा मुस्कान चिपकी थी।

मां बाली, 'सजय, ललित को कोई अच्छी नौकरी लगा दे। तेरे हाथ म ता बहुत कुछ है।'

ललित को मा की बात अच्छी नहीं लगी। गभीर स्वर म बोला, 'मा!'

'मा मुस्कुरायी, 'अरे! सजय तो घर का लड़का है।

'सो तो हू ही।'—कह कर सजय उठा और मा का बीच म बैठाता हुआ बोला, 'बैठो मौसी।

मा तुलसी से बाली, 'क्यों रे, तू दुल्हिन नहीं दिखायेगा? एक दिन ले आ न।'

मन ही-मन ललित मा पर खीज रहा था। बाला, 'तुम्हारी डिमाड तो कम नहीं है मा।'

मा पर ललित की बात का कोई असर नहीं हुआ। वह फिर सजय से बाली, 'सजय, अपनी गाडी पर एक दिन दक्षिणेश्वर और तारकेश्वर ले चलोगे?'—कह कर मा पोपली हसी हसी।

'आपा! जाओ, थोडा नाश्ता-पानी का इतजाम करो।'—ललित अब प्रकट हा गयी थी।

चाय का पानी चढ़ा आयी हूं। बस, चूड़ा भूनना है। चूड़ा के साथ पापड़ भी रहेगा।'—आचल से नाक पोंछती हुइ मां उठ खड़ी हुई।

मा के जाने पर तीना फिर सहज हो उठे। अचानक सजय ललित की छाती ठोंक कर बोला, तेरा मनोबल बड़ा पक्का है यार। यही कारण है कि मुझे तुम से ईर्ष्या होती है।'

ललित बच्चों जैसी लज्जासिक्त हसी हसा। इतने दिनों तक ऐसी बात किसी ने नहीं की। सब उसे आश्वासन देते रहे, बहलाने की कोशिश करते रहे। आश्वासन की उसे कतई जरूरत नहीं थी। वह तो चाहता था कि कोइ कटु सत्य बोले, उसके मनोबल की चर्चा करे। सजय ने वैसी ही बात की। इसलिए वह लज्जा भरी हसी हसा।

सजय बोला, 'मैं पहले दरजे का जिद्दी हूं। जब तक किसी चीज का अत नहीं देखता, तब तक दम नहीं लेता। सुना, एक घटना याद आ गयी। कुछ दिन हुए, मैं ने एक पखा खरीदा था। सिलिंग फैन। टेबिल पर कुर्सी रख कर मैं ने ही फिट किया था। रात मे चटाइ बिछा कर ठीक पखा के नीचे रिनि को छाती म चिपकाये सोया था। इसी तरह तीन-चार दिन बीत गये। पखा के नीचे खाता और रिनि से प्यार मुहब्बत की बातें करता। लेकिन एक दिन दफ्तर के बाद एक पार्टी के साथ रेस्तरा म बैठा था। बिजनेस की बातें हो रही थी कि अचानक मेरी नजर सिलिंग फैन पर पड़ी और वहीं अटक गयी। एक ही कपनी का पखा। मैं पार्टी से बात करता और रह रह कर पखा को देखता। देखता और मन बेचैन हो उठता। इस तरह बार-बार देखते-देखते अचानक मेरी नजर एक स्क्रू पर पड़ी। अब मैं बिजनेस की बात करता और स्क्रू को देखता। मैं समझ नहीं पा रहा था कि मैं बार-बार स्क्रू क्या देख रहा हू? इस स्क्रू की वजह से ही पखा राड के साथ लटकता रहता है। अगर स्क्रू न रहे, तो पखा राड से निकल कर गिर जायगा। अचानक मुझे खयाल आया कि मैं ने अपने पखे म स्क्रू नहीं लगाया है। दोपहर म रिनि पिकू को साथ ले पखा के ठीक नीचे चटाइ बिछा कर सोती है। मुझे आश्चर्य हुआ कि मैं क्या कर इतनी बड़ी गलती कर बैठा। मैं अच्छा मैकेनिक हू। कितना के घर पखा लगा चुका हू। ऐसी गलती तो और कभी नहीं हुइ। गलती मालूम होते ही मैं उठ खड़ा हुआ। रेस्तरां से बाहर आया और भाग दौड़ कर टैक्सी पकड़ी। टैक्सी पर सवारी थी। मैंने दीन स्वर म प्रार्थना की, मुझ पर दया कीजिये। मुझे बालीगज जाना है। बड़ी मुसीबत म हू।—टैक्सी पर बैठे सज्जन मेरी प्रार्थना पर पसीज गये। टैक्सी भागी जा रही थी। मेरे दिमाग म घर का भयावह दृश्य उभरा था। भगवान जाने घर जाकर क्या देखूंगा?—टैक्सी पर बैठे सज्जन कोमल स्वर में बोले, आप बड़े

परेशान हैं। क्या बात है ?'—मेरे मुह से निकला, स्कू—न जाने क्या सोच कर वह चुप रहे। टेक्सी घर के सामने रुकी। मैं टेक्सी से उतरा और भाग कर अन्दर गया। अन्दर जाकर देखा—सजय हंसा—क्या देखा जानते हो ?

'क्या ?' तुलसी ने पूछा।

'पखा चल रहा है। स्कू अपनी जगह लगा है।'

तुलसी हंसा, 'वाह! दुरान्त और सुखान्त का मणिकांचन योग!'

सजय बोला, 'न जाने क्यों अब मैं अपने आप पर विश्वास नहीं कर पाता। क्या पता कहां नट-बोल्टू लगाने में गलती कर बैठा हूं। एक दिन अपने हाथों फिट की हुई गृहस्थी भरभरा कर गिर पड़ेगी। अचानक कुछ याद आते ही स्कू-स्कू चीखता हुआ दौड़ पड़ूंगा। पता नहीं, कब क्या कर बैठूंगा ललित। अब मैं अपने पर भरोसा नहीं कर पाता। मैं तुम से बड़ा दुर्बल हूं ललित। अक्सर ऐसा लगता है कि कहीं-न-कहीं कोई गड़बड़ी रह गयी है। जिस किसी क्षण सब बर्बाद हो जायेगा।

ललित मुस्कराया।

सजय जारी रहा, 'मुझे लगता है कि रमेन के साथ भी ऐसा ही कुछ हुआ था। कहीं-न-कहीं किसी बात की त्रुटि थी। अचानक रमेन ने वह त्रुटि पकड़ ली और सब कुछ छोड़-छाड़ कर चला गया। तुम तो जानते ही हो कि हम लोग कितने शरारती थे। ट्राफिक पुलिस की टोपी लेकर भागे हैं, रेस्तरां में खा-पीकर पैसे नहीं दिये हैं, बदले में अश्लील नाच दिखा कर भागे हैं, सिनेमा हाल में मार-पीट करके टिकट लिया है—कितनी स्कीम थी रमेन में। फिर भी उसका क्या हुआ? कहां गया रमेन ?—आज उसकी बहुत याद आती है।

रमेन! ललित ने अपने दायीं ओर के ताखे की ओर देखा। वहां पुराने कागज का ढेर लगा था। तलाशने से रमेन की दो-चार चिट्ठियां भी मिल जायेंगी। बड़ा अच्छा लड़का था रमेन। मैमन सिंह के जमींदार का लड़का था। कभी-कभार हस्ताक्षर करता—राय रमेन्द्रनारायण चौधुरी।

ललित बोला, 'मेरे पास रमेन का पता है। तुम्हें चाहिए ?'

'नहीं!'—सजय ने सिर हिलाया, 'रहने दो।'—कह कर वह धूर्त मुस्कान में मुस्कराया, 'उसका मुझ पर दो हजार रुपया निकलेगा। जिस कारोबार के लिए कर्ज लिया था, डूब गया।

तुलसी बोल उठा, 'साला बेइमान!'

साढ़े आठ बजे, सजय और तुलसी उठे। अचानक तुलसी बोल उठा, आज आदित्य को देखा!'

'कहां ?'—सजय ने पूछा।

'गड़ियाहाट म। डबल डेकर बस के दा तल्ले से देखा, मू गफली खाते-खाते वह दक्षिण की ओर जा रहा था। साथ थी एक काली-कलूटी मेम।

सजय हो-हो कर हस पड़ा। ललित चौंक उठा।

ललित का मन उदास हो गया। भोली-भाली श्यामलगी शाश्वती ने उससे बार-बार कहा था कि उसके फूफा किस तरह इस रोग से मुक्त हुए। कितनी मर्मस्पर्शी सहानुभूति थी उसम। कितनी व्याकुलता थी उसकी भोली-भाली आंखों म। नहीं, तुलसी में रुचि-बोध कतई नहीं है। आंख रहते अधा है तुलसी। क्या कहा, काली-कलूटी मेम! अधा है साला, एकदम अधा।

गली मे खड़ा अयमनस्क ललित ने सुना, सजय तुलसी से कह रहा था, साला, गवार का गवार रह गया। गाड़ी का दरवाजा भी नहीं खुला सकता।'

गाड़ी मे घमरे अधेरे म दोनों ने झुक कर सिगरेट सुलगायी। पीछे खड़ी मां ऊची आवाज म कह रही थी, 'एक दिन बहू के साथ आना सजय। मुन्ने का भी साथ ले आना। अब तक नहीं देखा है। किसी दिन मुझे अपनी गाड़ी पर ले जाना। तुलसी, बहू को लाना।'

'ठीक है। ले आऊगा।'—दोनो ऊची आवाज म बोले।

'चलू ललित।'—सजय बोला।

ललित ने कहा, 'अच्छा।'

गाड़ी आखों से ओझल हो गयी। ललित पलट कर दो कदम आगे बढ़ा और अचानक गली के अंधेरे म रुक गया। सांचे म ढली श्यामल कांति शाश्वती! शायद सारी रात बेचारी उसकी ही चिंता करेगी।

सहसा ललित को अपूर्व आनद आया। दूसरे ही क्षण उसने सोचा, यह तो गर्हित आनद है।

# नौ

*

दीवार पर टंगी है पिता की पुरानी तस्वीर। दीवार पर तस्वीर के पीछे से रेंगती हुई निकल आयी एक छिपकली। कई दिनों से ललित देख रहा है कि छिपकली धप से कभी टेबिल पर, तो कभी फर्श पर गिरती है और फिर दीवार पर रेंगती हुई तस्वीर के पीछे चली जाती है। वही पुरानी छिपकली तो नहीं, जो मां की हर बात में हां मिलाती है। मां अक्सर उसकी शादी, घर-गृहस्थी या घर बनाने की चर्चा करती थी और टिक, टिक, टिक की आवाज देकर छिपकली मां का समर्थन करती थी। मां कहा करती, सुन लिया न टिक, टिक, टिक यानी सच, तीन सच। मां की बातों का उत्तर देकर ललित ने अपने समर्थन में छिपकली की आवाज सुननी चाही है पर छिपकली चुप रही है। वही पुरानी छिपकली है या नहीं जानने की खातिर ललित ने टेबिल लैंप की रोशनी घुमा कर छिपकली पर फेंकी। उसने देखा, छिपकली का पेट बेढब मोटा है। शीशे जैसे पारदर्शी पेट में काला-काला न जाने क्या दीख रहा है? उसने और करीब से देखा, पिछली टांगों के करीब पेट के अंदर दोनों तरफ एक-एक गोल-मटोल अंडा। अंडों को छिपाने जैसी कोई व्यवस्था छिपकली के शरीर में नहीं है। इस नन्हें से पारदर्शी शरीर में ही उसका सब कुछ निहित है। उसकी बुद्धि, उसकी पाचन शक्ति, उसकी संतान, यानी सब कुछ। वह कभी ललित के पक्ष में नहीं रही। हमेशा मां की हां में हां मिलाती रही है। न जाने क्या सहसा उसके हृदय में छिपकली के प्रति सहानुभूति पैदा हो गयी! छिपकली की भीगी-भीगी चमकीली आंखों में उसे बेचारी की व्यथा महसूस हुई। उसे ऐसा लगा कि अपनी भीगी आंखों से वह गर्भ-धारण का कष्ट बता रही है। अब उसकी समझ में आया कि वह हमेशा मां की हां में हां क्या मिलाती रही है? और समझ में आते ही वह मुस्कराया, पर दूसरे ही क्षण चिंतित हो उठा। आखिर चिकनी-चुपड़ी दीवार पर बेचारी अंडे कहां देगी? मन-ही-मन वह बोल उठा, 'तुम्हें बड़ा कष्ट है। चिंतित ललित को अचानक खयाल आया कि उसने कभी

छिपकली के अडे इधर उधर पड़े नहीं देखे। भगवान ने समझ इतजाम कर रखा है। शायद वह तस्वीर के पीछे अडे देगी। पिता की तस्वीर की ओर देख कर वह मुस्कराया। तस्वीर में मुल्लार की पोशाक पहने उसके पिता आरामकुर्सी पर बैठे हैं। एक जमाना था जब वह पूर्वी बगाल के मशहूर फुटबाल खिलाडी थे। फ्रेम में उसके खिलाड़ी पिता की भी तस्वीर थी। दीमक लगने की वजह से मां ने फ्रेम से निकाल कर ट्रक म रख दी है। तस्वीर म विशाल शील्ड को घेरे उसके पिता एव टीम के अन्य खिलाड़ी हैं। शील्ड के बायीं ओर जमीं में उसके पिता पाल्थी मारे बैठे हैं। पहलवानी बदन, नाक के नीचे बड़ी-बड़ी रुढ़ियल मूछें। ढीले-ढाले पैंट और नगे पाव से उन्होंने बूटधारी साहबों से टक्कर ली थी। मान्च रेफरियों ने अगर बेइमानी नहीं की होती, तो उन्हें डेढ़-सौ गोल करने का गौरव प्राप्त होता। उन्हें इस बात का बड़ा गर्व था कि वह भाड़े पर खेलते हैं। एकबार बचपन मे उसने भी अपने पिता का मैच देखा था। गोरे के नवीन एव प्रवीण खिलाड़ियों के बीच मैच था। गोल तो उसके पिता ने दे ही दिया था पर रेफरी ने आफसाइड करार दे दिया। सचमुच में उसे बड़ा गुस्सा आया रेफरी पर। लेकिन यह सोच कर उसने रेफरी को माफ कर दिया था कि वह चश्माधारी है। और उसी दिन शाम ढलने पर 'केसर राय' नाटक खेला गया था। उसके पिता कार्वालो बने थे। सीने म पिस्तौल की गोली दाग कर गु ड बा इ गा ल—कह कर कार्वालो धड़ाम से रगमच पर गिरा था। ललित उत्तेजनावश उठ खड़ा हुआ था। उसकी आखें छलछला आयी थीं। वह चीखने ही वाला था कि दो आदमियों ने हाथ पकड कर उसे बैठाते हुये कहा, बैठ जा बेटा, तेरा बाप जिन्दा है।

टेबिल पर कागज-पत्तर और चिट्ठियां बिखरी पड़ी थीं। ललित चिट्ठियां देख रहा था। यू तो उसे चिट्ठी लिखनेवालों की सख्या बहुत कम है, फिर भी कुछ चिट्ठिया जमा हो गयी हैं। कुछ चिट्ठिया खो गयी हैं। और चिट्ठियों से मां ने चूल्हा भी जलाया है। इसके बावजूद भी उसे रमेन की दो-चार चिट्ठिया मिल गयीं। लब असे से रमेन के साथ पत्र-व्यवहार बद था। उसे तो ललित भूल ही गया था। अगर सजय ने आज रमेन की चर्चा न की होती, तो उसे उसकी याद भी न आती। अच्छा हुआ जो सजय उसे रमेन की याद दिला गया। वह रमेन का कर्जदार है। करीब तीन-चार सौ रुपये उसने उससे लिए थे। यू तो रमेन का कितना पर कर्ज होगा, वह खुद नहीं जानता। उसने कभी किसी का वापस लेने की खातिर दिया ही नहीं। और न किसी ने कर्ज सोच कर उससे लिया ही। अब तो शायद रमेन सन्यासी बन गया है। बिहार के एक छोटे-से शहर मे आश्रम में

रहता है। रुपये-पैसे की ओर आँख उठा कर भी नहीं देखता। गेरुआ पहनना होगा, कीर्त्तन करता होगा और हर औरत को, चाहे वह जवान हो या बुढ्ढी, मा कह कर पुकारता होगा। अब उसे रुपया वापस करना कोई मतलब नहीं रखता, फिर भी ललित कर्ज उतारना चाहता है। न आज रमेन की चर्चा होती, न ललित को कर्ज की याद आती। अब याद जब आ ही गयी है, तो कर्ज चुकाने की कोशिश भी वह करेगा ही। अगर रमेन कभी दुनियादारी में आ जाय और उसकी याद उसे बनी रहे, तो ललित चाहता है कि वह याद ऋण-मुक्त, राग द्वेषहीन, निर्मल, निर्विकार ललित की होनी चाहिए।

रमेन का पता सहज ही मिल गया। सीधा-सादा पता है। सिर्फ नाम और पोस्ट आफिस। ललित ने कागज-कलम ली और लिखा प्रिय रमेन—। अब क्या लिखे, वह सोच ही रहा था कि शंभू ने आकर आवाज दी, ललितदा।

'क्या है?'

'जरा बाहर आइए न।'

'क्या बात है?'

'कुछ काम है।

बाहर आकर ललित ने देखा, गली के नुक्कड़ पर अंधेरे में मुहल्ले के कई नौजवान दबी आवाज में बातें कर रहे हैं। उसे देख कर लड़कों ने सिगरेट छिपा ली। चलते-चलते शंभू ने ललित से पूछा, बिमान रक्षित को जानते हैं?

'चेहरा-मोहरा कैसा है? कहाँ रहता है?

'अपने ही मुहल्ले में। नया-नया आया है।

गोरा-चिट्टा मरियल चेहरा। देखने में बीमार-सा लगता है।

ललित को याद न आया। बोला, याद तो नहीं आता। शायद देख कर पहचान सकूँ। लेकिन बात क्या है?'

शंभू ने अपने दल के एक लड़के को आवाज दी, सुबल! सुबल करीब आकर बोला, 'मुहल्ले में नया नया आया है। पछिया टोला की एक झुग्गी में रहता है। एक दिन रात में आकर बाहर के कुछ आदमियों ने बेचारे की बुरी तरह पिटाई की। हमलोगों को कुछ पता नहीं था। दूसरे दिन खबर मिलते ही हम गये। डाक्टर दिखाया। लेकिन मार खाने के बाद न जाने उसे क्या हो गया है। पागल जैसा करता रहता है। चीखता-चिल्लाता है। रह रह कर बार-बार आपका नाम लेता है। कहता है, कालेज में आपका सहपाठी था। हम पता लगा रहे हैं लेकिन अब तक कोई सुराग नहीं मिला। न अस्पताल जाना चाहता है, न पुलिस को खबर देने देता है। सिर्फ आपका नाम ले रहा है। कहता है, जो कुछ कहना है, आपसे ही

कहेगा। आपकी तबीयत खराब सोच कर आपको परेशान नहीं किया लेकिन वह आपके सिवा और किसी को कुछ बताना ही नहीं चाहता।

शंभू के दल के अधिकांश लड़के बेकार हैं। उनका वक्त काटे नहीं कटता। मुहल्ले में झगड़ा-फसाद होने से उन्हें खुशी होती है। दो-चार दिन उत्तेजना में कट जाता है। मुहल्ले के एक अनजान वासिन्दे को बाहर के कुछ आदमी मार गये, यह क्या कर कोई बर्दाश्त कर सकता है। आखिर मुहल्ले की इज्जत का सवाल है। जब तक इस रहस्य का पता नहीं चलता, तब तक शंभू और उसके चेले-चामुण्डों को चैन कहां।

लेकिन ललित को वह गोरा-चिट्टा मरियल चेहरा याद नहीं आया। जिस कालेज में ललित पढ़ता था, वह कलकत्ता का एक बहुत बड़ा कालेज है। कालेज न कह कर गोहाल कहना ज्यादा उचित होगा। एक कमरे में ढाई सौ विद्यार्थी जेनरल क्लास किया करते। हाजिरी देकर कितने ही विद्यार्थी पीछे की खिड़की से निकल कर कारिडार में सिगरेट फूंका करते या चाय की दुकान में महफिल जमती। ढाई सौ विद्यार्थियों में गोरा-चिट्टा मरियल चेहरा विमान रक्षित कौन था, कहना मुश्किल है। वह, रमेन और आदित्य एक क्लास में पढ़ते थे। तुलसी एक क्लास नीचे था। इनके अलावा क्लास के और भी कुछ मित्र थे, पर उनमें से कोई विमान रक्षित था—ललित को याद नहीं आता। न में सिर हिला कर वह बोला, 'ऊं हूं, याद नहीं आता मुकुल। चलो, एकबार देख आयें।'

घर से कमीज पहन कर ललित निकल आया। पछिया टोला ज्यादा दूर नहीं है। तीन-चार मिनट का रास्ता है। मुहल्ले की पक्की सड़क से एक कच्चा रास्ता पछिया टोला गया है। एक खपरैल झुग्गी के करीब आकर मुकुल बोला, 'यहीं रहता है।' विमान रक्षित बाहर के कमरे में रहता है। मकान मालिक अंदर।

आगे बढ़ कर मुकुल ने दरवाजे पर धक्का दिया। और साथ-ही-साथ पड़ोसियों ने ताक झांक शुरू कर दी। नंगे बदन लुंगी पहने एक आदमी ललित के पास आ खड़ा हुआ। वह मकान मालिक है। रास्ते की रोशनी में ललित ने उसके चेहरे पर ढेर सारी दुश्चिन्ता देखी। वह ललित को पहचानता है। अभी तक मुहल्ले में ललित की थोड़ी धाक है। उसे देखकर मकान मालिक नमस्कार कर बोला, 'कुछ कीजिये दादा। सुना है, आपका दोस्त है। बड़ी अशान्ति में हूं। कहिए, यहां से चला जाय।'

बड़ी देर तक दरवाजा खटखटाने के बाद दरवाजा खुला। दरवाजे पर सिर में बैंडेज बंधा एक आदमी खड़ा था। रास्ते की मद्धिम रोशनी में भी उसकी दोनों आंखें हठात चमक उठीं। बोला, 'क्या बात है?

भारी-भरकम आत्मीक आवाज। एकबार सुनते ही मन प्रसन्न हो जाता है। पहरावे म पायजामा और नग्न पर तौलिया।

सुबल बोला, 'ललित को ले आया हू।'

क्षण भर उन लोगों की ओर एक नजर देख कर वह बोला, 'अदर आइये।'

कमरे म चालीस पावर का लट्टू जल रहा है। मद्धिम रोशनी म ललित ने देखा, चारो तरफ किताबें बिखरी पड़ी हैं। मैला-कुचैला बिछावन, मैली-कुचैली मसहरी। एक डोरी टगी है। डोरी पर दुनिया भर के कपडे टगे हैं। कमरे म कदम रख कर यह समझते देर नहीं लगती कि विमान रक्षित के कपड़े धोबी के घर नहीं जाते। डोरी पर गमछा फैला है। पायजामा सूख रहा है। कमरे म उदासीनता जम कर बैठी है। इस दरिद्र परिवेश म चमचमाती जिल्द म बधी अग्रेजी किताबें देख कर बड़ा अजीब-सा लगता है।

रक्षित बिस्तर पर जा लेटा। ललित से बोला, 'आओ ललित, यहा बैठो।'

करीब से ललित ने उसका मुह देखा। बैंडेज तले कपाल ढक गया है। नाक सूज कर लाल हो गयी है। बायीं आख से बायीं ठुड्डी तक काला दाग पड़ गया है। होठ फट गये हैं और वहा खून जम गया है। बदन तौलिया से ढका है, इसलिए बदन का जखम देखा नहीं गया। स्वाभाविक मुह शायद पहचान म आ जाता लेकिन जहा-तहा कटा सूजा चेहरा ललित पहचान न सका। रक्षित ने हसने की कोशिश की और उसके कटे होठ से खून निकल आया। ललित विचार ही कर रहा था कि आप कहे या तुम कि अचानक खयाल आया, रक्षित ने उसे तुम से सबोधित किया है। बोला, 'बातें मत करो। तुम्हारे होठ से खून निकल रहा है।

तौलिए से होठ दबा कर वह भारी आवाज म बोला, 'मैं तुम्हें पहचानता हू। तुम शायद पहचान नहीं रहे हो।'

ललित मुस्कराया।

शभू वगैरह कमरे म भीड़ जमाये हैं। खिड़की और दरवाजे से पड़ोसी झाक रहे हैं। भीड़ की ओर देखता हुआ रक्षित चुप हो गया। आखों म घबराहट घिर आयी।

ललित ने शभू से कहा, 'तुम लोग जाओ।'

शभू सिर झुकाये कमरे से निकल पड़ा। पीछे-पीछे उसके साथी-सगी भी गये। दरवाजा बद करते वक्त ललित ने देखा, शभू वगैरह बाहर खड़े हैं। तुरन्त रूखी आवाज म बोला, 'पहचानते हैं न? नहीं साला चार सौ बीस ता नहीं।

'पहचानता हू। तुम लोग जाओ। कल सुबह मिलना।'

भरोखा दरवाजा बद कर ललित सिगरेट का पैकेट जेब से निकाल कर रक्षित के सामने बिस्तर पर बैठा।

देखने से लगता है, उसकी आखों तले ढेर सारी बातें जम गयी हैं। भौंहे सिकोड़ कर कुछेक क्षण ललित को देखता रहा और फिर आखें बन्द कर बोला, 'सचमुच में मुझे पहचान रहे हो?'

ललित सकोच मे बोला, 'ठीक-ठीक याद नहीं आ रहा है।'

वह आखें खोल कर बोला, 'मुझे बहुत कम लड़के पहचानते थे। मैं किसी से घुलमिल नहीं सकता था।'

क्षण भर रुक कर वह फिर बोला, 'कालेज जीवन में तुम मेरे हीरो थे। तुम मुझे अच्छी तरह याद हो। छात्र-यूनियन के सेक्रेटरी बने थे। क्या, ठीक कह रहा हू न?'

ललित ने सिर हिलाया।

'तुम छात्रों में बड़े प्रिय थे। कोई भी मुश्किल में पड़ता, तो भागा-भागा तुम्हारे पास जाता। कडियल प्रिंसिपल के कमरे में तुम बेहिचक घुस जाते थे। बाद्म प्रिंसिपल पर तुम्हारा अच्छा रोब था। प्राफेसर तुमसे डरते थे। ठीक कह रहा हू न?'

ललित ने 'हा' मे सिर हिलाया।

'तुम से मैं जलता था।'—कह कर वह हसा। कटे होठ से रह-रह कर खून निकल रहा है और तौलिया से खून पोछ कर वह बोल रहा है, 'मैं सोच ही नहीं पाता था कि लड़के तुमसे क्या बात करते हैं। इतनी सारी बातें वे कहा से लाते हैं। और उन लोगो के साथ तुम भी घटों क्या बोलते थे। बचपन से ही मैं अल्पभाषी रहा हू। यही वजह है कि कभी कोई मेरा दोस्त नहीं बना। दो-चार बात करने के बाद मैं कुछ नहीं बोल पाता। मेरी बातों का भडार खत्म हो जाता है। हालाकि मैं ने अपने सहपाठियों को हमेशा बातों में मशगूल देखा है। क्लास हो या क्लास के बाहर सिर्फ बात-ही बात। न जाने इतनी सारी बातें वे कहा से लाते थे। इच्छा होती, छिप कर उनकी बातें सुनू और फिर उन्हीं बातों को अपनी बात कह कर पेश करू। लेकिन उनकी बातें बेमतलब की हुआ करती थीं। न जाने फिजूल बातों में उनकी दोस्ती क्यों कर जमती थी? मैं ने भी बकवास करने की कोशिश की पर सफल न हुआ। फालतू बात मेरे मुह से निकलना नहीं चाहती। दोस्तों ने मुझे हमेशा दूर-दूर रखा है। यही कारण है कि मैं क्रमश अल्पभाषी बनता गया, अपने हमउम्रों से कटता गया। परिणामस्वरूप आदमियों के बीच रह कर भी किसी से दो बात करने का साहस नहीं होता। धीरे-धीरे यह मेरा रोग बन गया।

राह चलते काइ कहीं का पता पृछता, तो अजीव-सी घवराहट मुझे आ दबोचती। जानते हुए भी घवराहट मे गलत बोल जाता। काइ वक्त पूछता, तो अपनी घडी देख कर भी गलत बोल जाता। हमारे घर नाते-रिश्तेदार आने से मैं चुपचाप खिसक जाता। यथासाध्य मैं किसी के घर नहीं जाता। ट्राम-बस म अगर कोइ मेरे पाव दबा देता, ता मैं चुप रहता। दुकानदार डडी मारता फिर भी मेरे मुह बोल नहीं फूटता। एकबार बस म मेरी आखो के सामने एक छोकरे ने एक वृद्ध की जेब काट ली और मैं चुप रहा। न जाने ऐसी कितनी ही घटनाए घटीं, जहा मुझे सक्रिय होना चाहिए, मैं निष्क्रिय बना रहा। मात्र मूक दर्शक। एकबार की घटना है। क्रिकेट मैच देख रहा था। मैंने जलती सिगरेट का टुकडा फेंका। गैलरी की फाक से टुकडा गिरता हुआ नीचे उकड् मारे पसान कर रहे एक आदमी के कालर म जा अटका। उसे आभास तक नहीं मिला और इधर कालर से धूआ निकलने लगा। लेकिन मैं न ता उसे सजग कर सका और न उससे क्षमा ही माग सका। सिर्फ फटी फटी आखो से देखता रहा।'

क्षण भर चुप रह कर वह फिर बोला, 'तुम मेरी बात ठीक-ठीक नहीं समझ सकोगे। क्योकि तुम्हारी बातो का भडार कभी खत्म नहीं हुआ। अनायास ही तुम निरतर बोल सकते थे। मेरी बात तुम्हें अजीब-सी लगती होगी। है न?'

ललित हस कर बोला, 'रुको मत। बोलते जाओ।'

'तुम्हारी एक सिगरेट लू।'— कह कर उसने एक सिगरेट जलायी। होठो म दबा कर बड़ी मुश्किल से उसने दो-तीन कश लिए। और फिर बोला, 'स्कूल-कालेज मे जो सब छात्र लोकप्रिय थे, वे सब मेरे हीरो थे। तुम भी मेरे हीरो थ। गोरा-चिट्टा इकहरा बदन। खडी नाक। चमचमाती आखें। पिचके गाल। तुम चुप रहने पर भी ऐसा लगता था कि तुम्हारा तेज-तरार मुह धाराप्रवाह बोल रहा है। तुमने कभी किसी की उपेक्षा नहीं की। अपनी लोकप्रियता के प्रति तुम पूर्णत सजग थे। एकबार कालेज के एक समारोह म तुम कलकत्ता के मेयर से बात कर रहे थे। एकबार तुम्हें एक रूपसी गायिका के साथ बातें करते देखा था। मेरी धारणा थी कि तुम एक दिन नेता बनोगे। मुझे विश्वास था कि तुम यदि चाहो, तो उस विख्यात रूपसी गायिका से विवाह कर सकते हो। तुम से मैं ईर्ष्या करता था, फिर भी भगवान से प्रार्थना करता था कि तुम सदा अजेय रहो। यूनियन के चुनाव में कोइ तुम्हें हरा न सके। कालेज की प्रबध समिति कभी तुम्हारी उपेक्षा न करे। रूपसी गायिका तुम्हारा विवाह प्रस्ताव न ठुकरा दे। देख रहे हो न, मैं ने तुम्हे कितना याद रखा है।

वह हसा ओर तौलिया से होठ का थूक पोछ कर फिर शुरू हुआ, '

अपनी दुर्बलता के कारण मैं तुम्हें जितना महान समझता था, तुम उतने महान नहीं हो। तुम जो हो, उससे कई गुना ज्यादा मैं तुम्हें समझता था। है न ?'

ललित ने 'हां' में सिर हिलाया।

'मैं जो सचमुच में तुम्हारा सहपाठी था, इसका एक प्रमाण और देता हूं। कालेज मैगजिन में तुमने एक लेख लिखा था, 'भारत में साम्यवाद।' यथा, ठीक कह रहा हूं न ? उस लेख में तुमने लिखा था कि भारत में धर्म ही साम्यवाद का सबसे बड़ा शत्रु है। भारतीय सभ्यता-संस्कृति सदा से धर्म द्वारा अनुप्राणित होती रही है। सदा से धर्म ही भारतीय इतिहास का नियामक रहा है। भारतवासी अपने दुःख-कष्ट को पूर्व जन्म का कर्म फल समझते हैं। तुम ने यह भी लिखा था कि यह एक आश्चर्य का विषय है कि अभी भी नरबलि देकर या मनौती मानकर लोगों की मनोकामना पूरी होती है। अभी भी हमारे धर्मगुरु या साधक अलौकिक कार्य करते हैं। परिणामस्वरूप लड़खड़ाता हुआ धर्म विश्वास संभल कर खड़ा हो जाता है। ठीक कह रहा हूं न ?'

ललित ने सिर हिलाया।

'तुम ने भारत में साम्यवाद के प्रचार-प्रसार के लिए रास्ता भी सुझाया था। तुम ने लिखा था, इस देश में धर्म की असारता प्रमाणित करने के लिए धर्म का ज्ञान आवश्यक है। साम्यवाद के प्रचारक को मनु का अनुशासन शिरोधार्य कर, धार्मिक विधियां संपन्न कर जन साधारण को धर्म की असारता बतानी होगी। धर्म ज्ञान द्वारा ही धर्म की असारता प्रमाणित होगी, अन्यथा नहीं।'

आखिरी कश लेकर उसने सिगरेट फेंक दी। बोला, 'तुम्हारा समाधान मुझे अद्भुत लगा था।'—कह कर वह हो-हो कर हंसने लगा। कहकहा में ही बोला, 'क्या खूब! धर्म की अरथी निकालने के लिए साम्यवादियों को चन्दन-टीका लगा कर हरे राम, हरे कृष्ण करना चाहिए, कापालिक बन कर श्मशान काली की पूजा करनी चाहिए, साधु बन कर हिमालय जाना चाहिए, घर-घर कीर्तन करना चाहिए। वाह! कितना सरल प्रस्ताव है!'

लाज से ललित थोड़ा लाल हो गया। ऐसा ही एक अनोखा प्रस्ताव उसने अपने लेख में रखा था।

कुछेक क्षण चुप रह कर उसने ललित से प्रश्न किया, 'क्या तुम अभी भी अपने प्रस्ताव पर विश्वास करते हो ?'

ललित ने सिर हिलाया, 'नहीं।'

'क्यों ?'

ललित चुप रहा।

'लेकिन मैं विश्राम करता हूं। तुम ने ठीक ही लिया था।' टिक टिक टिक— छिपकली तीन बार बोल उठी। उसने ध्यान नहीं दिया, पर ललित ने सुना।

बड़ी मुश्किल से वह उठा। 'चाय लोगे?'—उसने ललित से पूछा।

'नहीं।'—ललित ने जवाब दिया।

'मैं लूंगा।'

कमरे के एक कोने में अल्मुनियम के दो चार बर्तन और एक स्टोव। उसने स्टोव जलाया और केतली चढ़ा कर चौकी पर आ बैठा। अनजाने में तौलिया गिर गया और वह कंकाल-सा प्रतीत हुआ। उसकी एक-एक हड्डी गिनी जा सकती थी। ललित एकटक उसे देख रहा था। मुझे को शक है कि मार खा खा कर वह पागल हो गया है। हो सकता है यही हो।

वह बोला, 'यहां आने पर मैं ने तुम्हें देखा था और दूर से ही पहचान गया था। अब तुम्हारा चेहरा पहले जैसा तेज तर्रार नहीं, थोड़ा भोथा पड़ गया है। तुम से नहीं मिला। क्योंकि मैं जानता था कि तुम मुझे नहीं पहचान सकोगे। मुझे पहचानता था तुम्हारा दोस्त रमेन।

'रमेन!'

'हां।—तुम्हें इस मुहल्ले में देख कर मुझे बड़ा दुःख हुआ। मैं ने जो सोचा था, वैसा तुम न बन सके। बैठे-बैठे जिन्दगी बसर कर रहे हो। यहां आने पर मैं ने सुना कि तुम बीमार हो और फिर तुम्हारे प्रति मेरे मन में किसी किस्म का कौतूहल न रहा।

ललित मुस्करा कर बोला, 'अब मुझ में भी किसी किस्म का कौतूहल नहीं है! मेरी बात छोड़ो, अपनी सुनाओ।

उसके सिर में या और कहीं दर्द हो रहा था। मुंह विकृत कर उसने दर्द बर्दाश्त करने की कोशिश की। कुछेक क्षण आंखें बंद किये चुप रहा फिर बोला, मैं क्या बकवास कर रहा हूं?'

'नहीं तो।'

'समझ रहे हो मेरी बात?'

'बिल्कुल।'

उसकी मटमैली आंखें चमचम कर उठीं। धीर गंभीर आवाज में बोला, 'मेरे पिता वकील थे। वह मुझे वकील बनाना चाहते थे। लेकिन मेरी चाल-चलन देख कर उन्होंने आशा छोड़ दी। मैं ने विज्ञान से इन्टर किया। उसके बाद बी० काम० में दाखिला लिया फिर बीच में ही बी० काम० छोड़ कर बी० ए० में दाखिला ले लिया। मैं फिलासफी आनर्स का छात्र था। आनर्स क्लास में रमेन से परिचय हुआ।'

'परिचय !'—ललित के चेहरे पर प्रश्नात्मक मुस्कान उभर आयी ।

वह हस कर बोला, 'परिचय सुन कर हस रहे हो ? परिचय अचानक नहीं हुआ था । तुम तो रमेन को जानते ही हो । उसमें कौतूहल बहुत है । किसी भी चीज के प्रति कौतूहल जगने पर वह चुप नहीं बैठता था । मुझे सबसे अलग-थलग देख कर वह मुझ से घनिष्ठ होने की कोशिश करने लगा । मेरा तो सवाल ही नहीं उठता । मुश्किल से दो-चार बात करता और चुप हो जाता । उसने प्रतिज्ञा की थी कि वह मेरा अंत देखेगा ।

सहसा मुह विकृत कर वह बोला, खैर, छोड़ो इन बातों को । बी० ए० आनर्स कर मैं ने एम० ए० दर्शन शास्त्र में दाखिला लिया । तुम अंग्रेजी लेकर पढ़ रहे थे । उन दिनों भी मैं ने तुम्हें देखा है । मैं एम० ए० नहीं कर सका ।

'क्यों ?'

'मैं कुछ दिनों के लिए पागल हो गया था ।—बगैर किसी भूमिका के उसने जवाब दिया ।

## दस

*

स्टोव से चाय की केतली उतार कर वह बोला, 'मैं आसमान के बारे में सोच-सोच कर पागल हो गया था ।'

कप में चाय लेकर वह फिर बिस्तर पर जा बैठा । बोला, आसमान के बारे में सोचते-सोचते मैं सब कुछ भूलता गया । पृथ्वी की हर चीज मेरे लिए तुच्छ हो गयी । समाज से मैं दूर होता गया । मेरा विश्वास है कि यदि मनुष्य में आकाश चिंतन घुसा दिया जाय, तो सांसारिक कष्ट खत्म हो जायेगा । दुःख-कष्ट, रोग-शोक से बहुत कुछ मुक्ति मिलेगी । मुक्ति कहना ठीक नहीं होगा हां, रोग-शोक सहने की शक्ति अवश्य बढ़ जायेगी । संसार से पाप कम जायेगा । अमन-चैन की जिंदगी होगी । ईर्ष्या-द्वेष खत्म हो जायेगा । हां, आकाश-चिंतन का एक दुष्परिणाम भी है । मनुष्य वैरागी हो जायेगा । खेती बारी कल-कारखाने से मुह मोड़ लेगा । प्रजजन बंद हो जायेगा । लेकिन इससे संसार का ज्यादा नुकसान नहीं होगा । क्यों, ठीक है न ?'—ललित की ओर प्रश्नभरी आंखों से देख कर वह फिर बोला, 'अगर हिसाब

करके देखा जाय, तो यह बात बिल्कुल साफ हो जायेगी कि हम आवश्यकता से अधिक उत्पादन करते हैं। ज्यादा उत्पादन करते हैं, इसलिए छिपा कर रखते हैं, जमा करते हैं। इससे अभाव की सृष्टि होती है। इस कृत्रिम अभाव के कारण संसार में हाहाकार मचता है। स्वार्थ ही सब पाप का मूल है। स्वार्थ की वजह से मनुष्य जमाखोरी, कालाबाजारी जैसा जघन्य काम करता है। यदि मनुष्य आकाश-चिंतन में लीन हो जाय, तो उसकी कामवासना भी कम जायेगी। मनुष्य कम पैदा होगा। जनसंख्या घटेगी। सब सुख-चैन से रहेंगे। क्या, तुम्हारा क्या खयाल है?'

ललित सिर्फ चुप्पी में मुस्कराया।

चाय की घूंट लेकर वह फिर शुरू हुआ, 'दिन-रात आकाश के बारे में सोच-सोच कर मैं पागल हो गया। धीरे-धीरे आसमान मुझ में घुसता गया। लेकिन मेरा मस्तिष्क ससीम है। इसकी चिंतन-शक्ति सीमाबद्ध है। इसमें असीम आकाश भला क्यों कर घुस सकता है? लेकिन फिर भी मैं हमेशा महसूस करता था कि अनंत आकाश मेरे मस्तिष्क में घुसता जा रहा है। मेरे मस्तिष्क में उथल-पुथल शुरू हुई और फिर दरार-सी पड़ने लगी। भयंकर सिर दर्द से मैं छटपटाने लगा। नतीजा यह हुआ कि एम० ए० न कर सका। मां-बाप ने सोचा कि दर्शन पढ़ने की वजह से मैं पागल हो गया हूं। मेरे पिता जज-कोर्ट में वकील थे। वकालत नहीं चलती थी। सेकेण्ड क्लास ट्राम में वह कचहरी जाते। जमानत और एफिडेविट से कुछ मिल जाता। उससे गृहस्थी भी बड़ी मुश्किल से चलती थी। बी० ए० में अगर रमेन ने सहायता न की होती, तो बी० ए० भी न कर पाता। तीन-चार महीने में मैं सामान्य हुआ, फिर भी पिता ने पढ़ने नहीं दिया। उनकी स्थिति ही ऐसी थी कि वह और नहीं पढ़ा सकते थे। कोशिश-पैरवी कर उन्होंने मुझे कार्पोरेशन में नौकरी लगा दी। मैं किरानी बन गया। मेहतरों का हाजिरी बाबू। पिता बुड्ढे हुए और रोग भोग कर मर गये। उनकी मृत्यु के साल भर बाद मां का जलोदर हुआ और वह भी स्वर्ग सिधार गयीं। छोटी बहन प्रेम-विवाह कर चली गयी। बड़ा भाई नौकरी लेकर जर्मनी चला गया। मुझे अकेला पाकर मकान-मालिक ने निकाल दिया। मुकदमे में मैं हाजिर नहीं होता था। उसे एक तरफा डिग्री मिल गयी। वह कोर्ट का प्यादा ले आया और सुबह-सुबह मुझे माल-असबाब के साथ बाहर निकाल दिया। मैं दिन भर फुटपाथ पर माल असबाब लिए बक्से पर बैठा रहा। ढेर सारी चीजें चोरी हो गयीं। मैं किसी से मदद न मांग सका। किसी से न कह सका कि मुझे आश्रय दीजिये। भाग्यवश कार्पोरेशन के एक दयालु मेहतर ने मुझे देखा। वह हाजिरी में अंगूठे का निशान लगा कर दिन भर अपने धंधे में घूमता था। मैं उसे कुछ नहीं कहता था। वह प्रति दिन

मुझे मुह बद रखने के लिए दस पैसे दिया करता था। वही मुझे यहां ले आया। उसी समय से मैं इस कमरे म हू।'

ललित ने अचानक प्रश्न किया, 'तुम घूस लेते हो?'

उसने सिर हिलाया, 'हा, लेता हू। आपत्ति करते मुझे सकोच होता है। वे बड़ प्यार से पैसा देते हैं। मैं उन्हें निराश नहीं कर सकता। और फिर यदि पैसे न लू, तो मुझे उनसे काम लेना होगा। ऐसा करने से वे बिगड जायेंगे, झूठमूठ का बहाना बना कर हगामा करेंगे। मुझे नौकरी छोड़नी पड़गी। और फिर हगामा से जूझने का साहस भी मुझ म नहीं है। अगर मैं सच्चा हू, तो मुझे कर्त्तव्यपरायण और साहसी भी होना चाहिए। सिर्फ सच्चाइ से कुछ नहीं होता। मैं रोज सुबह मेहतरों के पैसे वापस दे सकता हू, पर उनसे काम नहीं ले सकता। मेरे घूस न लेने से भी शहर गन्दा रहेगा। क्योंकि मैं कर्त्तव्यपरायण और साहसी नहीं हू। क्यों, ठीक कह रहा हू न?'

ललित हस कर बोला, 'जारी रहो।'

वह कुछेक क्षण चुप रहा। बैंडेज के अन्दर उगली घुमा कर उसने कपाल खुजलाया और फिर दद से मुह विकृत कर शुरू हुआ, 'कविता और दर्शन स मुझे बेहद लगाव है। ये सारी किताबें मैं ने घूस के पैसे से खरीदी हैं। अगर मैं घूस न लेता, तो क्या मैं इतनी सारी किताबें खरीद सकता था? नहीं, मैं नहीं खरीद सकता था। प्रत्येक पुस्तक मुझे एक विचित्र जगत म ले जाती है। एक एक कविता म मुझे ब्रह्मानन्द की अनुभूति होती है। यदि मैं सच्चा होता, तो यह आनद मुझे कहां मिलता? और भी एक बात है। रिश्वतखोरी मैं ने नहीं शुरू की। इस नौकरी म घूस लेना एक नियम बन गया है। मैं ने नौकरी ली और मुझ पर यह नियम लागू हो गया। मैं नियम बदलने का हिमायती नहीं हू। और अगर नियम बदलना ही है, तो देश भर म प्रचलित समस्त नियमों को तिलाजलि देनी होगी। मैं अगर छोटा-सा एक नियम बदलने की कोशिश करू, तो बड़ी गड़बड़ी होगी, मुझ पर विपत्तियों का पहाड़ टूट पड़ेगा। अगर तुम किसी मशीन में नये किस्म का पुर्जा लगाओगे, तो वह कतइ बर्दाश्त नहीं करेगी। इसलिए मैं ने कुछ भी बदलने की कोशिश नहीं की। मेहतरों से झगड़ा मोल नहीं लिया बल्कि नियमानुसार उन्हें खुश रखा। परिणाम देख ही रहे हो। उनके पैसे से मैं ने इतनी सारी किताबें खरीदीं, उनकी दया से मैं इतने सुन्दर घर म रह रहा हू।'

सुन्दर घर।'—ललित मुह छिपा कर मुस्कराया।

बिस्तर पर प्याला रख कर वह लेट गया। कुछेक क्षण आखें बन्द किये कुछ सोचता रहा, फिर शुरू हुआ। मैं नियम बदलना चाहता था, इसलिए आज मेरी

यह दशा है। मैं भली-भांति जानता हूं कि मैं कमजोर आदमी हूं। नियम बदलना मुझ जैसे आदमी का काम नहीं। सारी जिन्दगी मैं अन्याय बर्दाश्त करता रहा हूं। पग-पग पर मुझे अपमान सहना पड़ा है। क्योंकि मैं जानता हूं, मुझ जैसे दुर्बल-चरित्र को सब कुछ बर्दाश्त करना होगा। यही स्वाभाविक नियम है। लेकिन न जाने क्या उस दिन मैं नियम विरुद्ध काम कर बैठा। एक मामूली घटना थी। उस दिन काफी रात बीत गये, मैं पिक्चर देख कर आ रहा था।

ललित ने अवाक हो प्रश्न किया, 'तुम पिक्चर भी देखते हो?'

'हां, देखता हूं। किताब पढ़ते-पढ़ते या गंभीर चिंतन में डूबते-उतराते मेरा दिमाग बोझिल हो जाता है। उस समय मैं सिनेमा देखता हूं या खेल के मैदान में चला जाता हूं। मैं कभी गंभीर फिल्म नहीं देखता। मैं देखता हूं मार-धाड़, नाच-रंग से भरपूर हिन्दी फिल्म। रोना धोना मुझे अच्छा नहीं लगता। हलकी फुलकी फिल्म मेरे दिमाग को तरोताजा करती है।'—इतना कह कर उसने एक लंबी सांस ली और फिर शुरू हुआ, 'हां, तो उस दिन रात को मैं पिक्चर देख कर आ रहा था। भीड़ रहने के कारण मैं बस पर नहीं चढ़ सका। भवानीपुर से टालीगंज ज्यादा दूर तो है नहीं। मैं पैदल ही चल पड़ा। रेल ब्रिज पार कर दो-चार कदम आगे बढ़ा ही था कि पीछे से किसी ने आवाज दी, 'भाई साहब, जरा सुनिये तो।' मैं ने पलट कर देखा, लैंप पोस्ट के पास धोती-कुरता में दो सज्जन खड़े थे। हां, चेहरा-मोहरा से दोनों भले आदमी दीखते थे। मुझे पलट कर देखते देख एक बोला, 'आपही से कह रहा हूं।' मेरी आंखों में प्रश्न उभर आया। दोनों इत्मीनान से मेरे करीब आ खड़े हुए। मुस्करा कर एक बोला, 'आपके पास दस पैसे का सिक्का होगा? हम दोनों ने बाजी लगायी है पर टास करने के लिए सिक्का नहीं है।'—मैं ने जेब से निकाल कर एक अठन्नी उसे दी। उसने शून्य में सिक्का उछाला और लोक लिया। और फिर टास का नतीजा देख कर उसने मुझे अठन्नी वापस दे दी। मुझे धन्यवाद भी दिया। मैं चल पड़ा। उसने फिर आवाज दी, 'भाई साहब।' मैं ने पलट कर देखा और वह विनयभरी मुस्कान में बोला, 'टास का रिजल्ट तो जान जाते। मेरे दोस्त के हिस्से में आपकी घड़ी पड़ी है और मेरे हिस्से में आपका मनीबैग। अब कृपया दोनों चीज हमारे हवाले कर दें। हमारी शुभकामना आपके साथ होगी।'—मैं ने देखा, उसका दोस्त चाकू से नाखून काट रहा है। उसने मेरी ओर देखा तक नहीं। दोनों आत्मविश्वास से भरपूर थे। वे न तो मुझे डरा रहे थे और न धमकी जुबान में बोल रहे थे। उनका व्यवहार बड़ा ही शांत और शिष्ट था। मैं किंकर्तव्यविमूढ़-सा चुप खड़ा रहा। उस समय मुश्किल से साढ़े बारह बजा होगा। कलकत्ता के लिए आधी रात, रात नहीं

होती। उस समय भी इक्के दुक्के आदमी चल-फिर रहे थे। रास्ते की बत्तियां जल रही थीं। करीब ही एक मांस की दुकान में धुलाई हो रही थी। झाड़ और पानी की आवाज मैं सुन रहा था। फुटपाथ के वाशिंदे अब तक नहीं आये थे। इसके बावजूद भी वे मुझे लूटना चाहते थे। बताओ तो, अपने स्वभाव के अनुसार उस वक्त मुझे क्या करना चाहिए था ?—मुझे चुप रहना चाहिए था। चुपचाप अपने पिता के जमाने की घड़ी और मनीबैग दे देना था। यही स्वाभाविक होता। मुझ से ज्यादा साहसी आदमी भी यही करता। लेकिन मैं अपने स्वभाव विरुद्ध काम कर बैठा। मैं ने नहीं दिया।

'नहीं दिया ?'

वह सिर हिला कर बोला, 'नहीं।' अगर वे डराते धमकाते या सब कुछ छीन लेते, तो मैं चुप रहता। लेकिन ऐसा उन्होंने नहीं किया। उन्होंने काफी वक्त लिया। मुझ से ही अठन्नी लेकर शुरू किया। उन्होंने यह बताने की कोशिश की कि उनमें कितना आत्म विश्वास है। कितने ठंडे दिमाग से वे दुःसाहसिक काम कर सकते हैं। और शायद उनका शांत-शिष्ट व्यवहार देख कर ही मैं स्वभाव विरुद्ध काम कर बैठा। कभी-कभार ऐसा होता है कि कमजोर-से कमजोर आदमी भी कोई दुःसाहसिक काम देख कर अनुरूप काम करने के लिए उत्तेजित हो उठता है। यह मेरा विश्वास है कि सीधा-से-सीधा आदमी भी अगर अपनी आंखों के सामने किसी का हत्या करते, डाका डालते या गुण्डागर्दी करते देख ले, तो उसके मन में भी वैसा कुछ कर दिखाने की इच्छा जगेगी। यह मनुष्य की स्वाभाविक दुर्बलता है। लेकिन इच्छा जगने पर भी साधारण आदमी यह सब नहीं करता। वह तो विवेकानन्द की जीवनी पढ़ कर नामी खिलाड़ियों का खेल देखने मैदान जाता है, गुण्डों और डकैतों के कारनामे सुनता है, अखबारों में बलात्कार की खबरें पढ़ता है। लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि उसके मन में यह सब करने की इच्छा पैदा नहीं होती। इच्छा तो पैदा होती है, पर वह स्वभाव के विपरीत नहीं जाता। बस, निरीह जीवन-यापन करता है। वह न महापुरुषों की तरह त्यागी व ज्ञानी होता है न नृशंस हत्यारा बन पाता है, न कुशल खिलाड़ियों की तरह मैदान में दर्शकों को आकृष्ट करता है और न बलात्कार की गुप्त उत्तेजना उपभोग करता है क्योंकि वह जानता है, ऐसा कुछ करना उसकी प्रकृति एवं नियति के विपरीत होगा। लेकिन मैं उस रात अपनी प्रकृति के खिलाफ काम कर बैठा। मैं ने उन दोनों की आंखों में धूल झोंकने की कोशिश की। उन दोनों की पीठ के पीछे का रास्ता देख कर मैं चिल्ला उठा, पुलिस वैन, पुलिस वैन! दोनों अचकचा कर पीछे देखने लगे और मैं दौड़ पड़ा। दौड़ता रहा, दौड़ता रहा। मैं बड़ा ही उत्तेजित था। मुझे विचित्र किस्म का

आनद आ रहा था। वैसा आनद, वैसी उत्तेजना का अनुभव मुझे और कभी नहीं हुआ था। कविता और दर्शन म भी मुझे वैसा आनद कभी नहीं मिला। मैं महसूस करता था कि मैं ने अपनी जिन्दगी म कुछ किया है।'—एक सास म वह बोलता रहा था। आखें बद कर कुछेक क्षण वह चुप पडा रहा। वह सुस्ता रहा था। थोड़ी देर बाद वह फिर शुरू हुआ, 'मैं दौड़ना नहीं जानता। दौडते-दौडते मैं हापने लगा, फिर भी उत्तेजनावश मैं दौड़ता रहा, मन ही मन हसता रहा। मुझे अपने आप पर आश्चर्य हो रहा था। शायद वे दोना मुझे पहचानते थे। उन्होने सोचा था कि बिना ना-नुकुर किए मैं घडी और मनीबैग दे दूगा। लेकिन जब मैं ने उन्हे धोखा देने की कोशिश की, वे आपे से बाहर हो गये। यही स्वाभाविक है। तुम जिस पर आधिपत्य जमाना महज समझते हो, वह यदि तुम्हारा आधिपत्य न माने, तो स्वभावत तुम्हे गुस्सा आयेगा। इसलिए उनका मुझ पर आग-बबूला होना सर्वथा स्वाभाविक था। मुझ जैसे तुच्छ व्यक्ति ने उन दोना से टक्कर ली थी। स्वभावत मेरा अस्वाभाविक व्यवहार उनके अह को चुनौती देना था। उन्होने मेरा पीछा नहीं किया। शायद वे मेरा घर जानते थे। क्योकि जब मैं अपने दरवाजे पर पहुचा, दोना अधेरे म वहा खडे थे। शायद वे शार्ट कट से आये थे। मैं वह रास्ता नहीं जानता। एक के हाथ म साइकिल की चेन थी और एक के हाथ थी लोहे की छड। खैर, मुझे दरवाजा खोलने का हुक्म मिला। ताला खोल कर मैं अदर दाखिल हुआ। वे भी कमरे म दाखिल हुए। आश्चर्य है कि मैं उस समय भी नहीं डर रहा था। मुझे अपूर्व आनद आ रहा था। मैं बडा उत्तेजित था। एक ने दरवाजा बद किया और मारधाड शुरू हो गयी। मैं ने हार नहीं मानी। एक के सिर पर मैं ने किताब से प्रहार किया। फर्श पर गिर कर मैं ने एक का पाव दात से काटा। वे मुझे मारते रहे और मैं उनसे जूझता रहा। न जाने क्या कर मैं ने उनका मुकाबला किया। तब तक पास-पड़ोस म शोर मच गया और वे भाग खडे हुए।'

वह हसा। होठ से एक बूद खून सफेद तौलिया पर टपक पडा। तकिया के नीचे से एक काला मनीबैग और पुराने जमाने की एक कलाईघड़ी निकाल कर वह बोला 'यही मनीबैग और घडी है। मुझे आश्चर्य हो रहा है कि इस मामूली घडी और फटे-पुराने मनीबैग के लिए मैं उन दोना से क्या लडता रहा।'

कुछेक क्षण दोना हाथ से घड़ी और मनीबैग दबाये वह चुपचाप पडा रहा। उसने बाद तकिया तले दोना चीज रख कर बोला, 'यही घटना है। एकदम मामूली घटना।

भौंह सिकोड़ कर वह बोला, 'घटना जितनी मामूली प्रतीत हो रही है, उतनी

मामूली है नहीं। मुझे मारते वक्त वे गाली थे 'हरामजादा, दागला, तेरी ज्याग्रफी बदल डालूंगा। ज्याग्रफी तो खैर नहीं बदली, फिलासफी जरूर बदल गयी।

वह चुप हो गया। ललित ने कौतूहल से पूछा, 'सो कैसे ?'

ललित की आंखों में आंखें डाल कर वह बोला, 'अब मैं पहले जैसा निरीह, शांत और झेंपू नहीं हूं। कभी कभार इस कमरे में एक मफेद बिल्ली आती है। पतीली उलट कर चाय का दूध पी जाती है। पहले देखने पर भगा देता था, लेकिन परसों मैं ने उसकी पूंछ पकड़ ली। वह मुझे काटती रही, नोचती रही पर मैं ने नहीं छोड़ा। मैं ने उसे फर्श पर दे मारा। कुछेक क्षण वह बेहोश-सी पड़ी रही और फिर चुपचाप चली गयी। उसके बाद फिर नहीं आयी। और जानते हो बिल्ली मुझे नाच-खसोट रही थी और मुझे आनंद आ रहा था।' दो-चार क्षण चुप रह कर वह फिर बोला, मुहल्ले के छोकरों ने मुझ से घटना के बारे में जानना चाहा, पर मैं ने नहीं बताया। मुझे डराया-धमकाया, फिर भी मैं ने नहीं बताया। उन्होंने यह भी कहा कि वे मेरी पिटाई का बदला लेंगे फिर भी मैं चुप रहा। उन्होंने जानना चाहा कि जो लड़की किताब-कापी लिए मेरे पास आती है, मेरी पिटाई उसकी वजह से तो नहीं हुई ?' मैं चुप रहा। हालांकि मैं जानता हूं उस लड़की को लेकर मुझे बदनाम किया जा सकता है, फिर भी मैं ने परवाह नहीं की।

'कौन है वह लड़की ?'—ललित ने जानना चाहा।

'और कभी बताऊंगा।'—कह कर उसने आंखें मूंद लीं। बोला, 'इतनी देर तक लगातार बोलता रहा हूं। मेरी खोपड़ी के अन्दर कुहासा जम रहा है।'

ललित उठ खड़ा हुआ। बोला, 'जाता हूं, और कभी आऊंगा।'

वह हंस कर बोला, 'हीरो!'—बोल कर उसने आंखें बंद कीं।

ललित दरवाजे के पास गया और मुड़ कर बोला, 'खाते कहां हो ?'

आंखें खोल कर वह बोला, 'खुद बनाता हूं।'

'अभी कौन बना देता है ?'

कोई नहीं। मुहल्ले के किसी बच्चे से डबल रोटी मंगा लेता हूं। दूध या चाय के साथ खा लेता हूं। इच्छा हुई तो दो मुट्ठी भात बना लेता हूं।

ललित को दया आयी। बोला, 'बुरा मत मानना। खाना भेज दिया करूंगा।'

'भेज दोगे!'

'हां।'

उसका चेहरा प्रसन्न हो उठा। बोला, 'तुम मुझे निमंत्रण दे रहे हो ?'

'हां।'—ललित मुस्कराया।

वह खुश होकर बोला, 'वर्षों हो गये किसी ने मुझे निमन्त्रण नहीं दिया। अच्छा खाना किसे कहते हैं, मैं भूल गया हूं। भेज देना। अच्छा होने पर मैं खुद तुम्हारे घर जाकर खा आऊंगा।'

वह कुछेक क्षण चुपचाप ललित को देखता रहा और बोला, 'तुम्हारी मां बहुत अच्छा खाना बनाती हैं न? मुझे पोस्ता बड़ा, कच्चू का साग और झींगी मछली के साथ लौकी की सब्जी खाने की बड़ी इच्छा होती है। मां से कहना।'

ललित हंस कर बोला, 'कहूंगा। तुम जल्दी से अच्छा हो जाओ।'

वह मुस्करा कर बोला, 'मैं तो वर्षों से अच्छा ही था। लेकिन हमेशा अच्छा रहना भी बेमजा हो जाता है।'

ललित की समझ में कुछ न आया। बाहर आकर उसने देखा, सुनसान रास्ता, निस्तब्ध वातावरण। दूर कहीं कुत्ते भूंक रहे हैं। घड़ी नहीं थी। उसने अंदाज लगाया, करीब बारह बजता होगा।'

मित्राओं के घर के सामने पीपल के गाछ तले घनी छाया जमी थी। छाया में कदम रख कर ललित अन्यमनस्क मुस्कान में मुस्कराया। मुहल्ले की बुढ़ियां में प्यारी अपनी मां को वह कभी कभार हीरोबुढ़ी कहा करता है। लेकिन वह कभी किसी का हीरो था, यह बात वह नहीं जानता था। यह तो सच है कि कालेज और यूनिवर्सिटी में वह यूनियन करता था। यह भी सच है कि कालेज के फंक्शन में उसने मेयर और किसी रूपसी गायिका से बात की थी। लेकिन यह सब उसे ठीक-ठीक याद नहीं और न तो इसमें गौरव करने जैसी कोई बात ही है। हालांकि कालेज जीवन में वह एक छात्र का हीरो रहा है।—यह सोच कर वह एक अज्ञात आनंद से पुलकित हो उठा।

ललित ने अपना विश्लेषण किया और पाया कि विमान रक्षित की दृष्टि में वह जो था दरअसल वह वैसा कभी नहीं था। रक्षित की दृष्टि में वह हीरो था, साहसी था और न जाने क्या क्या था पर अपनी दृष्टि में वह दुर्बलचित्त था, सकोची था। विमान रक्षित को क्या पता कि वह अपनी प्रेयसी मितु से लज्जावश दो-चार बात न कर सका। वह सिर्फ मन-ही-मन मितु से प्यार करता रहा। और तो और एकबार छात्र आदोलन के दौरान वेलिंगटन स्क्वायर में पुलिस ने गोलियां चलायीं और छात्र नेता ललित भाग खड़ा हुआ। वह भाग रहा था कि वेलिंगटन स्ट्रीट में एक सार्जेंट ने उसकी कलाई पकड़ ली और बोला, 'कहां जा रहे हो?' घबराहट में वह सिर्फ बोल सका था, 'घर।' 'घर कहां है?'—सार्जेंट ने पूछा था। घबराहट में उसने हाथ से मैदान की ओर इशारा कर कहा था, 'उधर।' उसकी हालत देख कर सार्जेंट बोला था, 'देख-सुन कर जाना। घर तो नहीं भूल जाओगे?' उस दिन की लज्जा भले ही मां

गयी हो, पर अब तक वह भूला नहीं है। ललित कुछ भी नहीं भूलता है। कुछ ही दिन हुए शायद साल भर हुआ होगा, वह अपनी बुआ के साथ दूर के एक अमीर रिश्तेदार के घर गया था। बुआ अपने मकान की खातिर सरकारी ऋण के लिए पखी करने गयी थीं। बड़ा ही सुन्दर मकान था। संगमरमर का फर्श। ड्राइंग रूम में छोटा-सा बार। जंजीर से लटकती झाड़-फानूस। सफेद संगमरमर की सीढ़ियां। ललित चुपचाप यह सब देख रहा था और देख रहा था चार निगाहों से यौवन से भरपूर एक युवती को। युवती का रंग तांबे के पैसे जैसा था। खड़ी नाक, स्वप्निल आंखें और लंबे बाल। वह भी कौतूहल भरी आंखों से ललित को देख रही थी। ललित के हृदय में धनियों के प्रति पलनेवाली घृणा न जाने क्यों बर्फ की तरह पिघल गयी थी। उसने कभी अपनी दरिद्रता को नहीं कोसा था लेकिन सोफा पर बैठे ललित को अपनी दरिद्रता बेहद खटकी थी। रिश्तेदार ने उससे पूछा था, 'क्या करते हो ?' बड़ी ग्लानि हुई थी उसे। मुंह से बोल नहीं फूटा था। क्यों कर कहता ललित कि वह ढाई सौ रुपये मासिक पानेवाला स्कूल टीचर है ? बुआ ने रिश्तेदार को जवाब दिया था, एम० ए० करके रिसर्च कर रहा है। आश्चर्य है, बुआ का उत्तर सुन कर ललित ने राहत की सांस ली थी।

विमान यह सब कुछ नहीं जानता। लेकिन ललित तो जानता है न कि वह हीरो नहीं है। कभी था भी नहीं। विमान ने अपनी आंखों के सामने ललित की एक गलत तस्वीर टांग रखी थी। हां, सही ललित को कोई नहीं पहचानता। उसने भी अपने रूप को कभी पहचानने की कोशिश नहीं की। लेकिन अब मौत की दहलीज पर खड़े ललित को अपनी सही तस्वीर पहचान लेनी चाहिए न।

घर आकर ललित ने देखा, मां फर्श पर सतरंजी बिछा कर सोयी है। टेबिल लैंप जल रही है। कुर्सी पर बैठते वक्त उसने देखा, पिता की तस्वीर के पीछे से मुंह बढ़ा कर छिपकली उसे देख रही है। फीकी हंसी हंस कर वह बोला, 'किसका इंतजार कर रही हो छिपकली मैया ? कौन बाहर है, बेटा या बेटे का बाप ?'

कुर्सी खींचने की आवाज से मां जग कर बोली, 'कौन, ललित ?'

'हूं।'

'कहां गये थे ?'—कह कर वह उठी और बोली, 'अरुण आया था।'

'कौन अरुण ?'

'हाय भगवान ! अरुण को नहीं पहचानते। तेरी बुआ का लड़का है अरुण। कल उसके घर जाना। बार-बार कह गया है।

खाना परोसते-परोसते मां बोली, 'देख तो कितना बजता है ?'

घड़ी देख कर ललित बोला, 'पौने बारह।'

दस्स ! बड़ी रात हो गयी तो

खाने के बाद मा बेटे म रोज थोड़ी गपशप होती है ।

खाना खाकर ललित अंधेरे कमरे म बिस्तर पर लेटा हो सिगरेट पी रहा था । मां अपने बिस्तर पर बैठ कर अंधेरे मे केश की जटायें सुलझा रही थी । बोली, 'नाते-रिश्तेदार की खोज खबर लिया करो । अलग थलग रहोगे, तो मेरे मरने के बाद तुम्हें कोई पहचान भी न सकेगा । देख कर भी सोचेगा, पता नहीं कौन है !'

ललित हस कर बोला, 'कौन रहा है मा ?'

मां बोली, 'क्यों, कचरापाड़ा में तेरी एक मौसी रहती है । माजदिया म एक चाचा । हावड़ा म तेरा नसु चाचा है ।

जटिल संपर्क । अनजान चेहरा ।—सुनते-सुनते ललित सो गया ।

रात के बारह बज गये फिर भी तुलसी को सजय से छुट्टी नहीं मिली । ललित से विदा लेकर जब वे धरमतल्ला की ओर चले उस समय आठ बज रहा था ।

उस समय तुलसी बोला, 'कहा जा रहे हो ? मुझे तो घर पर उतार दो ।

सजय ने हस कर कहा, 'दुनिया भी एक घर है बेटा । आज वही घर देख लो ।'

सजय की गाडी धरमतल्ला के एक बार के सामने आ रुकी । दरवाजा खोल कर सजय बोला, 'चल पुत्तर ।'

दुविधा म तुलसी बोला, 'मा कसम, फजीहत हो जायगी ।'

'क्या, बीबी को गध मिल जायगी क्या ? बेटे, साधु बनोगे न, तो बीबी हवा हो जायगी ।'

तुलसी बनावटी हसी हसा । गाड़ी से उतर कर बोला, 'आदत छूट गयी है न ।'

'वाह बेटे ! लगता है पहले रोज पीते थे ।'

रात के दस बजे जब बार में शराब देना बद हो गया, तुलसी नशे म चूर था । सजय ने पूछा, 'और लोगे ?'

तुलसी ने 'हां' म सिर हिलाया । उसकी दोनों आंखों म आसू बह रहे थे । वह रो रहा था ।

सजय उठ कर बोला, 'चल यहां तो बद हो गया । सानी या ग्रैंड चलें ।'

ग्रैंड होटल का लम्बा-चौड़ा रेस्तरां । हल्की धुन्धली रोशनी । मधुर सगीत । यह सब देख कर तुलसी का हृदय भर उठा । कौन कहेगा कि यह बगाल है । हां, कौन कहेगा । कौन कहेगा कि यह वही तुलसी है जो मुर्शिदाबाद के एक स्कूल म मास्टरी करता है । स्कूल में मांधाता युग के बी० ए०, बी० एस० सी० के साथ उसे काम करना पड़ता है । देहाती विद्यार्थियों को पढ़ाना पड़ता है । जहां के गेन-खलिहान में जहरीले सांप और तरह-तरह के कीड़े-मकोड़े हैं ।—तुलसी अपने आप मे

बोला, 'उ हु, यह बगाल नहीं है। यह यूयार्क है। इज इट नाट '—वह मन-ही-मन हसा, 'इट इज लडन परहैप्स !'

कुर्सी पर बैठे-बैठे वह आदित्य के कान में फुसफुसाया और रो पड़ा, 'लिलि के लिए बड़ा दु ख होता है यार !'

सजय उसका कधा झकझोर कर बोला, 'रेडी !'

बुद्धू की तरह एकबार चारो तरफ देख कर तुलसी बोला, 'मा कसम, मेरी लाइफ मे क्या है यार ?

और फिर रोने लगा तुलसी। उसने अपने करीब बैठे चार जहाजियों को देखा। हाथ म गोदना। चेहरे पर समुद्री जलवायु की कर्कश छाप। स्वस्थ सबल शरीर। वे विदेशी भाषा म बातें कर रहे थे। कुछ ही दिनों म उनका जहाज रवाना होगा। दूर, बहुत दूर चले जायेंगे वे। और मैं उस समय भी घुग्ना तक धोती समेटे मेढ़ा के रास्ते। वह रोता रहता है। शराब की घूट लेता है और रोता है

'क्या हो रहा है ?'—सजय ने डाटा।

'मेरी लाइफ म क्या है, बोल न '

'बीवी ! तेरी बीवी है !'—सजय ने सान्त्वना दी।

तुलसी ने देखा, आंवड़े के रग जैसा सूट पहने एक विदेशी जा रहा है। कहां का रहने वाला है वह ? स्पेन ? यस, ही इज फ्राम स्पेन। बुलफाइट ! वह बुलफाइटर है !'—तुलसी की नजर एक हब्शी पर पड़ी। बाक्सर ! यस, ही इज ए बाक्सर। कैसियस क्ले ! या पैटरसन ?

यूयार्क ! दिस इज न्यूयार्क !'—तुलसी बड़बड़ाता रहता है।

अचानक उसने क-क कर कार्क खुलने की आवाज सुनी। वह चौंक पड़ा। यह आवाज उसने कहां सुनी है ? आवाज जानी पहचानी है। हा, इस आवाज को वह अच्छी तरह पहचानता है। फिर उसने यही आवाज सुनी। उसने चारा तरफ देखा। और फिर टेबिल के नीचे देखने लगा।

'क्या ढूढ रहे हो ?'—सजय ने पूछा।

'साप !'

'सांप ?'

'यस, यहीं कहीं है। साला बैंग पकड़े है !'

चारों तरफ एकबार देख कर तुलसी उठ खड़ा हुआ। हाथ ऊपर उठा कर चीख पड़ा, स्नाप ! स्नाप ! देयर इज ए स्नेक हियर !'

सजय ने हाथ पकड़ कर उसे बैठा दिया।

तुलसी रोता रहा।

रात के बारह बजे तुलसी जब घर लौटा, दरवाजे पर भैया, भाभी और मृदुला खड़ी थीं। भाभी ने उसका हाथ पकड़ा। मृदुला ने मुंह घुमा लिया। भैया आहिस्ते-आहिस्ते सीढ़ियां चढ़ कर ऊपर चले गये।

भाभी उसे कमरे में छोड़ गयी। मृदुला को अंदर ठेल कर बाहर से दरवाजा भिड़ा कर बोली, 'बंद कर लो।'

मृदुला के दरवाजा बंद करने पर तुलसी जोरों से हंस पड़ा। और फिर अचानक बोला, 'मेरी एक बात मानोगी ?'

आंचल से नाक ढक कर मृदुला बोली, 'क्या ?'

'मान लो यह एक रास्ता है। हम दोनों एक-दूसरे से अनजान हैं। तुम कहीं जा रही हो। मैं उस इलाके का दादा हूं। हां, अब तुम चलो चलती जाओ जैसे तुम मुझे पहचानती ही नहीं चलो

डर कर मृदुला दो-चार कदम चली। तुलसी ने मुंह में दो उंगलियां डाल कर जोर से सीटी बजायी। मृदुला चौंक उठी। तुलसी हो-हो कर हंस पड़ा, 'मां कसम, मैं ने कभी दादागीरी नहीं की। संजय से सीटी बजाना सीखा पर किसी काम न आया।'—अचानक तुलसी मायूस होकर बोला, 'यकीन करो, आज तक मैं किसी लड़की को छेड़ न सका।

तुलसी की आंखें भर आयीं। रुंधी आवाज में बोला, तुम एक अनजान लड़की हो। मैं ने तुम्हें सीटी दी है। तुम खड़ी हो जाओ। पलट कर मेरे गाल पर तमाचा मारो, चप्पल मारो। कुछ करो कि जल्दी करो न बीच मी मैं गुण्डा हूं मुझे मारो नीच मी

तुलसी रोने लगा और रोते-रोते सो गया।

सोने से पहले आईने के सामने खड़ा हो संजय अपने बदन पर पाउडर छिड़क रहा था। गला ऊंचा कर एक जगह उंगली से दबा कर पता नहीं उसने क्या देखा ? उसके बाद रिनि की ओर मुंह मोड़ कर बोला, 'लगता है, गले में एक लंप उभर रहा है।'

'कैसा लंप ?'

संजय मुंह बिचका कर बोला 'पता नहीं।'

उसने फिर उस जगह दबा कर देखा।—मुंह थोड़ा गंभीर हो गया। बत्ती बुझा कर पलंग के पास आते-आते बोला, 'बड़ा डर लगता है रिनि। अभी-अभी तो कारोबार जमा है।'

'तो क्या हुआ ?'

कुछ नहीं।—सजय मुस्कराया, 'कभी कभी बड़ा डर लगता है। अगर कैन्सर हो

'छि ! क्या बकते हो ?'—रिनि ने उसे बांहों में ले लिया।

और ठीक उसी समय दूर, बहुत दूर के एक गांव म राष्ट्रीय मार्ग के किनारे एक मृतक सांप से परिश्रमी चीटिया खाद्य सचय कर रही थीं। ललित के पिता की तस्वीर के पीछे प्रसव वेदना म छटपटाती छिपकली बोल उठी, 'टिक, टिक, टिक।'

## ग्यारह

*

ललित से विदा लेकर दोनों चुपचाप चल रहे थे। आदित्य और शाश्वती। राजमार्ग आते ही सहसा अपने आप में मुस्करा कर आदित्य बोल उठा, 'यही है ललित ! समझी न सती, यही है ललित।'

शाश्वती ने समझा, आदित्य किसी गभीर चिंतन म डूबा है। कालेज जीवन की यादों मे खोया है या अतीत की ढेर सारी घटनाओं म उलझा है। 'यही है ललित।'—कह कर आदित्य ने शाश्वती को कुछ समझाना नहीं चाहा है। वह मन ही मन ललित को देख रहा है और शाश्वती को अपने मन के ललित का दिखाना चाहता है। शाश्वती ने गौर किया, आदित्य की आखों म अन्यमनस्कता घिर आयी है। ट्राम लाइन पार करने से पहले ही अपनी जेब म हाथ डाल कर वह सहसा रुक गया, 'सिगरेट।'

उसकी कमीज का हत्था पकड़ कर शाश्वती उसे खींचती हुई ट्राम लाइन पार कर गयी। वह हसा।

रास्ता पार कर आदित्य बोला, 'सिगरेट का पैकेट शायद चाय की दुकान पर छोड़ आया हू। ले आऊ ? तुम रुको, मैं ले आता हू।'

पैकेट में कितनी सिगरेट थी ?'—शाश्वती ने भौंहे सिकोड़ीं।

'चार-पाच होंगी।'

'अब क्या जाना। ले लो एक पैकेट।'

ले लू ?'

'हा।'

आदित्य सिगरेट लेने गया। शाश्वती ने गर्दन घुमा कर देखा, दुकान के आईने

में आदित्य अपना चेहरा देख रहा है। उसने गाल का व्रण दबाया। मुंह बिचका कर उसने अपने आप को चिढ़ाया। तब तक दुकानदार ने सिगरेट का पैकेट बढ़ा दिया। न जाने दुकानदार से वह क्या बोल रहा है। उसने जलती रस्सी से सिगरेट जलायी। वह अपने आप में मस्त था। उसने एकबार भी पलट कर शाश्वती की ओर नहीं देखा। शायद वह भूल ही गया है कि शाश्वती उसके साथ है। बड़ा भुलक्कड़ है आदित्य। यदि वह किसी ट्राम में बैठ कर चल दे, तो उसे पता भी नहीं चलेगा। वह भी किसी ट्राम या बस पर सवार हो चल देगा। और जब शाश्वती का खयाल आयेगा, उसकी तलाश में शहर खगाल डालेगा। उसका स्वभाव ही कुछ ऐसा है। अक्सर न जाने वह कहां खो जाता है। एकबार दोनों दोपहर का शो देख कर हाल से निकले और भीड़ में खो गये। आदित्य अपनी धुन में चलता गया। हालांकि शाश्वती लंबे-छरहरे आदित्य को देखती रही, दो-तीन बार दबी आवाज में आवाज भी दी, पर आदित्य अपनी धुन में चलता ही रहा। सरे बाजार चिल्ला तो नहीं सकती थी। उसने देखा, भीड़ में आहिस्ते चलती बस के पायदान पर वह चढ़ गया। 'क्या हुआ!'— वह समझ न सकी। बड़ी देर बाद आदित्य का व्यवहार उसकी समझ में आया। उसे रुलाई आ गयी। मन-ही मन वह रोयी, खूब रोयी। और उस दिन करीब आठ बजे रात को आदित्य उसके घर हाजिर हुआ। बड़ा अनुतप्त था बेचारा। झटपट शाश्वती को एकान्त में ले जाकर बोला, छि छि! बड़ी गलती हो गयी। पता नहीं मुझे क्या हो गया था। तुम्हारी कसम, मैं बडा पागल हूं। दरअसल बात यह है सती कि पिक्चर बड़ी अच्छी थी। पिक्चर के बारे में सोचते-सोचते न जाने मुझे क्या हो गया। लेकिन मैं ने भी खुद को माफ नहीं किया। यह देखो, सिगरेट से जला डाला है गलती की सजा मिलनी ही चाहिए। अब गलती नहीं होगी!'—शाश्वती ने आदित्य के हाथ में तरोताजा छाला देखा था। वह जानती है कि उस रात आदित्य के अनुताप में किसी किस्म का बनावटीपन नहीं था। इन दिनों अक्सर वह सोचती रहती है कि वह एक ऐसे आदमी के साथ घर बसाने जा रही है जो थोड़ा ढिटियल दिमाग है, वैरागी स्वभाव है, जिसकी भूख-प्यास, प्यार-मुहब्बत बहुत कुछ मर चुकी है। अभी वह आदित्य को देख रही थी। ताड़ सा लम्बा। दुबला-पतला। भरमाथा उलझा बाल। बगैर लोहा के शर्ट। एक नजर देख कर ही कोई कह देगा कि यह आदमी बड़ा चचल स्वभाव का है। आदित्य बोलना शुरू करता है, तो बोलता ही रहता है। बोलते वक्त उसकी आंखें नाचती हैं, मुंह की चमड़ी थिरकती है, हाथ पाव हिलते हैं। बाहर से देख कर कोई नहीं कह सकता कि बागबाजार में डेढ बीघा के अहाते में इसी आदित्य के आठ-दस पुश्तों के कई महल हैं। सफेद

संगमर्मर का फर्श। झाड़फानूस। हालांकि पट्टीदारों में बंटवारा हो गया है, फिर भी आदित्य के पिता के हिस्से में दो महल हैं। यह सब शाश्वती ने आदित्य से ही सुना है। वहां आज भी गुप्त कोठरियां हैं। तहखाना है। तहखाने में कई छोटे-छोटे कमरे हैं। किसी में रुपया पैसा, गहना जेवर, तो किसी में गर्मी के दिनों बलुआ मिट्टी के बड़े-बड़े घड़ों में ठंडा पानी। गुप्त कोठरियों में नये-पुराने भूत मंडराते हैं।—शाश्वती सिहर उठी। एक महल से दूसरे महल जाने के लिए सुरंग भी है। जहां-तहां बिच्छू छिपे रहते हैं।—रात को वहां तक्षक बोलता है। यह सब सोच कर शाश्वती अक्सर भयभीत हो उठती है। वह जब आदित्य के घर बहू बन कर जायेगी, (उसे संदेह है कि उसके सास-ससुर उसे बहू रूप में स्वीकार करेंगे या नहीं।) तब न जाने कितने किस्म के डर उसे दबोच लेंगे, कितनी दुश्चिन्ताएं उसे उलझा डालेंगी। वह उस घर का रीति-रिवाज नहीं जानती। वहां की सभ्यता नहीं जानती। गुप्त कमरों का रहस्य नहीं जानती। वहां क्यों कर रहेगी बेचारी। हालांकि बाहर से आदित्य का खानदान जमींदार जैसा दीखता है लेकिन जमींदार है नहीं। कभी था भी नहीं। उसका वंश बनिये का वंश है। हमेशा से यह खानदान कारोबार करता रहा है। कभी लोहे का कारोबार, तो कभी जूट की खरीद-फरोख्त। आदित्य का खयाल है कि जमींदारों की अपेक्षा वे लोग अच्छे हैं। अक्सर शाश्वती से कहा करता है, 'हमने कभी दीन-दुखिया का शोषण नहीं किया। हमने कभी गरीबों को नहीं सताया। पिताजी हमेशा ग्राहकों को बाबू कह कर संबोधित करते हैं। मालदार ग्राहक को सर कहा करते हैं। हम हमेशा विनम्र रहे हैं। अहंकार हमें छू तक नहीं गया। जमींदार तो था रमेन। पूर्वी बंगाल के मैमनसिंह में उसकी जमींदारी थी। साला हमेशा जमींदारी रुआब में रहता था। देश-विभाजन के बाद कलकत्ता में भी उसकी प्रजाओं को देखा है। एकबार बस में उसे देख कर एक बाबू मार्का आदमी भरभरा सीट छोड़ कर बोला था, 'बैठिये छोटे सरकार, बैठिये। उसने हाथ से सीट भी झाड़ दी थी। हालांकि उस समय न तो वह रमेन की प्रजा था और न रमेन उसका जमींदार। लेकिन जमींदार और प्रजा का संबंध बरकरार था। हम कभी ऐसे नहीं थे। हमने कभी किसी की आत्मा को नहीं दुखाया। हम सिर्फ कारोबारी हैं। हमने बहुत कमाया है, बस।'—और यह सब सुन कर शाश्वती मजाक किया करती है, 'अच्छा, तुम अपने पिता के ग्राहकों को क्या कह कर संबोधित करते हो? बाबू न?'—आदित्य शर्म से लाल हो जाता है। मुंह बिचका कर जवाब देता है, 'उन लोगों के साथ मेरा कोई सरोकार नहीं।'—'छिपा रहे हो। कह दो न बाबू कहा करते हो।'— शाश्वती मुस्करायी है। 'सच बोलने से तुम मुझे प्यार नहीं करोगी। पागल। लड़कियां बड़ी घमंडी होती हैं।'—लेकिन

आखिर तक आदित्य छिपा न सका है। लाजुक मुस्कान में बोला है, बचपन म मैं भी ग्राहकों को बाबू कहा करता था। 'बाबू कहना अस्वाभाविक है, यह मैं उन दिनों नहीं समझता था। कालेज मे रमेन और ललित से घनिष्ठता हुई और किसी को बाबू कहते मुझे शर्म आने लगी। और जिस दिन बस पर सौ फी सदी एक बाबू मार्का आदमी को रमेन के लिए सीट छोड़ते देखा, उस दिन मुझे अपने आप पर बड़ी ग्लानि हुई। उसी दिन मैं ने निर्णय लिया कि कारोबार नही करूगा। नौकरी करूगा। देखो, नौकरी ही कर रहा हू न। अब मैं पिता जी के ग्राहका को पहचानता ही नहीं।'—शान्ती हसी है, 'तुम जिस-तिस को बाबू कहा करते थे, यह तो मैं सोच भी नहीं सकती।'—आदित्य अपनी बात पर जोर देकर बोला है, 'उस समय तो मैं नासमझ था। अब मैं न किसी को बाबू कहना पसद करता हू और न किसी से बाबू कहलाना पसन्द करता हू। स्वार्थ ही सबका मूल है सती। स्वार्थ ही मनुष्य म भेद डालता हैं। मनुष्य को छोटा-बड़ा बनाता है। स्वार्थ के कारण ही हम जिस-तिस को बाबू कहते हैं। अब यही देखो न, रमेन और मैं हम उम्र हैं। दोनों एक ही क्लास म पढते थे, फिर भी लबे अरसे तक मैं उससे ईर्ष्या करता था, हालाकि ईर्ष्या करने की कोई वजह नहीं थी। रमेन बहुत अच्छा दौड़ता था, बहुत अच्छा खेलता था, बहुत अच्छा गाता था। लबा चौड़ा गठीला बदन। कामदेव सा रूप रग। लेकिन जानती हो, इन गुणा की वजह से मैं ने कभी उससे ईर्ष्या नहीं की। मेरी ईर्ष्या का कारण सुन कर तुम हसोगी। जब-जब मुझे याद आता कि उसके लिए बस म एक बाबू मार्का आदमी ने 'बैठिये छोटे सरकार, बैठिये'—कह कर अपनी जगह छोड़ दी थी तब-तब मेरे पुश्तैनी स्वार्थ पर चोट लगती और मैं ईर्ष्या की आग म झुलसने लगता। मुझसे यह बर्दाश्त नहीं होता था। मैं रमेन के साथ अपनी तुलना कर देखता था, कौन बड़ा है, कौन छोटा है? यही कारण है कि लबे अरसे तक मैं रमेन से घुलमिल न सका। ललित और तुलसी म काम्प्लेक्स नहीं था। दोनों कुछ ही दिनों म रमेन के घनिष्ठ बन गये थे। कभी-कभार रमेन अपनी मोटर पर कालेज आता। हम चार-पाच दोस्त हवाखोरी करने निकलते। गगा के किनारे-किनारे गाड़ी दौड़ पड़ती। किसी निर्जन स्थान मे गाड़ी रुकती। हम सब उतर पड़ते। रमेन कपड़े उतार कर अडरवीयर पहने गगा म कूद पड़ता। ललित वगैरह रमेन के साथ गगा मे तैरते, पर मैं किनारे पर खड़ा रहता। मुझे तैरना नहीं आता था न। एक दिन की घटना मैं कभी न भूल सकूगा। उस दिन हमलोग डायमड हार्बर घूमने गये थे। गगा म उथल-पुथल मची थी। बड़ी तेज धारा थी। रमेन ने मुझे जबर्दस्ती गगा म उतारा। मैं उसकी कमर पकड़ कर चीखने-चिल्लाने लगा। वह बोला 'चिल्लाओ मत। लाग

मुझ पर सदेह करेंगे। डरते क्या हो, अब तो हम दोनों एक हो गये हैं। डूबेंगे, तो दोनों साथ डूबेंगे। यकीन करो सती, उसकी यह बात सुनते ही मेरी चीख-पुकार खुद ब-खुद बद हो गयी। सहसा न जाने क्या मुझे अपूर्व आनद आया! हालांकि उसने यह बात बिना सोचे-समझे कही थी, 'डरते क्या हो, अब तो हम दोनों एक हो गये हैं। डूबेंगे, तो दोनों साथ डूबेंगे।' फिर भी पता नहीं क्यों जब-जब मैं ने उसकी बात पर विचार किया है, मुझे लगा है कि साले ने बड़े ज्ञानी ध्यानी की तरह यह बात कही थी। जरा सोच कर देखो सती, पहाड़ हो या जगल, सुख हो या दुःख, आग हो या पानी, कहीं-न-कहीं कभी-न-कभी हम घुलमिल कर एक होना चाहिए, पर हम होते नहीं। लेकिन मैं उसी दिन से ऊच-नीच की भावना से स्वय को मुक्त करने की कोशिश कर रहा हू। पिता जी के बार-बार कहने पर भी मैं अपने पुश्तैनी कारोबार म शामिल न हुआ। पिता मुझ पर गुस्सा गए, पर मैं ने परवाह नहीं की। अब तक मेरी शादी किसी घुन लगे खानदान की लड़की से हो जाती पर मैं ने नहीं की।'—आदित्य की बातों म थोड़ी सच्चाई थी, थोड़ा झूठ भी था। शास्वती जानती है कि आदित्य सुखी परिवार का लड़का है। लाड़-प्यार म पला है। कष्ट क्या है, वह नहीं जानता। और सबसे बड़ी बात तो यह है कि अब तक उसे अपने व्यवसाय पर थोड़ा अहकार है। अभी भी वह रमेन से थोड़ी बहुत ईर्ष्या करता है।—घर द्वार छोड़ कर आदित्य उससे विवाह करेगा—यह सोचना भी शास्वती को अच्छा नहीं लगता।

गुमसुम खड़ी शास्वती आदित्य को देख रही थी। बड़ी देर तक देखती रही। उसके बाद सहसा एक लम्बी सास लेकर मन ही मन बोली, 'पागल।'

सिगरेट फूकता हुआ आदित्य उसके करीब आ खड़ा हुआ। वह बोली, 'इतनी देर तक दुकानदार से क्या बक-बक कर रहे थे?'

आदित्य हस कर बोला, 'बहुत कुछ। बाल-बच्चे कितने हैं? कारोबार कैसा चल रहा है? कहां का रहने वाला है? घर पर कौन-कौन हैं। वगैरह-वगैरह। बहुत खुश हुआ बेचारा।

शास्वती गुस्से म बोली, 'तुम उससे बक-बक करते रहे और मैं यहां अकेली खड़ी रही। एकबार पलट कर भी नहीं देखा।'

आदित्य कुछेक क्षण चुपचाप सिगरेट पीता रहा फिर बहुत सोच-समझ कर बोला, 'मेरा मन अच्छा नहीं है सती इसलिए अन्यमनस्क बनने की कोशिश कर रहा था।'

चुप कर शास्वती दूसरी ओर देखती रही।

आदित्य अचानक हस पड़ा, 'ललित कैसा लगा?'

'क्या मतलब?'—शास्वती की आंखों म प्रश्न उभर आया।

आदित्य बड़ी देर तक धीर गभीर आखों से शाश्वती को देखता रहा, फिर बोला, 'तुम्हें क्या लगता है, बेग टिक जायगा ?

शाश्वती की भौंहें सिकुड़ गयीं, 'छि ! यह भी कोई बात करने का तरीका है !

आदित्य बोला, 'अच्छा, बीमारी के दौरान तुम्हारे मौसा का चेहरा कैसा बना था ? खूब सुन्दर ?'

'मुझे याद नहीं ।'—शाश्वती चिढ कर बोली ।

'आज मैं ने ललित का जो चेहरा देखा है, वह उसका चेहरा नहीं है । विश्वास करो सती, वह बहुत सुन्दर दीखता है । बहुत ब्राइट हो गया है । उसकी आखें इतनी चमकीली नहीं थीं । दरअसल यही उसका आखिरी चेहरा है ।'

शाश्वती ने घुड़क दी, 'ट्राम आ रही है । हट जाओ ।'

शाश्वती की ओर देख कर आदित्य बोला, 'मुझे ऐसा लगता है कि मरने से पहले आदमी सुन्दर बन जाता है ।'

'सब नहीं बनते ।'—शाश्वती ने कहा ।

क्षण भर कुछ सोच कर आदित्य बोला, 'तुम्हारी बात मानता हूं कि सब नहीं बनते लेकिन कोई-कोई तो बनता है न । बस, यही समझो कि जिसने पाप नहीं किया, जो पवित्र जीवन जीता रहा, उसे भगवान मरते वक्त सुन्दर बना देते हैं । वह सुंदर बन जाता है और ससार के प्रति उसकी माया बढ जाती है । और ऐसी ही स्थिति म वह अचानक ससार से विदा ले जाता है ।'—कुछेक क्षण चुप रह कर आदित्य अचानक फिर बोल उठा, 'ललित हमेशा से थोड़ा-बहुत पवित्र रहा है । उसने बहुतों का उपकार किया है सती । इसलिए उसके चेहरे की चमक-दमक अच्छी नहीं ।

रास्ते पर धूल उड़ रही है । चारों तरफ भीड़ लगी है । नाक पर रूमाल रख कर शाश्वती दो कदम पीछे हट कर बोली, 'ट्राम नहीं पकड़ोगे '

'सिगरेट खत्म कर लू ।'

ट्राम आयी और चली गयी । वह सिगरेट के छल्ला म खोया रहा । आखिरकार एक भीड़ से भरी ट्राम म दोनों चढ गये । शाश्वती को महिलाओं की सीट पर बैठने की जगह मिल गयी । वह भीड़ म खड़ा रहा । शाश्वती से आंखें मिलीं और वह मलिन मुस्कान म मुस्कराया । उसके बाद लगा शरीर थोड़ा झुका कर खिड़की के बाहर का दृश्य देखने लगा । क्या ललित के लिए उसका मन खराब है ? क्या वह अपने पुरानपथी परिवार के दकियानूसी खयाल और शाश्वती से विवाह करने की अनिश्चयता पर विचार कर रहा है ? यह भला कौन कह सकता है कि वह क्या सोच रहा है ? हां, शाश्वती सिर्फ इतना जानती है कि आदित्य का मन बड़ा हलुआ है—वहां पानी नहीं टिकता । सुख-दुःख, हर्ष-विषाद बाढ की तरह आते हैं और चले

जाते हैं। कभी कभी आदित्य उसे बेइंतहा प्यार करता है और कभी-कभी एकदम भूल जाता है। शाश्वती को डर लगता है।

पुरुष समाज से शाश्वती का परिचय बड़ा कम है। पारिवारिक अनुशासन ही कुछ ऐसा था कि पुरुषों से बातचीत नहीं हो सकती थी। बाहर के कमरे में कोई आता तो औरतें अंदर ही रहतीं। रास्ते में उसने किसी से कभी बात नहीं की। होटल-रेस्तरां या सिनेमा किसी गैर मर्द के साथ नहीं गयी। बाहर से आने में शाम हो जाती, तो कैफियत देनी पड़ती। इतने कठोर अनुशासन के बीच भी एक दिन उसकी दीदी लीलावती के जीवन में एक दुर्घटना घट गयी। लीलावती कालेज से आ रही थी कि कुछ गुण्डों ने जबर्दस्ती उसे गाड़ी पर उठा लिया। वे सारी रात उसका व्यवहार करते रहे और पौ फटने से पहले कैलकटा फुटबाल ग्राउंड के अहाते के पास फेंक गये। पूस की ठिठुरती सर्दी! ओस में नहायी घास! बेचारी लीलावती! आठ-नौ साल की शाश्वती अपनी दीदी की दुर्दशा पर उस दिन मन-ही-मन कांप गयी थी। गुण्डों पर उसे बेहद गुस्सा आया था। अगर कोई मिल जाता, तो न जाने नन्ही-मुन्नी शाश्वती क्या कर गुजरती। गुस्से की आग आंसुओं में बदल गयी थी।—घर लाते वक्त लीलावती बेहोश थी। बदन तवे की तरह जल रहा था। डेढ़ महीने की न्युमोनिया भोग कर जब उठी, तब डेढ़ महीने की गर्भवती थी बेचारी। समीर सान्याल नामक किसी उदार पुरुष ने सब कुछ जानते हुए भी लीलावती का हाथ पकड़ा था।—शाश्वती के खानदान में वह पहला रजिस्ट्री विवाह था। किसी को विवाह का निमंत्रण नहीं दिया गया। रजिस्ट्री विवाह के कट्टर विरोधी शाश्वती के पिता ने साक्षी के स्थान पर हस्ताक्षर किया था। शाश्वती के भैया कालीनाथ भी साक्षी थे। आठ-दस साल से समीर सान्याल और लीलावती की कोई खबर नहीं। पता नहीं कहां है दोनों। आश्चर्य है, उस विवाह के बाद ही शाश्वती के घर का अनुशासन अचानक बहुत ढीला हो गया। न जाने उसके पिता को क्या हो गया? एक दिन एकदम गंभीर होकर आंगन में उन्होंने बहुत बड़ा गड्ढा खोदा। पत्ते का छप्पर बनाया और एकदम नंगधड़ंग होकर गड्ढे में बैठ गये। मुहल्ले वाले उनके आंगन में उमड़ आये। वह गुहा में बैठ कर लोगों के प्रश्नों का उत्तर देते। कहा करते, 'देखो, 'उद्भिद जगत कितना निर्विकार है। ध्यान से सुनो, प्रकृति में कोई समाज नहीं है। मैं ऐसा ही निर्विकार बनना चाहता हूं। कभी-कभी कहते, मेरे ब्रह्मांड को भेद कर आंवले का पौधा निकलेगा। मैं फिर जन्म लूंगा।—उन दिनों शाश्वती आठ-नौ साल की थी। लज्जावश कोई गुहा के पास से गुजरना पसंद नहीं करता इसलिए उसकी मां कभी-कभार उसे गुहा का पहरा देने कहती। एका-दुक्का या अट्ठागाटी

खेलती शाश्वती अपना खेल छोड़ कर गुहा के मुह पर पहरेदारी में डट जाती। क्या मजाल कोइ झांकने की कोशिश करे! दोनो हाथ फैला कर वह रास्ता रोक लेती। कहती, 'इधर नहीं!' यदि कोइ प्रश्न करता, 'क्या?' उत्तर में वह फिक कर हस देती और कहती, 'बापू नगे हैं न।'

उन दिनों गुहावासी बाबा के सबध मे कुसस्काराच्छन्न लोगों ने अफवाह फैलायी थी कि बाबा मनसिद्ध महापुरुष हैं। उनकी वाणी कभी विफल नही जाती।—कितने ही बाबा से रेस के घोड़े या लाटरी का नबर पूछते थे। दो-चार बात सच भी निकली थी। बाबा की ख्याति बढती गयी थी। एक ओर बाबा के भक्त की भीड़ बढती जा रही थी और दूसरी ओर उनकी गृहस्थी डगमगाने लगी थी। शाश्वती की मा पर मुसीबत का पहाड़ टूट पड़ा था। दो लड़के, दो लड़कियां। अकेली बेचारी क्या-क्या करती! बी० ए० छोड़ कर कालीनाथ एड़ी-चोटी का पसीना एक कर नौकरी म घुसा। पिता के रहते भी भाइ का जमाना शुरू हुआ। हसोड और मजाकिया कालीनाथ—जिसे शाश्वती ने कभी बड़े भाई का सम्मान न दिया—परिवार का अभिभावक बन गया। दिन भर नौकरी, फिर ट्यूशन और रात के कालेज म बी० ए० का क्लास करते-करते अचानक बाइस साल का जवान कालीनाथ बुड्ढा हो गया। आंखों पर राल्ड-गोल्ड के फ्रेम का चश्मा, चेहरे पर गभीरता और पेट मे अम्ल-रोग।

शाश्वती के पिता अपनी गुहा मे करीब साल भर रहे। उसके बाद समतल पर आ गये। गड्ढा भर दिया गया। वह कपडा लत्ता पहनने लगे, लेकिन फिर भी वह पूरी तरह अच्छे नहीं हुए। चार पांच महीने ठीक रहते हैं फिर पागलपन सवार होता है।

यद्यपि उनका परिवार बड़ा शांत और शिष्ट था, पर लीलावती की घटना के बाद चारों तरफ बदनाम हो गया। परिवार की बदनामी शाश्वती की मझली दीदी हैमन्ती के विवाह का बाधक बन गयी। जितनी बार कालीनाथ ने हैमन्ती का विवाह ठीक किया, उतनी बार टूट गया। किसी किसी ने वर पक्ष को बेनामी चिट्ठी भेज दी। कोइ-कोइ वर पक्ष का लीलावती की घटना नमक-मिर्च मिला कर सुना आया। यह भी बता आया कि हैमन्ती का पिता पागल है। हैमन्ती का विवाह-सबध बार-बार टूट जाना इस बात की साक्षी था कि उसका विवाह स्वजाति में वैवाहिक अनुष्ठान के मध्य कतइ सभव नहीं। इसलिए कालीनाथ ने अपना विचार बदल लिया। मा क्या करती? यथार्थ से समझौता करना ही एकमात्र उपाय था।

कालीनाथ समाज सुधार की बात करने लगा। जाति-प्रथा का मानव-समाज का अभिशाप प्रमाणित करने के लिए वह सदैव तैयार रहता। पहले व

बहन का रिश्ता किसी ब्राह्मण के घर ही करना चाहता था। लेकिन बार-बार की असफलता ने उसे इतना उदार बना दिया कि वह हैमन्ती का रिश्ता किसी भी अच्छे लड़के से करने को तैयार हो गया। पहले घर म औरत और मर्द के बीच एक दीवार थी। कालीनाथ ने दीवार तोड़ दी।

प्राय वह अपने किसी-न-किसी मित्र के साथ घर आता। हैमती चाय बना कर लाती। दोनो का परिचय कराया जाता। हैमन्ती कलकत्ता से बाहर रिश्तेदारों के घर मिलने-जुलने जाती। उसे पढ़ाने के लिए कई प्राइवेट ट्यूटर आये-गये।—हैमन्ती की शक्ल-सूरत अच्छी नहीं थी। काली-कलूटी। ऊचे दांत।

एक दिन कालीनाथ अपने सहकर्मी आदित्य को ले आया। उसकी बड़ी खातिर हुई। पराठा और आमलेट खिलाया गया। हैमन्ती ने चाय पिलायी। उसके जाने पर कालीनाथ मा को पास बुला कर बोला, 'जाति-पाति बेकार की चीज है। समाज का अभिशाप है। आदित्य बड़े अमीर घर का लड़का है। सच्चरित्र है। और फिर उसकी टाइटिल भी इतनी गड़बड़ है कि कोई भी से समझ नहीं सकता कि वह ब्राह्मण है या कायस्थ।—मा चुप रही। बेचारी कह भी क्या सकती थी।

आश्चर्य है, शाश्वती पर कभी किसी ने ध्यान नहीं दिया। अब वह आठ-नौ साल की बच्ची नहीं थी। उसके अग अग म यौवन मचल रहा था। घर म उस पर किसी किस्म की रोक-थाम नहीं थी। लेकिन फिर भी वह पकड़ी गयी। वह अपने स्वभाव के कारण स्वय पकड़ी गयी।

नदी किनारे की घास म एक नयी किस्म की आर्द्रता होती है, शाश्वती के अग अग में वैसी ही आर्द्रता थी। लेकिन उसकी इंद्रियां बड़ी प्रखर थीं। बचपन से ही किसी की छुअन उसे कपा देती। यदि कोई उस पर हाथ रखता, तो वह सिहर उठती। उसे अग-अग में कांटों की चुभन महसूस होती।

शाश्वती जानती है कि उसके अग-अग में शुद्धता है। वह शत प्रतिशत पवित्र है। वह यह भी जानती है कि स्वय को अशुद्ध करने म उसे बड़ा कष्ट होगा। अपनी पवित्रता का वह किसी भी मूल्य पर नष्ट करना नहीं चाहती। उसके तीन पुकार नाम हैं—मट्टू, ठड्डु और सती। उसका रग मैला है, इसलिए पिता ने उसका नाम मलिना रखा था। मलिना से वह मउ बन गयी। वह ठडे स्वभाव की है इसलिए उसकी मा उसे ठड्डु कह कर पुकारती है। और लोग उसे सती कहा करते हैं। उसके शरीर और स्वभाव से इन तीनों का कुछ-कुछ मेल है। स्वभाव से वह ठडी है, लजीली है। किसी प्रकार के स्पर्श से वह कांप जाती है। उसके अग अग में पवित्रता चिपकी है। वह सर्वथा शुद्ध है, पवित्र है। शायद इसी कारण, स्वतत्रता रहते हुए भी पुरुषों से उसका मेल-जोल बहुत कम है। उसके

उपयुक्त पुरुष कौन है, कैसा है— इस पर उसने शायद ही कभी विचार किया हो। क्योंकि वह हमेशा से अपनी शुद्धता एवं पवित्रता को प्यार करती आयी है। किसी पुरुष के समक्ष अपनी शुद्धता नष्ट करने में उसे बड़ा कष्ट होगा। मुहल्ले के शरीर छोकरे उसकी पवित्रता का मजाक उड़ाते हैं। उसे देख कर 'सिस्टर निवेदिता! सिस्टर निवेदिता!—कह कर चिल्लाते हैं।

सर्वप्रथम बुद्धू अभिजित ने उसकी पवित्रता नष्ट करनी चाही थी। उन दिनों शाश्वती स्कूल फाइनल की परीक्षा के लिए तैयारी कर रही थी। गणित में कमजोर थी वह। कालीनाथ ने ट्यूशन पढ़ाने के लिए बी० एस० सी० अभिजित को रखा था। गणित में वह बड़ा होशियार था लेकिन और सब विषय में गोबर गणेश। सचमुच में पहले दरजे का बुद्धू था वह। कुछ ही दिन पढ़ाने के बाद शाश्वती से वह प्यार करने लगा। सप्ताह में तीन दिन पढ़ाने की बात थी वह लाज-शरम पीकर रोज आने लगा। कभी-कभी वह बेसिर पैर की बात करता। शाश्वती से पूछता, 'दिन में सोती हो?' और फिर दुःख से बोलता, एक आदमी दिन भर कड़ाके की धूप में मारा मारा फिरता है और एक आदमी आराम की नींद सोता है!'—शाश्वती सिर्फ सुन लेती।—कभी-कभी छात्रा से गणित में गलती हो जाती, तो प्यार से कान पकड़ कर उसके सिर पर हल्की-फुल्की चपत मारता। कभी-कभार डबडबायी आंखों में वह बोलता, 'देखो तो, मुझे बुखार तो नहीं है? कल घंटों बारिश में भीगता रहा।—अभिजित की इन बेवकूफियों की वजह से शाश्वती का प्यार बढ़ा। अभिजित के लिए नहीं, बल्कि अपनी पवित्रता के लिए। अभिजित के समक्ष शाश्वती अपनी शुद्धता के प्रति अत्यधिक सतर्क हो जाती। उस समय उसे अपनी पवित्रता का बड़ा एहसास होता।

और फिर बहुत दिनों तक उसकी जिंदगी में कोई मर्द नहीं आया। मझली दीदी हैमती के लिए जो भी आता, शाश्वती उसे कौतूहल भरी आंखों से देखती। कौन उसकी मझली दीदी को पसंद करेगा? इसी कौतूहल की वजह से उसने आदित्य को भी देखा था। दूर-दूर से देखा था उसने। आदित्य के चेहरे पर उदासी पुती थी। आमलेट और पराठा खा रहा था और शाश्वती की मां से अपना दुखड़ा रो रहा था, 'मौसी, मेरा मन अच्छा नहीं है। बहुत परेशान हूं। चार-पांच दिन से पिता जी से झगड़ा चल रहा है।' पहली बार आदित्य को देख कर और उसकी बातें सुनकर शाश्वती ने समझा था कि आदित्य बड़ा भोला-भाला है। उसके पेट में बात नहीं पचती। उस दिन उसने आदित्य को जरा भी पसंद नहीं किया था। हैमती ने ढेर सारी बातें कीं पर आदित्य ने आंख उठा कर भी उसका सिंगार नहीं देखा। बेचारी मझली दीदी! पसंद तो दूर की बात है, उस दिन उसे आदित्य पर बड़ा गुस्सा आया था। वह फुसफुसायी थी, 'मूर्ख असभ्य! मझली दीदी बोल रही है और जनाब

मां से दुखड़ा सुना रहे हैं। एक बार नजर उठा कर भी नहीं देख सकते। उसके बाद भी आदित्य आता रहा। आज भी आता है। शायद वह आज तक नहीं समझ सका कि कालीनाथ उसे अपने घर क्यों लाया था शायद वह कभी समझ भी न सकेगा, जब तक कोइ बता न दे। लेकिन एक बात है, वह है बडा मिलनसार।

आदित्य अपने पिता की कजूसी के किस्से सुनाता। कालीनाथ दफ्तर म किस प्रकार अपने अम्ल रोग का रोना रोता है, आदित्य उसकी नकल करके दिखाता। शाश्वती और हैमती की बात तो दूर रही मां भी हसते-हसते लोट-पोट हो जाती। जब वह जाने लगता दोना बहन चिल्ला कर कहतीं, 'फिर आइयेगा।' एक दिन 'फिर आइयेगा' सुन कर वह रुक गया। इशारे से शाश्वती का करीब बुला कर बोला, 'क्या होगा आकर? अगर भरोसा दो, तो आऊ। यू ही आने-जाने से क्या फायदा।'— यह ठीक है कि शाश्वती पुरुषों से हमेशा कटी-कटी रही है लेकिन आदित्य की बात वह तत्क्षण समझ गयी थी। उसके बाद एक दिन आदित्य उससे अकेले मे कालेज के सामने मिला। हैमती को आपत्ति नहीं थी। आपत्ति होती भी क्यों? कितने आये और उसे देख कर चले गये। पता नहीं कौन उसे पसद करेगा?—एक दिन रात को सोते समय शाश्वती ने उसे अपने और आदित्य के सबध म सब कुछ बता दिया। हैमती को जरा भी बुरा नहीं लगा।

और आदित्य! वह कभी उसे नहीं छूता, ज्यादा सटने की कोशिश नहीं करता, यहा तक कि कभी-कभार उसे भूल भी जाता है। यह सब शाश्वती को बुरा नहीं लगता। बुद्धू अभिजित के बाद उसने पहली बार एक पुरुष देखा है। कभी-कभी शाश्वती अपने अग अग म विराजती अमोघ पवित्रता पर विचार करती, तो उसका मन बड़ा खराब हो जाता। उम्र! हां यह सब उम्र का ही दोष है। मुहल्ले के छोकरे उसे 'सिस्टर निवेदिता',—कह कर चिढ़ाते हैं! वह क्या अब भी सिस्टर निवेदिता है? शाश्वती जैसी सामान्य लडकिया के लिए 'सिस्टर निवेदिता' बनना सभव है क्या? इन दिनों शाश्वती अपनी मोहिनी पवित्रता की बात अक्सर भूल जाती है। ट्राम-बस की भीड़ में शरीर छिलता है पर अब वह नहीं कापती, नहीं सिहरती। बहुत कुछ भूल चुकी है वह।—भूल जायगी।

शाश्वती ने देखा, उसकी ट्राम रासबिहारी मोड़ के करीब आ पहुंची है लेकिन आदित्य अन्यमनस्क-सा चुप खड़ा है। वह उठ खड़ी हुइ। आदित्य से बोली, 'यहीं उतरना है न?'

'हां!'—आदित्य मुस्कराया।

दोनों ट्राम से उतरे। आदित्य बोला, 'कहां चला जाय?'

'मैं तो घर जाऊंगी!'—

'घर मे तुम्हारा कौन है ?'

'कौन नहीं है ?'

'खैर, कोइ भी हो, मैं तो नहीं हू ।'

'टैक्सी ।'—आदित्य ने हाथ ऊपर उठा कर आवाज लगायी। टैक्सी नहीं रुकी। 'स्साला ।'—उसने गाली दी।

'टैक्सी की क्या जरूरत है ? पैसा काट रहा है ?' शाश्वती बोली।

'बस-ट्राम म बड़ी भीड़ है ।'

'चलो, पैदल चलते हैं। कहा जाओगे ?'

'ठीक ।'

'दुर, दस मिनट का तो रास्ता है ।'

'दूर है यार ।'

टैक्सी मिल गयी। दोनो बैठ गये। सिगरेट सुलगा कर आदित्य बोला, 'ललित तुम्हें कैसा लगा ?

'तुम क्या अब तक ललित के बारे म ही सोचते रहे हो ?—शाश्वती की भौंहे सिकुड़ गयीं। आदित्य के चेहरे पर मरियल मुस्कान फैल गयी। मुस्करा कर बोला, 'तुम्हारी कसम, ललित को मैं बहुत प्यार करता था।'—कुछेक क्षण सोच कर फिर बोला 'अच्छा, यह तो बताओ सती, आज मेरा यार देखने म कैसा लग रहा था ? मैं कहू ? वह भगवान का बच्चा लग रहा था। डिरेक्ट भगवान का। तुमने गौर नहीं किया।

'मैं ने आज स पहले और कभी देखा है क्या ?

'आज कैसा दीख रहा था ?'

'भगवान का बच्चा कैसा होता है, मैं तो नहीं जानती।'—शाश्वती ने मुस्करा कर अपनी अनभिज्ञता प्रकट की।

'ठीक ! बिलकुल ठीक। यह तो सिर्फ मैं जानता हू।'—आदित्य हसा।

और फिर उसके होठो पर चुप्पी आ बैठी।

सिगरेट की गध शाश्वती कतई बर्दाश्त न हीं करती।

'कृपया थोड़ा खिसक कर बैठिये। मुह खिड़की से बाहर करें तो दया होगी।'

'मैं कैसा हू ? मेरा मुह जिराफ जैसा है न ?'—आदित्य की भौंहे सिकुड़ गयीं।

शाश्वती को हसी आ गयी। हसते-हसते बोली, 'किसने कहा ? तुम देखने मे भद्दे नहीं लगोगे। बस, थोड़ा मोटा लग जाय।'

'अभी भद्दा दीखता हू ?

'क्या पता। मैं क्या चेहरा देखती हू ?—

'तब क्या देखती हो ?

'चेहरे के अलावा भी बहुत कुछ है।'

'धत्! और क्या देखने को है ? लड़कियाँ लड़कों में क्या देखती हैं ? चेहरा या माल दोनों में एक होना चाहिए। दोनों हुआ तो सोने में सुगंध। इसके अलावा तो लड़कियाँ और कुछ नहीं देखतीं।'

शाश्वती ने सिर उठाया, 'नहीं देखतीं ?'

'नहीं।'—आदित्य ने सिर हिलाया, 'लेकिन लड़के देखते हैं। बहुत कुछ देखते हैं। आज मैंने ललित के चेहरे पर जो कुछ देखा, वह तुम ने नहीं देखा।

शाश्वती झल्ला उठी। झुंझला कर बोली, 'बला से! मुझे देखने की जरूरत भी नहीं है।'

आदित्य कहकहों में फूट पड़ा। उसके बाद न जाने क्या हुआ अचानक दबी आवाज में बोल उठा, 'तुमने नहीं देखा। लेकिन मैं ने देखा है। उसे तुम बहुत पसंद आयी हो।

शाश्वती ने कुछ नहीं कहा। लेकिन वह चौंक उठी। उसका शरीर ठीक पहले जैसी एक असह्य स्पर्शकातरता में काँप उठी। आश्चर्य है, अब तक उसके मस्तिष्क के किसी भी कोने में ललित नहीं था, लेकिन उसके चौंक उठते ही ललित का चेहरा उसके सामने आ गया। ललित। तेज-तर्रार चेहरा। आँखों में घनीभूत माया-ममता। आदित्य शायद ठीक ही कहता है। मरने से पहले आदमी का चेहरा बहुत सुन्दर दीखता है। ललित को शाश्वती ने और कभी नहीं देखा। लेकिन अभी अभी उसे खयाल आया कि ललित उसे बड़ा सुन्दर लगा था। इसका यह मतलब नहीं कि ललित को देखते ही कोई मुग्ध हो जाय बल्कि खूबसूरती के नजरिये से उसका चेहरा-मोहरा औसत दरजे का ही कहा जा सकता है। ढेर सारी उदासी पुता खोया खोया चेहरा। गंभीर चिंतन में डूबी आँखें। आसपास में क्या है, कौन है, क्या हो रहा है—इससे उसे कोई मतलब नहीं। शाश्वती को भी उसने उचटी उचटी आँखों से देखा था। वह आदित्य की बगल में बैठा बात कर रहा था। आदित्य की आड़ से शाश्वती ने ललित को देखा था। ठीक-ठीक देखा भी तो नहीं था उसने। बस, यूँ ही। तब भी अभी-अभी उसे खयाल आया कि ललित के मुख मंडल पर साधु-संतों जैसा सौंदर्य था। वह चौंक उठी। कुछेक क्षण सोच कर वह इस निष्कर्ष पर पहुँची कि आदित्य बकवास कर रहा है। आखिर इतने कम समय में ललित ने उसमें क्या देखा ?—वह भली भाँति जानती है कि उसमें ऐसा कुछ भी नहीं है कि उसे देखते ही कोई पसंद कर ले।

'उसे तुम बहुत पसन्द आयी हो।'—सुन कर शाश्वती निर्निमेष दृष्टि से आदित्य के मुंह की ओर देखती रही।

और आदित्य हंसते हंसते बोल रहा था, 'तुम जब कह रही थी कि तुम्हारा घर माइकेल मधुसूदन के घर के बिल्कुल करीब था। तब अचानक उसका आंख मुंह न जाने कैसा हो रहा था। विह्वल। हां, विह्वल कहना ही ठीक होगा।'

शाश्वती चुपचाप देखती रही।

'साला कवि है, कवि।'—आदित्य अचानक विषय से हट गया।

कुछेक क्षण चुप रह कर बोला, 'मरेगा साला।'

आदित्य ने झुक कर शाश्वती का हाथ पकड़ना चाहा पर न जाने क्या सोच कर उसने हाथ वापस खींच लिया। शाश्वती की ओर मिचमिचाती आंखों से देखता हुआ बोला, 'बुरा तो न मान गयी सती। तुम्हारी सौगंध, मैं ने जो देखा, वही कहा।'

शाश्वती ने सधी आवाज में कहा, 'तुमने गलत देखा है।'

सिगरेट का धुआं निगलते हुए आदित्य फुसफुसाया, 'ललित को मैं भली-भांति जानता हूं। हम जब लड़कियों की बातें किया करते थे। सब अपनी अपनी पसंद बताया करते थे। ललित हमेशा कहा करता, 'मुझे तो सांवली लड़की पसंद है। मेम की तरह गोरी-चिट्टी बंगाली लड़की मुझे कतई पसंद नहीं। मुझे तो बस चाहिए सांवली-सलोनी, बड़ी-बड़ी भावभीनी आंखें, जांघ को चूमते काले-काले बाल।'

शाश्वती को मिचमिचाती आंखों से देखता हुआ आदित्य बोला, 'तुम उसकी पसंद पर एकदम खरी उतरती हो।'

सहसा शाश्वती की छाती धड़क उठी। भयभीत हो उठी बेचारी। बोली, 'क्या बक रहे हो?'

मीठी मुस्कान में वह बोला, 'इसे बकना नहीं कहते सती और न इसमें कोई दोष है। उसकी पसंद पर अगर तुम खरी उतरती हो, तो न वह दोषी है और न तुम दोषी हो। तुमने शायद गौर न किया, तुम जब कह रही थी, आप अच्छे हो जायेंगे उस समय उसके चेहरे की रंगत ही बदल गयी थी। तुम्हारी सहानुभूति पर वह कितना खुश हुआ था। एक अजीब-सी चमक उसके चेहरे पर आ बसी थी। उसकी आंखों में ,

'दुर।'—शाश्वती ने टालने की कोशिश की।

अन्यमनस्क आदित्य हंस कर बोला, 'आखिर इसमें बुरा क्या है सती? आज जो मैं ने उसका चेहरा देखा—एक टाइप चेहरा, ऐसा चेहरा ज्यादा दिन नहीं टिकता। ललित अब चन्द दिनों का मेहमान है। तुम्हें देख कर यदि उसे प्रसन्नता मिले, तो इसमें

क्या दोष है ? मैं खुद तुम्हें उसके पास ले जाउंगा। जब तक मेरा यार ज़िंदा है, तब तक तुम्हें उससे मिलना '

टैक्सी रुक कर अचानक ड्राइवर ने मुड़ कर पीछे देखा। चेहरे पर चेचक के दाग। छिपुट दाढ़ी। आंखों पर धूप का काला चश्मा।—रूखी आवाज में वह बोला, 'कहां जाना है ?'

'सीधे !'— आदित्य ने कहा।

ड्राइवर मुस्करा कर बोला, 'सीधे कहां ? रेल लाइन के उस पार टैक्सी नहीं जायगी।

शाश्वती ने देखा, 'बातों-बातों में वे बालीगंज स्टेशन पहुंच गये हैं। उन्हें लेक जाना था और पहुंच गये बालीगंज स्टेशन।

आदित्य ठंडी आवाज में बोला, 'सीधे जाना है। रेल-लाइन के उस पार। चलिये।

शाश्वती आदित्य को थोड़ा-बहुत पहचानती है। किसी के 'न' को 'हां' में बदल डालने की जिद है उसमें। अजीब स्वभाव है। अभी-अभी ड्राइवर ने कहा कि वह उस पार नहीं जायेगा। बस, आदित्य पर जिद सवार हुई। काम रहे या न रहे अब वह लाइन के उस पार जायेगा ही।

शाश्वती ने मीठी झिड़की दी, 'क्या हो रहा है ? और फिर टैक्सी ड्राइवर से बोली, 'घुमा लीजिये। हमें गड़ियाहाट उतार दीजिये।'

आदित्य भड़क उठा, 'नहीं ! तुम्हें जाना है, जा सकती हो। लेकिन मैं उस पार जाऊंगा।'

'क्यों ?'

'यूं ही।'

टैक्सीवाला शाश्वती की ओर देख रहा था। शाश्वती का मुख-मंडल अपमान से लाल हो उठा।

टैक्सीवाला रूखी आवाज में बोला, 'उस पार नहीं जाऊंगा। गड़ियाहाट छोड़ सकता हूं।

'क्यों नहीं जाओगे ? मैं क्या पैसे नहीं दूंगा ?

'पैसा तो सब देते हैं।'—टैक्सीवाला भड़क कर बोला, उधर का रास्ता खराब है। तंग गलियां हैं। हमेशा झमेला होता है। रंगबाजों की चलती है। टैक्सी चोट जायेगी, तो आप देंगे।

तू-तू मैं-मैं सुन कर दो-चार मनचलों ने ताक-झांक की। सिहर उठी बेचारी। उसकी आंखों में विवशता घिर आयी। आंसू लरजने लगे। भीगी भीगी आंखों

से शाश्वती ने देखा, 'सामने की सीट पर थप्पड मार कर आदित्य चीख रहा है, 'जाना होगा। जाना होगा।'—और टैक्सीवाला भी चीख रहा है, 'नहीं जाऊगा। नही जाऊगा।'

'देखता हू कैसे नहीं जाते हो।' आदित्य के हाथ उग्र हो उठे।

जो आज तक शाश्वती ने नहीं किया है, अचानक कर बैठी। झुक कर उसने आदित्य के उग्र हाथ पकड लिए। उत्तेजना म भी काप उठी बेचारी। कपी-कपी सी आवाज म बोली, क्या कर रहे हो? गाडी घुमाने को।

कुछेक क्षण के लिए आदित्य चुपचाप शाश्वती को देखता रहा। उसके बाद सहज होकर टैक्सीवाले से मुस्करा कर बोला, 'ठीक है। घुमा लीजिये।'

ड्राइवर ने गाड़ी घुमा ली। गडियाट म दोनो उतर पडे। किराया देकर वे लेक की ओर चल पड़े। चलते चलते आदित्य बोल उठा, 'सती! तुम इतना डरती हो! हरामजादे को मैं उस पार ले जाता, फिर जहा खुशी होती वहा ले जाता।'

अब तक शाश्वती के हृदय मे नि शब्द रोदन उबल रहा है। आखें लरज रही हैं, पर बरस नहीं पातीं। रोम-रोम म दहकता अपमान, रोम-रोम म घुटते आसू। बेचारी शाश्वती!

नाक सुडक कर अश्रुसिक्त आवाज म बोली, 'इससे क्या तुम्हारी बहादुरी साबित होती?

आदित्य हसा, 'नहीं। बहादुरी साबित नहीं होती। लेकिन वह जायगा क्यों नहीं?'

'होगी कोई बात।'

आदित्य फिर झल्ला उठा, 'खाक बात होगी। तुम जैसा ने ही तो सिर चढा है सालों का।'—आदित्य का गोरा-चिट्टा चेहरा गुस्से म लाल हो उठा। शाश्वती ने देखा। लेकिन चुप रही अदर से उबलती शाश्वती। कुछेक क्षण दोनों चुप्पी म डूबे चलते रहे, फिर न जाने क्यों अचानक आदित्य हस कर बोला, सफर म तुम अद्भुत दीखती हो।

शाश्वती कुछ न बोली।

आदित्य बोला, 'वेरी पैथेटिक। अत्यधिक उत्तेजक पर हकीकत म तुम उत्तेजक नहीं हो। सच कहा जाय तो बहुत ठडी हो।

शाश्वती कुछ न बोली। बस, लजा गयी मुग्ध शाश्वती।

'आज मैं बड़ा उलट-सीधा देख रहा हू। ललित को देखा। तुम्हें देखा। तुम इतनी उत्तेजक हो, और कभी न हीं देखा।

बहुत-बहुत शर्मायी, छुईमुई पवित्र शाश्वती। पता नहीं आज आदित्य क्या-क्या

दक रहा है। ललित से विदा लेने के बाद से ही वह एक नया आदित्य बन गया है। ऐसा व्यवहार तो वह कभी नहीं करता था। अकारण टैक्सी लेने से इनकार। बार बार उसे यह समझाने की कोशिश कि ललित उस पर मरता है। इस आदित्य को तो उसने और कभी नहीं देखा। वैसे आदित्य के साथ उसका परिचय ज्यादा पुराना नहीं सिर्फ छह-सात महीने का है। इतने कम वक्त म कहां तक पहचान सकती है? कुछ महीनों की मुलाकात म उसने आदित्य को थोड़ा पहचाना है, थोड़ा पहचानना बाकी है। आज का आदित्य उसे एकदम अपरिचित-सा लग रहा था।

आदित्य ने घुमा फिरा कर फिर ललित की बात शुरू की और शाश्वती के चलते कदम अचानक रुक गये।

रास्ते पर जन-समुद्र उमड़ रहा है। अधा की तरह लोग चल रहे हैं। लेकिन फिर भी शाश्वती ठमक कर खड़ी हुइ और तड़क कर बोली, 'आखिर तुम कहना क्या चाहते हो? साफ साफ कहो।

आदित्य ठिठक गया, 'कुछ नहीं, कुछ तो नहीं।'

'तुम कुछ कहना चाहते हो, पर मैं समझ नहीं पाती।

आदित्य टाल गया। हस कर बोला, 'चलो।'

दोनो चलते रहे। दोनो कुछेक क्षण चुप रहे। दोनो लेक की ओर बढ रहे थे।

हसी-मजाक के बहाने अचानक आदित्य बोल उठा, 'देखो सती। देखो, विवेकानद की प्रतिमा और वह रहा रामकृष्ण मिशन। तुम कभी अन्दर गयी हो? अदर जाओगी तो मालूम होगा कि किसी अमरीकी धनकुबेर के महल म घुस आयी हो।'

चलते चलते शाश्वती ने एक नजर आदित्य के चेहरे पर डाली।

आदित्य कुछेक क्षण जा सो बकना गया। उसके बाद अचानक हवा म हाथ लहरा कर बोला, 'अरे वाह! तुम इतने चालाक क्या हो '

शाश्वती की आंखें फिर आदित्य के चेहरे पर जा टिकी। आदित्य की भौंहें सिकुड़ी थीं।

लेक (झील) के किनारे हरी दूब पर दोनो बैठे। आदित्य बोला, 'तुम से कुछ पूछना था।'

'पूछो न।'—शाश्वती मीठी आवाज म बोली।

'ललित तुम्हें कैसा लगा?'

शाश्वती अवाक होकर बोली, फिर वही बात!'

आदित्य रुका गया। शाश्वती ने देखा, आदित्य के चेहरे पर लाज की लाली बिखर गयी है।

'सती ! मैं बड़ा ईर्ष्यालु हूं ! मैं पैदाइशी बनिया हूं। उदारता मेरे खून में नहीं !'—दून पर आंखें जमाये आदित्य बोला।

शाश्वती समझ न सकी। बोली, 'क्या बक रहे हो ?'

फीकी हंसी हंस कर आदित्य बोला, 'सती, हमारे परिवार में कोई कल्चर नहीं है। अपने खानदान का मैं पहला ग्रेजुएट हूं। जिद थी, पढ़ गया वरना मैट्रिक के बाद ही मुझे कारोबार संभालना था।'

शाश्वती गंभीर हुई।

क्षण भर न जाने क्या सोचकर आदित्य फिर बोला, 'किसी भी दृष्टि से मैं स्वयं को तुम्हारे समान नहीं समझ पाता। हम दोनों के बीच कहीं-न-कहीं दरार है। मुझे हमेशा ऐसा लगता है कि तुम्हारे अंदर खानदानी कुछ ऐसी बात है जो मैं पकड़ नहीं पाता। तुम से मेरी जात नहीं मिलती।

शाश्वती स्तंभित हुई। आदित्य के मलिन चेहरे पर उसकी आंखें जम गयीं। कुछेक क्षण बाद वह आकुल स्वर में बोली, 'छि ! क्या बकवास कर रहे हो ? आजकल जात-पात कौन मानता है ?'

आदित्य ने सिर हिलाया, 'नहीं, मैं इस जात-पात की बात नहीं कर रहा हूं। मनुष्य अपने स्वभाव के अनुसार भी जातियों में बंटा है। और मैं उसी जात की बात कर रहा हूं। हम दोनों के स्वभाव में बड़ा अंतर है सती।

शाश्वती गंभीर होकर बोली, 'आज तुम्हें हो क्या गया है ? यह सब क्या बोल रहे हो ?'

'कांप्लेक्स !'—आदित्य ने उत्तर दिया और फिर क्षण भर चुप रह कर बोला, 'चाय की दुकान पर तुम और ललित मेरे दोनों तरफ बैठे थे। मैं बीच में था। तुम दोनों में मुश्किल से दो-चार बातें हुई। तुमने आकुल स्वर में कहा, आप अच्छे हो जायेंगे। ललित तुम्हारे प्रति कृतज्ञ हुआ। तुम्हारी आंखों में करुणा उमड़ आयी थी। तुम्हारी आवाज में ललित के लिए एक अजीब-सा दर्द था। और तुम ने जब कहा कि तुम्हारा घर जवार था, उस समय ललित की आंखों में एक विचित्र-सी चमक कौंध आयी। उस चमक में विह्वलता थी। एक ऐसी विह्वलता जो मैं ने और कभी नहीं देखी। ऐसा लगता था कि वह चाय की दुकान पर नहीं बल्कि जवार के किसी हरे भरे गांव में पहुंच गया है, कदंबों की डलरिया में हुड़कियां लगा रहा है। मैं बक रहा था। हंसी मजाक कर रहा था। तुम दोनों चुप्पी में डूबे थे। लेकिन न जाने क्या मुझे महसूस हो रहा था कि चुप्पी में भी तुम दोनों बोल रहे हो, बहुत कुछ बोल रहे हो। और तुम दोनों के बीच बनिया का बच्चा मैं बकवास कर रहा था, निरा बकवास। सच्चाई तो यह है सती कि मुझ में वह सूक्ष्म अनुभूति नहीं, जो तुम में है,

ललित म है। यही कारण है कि तुम दोनों को मैं समझ न सका और मेरा स्वार्थी मन संदेह से भर गया।

शाश्वती का गला भर आया। आदित्य के चेहरे पर गहरी घृणा एवं वितृष्णा देख कर उसकी आंखें छलछला आयीं पर वह बरस न सकी। आश्चर्य है, आंखों म मचलने आंसुओं का उसे एहसास तक न हुआ।

बड़ी मुश्किल से बोली शाश्वती, 'ऐसी कोई बात नहीं।'

'मैं जानता हूँ सती।'—आदित्य कोमल स्वर म बोला, 'लेकिन मुझे संदेह हो रहा था।'

आदित्य ने सिगरेट जलायी। दो तीन कश लेकर बोला, 'ललित आज मुझे बहुत सुंदर लग रहा था। तुम से मैं ने बार बार यही बात कही, पर तुमने स्वीकार नहीं किया। मेरा संदेह बढ़ गया। मुझे लगा कि तुम ने भी उसका सुंदर चेहरा देखा है, लेकिन स्वीकार नहीं कर रही हो। तुम ने उसे समझा है, पर मुझे बताना नहीं चाहती।

शाश्वती ने कुछ बोलने की कोशिश की पर बोल न सकी। मैं बड़ा नीच हूँ। ईर्ष्यालु हूँ।'—क्षण भर चुप रह कर आदित्य फिर बोला, 'सच, सच, बताओ सती, ललित तुम्हें कैसा लगा?'

सिहर उठी शाश्वती।

*आदित्य! हां, आदित्य ने अगर बार-बार ललित का प्रसंग न उठाया होता,* तो शाश्वती को ललित का चेहरा भी याद नहीं आता। आकुल-व्याकुल शाश्वती सिर झुका कर सिसकियों म फूट पड़ी।

आदित्य का गला भर आया। धीमी-धीमी आवाज म वह बोला, 'सचमुच म मैं बड़ा गंदा आदमी हूँ सती। देखो न, तुम बताना नहीं चाहती फिर भी मैं जिद कर रहा हूँ। यह मेरा नहीं, मेरे मन का दोष है। मैं कभी उदार नहीं हो सकता। संकीर्णता ही हमारे वंश की पहचान है। हमारे राम राम म स्वार्थ है सती। हम कभी विशाल हृदय नहीं बन सकते। सच कहता हूँ सती एक सर्वथा निराधार संदेह मुझे कुरेद कुरेद कर खा रहा है।'—आदित्य का गला क्रमशः भरता गया। क्षण भर कुछ सोच कर वह सिसकियों म लिपटी आवाज में बोला, 'बताओ न सती। बताओ न ललित आज तुम्हें कैसा लगा?'—बोलते बोलते उसने अपना एक हाथ शाश्वती की ओर बढ़ाया 'मुझे छूकर बताओ सती, ललित तुम्हें कैसा लगा?'

शाश्वती ने मुंह उठाया। अपनी ओर आदित्य के बढ़े हाथ देख कर सर्वांग सिहर उठी। मन में भूचाल उठा। पांव तले की मिट्टी कांप रही है। सच सचमुच में ललित शाश्वती को बहुत सुंदर लगा था, संत महात्माओं जैसा सुंदर

फिर भी शाश्वती फुसफुसा कर बोली थी, विश्वास करो, ललित मुझे जरा भी अच्छा न लगा।

# बारह

*

वह झूठ बोली थी ।

रात के आखिरी पहर की हल्की-फुल्की नींद में शाश्वती बेचैनी महसूस कर रही थी । बार-बार वह एक ही सपना देख रही थी, 'पगडण्डी के रास्ते हाथ में लालटेन लिए एक आदमी जा रहा है । लालटेन की मद्धिम रोशनी में सिर्फ उसके धूलभरे पांव दीख रहे हैं । लालटेन की रोशनी में रहस्यमय परछाइयां नाच रही हैं ।

जितनी बार शाश्वती की आंखें खुलती हैं, उतनी ही बार झुरपुटे अंधेरे में उसकी नजर मसहरी पर पड़ती है । डर कर वह गठरी बन जाती है और जबर्दस्ती आंखें मूंद लेती है । सांस भी बंद कर लेती है । आधी रात की गहरी चुप्पी में उसका अपना ही कमरा उससे एकदम अपरिचित हो जाता है । कमरे पर उसका अधिकार नहीं रहता । कमरे में भूत प्रेत मंडराते हैं । उसे महसूस होता है कि खिड़की के बाहर चोर खड़ा है, शील हरणकारी पुरुष खड़े हैं । न जाने रात की चुप्पी में कौन जाल फैलाता है, भय दिखाने के लिए षड्यन्त्र करता है । इसलिए वह चुपचाप बिस्तर पर आंखें बंद किये पड़ी रहती है । श्वास प्रश्वास की हल्की-फुल्की आवाज भी नहीं करती । लेकिन छाती धड़कती रहती है और हर धड़कन उसे बेचैन बना डालती है । खुद को गठरी बना कर वह काठ की तरह पड़ी रहती है । किसी के खखारने की आवाज, कहीं दरवाजा खुलने की आवाज या सड़क पर जूतों की मचमचाहट सुनने की खातिर शाश्वती के कान बेचैन रहते हैं । कोई जगा है जान कर वह आहिस्ते आहिस्ते सो जाती है ।

पहली बार सपना देख कर शाश्वती कुछ समझ न सकी । सिर्फ आधी रातवाला डर उसे लगा था और हैमन्ती के करीब वह सिमट गयी थी । दोनों बहन साथ सोती हैं, फिर भी शाश्वती हैमंती को भरसक छूती तक नहीं । किसी की छुअन से शाश्वती कांपती है, सिहरती है । और हां हैमन्ती को पसीना भी बहुत आता है । क्या जाड़ा, क्या गरमी, तन-बदन पसीने से चुचुहाता है । उसकी छुअन से शाश्वती का तन मन घिनघिना उठता है । आज भी पहली बार उसने हैमन्ती को नहीं छुआ । लेकिन जब

दूसरी बार उसने वही सपना देखा, लालटेन की रोशनी में दो पाव आ रहे हैं, तब वह बन्द डर गयी। एक ही सपना कोई दो बार देखता है! वह अवाक हुई। मुट्ठियां भींच कर, आंखें मींच कर और दांत भींच कर वह चुप पड़ी रही। आधी रात की पृथ्वी पर समाज विरोधीतत्वों और भूत प्रेतों का राज्य होता है। इसलिए आधी रात की चुप्पी में बेचारी शाश्वती अपने आप में सिमट जाती है।—शाश्वती का तकिया गरम हो गया था फिर भी करवट लेकर सोने का साहस न कर सकी। उसने हैमन्ती को ठेल-ठाल कर जगाने की कोशिश की, पर वह नहीं जगी। हैमन्ती थोड़ी बुद्धू है। भोली भाली है। बुद्धि का अभाव है, इसलिए घोड़ा बेच कर सोती है।—बड़ी देर तक शाश्वती चुपचाप पड़ी रही। और फिर उसने दूर, बहुत दूर से आती हुई गाने की आवाज सुनी। उसकी कालोनी से बाहर या जादवपुर से भी दूर कहीं माइक बज रहा था। आवाज सुनकर शाश्वती थोड़ा सामान्य हुई और न जाने कब वह सो गयी। फिर वही सपना! नींद टूट गयी। डर गयी बेचारी। उसके बाद वह माइक की आवाज सुनने की कोशिश करने लगी। और फिर सो गयी।

रात के आखिरी पहर झीनी-झीनी नींद में उसने फिर वही सपना देखा, लालटेन की रोशनी में सिर्फ दो पाव कहीं जा रहे हैं। डर से उसकी छाती धड़क उठी। छटपट करती शाश्वती को अचानक आभास हुआ कि उसके गले से अब तक एक अजीब-सी रहस्य की आवाज निकल रही थी। अवाक हुई बेचारी। आंखें खोल कर पड़ी रही। वह स्वयं को निष्क्रिय महसूस कर रही है। प्यास से तालू सूख गया है। उसे लगा कि बाहर का अंधेरा अब झीना पड़ने लगा है। टीन के छप्पर पर सूखे पत्ता और ओस की बूंदों के गिरने की टप-टप आवाज। पौ फटने को है। अब भूत-प्रेत का डर नहीं। चोर डाकू की आशंका नहीं। औरत के शिकारी मर्दों का खौफ नहीं। लेकिन फिर भी शाश्वती की छाती पर एक रहस्य का भय शेर के पंजे सा बैठा रहा। एक ही सपना कोई इतनी बार देखता है!

सपने के डर से उसे जागने की इच्छा नहीं हुई। सपना कहीं न कहीं कमरे में घात लगाये बैठा है। उठ कर सोते ही उसे धर दबोचेगा। शाश्वती आहिस्ते आहिस्ते उठ बैठी। हैमन्ती को जगाने के लिए उसने एक बार फिर हाथ बढ़ाया, पर अचानक उसके अंग अंग में सिहरन दौड़ गयी। और सहसा उसे याद आया—कल—कल तीसरे पहर वह झूठ बोली थी। आखिर वो झूठ क्यूं बोली थी।

कुछेक क्षण वह चुपचाप बैठी रही। हैमन्ती की ओर बढ़ा हाथ उसने खींच लिया। और फिर पालथी लगा कर उसने दोनों हाथ गोद में रखे और आंखें बंद किये बैठी रही। बात सच नहीं थी। और आश्चर्य तो यह है कि वह जानबूझ कर झूठ नहीं बोली थी। कल तीसरे पहर यदि आखिर सहसा पागलपन पर नहीं उतरता तो

उसे ललित का चेहरा ही याद न आता। याद आने पर भी वह धीरे-धीरे भूल जाती कि उसने ललित को कैसा देखा था। लेकिन आदित्य ने भूलने न दिया। घुमा फिरा कर वह एक ही सवाल करता कि ललित उसे कैसा लगा? और उस समय सहसा शाश्वती को खयाल आया कि ललित उसे साधु-सता जैसा सौम्य और सुंदर लगा था। आश्चर्य है, अगर आदित्य जिद न करता, तो वह ऐसा सोच भी नहीं सकती थी। और जिस समय उसे इस सच्चाई का पता चला, ठीक उसी समय आदित्य को छूकर उसने कहा कि ललित उसे सुंदर नहीं लगा।

झूठ, सरासर झूठ। हां, वह झूठ बोली थी। उसने आदित्य को छूकर झूठी सौगंध ली थी।

पहले किसी के स्पर्श मात्र से शाश्वती का अंग अंग घिनघिना उठता, अब वैसा नहीं होता है। घिनघिनाता तो है, पर पहले जैसा नहीं। आदित्य से मेल-जोल बढ़ने के बाद उसकी स्पर्शकातरता बहुत कम गयी थी। कमती जा रही है। इन दिनों शाश्वती महसूस करने लगी थी कि अब उसे अपना शरीर दे देना होगा। लेकिन कल शाम को आदित्य जब उसे यादवपुर की बस पर चढ़ा गया, बस की भीड़ में उसका शरीर बुरी तरह कांपने लगा था। उसके तन बदन में ठंडी लहर दौड़ने लगी थी। उसे महसूस हो रहा था कि उसके रोम रोम में बिजली दौड़ रही है। वह क्या जाने, वह क्या कर फिर स्पर्शकातर बनने लगी! उसकी आंखें डबडबा आयी थीं। बस से उतरने के बाद भी उसे महसूस होता था कि उसकी छाती पर बर्फ की भारी भरकम चट्टान पड़ी है। घर वापस आकर वह किताबों में डूब जाना चाहती थी, पर विफल रही। हाजरा घराने की शिवानी के साथ वह गप्पें मारती रही फिर भी सामान्य न हो सकी। रात में वह कुछ खा न सकी, हालांकि रोहु मछली बनी थी। रोहु उसे बेहद पसंद है। सोते वक्त तकिया पर उंगली से देवी देवताओं के नाम लिख कर वह सोती है, लेकिन रात में न जाने क्या हुआ, नाम लिखना भूल गयी बेचारी।

क्या इसी कारण वह सपना देखती रही? बार बार एक ही सपना कोई देखता है क्या?

नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है। देवी देवताओं के नाम लिख कर भी शाश्वती ने कई बार डरावने सपने देखे हैं। और फिर आज के सपने को डरावना सपना तो नहीं कहा जा सकता। पगडंडी के रास्ते लालटेन लिए एक आदमी जा रहा है। सिर्फ उसके दो पांव नजर आ रहे हैं। वह कौन है? कहां जा रहा है?—कुछ समझ में नहीं आता। शाश्वती ने कभी गांव नहीं देखा फिर क्या कर सपने में उसने पगडंडी देखी, खेत खलिहान देखा? सपना भयानक नहीं, बल्कि रहस्यमय कहा जा सकता है।

अगर बार-बार नहीं देखती, तो वह भूल भी जाती। आखिर उसने बार-बार एक ही सपना क्यों देखा?

शाश्वती पत्थर बनी बैठी रही। प्यास से तालू सूख रहा है। आँखें जल रही हैं। पेट गड़गड़ कर रहा है। रात का खाना नहीं पचा। लेकिन शारीरिक अनुभूतियाँ प्रखर थीं। उसे अच्छी तरह याद है कि कल आदित्य को छूकर वह झूठ बोली थी—एक भयंकर झूठ। और सारी रात सपने में वह किसी अनजान आदमी के सिर्फ दो पाँव देखती रही है। लेकिन दोनों के बीच क्या संबंध है—यह अब तक समझ न सकी। उसे बार-बार एक ही ख्याल आता है कि उसके मन की गहराई में कहीं न-कहीं उसका झूठ बोलना और सपने में सिर्फ दो पाँव देखना किसी रहस्यमय सूत्र से बंधा है।

अभी तक पौ नहीं फटी थी। कमरे में हल्का धुंधला अंधेरा था, हल्का धुंधला उजाला था। बाहर बीच बीच में भोर का कौआ काँव-काँव कर उठता था। चिड़ियों ने अब तक घोंसला नहीं छोड़ा था। स्मृतियों में खोयी थी शाश्वती। दुनिया भर की चिंता उसके दिल-दिमाग में उथल पुथल मचा रही थी। और सपना तो खैर था ही। झंझट में परेशान थी बेचारी।

रात के आखिरी पहर की नींद शाश्वती को बेहद प्यारी थी। लेकिन वह सो न सकी। चुपचाप बैठी रही। बड़ी देर तक बैठी रही। बगल वाले कमरे के दरवाजे की सिटकिनी खुलने की आवाज सुन शाश्वती फुसफुसायी, 'माँ।'

इतनी सुबह वह कभी नहीं उठती। आज उठ कर बाहर आयी। शरद की सुबह देख कर मुग्ध हो गयी। भीनी भीनी धूप। हल्की-फुल्की सरदी। ओस में नहाया बगीचा। हरे-भरे इतराते पेड़। रास्ते के उस पार धूप में डूबे घर द्वार। काँव-काँव कर कौआ का उड़ना।—यह सब शाश्वती को बहुत अच्छा लगा।

आँगन के एक कोने में माँ चूल्हे से राख निकाल रही थी। माँ के बाद हेमन्ती जगती है। शाश्वती को बिना देखे माँ ने समझा, हेमन्ती होगी। बोली, 'हेम, जरा देख आ, ठकु ने चादर ओढ़ी है तो? अब सरदी पड़ने लगी है।'

शाश्वती मुस्करायी। आँगन में उतरी और मिट्टी की ठंडक उसके अंग-अंग में दौड़ गयी। माँ की बगल से उसने चूल्हे की राख उठायी और उंगली से दाँत मांजते मांजते बगीचे के करीब जा खड़ी हुई और मुग्ध आँखों से पेड़-पौधे देखती रही।

अचानक माँ बोल उठी, 'ठकु तुम!'

गर्दन घुमा कर शाश्वती मुस्करायी।

'इतनी सुबह! पेट तो गरम नहीं? रात में सोयी हो न?'

'बस, यूँ ही उठ गयी।'

और फिर मा बेटी म कोइ बात नहीं हुइ। मा फते तोड़ती रही और बेटी दांत मजती हुइ टहलती रही। बरामदे पर छोटा-सा टीन का एक कमरा है। कालीनाथ इधर कमरे म रहता है। शाश्वती ने झरोखे से देखा। कुछ भी दिखाइ नहीं पड़ता। सिर्फ मसहरी दीख रही है। आज दफ्तर में कालीनाथ से आदित्य की मुलाकात होगी। आदित्य कालीनाथ से कुछ कहेगा क्या? यू तो कहने सुनने जैसी कोइ बात हुइ नहीं। आदित्य का क्या ठिकाना? हो सकता है लखिन से मिलने की बात ही कह सुनाये। उसके पट बात नहीं पचती। सबसे सब कुछ कह देता है।

शाश्वती बड़ी देर से दांत मज रही थी। न जाने किस दुनिया म खोयी थी वह। मां बरामदे पर झाड़ू लगा रही थी। झाड़ू फेंक कर बोली, 'अब कब तक दांत मजोगी?'

अब शाश्वती को खयाल आया कि वह बड़ी देर से दात मज रही है। उसके घर के पिछवाड़े म पोखर है। पिछली बारिश म पोखरे के पास कच्चू का घना जगल लग गया है। शाश्वती के शरीर से कच्चू का एक पत्ता छू गया और ओस की एक बूद उसके हाथ पर टप से ढुलक पड़ी। उसका अग-अग सिहर उठा। पिछले जन्म म तू साही थी सती।'—सती अपने आप से बोली और मुस्करायी।

पिछवाड़े म तालाब तक उसके घर की सीमा है। उन्नीस सौ अड़तालिस की शुरुआत म उसके पिता ने यह जमीन अपने दखल म ली थी। उन दिनों सभी त पिता पक्के गृहस्थ थ। जमीन पर नजर पड़ते ही वह बता सकते थे कि कौन-सी जमीन सरस है और कौन सी नीरस। रिफ्यूजी कालोनी म जमीन की छीना-झपटी चल रही थी। कौन कहां बसेगा? शाश्वती के पिता ने सबसे अच्छा टुकड़ा हथियाया था। सात-आठ कट्ठा का टुकड़ा। घर के सामने और पीछे रास्ता। सामने बगीचा, पिछवाड़े म तालाब। छह नारियल गाछ। जब इस घर का जन्म हो रहा था, उसी समय शाश्वती का जन्म हुआ। कच्चूवन म गोहाल जैसे सौरी घर म पैदा हुई थी शाश्वती। जन्म के आठ नौ साल बाद भी उसने अपना जन्म स्थान देखा था। तब तक सौरी घर सचमुच म गोहाल बन चुका था। शाश्वती के जन्म के दस साल बाद बाच्चू पैदा हुआ था। उसके लिए सौरी घर नहीं बना था। दक्खिने कमरे में पैदा हुआ था। कारण, तब तक अम्मा मर चुकी थीं। वह जिंदा होतीं, तो बाच्चू के लिए भी सौरी घर की व्यवस्था करनी पड़ती। उनका चाल-विचार उनके साथ चला गया। अब बहुत कुछ बदल गया है। गोहाल का नामोनिशान नहीं है। गाय कब की मर चुकी है।

पोखरे म मुह-हाथ धोकर शाश्वती उठ खड़ी हुइ। अपने दक्खिन और ने घाट का रास्ता देखा। नहीं, सपने वाले रास्ते से कहीं घाट देख नहीं। इसी का

मिलीं और उसे महसूस हुआ कि बापू उसे ही देख रहे हैं। यूं तो बापू की आंखों में कुछ नहीं था, फिर भी उसे लगा कि बापू ने उसकी याद बहुत बात पढ़ ली है।

आंगन से शाश्वती बरामदे पर आयी। बान्चू हाथ में हलुआ लिए कमरे से निकल रहा था। दोनों आमने सामने हुए। उसने मुंह बिचका कर शाश्वती को चिढ़ाया और दौड़ कर बापू के पास चला गया। बरामदे पर खड़ी शाश्वती ने देखा, बगीचे के अहाते का गेट खोल कर पहले बान्चू और फिर बापू दलाने में शामिल हुए। गेट बन्द करने की खातिर बापू मुड़े और शाश्वती को महसूस हुआ कि बापू की आंखें उस पर आ जमीं हैं। शांत आंखों में शायद बाल सूर्य की किरणें चमक रही थीं। लेकिन शाश्वती को ऐसा प्रतीत हुआ कि बापू की आंखें उसे देख कर मुस्करा रही हैं। 'मनुष्य की दुर्बलता मैं जानता हूं।'—शाश्वती का हृदय कांप उठा। उसने मुंह मोड़ लिया।

'बापू क्या मनमुटाव में कुछ जानते हैं? या सब झूठ है, पागलपन है। फिर भी उसे इच्छा होती है कि रात के सपने के बारे में पूछे, आन्दिय या ललित के बारे में पूछे, या अपने बारे में ही कुछ पूछे। लेकिन कुछ पूछने का साहस नहीं कर पाती। न जाने क्यों डर लगता है उसे।

नौकरानी अब तक नहीं आयी। नौकरानी के आने की आशा छोड़कर मां और हैमन्ती जूठे बर्तन लेकर घाट की ओर चल पड़ीं। शाश्वती पढ़ने बैठी थी। नहीं, वह पढ़ नहीं रही थी, टेबिल पर खुली किताब रख कर वह झरोखे से बाहर देख रही थी। क्या देख रही थी, वह खुद नहीं जानती। मां और हैमन्ती को घाट की ओर जाते देख वह उठ खड़ी हुई। मां के हाथों से जूठे बर्तन लेकर बोली, 'तुम चौके में जाओ। यह सब हम दोनों कर लेंगी।'

शाश्वती पढ़ती है, इसलिए मां उसे घर के काम में नहीं फंसाती। हैमन्ती पढ़ने लिखने में अच्छी नहीं थी। स्कूल फाइनल के बाद वह आगे नहीं बढ़ी। उसकी बुद्धि थोड़ी मोटी भी है। घर के काम में वह मां का हाथ बंटाती है। लेकिन आज वह अन्यमनस्क और किसी काम में व्यस्त रहना चाहती थी।

घाट पर बर्तन मजते-मजते अचानक वह हैमन्ती से पूछ बैठी, 'तुम सपने देखती हो?'

'हां। कभी-कभार देखती हूं।'

'कैसा सपना?'

'बहुत किस्म का।'

'भूत का सपना?'

'नहीं। मैं ज्यादा सांप के सपने देखती

होंठ बिचका कर शाश्वती बोली, 'दुर, ! सांप का सपना देखने से तो बच्चा होता है। तुझे क्या होगा ?'

क्षण भर कुछ सोच कर हैमन्ती बोली, 'क्या पता ?'

'कल रात मैंने एक भयंकर सपना देखा है।'

'क्या ?'

'एक आदमी हाथ में लालटेन लिए कहीं जा रहा है।'—इतना कह शाश्वती ने महसूस किया कि सपना उसके लिए जितना भयप्रद है, उतना दूसरों के लिए नहीं। इसलिए वह और कुछ नहीं बोली।

शाश्वती चुपचाप बर्त्तन मजने लगी। कुछेक क्षण बाद हैमती ने चुप्पी तोड़ी, 'कल तुम दोनों कहां गये थे ?'

शाश्वती हैमती को आदित्य की हर बात बताती है। आदित्य के साथ कहां गयी थी, किस रेस्तरां में क्या खाया था, किस हाल में कौन सी पिक्चर देखने गयी थी, वगैरह, वगैरह। हैमती खूब ध्यान से उसकी बात सुना करती है। उसे बोलने को उत्साहित करती है। बड़ी भोली है हैमती। कभी-कभार शाश्वती को लगता है कि हैमती उसकी दीदी नहीं, बल्कि छोटी बहन है। भोली-भाली, बुद्धू हैमती।

शाश्वती हंस कर बोली, 'उसका एक दोस्त बीमार है। उसे देखने गयी थी।'

'कालेज से भाग कर।'

'हूं!'

'क्या हुआ है ?'

'कैंसर।'

'मौसा जैसा ?'

'नहीं। मौसा को श्वासनली में हुआ था। इसे पेट में हुआ है।'

'बचेगा ?'

शाश्वती ने होंठ बिचकाया, 'भगवान जाने।'

'कैसा था ?'

'चेहरे-मोहरे से तो बीमार ही नजर नहीं आता।'

'तब बच जायेगा।'—आत्मविश्वास के साथ बोली हैमती।

शाश्वती हंसी फिर बोली, बड़ा चालाक आदमी है। मैंने मौसा की बात बता कर ढाढ़स बंधाना चाहा। कहा कि आप अच्छे हो जायेंगे। सब कुछ सुन कर वह क्या बोला, जानती हो ?'

हैमती की आंखों में जिज्ञासा उभर आयी।

थाड़ा घुमा फिरा कर गभीर स्वर म बोला, 'आप दोनों भटपट शादी की तैयारी कीजिये, ताकि मैं देख सकूँ ।'

'बेचारा !'—हैमती बोली, 'बड़ा दु ख होता है । क्या उम्र होगी ?

'कोई खास नहीं । तीस बत्तीस का होगा ।'

'यानी आदित्य का हमउम्र होगा '

'बस, यही समझो ।'

कुछेक क्षण हैमती चुप रही । उसके बाद मधुर मुस्कान में बोली, 'आदित्य विवाह की बात नहीं करता ?'

शाश्वती कहीं खोयी थी । हैमती की बात सुन कर चौंक पड़ी और फिर हस कर बोली, 'करता है । जब झोंक आता है, तब कहता है, चलो रजिस्ट्री कर लें । और कभी-कभार शादी की बात एकदम भूल जाता है ।'

'रजिस्ट्री करागी ?'

'हु ।'

'क्यों ?'

क्षण भर सोच कर शाश्वती बोली, 'उसके साथ हमारी जाति नहीं मिलती । सामाजिक रूप से शादी होने पर हमारे खानदान की बदनामी होगी ।'

बोलते-बोलते सहसा शाश्वती सिहर उठी । कल तीसरे पहर आदित्य ने जाति की बात उठायी थी । हालांकि वह एक भिन्न प्रकार के जाति भेद की चर्चा कर रहा था । आदित्य ने उसे समझाने की कोशिश की थी पर बेचारी समझ नहीं सकी थी । लेकिन अभी-अभी हैमती के साथ बात करते-करते उसे लगा कि यह बात तो वह बहुत पहले से जानती है कि आदित्य के साथ उसकी जात नहीं मिलती ।

हैमती बोली, 'भैया तो सामाजिक तौर-तरीके से ही मेरी शादी उससे करना चाहते थ तब तुम दोनों रजिस्ट्री क्यों कराग ?'

'क्या फर्क पड़ता है ?'

हैमती उदास स्वर म बोली, 'दीदी की शादी म कुछ नहीं हुआ । तुम भी रजिस्ट्री की बात करती हो । शहनाई नहीं बजी । घर में चहल-पहल न हुई । मडप नहीं बना । धुत्, यह भी कोई शादी हुई । सोचना भी अच्छा नहीं लगता ।

शाश्वती हसी, 'मुझे लगता है यह भात * भी नहीं होगा ।'

'क्यों, आदित्य के मां-बाप राजी नहीं होंगे ?'

शाश्वती ने होठ बिचकाया, 'क्या पता !'

---

* विवाह के बाद वर-पक्ष द्वारा किया गया प्रीतिभोज जिसमें नववधू भी परोसती है ।

हेमती एक लंबी सांस लेकर बोली, 'मर्दों की जात कैसी होती है ? बताओ तो।'

शाश्वती कुछेक क्षण के लिए एकटक हेमती को देखती रही फिर कुछेक क्षण अन्यमनस्क रही। आश्चर्य है, यही प्रश्न उसके मस्तिष्क में भी उथल-पुथल मचा रही है। मर्दों की जात कैसी होती है ?

तालाब के उस पार हाजरा बाबू का मकान है। घाट से शिवानी ने आवाज दी, 'सती !'

शाश्वती मुंह उठा कर हंसी, 'क्या है ?'

'बर्तन मांज रही हो। नौकरानी नहीं आयी है क्या ?'

'नहीं।'

'कालेज जा रही हो ?'

'क्यों ?'

'मेहमान आये हैं। आज मैटिनी शो देखने जाऊंगी।'

'कौन-सी पिक्चर ?'

'क्या नाम है... क्या नाम...' बोल कर वह हंसी, 'याद नहीं आता। बड़ा गड़बड़ नाम है। हिन्दी फिल्म है। देवानंद और वहीदा। चलोगी ? टिकट है।'

'तुम देख आओ।'

शिवानी हंसी, 'पता था, तुम नहीं जाओगी। कालेज के बाद कहां जाओगी ?'

'कहीं नहीं।'

'झूठी !' शिवानी हंस कर बोली, 'सब जानती हूं।'

शिवानी घाट से उठ कर चली गयी। हेमती फुसफुसा कर शिवानी की निंदा कर रही थी, बड़ी बेहया है। लाज-शरम धोकर पी गयी है। दिन-रात घूमना और घूमना। शाश्वती ने ध्यान नहीं दिया। सिर्फ एक बार अचानक खीज कर बोली, दूसरों का बुरा-भला कह कर लाभ ? हम कौन अच्छा करता है ?

हेमती चुप हो गयी।

शाश्वती को अचानक याद आया कि अब तक आदित्य उसके परिवार के बारे में नहीं जानता है। लीलावती के बारे में उससे किसी ने कुछ नहीं कहा है। पता चलने पर आदित्य क्या करेगा ? शाश्वती की समझ में कुछ नहीं आया। हो सकता है लीलावती की घटना सुनते ही वह कहकहों में फूट पड़े। यह भी हो सकता है कि वह गंभीर होकर बोले, 'अब तक बताया क्यों नहीं ?' आदित्य दोनों में से कुछ भी कर सकता है। उसके बारे में निश्चित रूप से कुछ कहना मुश्किल है। अभी-अभी शाश्वती जानती है कि लीलावती के बारे में सुनते ही उसे आदित्य का सब कुछ बता देना

चाहिए था। और किसी से सुनने के पहले वह खुद बता देती, तो अच्छा होता। अब तक क्यों नहीं बताया उसने?

सारी सुबह हैमती और मा के साथ घर के काम करती रही शाश्वती। बिस्तर झाड़ना, घर पोछना, पूजा के लिए पोखर से जल लाना—सब कुछ। थोड़ी देर किताब लेकर भी बैठी पर पढ़ने म मन न लगा।

मर्दों की जात कैसी होती है?

कालीनाथ नींद से उठ कर बरामदे पर बैठा चाय पी रहा है। उसके सामने चटाई बिछा कर पढ़ने बैठा है बाच्चू। हैमती रसोइ घर मे है। पूजा घर म मा पूजा कर रही है। बापू बगीचे मे अकेले हैं।

पढ़ने की टेबिल छोडकर शाश्वती आगन मे आयी। कुछेक क्षण यू ही इधर उधर मडराती रही और फिर आहिस्ते से बगीचे का फाटक खोल कर अन्दर दाखिल हुइ।

हरे-भरे पेड़ पौधों के बीच उसने स्वय का एक भिन्न जगत में महसूस किया। शात, शीतल और निस्तब्ध। चलने फिरने म पेड़ पौधा की छुअन शाश्वती के अग-अग म एक विचित्र प्रकार की तरग पैदा करती है। बार-बार सिहर उठती है बेचारी। यहां न अंधेरा है, न उजाला। शाश्वती ने अपनी मनोदशा पर विचार कर देखा। अजीब बात है वह न अंधेरे म है, न उजाले म। न जाने क्या क्या सोचती है शाश्वती! एक-एक कदम आगे बढ़ती है शाश्वती। बापू कहां हैं? बहुत बडा बगीचा है। एक जगह बाच्चू ने छोटे-छोटे पत्थरों से नकली पहाड़ बनाया है। पहाड के नीचे से एक टेढ़ा-मेढ़ा रास्ता। सुरिया से भरा रास्ता। एक जगह छोटा-सा चबूतरा बना है। चबूतरे पर पिचबोर्ड का बना एक ट्राफिक पुलिस। शाश्वती मन ही मन हसी। यह सब बाच्चू की करतूत है। ट्राफिक पुलिस की छाती पर कागज का एक टुकड़ा चिपका है। *लिखा है, बापू इधर हैं।* शाश्वती ने देखा, ट्राफिक पुलिस का दायां हाथ जिधर इशारा कर रहा है, बापू उधर ही हैं। गुलाब की टहनी काट कर बापू उसकी कुन्नी पर गोबर लगा रहे हैं। एक बार ट्राफिक पुलिस पर नजर डाल कर शाश्वती फिर हसी। यह बाच्चू की बुद्धि का कमाल है। बापू जिधर रहते हैं उधर ही ट्राफिक पुलिस को घुमा दिया जाता है। यह भी हो सकता है कि बापू ही घुमा देते हों, ताकि बाच्चू उन्हें सहज ही ढूंढ ले।

तीन-चार महीनों से शाश्वती बगीचे में नहीं आयी। पिछली बारिश म बड़े-बड़े झाड़ हो गये हैं। बापू के करीब नहीं जाकर वह कुछेक क्षण इधर-उधर घूमती रही। उसने बाद धीरे-धीरे बापू के पास जा खड़ी हुइ। बापू से बात किये अरसा बीत गया। कुछ बोलते बड़ा सकोच हो रहा था उसे।

सहसा शाश्वती धप से जमीन पर बैठ गई। बोली, 'बापू, अभी कोई गुलाब लगाता है? गुलाब तो वर्षा में लगाना चाहिए न?'

बापू ने गर्दन घुमा कर शांत आंखों से एक बार उसे देखा और फिर आंखें फिरा लीं।

शाश्वती की छाती जोरों से धड़कने लगी। बापू कहीं जान तो नहीं गये कि वह कुछ कहने से पहले भूमिका बांध रही है?

बड़ी देर बाद अचानक बापू ने उसके प्रश्न का उत्तर दिया, 'लगाया जाता है। हां, पानी ज्यादा देना पड़ता है।'

शाश्वती को थोड़ा भरोसा मिला। बोली, 'कितने जंगली झाड़ हो गये हैं, साफ क्यों नहीं करते?

बापू चुपचाप काम करते रहे।

शाश्वती चुपचाप पेड़-पौधों पर दृष्टि दौड़ाती रही। जामरूल के पेड़ पर मधुमक्खियों का छत्ता। मधुमक्खियां उड़ रही हैं। तितलियां उड़ रही हैं। कीड़े-मकोड़ों की आवाज हवा में तैर रही है। झींगुर बोल रहे हैं। बगीचे में शांत, सुंदर, शीतल छाया पसरी है। बाच्चू का ट्राफिक पुलिस उसकी ओर उंगली से इशारा कर रहा है।

सहसा शांत स्वर में शाश्वती बोल उठी, 'मेरा क्या होगा बापू? मेरा भविष्य क्या है?'

बापू ने सिर्फ एक नजर उस पर डाली और आंखें फेर लीं। शाश्वती का मन कांप उठा। डर गयी बेचारी।

'कल रात मैं ने एक अद्भुत सपना देखा है।'—शाश्वती बोली।

बापू ने कुछ नहीं पूछा।

फिर भी शाश्वती बोली, 'हाथ में लालटेन लिए एक आदमी कच्चे रास्ते से जा रहा है। चेहरा तो नहीं देखा, अगर देखती तो शायद पहचान भी लेती।'—शाश्वती क्षण भर रुकी फिर बोली, 'वह कौन हो सकता है?'

बापू चुप रहे। खुरपी से हाथ का गोबर साफ कर उन्होंने हाथ में मिट्टी लगायी और फिर घास पर हाथ पोंछने लगे।

शाश्वती कुछेक क्षण पिता की ओर देखती रही। उसे पूछने की इच्छा हुई, कल आदित्य ने मुझ पर गलती तो नहीं किया—? मुझे ललित सुन्दर क्यों लगा? मैं कल झूठ क्यों बोली?

लेकिन यह सब पूछते उसे लाज लगी। बापू अब पहले जैसे बापू नहीं हैं। पूछने को वह पूछ सकती है पर पूछ न सकी। चुपचाप बैठी रही। मन-ही मन बोली, 'बापू कुछ नहीं जानते। वह तो पागल हैं। और फिर मुस्करा कर उठ खड़ी हुई।

शाश्वती वापस आ रही थी कि अचानक पिता की आवाज सुन कर रुक गयी। पिता ने उसे सावधान किया, 'सभल कर रहो, वरना गिर जाओगी।'

वह चौंक कर पलट गयी। बापू गुलाब की टहनी के सामने सिर झुकाए बैठे हैं। नहीं, शाश्वती से नहीं, वह शायद गुलाब की टहनी से कह रहे हैं। शाश्वता ने देखा, सिर पर गोबर का भार लिए गुलाब की टहनी झुक गयी है। हां, वह गुलाब की टहनी से ही कह रहे हैं।

शाश्वती पलट कर चल पड़ी। फाटक खोल कर बाहर निकलते वक्त यू ही उसके मन ने कहा, बापू ने यह बात सिर्फ गुलाब की टहनी से नहीं कही है।

नहाने जाते वक्त सिर पर तेल लगाते-लगाते हैमती से बोली शाश्वती, 'सिनेमा देखोगी ? कालेज जाने की इच्छा नहीं हो रही है। चलोगी तो बोलो। भैया से रुपया मांगना होगा।

हैमती हसी, 'मेरा साथ तुम्हें अच्छा लगेगा, लगे तो चलो।'

शाश्वती नहा कर आयी और फिर कुछ सोच कर उसने अपना विचार बदल दिया। आज आदित्य कालेज आ सकता है। आज एक बार दोनों का मिलना जरूरी है। कालीनाथ को बाहर जाते देख कर भी शाश्वती चुप रही।

'क्या हुआ ! भैया तो चले गये।' हैमती बोली।

'आज कालेज जाती हू। सिनेमा और कभी।'

कालेज जाते वक्त चलती बस से शाश्वती ने एक पोस्टर देखा। देवानन्द का सुदर चेहरा मुस्करा रहा है। शिवानी वगैरह आज सिनेमा जा रहे हैं। चलती बस से पिक्चर का नाम शाश्वती न पढ सकी। सिनेमा न जाने की वजह से हैमती का मन टूट गया होगा। लेकिन कालेज जाना जरूरी है। आज कालेज म कुछ न-कुछ होगा। हां, उसका मन बोलता है।

## तेरह

*

लेकिन उस दिन कालेज में कुछ भी नहीं हुआ।

शाश्वती ने लगातार तीन पीरियड किये। वह सिर्फ क्लास मे बैठी रही, पर उसका मन कहीं और भटकता रहा। उसने अपनी कापी मे दो चार लाइन नोट की और अपरकचरे हाथ से तस्वीर बनाती रही। पुरुष के चेहरे की तस्वीर। ढेर सारी तस्वीर उसने बनायी लेकिन एक भी चेहरा सुन्दर नहीं बना।

घंटी बजी। छात्राएं क्लास से बाहर निकल गयीं। शाश्वती सबसे पीछे उठी और आहिस्ते आहिस्ते क्लास रूम से बरामदे पर आयी। अब क्या किया जाय? दो पीरियड लगातार आफ। कुछेक क्षण अयमनस्क-सी चुप खड़ी रही और फिर धीरे धीरे चल पड़ी। कामन रूम म दाखिल हो ही रही थी कि खिलखिलाती-खिलखिलाती राका मिली। राका हमेशा कपड़ों की बहार लिए चलती है। सात दिन म सात किस्म की साड़ी पहन कर आती है। लड़कियां उसे वार्डरोब कह कर चिढ़ाती हैं। अमीर बाप की बेटी है राका। कालेज गाड़ी से आती जाती है। वह बेधड़क गन्दी-गदी बातें करती है। ठीक मरदों की तरह।

उसके दोनों हाथ पकड़ कर राका बोल उठी, 'क्यों मुंहलटको, तेरा आफ है क्या?

शाश्वती मृदु मुस्कान म बाली, 'इसके बाद भी आफ है।'

'अरे वाह!'—राका उछल पड़ी, तब तो मेरी जान चल मेरे साथ। तुझे अपनी हवागाड़ी पर सैर कराऊंगी। भैया गाड़ी ले आये हैं। बस, रेडियो स्टेशन जाना है। आज मेरा आडिशन है न। बड़ा डर लगता है यार। देख, देख न छाती किस तरह धड़ धड़ धड़ कर रही है।—बोलते-बोलते शाश्वती का एक हाथ खींच कर उसने अपनी छाती पर दबा रखा और फिर आंखें गोल-गाल बना कर बाली, 'क्यों दौड़ रही है न राजधानी एक्सप्रेस?

कुछ न समझ सकी शाश्वती। सिर्फ हाथ खींच कर बोली, 'मुझे कुछ अच्छा नहीं लग रहा। तुम जाओ।'

चेहरे पर बनावटी उदासी लाकर राका बोली, 'कोई भी जाना नहीं चाहती। सब साली मुझे इग्नोर करती है। डर से मेरी जान जा रही है और सालियों को अपने अपने मूड की पड़ी है। दोस्त बनती हैं सब! पहले दोस्त के साथ जीना सीखो, दोस्त के साथ मरना सीखो, तब तो दोस्त। औरत की दोस्ती पर कभी यकीन नहीं करना चाहिए। औरत कभी दोस्त हो ही नहीं सकती। मेरी जान जा रही है और देवी जी को अपना मूड प्यारा है। लानत दे ऐसे मूड पर। मेरी जान बचा रानी'

शाश्वती जानती है। राका को थोड़ा थोड़ा पहचानती है। वह जानती है कि राका म डर नाम की कोई चीज नहीं। हां, कभी कभार डरने का अभिनय जरूर करती है। अजीब लड़की है राका। तीन-चार बार आकाशवाणी म आडिशन दे आयी है पर अब तक उसे गाने का मौका नहीं मिला। अगर मिलता तो वह सर्वाधिक लोकप्रिय गायिका होती। अच्छी अच्छी गायिकाओं की छुट्टी हो जाती। मुसीबत यह है कि वह दो दिन म ही सब कुछ बनना चाहती है। सब कुछ झोंक में करती है राका। खयाल का एक झोंका आया और वह सितार सीखने लगी। सितार से जी उचटा तो सरोद लेकर बैठ गयी। पद्रह-बीस दिन नृत्य विद्यालय भी गयी थी। उन दिनों सारे ससार म अपने नृत्य की धूम मचाने का खयाल बुलन्दी पर था। पूरा एक साल आर्ट कालेज में बर्बाद कर आयी है। कभी-कभार ढेर सारी कविताए भी लिख मारती है राका। दरअसल धैर्य का बड़ा अभाव है राका म। कुछ दिनों तक किसी कला के पीछे दीवानी रही और फिर जस का तस। हसोड़। परले दरजे की बैठकबाज। मर्दों की तरह मुह से गदी गालियां निकालना। हसती है ठहाके मार कर। बोलती है तो बोलती ही रहती है। कोई भी कला उसे गभीर नहीं बना सकती। विलायती रग के कीमती ट्यूब अपनी तकदीर पर रोते हैं। सितार कहीं रखा है, तो सरोद कहीं पड़ा है। बड़ी चचल है राका।

अचानक राका खिलखिला कर हसी और बोली, 'अरे मेरे भैया को नहीं पहचानती! तुम्हे याद नहीं, एक दिन छुट्टी के बाद कालेज गेट पर भैया से परिचय करा दिया था न।' और उसके बाद चेहरे पर ढेर सारी मुस्कराती गभीरता लेप कर राका बोली, 'तू भी एक चीज है यार! पहली ही झलक मे भैया घायल हो गए। बेचारे भैया। नितब चूमती तेरी काली कजरी जुल्फों और इन कजरारी आंखों में न जाने क्या है कि भैया फिदा हो गए।' अचानक राका की मुस्कराती गभीरता खिलखिलाहट में बदल गयी, जानती हो भैया तेरे बारे म क्या पूछते हैं? भैया अक्सर

पूछते हैं, तेरे ये काले-कटे बाल और हिरनी जैसी आखें असली हैं या नकली ? आजकल की लड़कियां न क्या नकली आंखें बनाती हैं, नकली बाल लगाती ह।'

ऐसी बात नहीं कि शाश्वती यह सब नहीं जानती। बीच-बीच म राका ने ही अपने भैया के बारे म यह सब उसे कहा है। घुमा फिराकर उसने शाश्वती से अपने भैया की बात की है। अक्सर वह शाश्वती से अपने घर चलने कहती है। लेकिन शाश्वती टाल जाती है।

'चल न यार। जिंदगी म कुछ करना चाहती है तो जल्दी कर। मैं अन्दर आडिशन दूंगी और बाहर भैया और तुम एक दूसरे की प्रशसा के पुल बांधना। चल यार।' आखें इतराकर बोली राका।

कहीं न कहीं दुर्बलता रहती है। हां, रहती ता है ही। मनुष्य अपनी दुर्बलता का आभास पाता है, पर कुछ कर नहीं पाता। शायद दो महीने पहले की बात है। दिन और तारीख शाश्वती को याद नहीं। उस दिन छुट्टी के बाद कालेज से एक साथ निकल रही थी शाश्वती और राका। कालेज गेट के सामने एक हरे रग की हेराल्ड कार के बम्पर पर एक पांव रखे खड़ा है एक सुदर्शन युवक। सज्जन। शिष्ट। स्वस्थ-सुन्दर नौजवान। गोरा चिट्टा। चौड़े कंधे। उम्र करीब सताइस साल। अपनी खूबसूरती दिखाना जानते हैं जनाब। ग्रे रग का पैंट। चेक स्पोर्टस शर्ट। आंखों म हरे रग का धूप चश्मा। राका ने सहेलियों का बुलाकर अपने भैया से सबका परिचय कराया था। और फिर भाई बहन हेराल्ड के सामने वाली सीट पर बैठकर सबकी ओर एक मीठी मुस्कान फेंकते हुए बाय-बाय कर अदृश्य हो गए थे। राका और उसके भाइ का विदाई दृश्य आज भी शाश्वती की आखों मे उतर आता है। गाडी से हाथ लहरा कर विदा लेने म एक अद्भुत आभिजात्य का सौंदर्य था। शाश्वती ने वैसा सौंदर्य अपने घर कभी नहीं देखा। वह सौंदर्य आज भी उसके मन म कांटों की तरह चुभता है। कालेज की सहेलियों को दिखाने लायक गाड़ी शाश्वती के पास नहीं है और न है कोई उतना स्मार्ट भाइ। जितनी बार शाश्वती सोचती है कि राका से नहीं जलेगी न जाने क्यों उतनी ही बार वह अपने-आप से हार जाती है। बेचारी शाश्वती।

अभी अभी राका के मुह उसके भैया द्वारा की गयी अपनी प्रशसा सुन कर उसका मन चचल हो उठा। वह जानती है, भली-भाति जानती है कि यह और कुछ नहीं, सिर्फ दुर्बलता है—स्त्री सुलभ दुर्बलता। इसलिए न-न कर भी वह कालेज गेट से बाहर आ गयी। मन-ही-मन बहुत लजा रही थी बेचारी।

आज हेराल्ड की जगह सफेद रग की एम्बेसेडर मार्क-टू खड़ी थी। राका के घर कितनी गाड़िया हैं, किसे पता। आज राका का सुदर्शन भाई बाहर नहीं है।

बार-बार प्यास लगती है। वह इंतजार करते हैं और उनकी शिष्या हमलोगों के साथ हँसी मजाक में वक्त जाया करती है।

'बको मत !'—कह कर राका खिलखिलाहट में लोट-पोट हो गयी। बोली, 'आखिर प्यास लगती ही क्या है? माँ कसम, न जाने क्या गाते वक्त प्यास लगती है, सिर खुजलाता है, पाँव झुनझुनाते हैं! समझ में ही नहीं आता ऐसा क्या होता है? यकीन करो मैं ऐसा जान-बूझ कर नहीं करती, बस हो जाता है।'—कह कर राका फिर जोरों से हँस पड़ी।

गाड़ी मुख्य सड़क की ओर बढ़ी और शाश्वती ने देखा, फुटपाथ से आदित्य आ रहा है। रूखे सूखे बाल हवा में फरफरा रहे हैं। चेहरे की रौनक गायब है। दीवाना-सा दीख रहा है बेचारा। चमचमाती गाड़ी पर एक सुपुरुष के करीब बैठी शाश्वती को यह दृश्य बड़ा करुण लगा। सचमुच में आदित्य पर उसे बड़ी दया आयी। पहले तो वह चौंक पड़ी, फिर सँभल गई। लंबे लंबे डग भरता हुआ आदित्य उसके कालेज की ओर जा रहा है। वह कालेज में नहीं मिलेगी। कितना निराश होगा बेचारा! उसे क्या पता कि आज उसकी प्रेमिका एक अमीरजादे की गाड़ी पर रेडियो स्टेशन जा रही है। उसके शुद्ध-विशुद्ध हृदय में न जाने कैसा कैसा न होने लगा फिर भी वह बोल न सकी, उसे बोलने की इच्छा भी न हुई कि गाड़ी रोकिये। मेरा प्रियतम जा रहा है। मैं उसके पास जाऊँगी। एक सुन्दर युवक के पास गाड़ी पर बैठी शाश्वती क्यों कर एक जिराफ जैसे नौजवान को अपना प्रियतम कहेगी! वह कुछ न बोल सकी। उसकी लाज उसके कंठ में आ बैठी। बेचारी!

शाश्वती ने ठीक ही देखा था। सचमुच में आज बड़ा भद्दा दीख रहा था आदित्य। चलती गाड़ी से उसने सिर्फ एक झलक देखी थी। अगर ठीक से देखती तो देख पाती, एक ही दिन में आदित्य कितना बदल गया है। कंठ-नली बाहर निकल आयी है। आँखें धस गयी हैं। दाढ़ी बढ़ गयी है। नहाया तक नहीं है। कल रात उसने भात भी नहीं खाया है।

कल तीसरे पहर उसने शाश्वती के साथ बड़ा अद्भुत व्यवहार किया था और उसी समय से उसका मन-मिजाज बिगड़ा था। कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा था। बेचारा आदित्य!

साँझ ढलने पर जब वह घर आया था, पहला महल पार कर दूसरे महल की सीढ़ियाँ चढ़ कर दो मंजिले के बरामदे पर उसने डेढ़ सौ साल पुराना एक दृश्य देखा था। हाँ, पूँजीवादी व्यवस्था का एक सजीव दृश्य था वह। लंबे बरामदे पर भारी भरकम चिक झूल रही थी। पत्थर के फर्श पर एक छोटी-सी कालीन बिछी थी।

वह स्टियरिंग पकड़े बैठा है। आखों पर धूप का चश्मा और हाथों में दबी सिगरेट। अमरीकी टुरिस्ट-सा दीख रहा है राका का भाइ।

उसे देखते ही राका के भैया गाडी से उतरे और राका के होठ खुल भी न पाये थे कि दोनों हाथ जोड़ कर मुस्कराते हुए बोले, 'पहचान रही हैं न।'

शर्म से शाश्वती की आखें झुक गयीं। आहिस्ते से एक आर गर्दन झुकी। हा, वह पहचान रही है।

और इसी बीच राका खिलखिला उठी, 'पकड़ लायी हू भैया। देवी जी आना ही नहीं चाहती थीं। घसीट कर ले आयी। अकेले जाना मुझे अच्छा नहीं लगता। और भी एक बात है, अपनी तकदीर से तो कामयाबी कोसों दूर है, हो सकता है इसकी तकदीर से इस बार चुन ली जाऊ।

राका का भाइ बड़ा खुश हुआ। बोला, 'आइये, आइये। गाड़ी पर हम दोनों आपको घर तक पहुचा देंगे। 'आइये न।'

पता नहीं क्यों शाश्वती को लग रहा था कि उसका जाना ठीक नहीं। उसका मन कह रहा था, 'मत जाओ। मत जाओ।' लेकिन है बेचारी बड़ी कमजोर। न जाने क्यों कभी-कभी उसकी प्रतिरोध शक्ति उससे विदा ले जाती है। और उस समय सर्वथा असहाय बन जाती है बेचारी शाश्वती। जिसका जो जी चाहे करा ले। वह चुप रहेगी। मन कुछ कहेगा, वह कुछ करेगी। राका के भैया के प्रस्ताव पर मिनमिना कर उसने आपत्ति तो की, पर कैसी आपत्ति, क्या आपत्ति,—यह शायद खुद भी नहीं जानती। उसका समस्त प्रतिरोध फुसफुसाहट म डूब गया। राका की खिलखिलाहट और उसके भैया की भारी-भरकम हसी क बीच उसकी फुसफुसाहट हवा म उड़ गयी।

राका का भाइ एकदम छोकरा-सा दीखता है। आप कहते सकोच होता है।

सामने वाली सीट पर तीनों बैठे—शाश्वती, राका और राका के भैया। खिड़की के पास लाज की गठरी बनी शाश्वती, बीच में कल-कल करती राका और स्टियरिंग सभाले छोकरों जैसा राका का बड़ा भाई।

गले म आचल लपेट कर राका बोली, 'हवा नहीं लगानी है यार। उस बार गाते गाते बीच म ही गला फस गया था।

उसका भाइ हसा। चकमक सुदर दात। ऐसा लगता है कि सफेद सगमर्मर के बने हों।

हस कर वह बोला, 'तुम से कुछ नहीं होगा। तुम में धैर्य ता है ही नहीं। अपनी सहेली का तो आप जानती ही होंगी। घर पर गाना सिखाने के लिए उस्ताद आते हैं। मशहूर उस्ताद हैं। बेचारे को राका जैसी शिष्या मिली है। उनके आने पर इसे

बार-बार प्यास लगती है। वह इंतजार करते हैं और उनकी शिष्या हमलोगों के साथ हंसी मजाक में वक्त जाया करती है।

'बका मत!'—कह कर राका खिलखिलाहट में लोट-पोट हो गयी। बोली, 'आखिर प्यास लगती ही क्यों है? मां कसम, न जाने क्या गाते वक्त प्यास लगती है, सिर खुजलाता है, पांव भुनभुनाते हैं। समझ में ही नहीं आता ऐसा क्या होता है? यकीन करो मैं ऐसा जान-बूझ कर नहीं करती बस हो जाता है।'—कह कर राका फिर जोरों से हंस पड़ी।

गाड़ी मुख्य सड़क की ओर बढ़ी और शाश्वती ने देखा, फुटपाथ से आदित्य आ रहा है। रूखे सूखे बाल हवा में फरफरा रहे हैं। चेहरे की रौनक गायब है। दीवाना-सा दीख रहा है बेचारा। चकमकाती गाड़ी पर एक सुपुरुष के करीब बैठी शाश्वती को यह दृश्य बड़ा करुण लगा। सचमुच में आदित्य पर उसे बड़ी दया आयी। पहले तो वह चौंक पड़ी, फिर संभल गई। लम्बे लंबे डग भरता हुआ आदित्य उसके कालेज की ओर जा रहा है। वह कालेज में नहीं मिलेगी। कितना निराश होगा बेचारा! उसे क्या पता कि आज उसकी प्रेमिका एक अमीरजादे की गाड़ी पर रेडियो स्टेशन जा रही है। उसके शुद्ध विशुद्ध हृदय में न जाने कैसा-कैसा न होने लगा फिर भी वह बोल न सकी, उसे बुलाने की इच्छा भी न हुई कि गाड़ी रोकिये। मेरा प्रियतम जा रहा है। मैं उसके पास जाऊंगी। एक सुदर्शन युवक के पास गाड़ी पर बैठी शाश्वती क्यों कर एक जिराफ जैसे नौजवान को अपना प्रियतम कहेगी! वह कुछ न बोल सकी। उसकी लाज उसके कंठ में आ बैठी। बेचारी!

शाश्वती ने ठीक ही देखा था। सचमुच में आज बड़ा भद्दा दीख रहा था आदित्य। चलती गाड़ी से उसने सिर्फ एक झलक देखी थी। अगर ठीक से देखती तो देख पाती, एक ही दिन में आदित्य कितना बदल गया है। कंठ-नली बाहर निकल आयी है। आंखें धंस गयी हैं। दाढ़ी बढ़ गयी है। नहाया तक नहीं है। कल रात उसने भात भी नहीं खाया है।

कल तीसरे पहर उसने शाश्वती के साथ बड़ा अद्‌भुत व्यवहार किया था और उसी समय से उसका मन मिजाज बिगड़ा था। कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा था। बेचारा आदित्य!

सांझ ढलने पर जब वह घर आया था, पहला महल पार कर दूसरे महल की सीढ़ियां चढ़ कर दो मंजिले के बरामदे पर उसने डेढ़ सौ साल पुराना एक दृश्य देखा था। हां, पूंजीवादी व्यवस्था का एक सजीव दृश्य था वह। लम्बे बरामदे पर भारी भरकम चिक झूल रही थी। पत्थर के फर्श पर एक छोटी-सी कालीन बिछी थी।

फुफकार उठा था आदित्य। जहां-तहां फन मारने लगा था। क्रोध में वह अंधा हो गया था। वह क्या-क्या बोल गया था, अब उसे याद नहीं। वह शायद गुस्से में बोला था, 'आप क्यों नहीं पढ़े-लिखे? आपने क्यों मनुष्य को मनुष्य नहीं समझा? आप क्यों आत्म-सम्मान को तिलांजलि देकर ग्राहकों को बाबू कहा करते हैं? क्यों आपकी खातिर मैं अपने दोस्तों में उठ-बैठ नहीं सकता?'

आदित्य गुस्से में कुछ बोला नहीं था बल्कि उसने सिर्फ बकवास की थी। उसने जहर उगला था। विद्वेष और घृणा का जहर। उसे मन-ही मन थोड़ी शान्ति मिली थी।

उसके पिता उसे कुछेक क्षण अवाक होकर देखते रहे थे। उन्होंने रिकाबी में हाथ तक न लगाया था।

जोरों की चीख-पुकार सुन कर पड़ोसी दौड़े आये थे। आदित्य को मारने की खातिर पिता ने चप्पल उठायी थी। लंबे अरसे से वह अपने पढ़े-लिखे बेटे का सम्मान देते आये थे, पर कल रात उनकी सहन-शक्ति जवाब दे गयी। वह उग्र हो उठे थे। चप्पल हाथ में लिए वह दहाड़ उठे थे, 'तुम्हें बदजमी की बीमारी है। कुछ भी तुम्हें हजम नहीं हुआ। पढ़ना-लिखना भी बदहजम हुआ है। तुम रोगग्रस्त हो। निकल जाओ। दूर हो जाओ मेरी नजरों से। और कभी अपनी सूरत न दिखाना।'

कल की रात आदित्य ने खाली अस्तबल में काटी थी। मच्छरों के डंक, कीड़े-मकोड़ों के उत्पात और अपने अन्दर उबलते जहर के बीच वह सारी रात सो न सका था। वेतन तो दस तारीख तक खत्म हो जाता है। उसके बाद मां तीन-चार सौ रुपये देती है, तब उसका खर्च चलता है। कल रात उसकी जेब भी खाली थी। गड़ियाहाट में टैक्सी का किराया चुकाने के बाद सिर्फ दो-तीन रुपये जेब में पड़े थे। अगर जेब गरम होती, तो वह रात को ही निकल पड़ता। अभी भी वह खाली जेब कहीं जाने का साहस नहीं करता।

सुबह-सुबह मां अस्तबल में आयी और चोरी-चोरी पांच सौ रुपये देकर बोली, 'दो चार दिन के लिए कहीं चले जाओ। वह बहुत गुस्से हैं। दो-चार दिन में गुस्सा ठंडा हो जायगा, फिर आ जाना। उनसे छिप कर तेरा सूटकेस तैयार कर लायी हूं। अरे जाओगे कहां। निमतेवालय चले जाओ न। मझले मामा के घर रहना। मैं भी निश्चिन्त रहूंगी। जाओ, भगवान तुम्हारा कल्याण करें।'—अश्रुसिक्त आंखों से आंतरिक आशीर्वाद देकर ममता की साक्षात मूर्ति मां बेटे का सिर छूकर अन्दर चली गयी।

पांच सौ रुपये और सूटकेस लेकर आदित्य घर से निकल पड़ा। कालेज स्ट्रीट के एक मेस में उसका एक दोस्त रहता है। टास्त के पास सूटकेस रख कर वह दिन भर

झगड़ा—सबके लिए ललित ही तो जिम्मेवार है। कालेज जीवन में उसने आदित्य को साम्यवाद की शिक्षा क्यों दी थी? अगर वह उसके दिमाग में साम्यवाद न घुसाता, तो संस्कारवश वह अपने लोभी पिता के साथ कन्धा मिला कर चलता। ललित ने क्यों उसकी जिंदगी में राजनीति का जहर घोला था?

धीरे-धीरे अंधेरा उतर आया। गड़ियाहाट पीछे छूट गया। वह चलता रहा। उसके दिमाग में दुनिया भर की दुश्चिन्ता उथल-पुथल मचाती रही।

आखिरकार रात के करीब आठ बजे उसने हथियार डाल दिया। एसप्लेनेड की एक दुकान से उसने घर पर फोन किया।

पिता की भारी-भरकम आवाज सुनायी पड़ी 'हैलो।'

ादित्य—'

- की चुप्पी के बाद आवाज आयी, 'क्या चाहते हो?'

कर दीजिये।'—थकी-थकी आवाज में आदित्य बोला।

ा की आवाज बड़ी मुलायम सुनाई पड़ी, 'दिन भर कहां थे कल

िया। वह सिर्फ बोला, 'मैं कहीं नहीं जा सकता।

'— आराम करो। गलती सबसे होती है। इसम

हो कहां से फोन कर रहे हो गाड़ी भेज

झगड़ा—सबके लिए ललित ही तो जिम्मेवार है। कालेज जीवन मे उसने आदित्य को साम्यवाद की शिक्षा क्यो दी थी ? अगर वह उसके दिमाग मे साम्यवाद न घुसाता, तो सस्कारवश वह अपने लोभी पिता के साथ कदम मिला कर चलता। ललित ने क्या उसकी जिंदगी म राजनीति का जहर घोला था ?

धीरे-धीरे अंधेरा उतर आया। गड़ियाहाट पीछे छूट गया। वह चलता रहा। उसके दिमाग म दुनिया भर की दुश्चिन्ता उथल-पुथल मचाती रही।

आखिरकार रात के करीब आठ बजे उसने हथियार डाल दिया। एसप्लेनेड की एक दुकान से उसने घर पर फोन किया।

पिता की भारी-भरकम आवाज सुनायी पड़ी 'हैलो।'

'मैं आदित्य—'

क्षण भर की चुप्पी के बाद आवाज आयी, 'क्या चाहते हो ?'

'मुझे क्षमा कर दीजिये।'—थकी-थकी आवाज मे आदित्य बोला।

अचानक पिता की आवाज बड़ी मुलायम सुनाई पड़ी, 'दिन भर कहा थे ? कल रात कहा सोये थे ?'

आदित्य ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह सिर्फ बोला, 'मैं कहीं नहीं जा सकता। मुझे बुला लीजिये।'

'जल्दी चले आओ। खा-पीकर आराम करो। गलती सबसे होती है, इसम शर्माने की कोइ बात नहीं।' कहा हो कहा से फोन कर रहे हो गाड़ी भेज रहा हू।

'मैं आ रहा हू।'

टैक्सी पर आ जाओ। पैसे की चिंता मत करना। मैं गेट पर खडा रहूगा। तुम्हारे आने पर टैक्सी का किराया दे दूगा। जल्दी चले आओ।

बात खत्म हो गयी, फिर भी आदित्य रिसीवर पकड़े रहा। उधर पिता भी फोन पकड़े रहे। कुछेक क्षण दोनों ने एक-दूसरे के थके हुए श्वास-प्रश्वास की आवाज सुनी। उसके बाद आदित्य ने फोन रख दिया।

दुकान से निकल कर उसने टैक्सी पकड़ी।

आज शाश्वती ने नये किस्म का अपराह्न देखा।

राका की गाड़ी पर बैठने के बाद से ही वह मीठी मीठी उत्तेजना अनुभव कर रही थी। दोना को गाड़ी पर छोड़ कर जब राका रेडियो स्टेशन में दाखिल हुइ, उस समय शाश्वती का मन बड़ा उत्तेजित हो उठा।

कुछेक क्षण छुइमुइ शाश्वती लाज की गठरी बनी चुप बैठी रही। कुछेक क्षण राका के भैया चुपचाप एक आर देखते रहे।

घूमता रहा। कलकत्ता उसे और कभी मरुभूमि जैसा नहीं लगा था लेकिन आज लग रहा है। आज पहली बार वह अपने को बड़ा असहाय महसूस कर रहा है। अब वह बागबाजार के किलेनुमा आश्रय में लौट न सकेगा—अचेतन मन की इस चिंता ने उसे बहुत घबरा दिया है। बड़ा चिंतित हो उठा है वह। कहां जायगा? कहां कर रहेगा? वह क्या बिना नौकर-चाकर के रह सकेगा? कौन झाड़ू-बुहारू देगा, सोने से पहले कौन एक गिलास दूध दे जायगा? आज तक उसने कभी कुछ मांग कर नहीं खाया। सामने बैठ कर मां ने खिलाया है। मां उसे देख कर उसकी भूख-प्यास भाप लेती है। नयी जगह वह क्या कर मांग कर खायेगा? घर के नौकर-चाकर उसका गुस्सा बर्दाश्त करते हैं। वे उसे जानते हैं। बाहर कौन उसे बर्दाश्त करेगा? अपने आपका विश्लेषण कर वह बहुत चिंतित हो उठा था। रास्ते के गंदे मेस में वह एक कौर भात भी न खा सका था। तामचीन की थाली देख कर उसे उबकाई आयी थी।

आज वह आफिस भी नहीं गया। सिर्फ घूमता रहा है। घर तो वह जायेगा नहीं, लेकिन सिर छुपाने को एक छोटा-सा कमरा भी तो नहीं मिला। शायद अब कलकत्ता में कोई किराये पर कमरा नहीं देता।

दोपहर के बाद शास्वती का आफ पीरियड है, यह उसे पता था। शास्वती की रूटिन उसे मुखस्थ है। वह ठीक वक्त पर शास्वती से मिलने पहुंचा था, पर वह नहीं मिली। कालेज के दरबान ने उसे बताया कि शास्वती किसी सहेली की गाड़ी पर चली गयी है।

धीरे-धीरे मुख्य मार्ग पर पहुंच कर उसने एक सिगरेट सुलगायी। गाड़ी पर कहां गयी शास्वती? अभी वह पास होती, तो शायद उसका मन हल्का होता।

आश्चर्य तो यह है कि और कभी उसने किसी प्रकार की अनिश्चयता महसूस नहीं की थी। वह जानता था कि वह चाहे कुछ भी हो चाहे कुछ भी करे, उसे आश्रय देने को एक विशाल किला मौजूद है। पिता भले ही स्वार्थी और लोभी हों, वह कल्पवृक्ष की तरह उसे छाया देने को तैयार हैं। लेकिन अब वह अपने को बेसहारा महसूस कर रहा था। न पिता की छाया थी, न आश्रय देने को किलानुमा घर था। थोड़ी देर बाद कलकत्ते में रात उतरेगी। तब बेचारा आदित्य कहां जायगा।

उसने कुछेक क्षण ललित पर विचार किया। दोस्तों में सिर्फ ललित ही ऐसा है जिसके पास जिस किसी हालत में वह जा सकता है। ललित उसे आश्रय देगा। जायेगा उसके पास?

दूसरे ही क्षण विचार बदल गया। नहीं, वह ललित के पास नहीं जायेगा। कल जो कुछ हुआ, उसका मूल कारण ललित ही तो है। शास्वती से मन मुटाव, घर पर

झगड़ा—सबके लिए ललित ही तो जिम्मेवार है। कालेज जीवन में उसने आदित्य को साम्यवाद की शिक्षा क्या दी थी ? अगर वह उसके दिमाग में साम्यवाद न घुसाता, तो संस्कारवश वह अपने लोभी पिता के साथ कदम मिला कर चलता। ललित ने क्या उसकी जिंदगी में राजनीति का जहर घोला था ?

धीरे धीरे अँधेरा उतर आया। गड़ियाहाट पीछे छूट गया। वह चलता रहा। उसके दिमाग में दुनिया भर की दुश्चिन्ता उथल-पुथल मचाती रही।

आखिरकार रात के करीब आठ बजे उसने हथियार डाल दिया। एस्प्लेनेड की एक दुकान से उसने घर पर फोन किया।

पिता की भारी-भरकम आवाज सुनायी पड़ी 'हैलो।'

'मैं आदित्य—'

क्षण भर की चुप्पी के बाद आवाज आयी, 'क्या चाहते हो ?'

'मुझे क्षमा कर दीजिये।'—थकी-थकी आवाज में आदित्य बोला।

अचानक पिता की आवाज बड़ी मुलायम सुनाई पड़ी, 'दिन भर कहाँ थे ? कल रात कहाँ सोये थे ?'

आदित्य ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह सिर्फ बोला, 'मैं कहीं नहीं जा सकता। मुझे बुला लीजिये।'

'जल्दी चले आओ। खा-पीकर आराम करो। गलती सबसे होती है, इसमें शर्माने की कोई बात नहीं।' कहाँ हो कहाँ से फोन कर रहे हो गाड़ी भेज रहा हूँ।

'मैं आ रहा हूँ।'

टैक्सी पर आ जाओ। पैसे की चिंता मत करना। मैं गेट पर खड़ा रहूँगा। तुम्हारे आने पर टैक्सी का किराया दे दूँगा। जल्दी चले आओ।

बात खत्म हो गयी, फिर भी आदित्य रिसीवर पकड़े रहा। उधर पिता भी फोन पकड़े रहे। कुछेक क्षण दोनों ने एक-दूसरे के थके हुए श्वास-प्रश्वास की आवाज सुनी। उसके बाद आदित्य ने फोन रख दिया।

दुकान से निकल कर उसने टैक्सी पकड़ी।

आज शाश्वती ने नये किस्म का अपराह्न देखा।

राका की गाड़ी पर बैठने के बाद से ही वह मीठी मीठी उत्तेजना अनुभव कर रही थी। दोनों को गाड़ी पर छोड़ कर जब राका रेडियो स्टेशन में दाखिल हुई, उस समय शाश्वती का मन बड़ा उत्तेजित हो उठा।

कुछेक क्षण छुईमुई शाश्वती लाज की गठरी बनी चुप बैठी रही। कुछेक क्षण राका के भैया चुपचाप एक ओर देखते रहे।

अब शाश्वती क्या उत्तर दे ? वह तो स्वयं नहीं जानती कि वह किसी के साथ बंधी है या नहीं।

सुमत बड़ी मीठी हंसी हंसा। और फिर आत्मविश्वास के साथ बोला, 'शीघ्र ही आपके पास मेरा प्रस्ताव जायेगा। यू तो हम दोनों को एक दूसरे के बारे में बहुत कुछ जानना है, फिर भी आपसे अनुरोध है कि मेरा प्रस्ताव ठुकरायेंगी नहीं। अगर मेरे विषय में कुछ जानना है, तो अभी जान लीजिये।

शाश्वती चुप रही पर उसके अंग अंग में एक मीठा नशा छाता गया।

कुछेक क्षण बाद घड़ी देख कर सुमत बोला, 'अब चला जाय।'

और फिर अद्भुत घटनाएं घटती गयीं। गाड़ी रेडियो स्टेशन के सामने रुकी। सुमत राका को ले आया। उसके बाद तीनों एक नामी रेस्तरां में दाखिल हुए। व्यंजन-तालिका में विभिन्न प्रकार के व्यंजनों के नाम। शाश्वती ने तो यह सब नाम भी नहीं सुना है। सुमत ने उसकी पसंद पूछी, पर वह चुप रही। सुमत और राका ने मिल कर आर्डर दिया। राका निरंतर बोलती रही। सुमत कहकहों में फूलता रहा। शाश्वती चुप रही। उसके अंग-अंग में मीठा मीठा नशा छाता रहा।

राका को लाते वक्त रेडियो स्टेशन की लाबी में सुमत ने उससे कुछ कहा होगा। इसलिए राका शाश्वती के कान में फुसफुसायी, 'पता है, भाभियों में तेरा नंबर क्या होगा ? तेरा नंबर होगा तीन। तेरे होनेवाले मेरे सभले भाई हैं। तू होगी सभली भाभी।

राका का मजाक शाश्वती को क़तई अच्छा नहीं लगा पर वह चुप रही। वह तो अब तक न समझ पायी है कि वह सुंदरी है या नहीं। आज तक किसी ने तो नहीं कहा कि तुम सुंदरी हो। लेकिन कल उस तरह का अद्भुत संदेह आदित्य ने उस पर क्यों किया था ? वह क्यों बोला था कि तुम्हारी जात अलग है ? आखिर सबकी नजर उस पर ही क्यों है ? वह सोचती रही, पर नतीजा कुछ नहीं निकला। उसका दिमाग धुंधला गया।

कलकत्ता में शाम गहरी हुई। अपने घर के निकट मुख्य मार्ग पर शाश्वती गाड़ी से उतरी। राका हंस कर बोली, 'शीघ्र ही हम लड़की देखने आ रहे हैं। तैयार रहियो लाडो।'—सुमत ने एक मीठी मुस्कान उछाली। गाड़ी चल पड़ी। यह क्या, सचमुच में शाश्वती लड़खड़ा रही है!

घटनाएं कितनी जल्दी घट जाती हैं। इंसान चाह कर भी कुछ नहीं कर सकता।

रात में जब बिस्तर पर लेटे-लेटे शाश्वती की आंखों में प्यारी प्यारी नींद उतरने लगी, तब उसे अनुभव हुआ कि उसके हृदय में प्यार उमड़ रहा है। आत्म-समर्पण करने को मन मचल रहा है। लेकिन वह कौन है, जो उससे उसकी महामूल्यवान वस्तु

ले सके ? आदित्य ? नहीं, नहीं। तब सुमत ? नहीं, सुमत भी नहीं। जो उससे माँगता है, वह उसका अधिकारी नहीं हो सकता। वह तो कोई और ही होगा। वह कोई फक्कड़ होगा। वह कोई कर्मठ होगा।

लेकिन वह है कौन ?—यह किसे पता !

सहसा शाश्वती के मन में एक मृत्युपथयात्री का चित्र उभर आया। दृढ़ मुखाकृति। ओजस्विता से भरपूर। यह ललित की मुखाकृति है। हाय ! वह नहीं बचेगा।—लेकिन फिर भी शाश्वती नींद में मुस्करायी।

होठों में मुस्कान लिए गहरी नींद में डूब गयी शाश्वती।

## चौदह

*

एक-एक दिन तीसरे पहर आँगन में एक अद्भुत रंग की धूप बिखर जाती है। पीली-पीली धूप। दीवार की परछाईं तुलसी चौरा पार कर आधे आँगन में पसर जाती है। अमरूद के पेड़ पर पक्षियों का झुंड लौट आता है। पीली-पीली धूप में माँ आँगन में झाड़ू लगाती है और मन-ही मन बड़बड़ाती है।

दोपहर की नींद से उठ कर ललित अपना अलसाया शरीर लिए आँगन की सीढ़ी पर बैठा तीसरे पहर की अलौकिक धूप देख रहा है। ऐसा लगता है कि वह किसी और ही ग्रह के अपराह्न में जगा बैठा है। यह सब जानी-पहचानी पृथ्वी के दृश्य नहीं हैं।

झाड़ू लगाने के बाद माँ लोटे से आँगन में पानी छिड़कती है। और फिर तुलसी चौरा पर दीया जलाती है, शंख बजाती है। ठीक उसी समय दूर कहीं बच्चों का खेल खत्म होता है। उनकी चिल्लपों हवा में तैर आती है। और उस समय ललित की आँखों के सामने पीली-पीली धूप क्रमशः सिमटती जाती है। आँगन में एक-एक कर उदास छाया उतरती जाती है। गीली मिट्टी की भीनी-भीनी गंध हल्की-फुल्की हवा के झोंकों में घुल जाती है। ललित दरवाजे के चौखट पर सिर टिकाये बच्चों की तरह घुटने मोड़ कर बैठा रहता है। माँ उसे आवाज देती है, 'अंदर बैठा बेटे। आजकल बहुत ओस गिरती है। लेकिन ललित किसी और ही दुनिया में विचरता रहता है। शायद वह कुछ सुन ही नहीं पाता। अपराह्न की विगलती धूप में आँगन में उतरती परछाइयों पर आँखें जमाये वह दूर, बहुत दूर की निस्तब्धता की फुसफुसाहट सुनता है। उसके सामने छोटे मोटे आँगन का एक दिन चुपचाप खत्म हो जाता है। दिन सिमट

जाता है। ललित का दिन चुपचाप गुजर जाता है। एक-एक दिन। महामूल्यवान दिन।

सांझ ढलते-ढलते मा की रसोई बन जाती है। तब मा बेग लूडो खेलते हैं। अद्भुत नियम से खेल होता है। कोई किसी की गाली नहीं खाता।

किसी-किसी दिन ललित मुहल्ले में घूमता है। परिचित मिलने पर दो-चार बात करता है। सत्यदास के किराने की दुकान के सामने बांस के खूटे में बधी बेंच पर बैठता है। मुहल्ले के छोटे छोटे बच्चे तेल, नमक, मसाला खरीदने आते हैं। ललित जिसे नहीं पहचानता, सत्यदास से उसके बारे में पूछ लेता है।

क्लब के सामने शभू की महफिल जमी है। यथासभव ललित उधर नहीं जाता। उसे देख कर शभू वगैरह सिगरेट छिपाते हैं। इसलिए वह सत्यदास की दुकान के सामने बेंच पर बैठ कर आने-जानेवालों को देखता है। कभी-कभी इसी रास्ते से मुह लटकाये तुलसी आता है। तुलसी के साथ उसकी बैठक नहीं जमती। तुलसी मा के साथ गप्पें मारता है। बुड्ढों की तरह हमेशा घर-गृहस्थी की बातें करता है।

पिता की वार्षिकी का दिन ठीक करने एक दिन आये थे माधव चक्रवर्ती। ललित से बोले थे, 'तुम ने जनेऊ फेंक दिया है क्या?'

नहीं, ललित ने जनेऊ फेंका नहीं था। पुराना जनेऊ टूट कर कहीं गिर गया था। उसके बाद उसने जनेऊ नहीं पहना।

भगवान् के सिंहासन के नीचे से जनेऊ निकाल कर मा ने चक्रवर्ती महोदय को दिया था। बोली थी, गठिया दीजिये महाराज।'

और फिर पद्मासन में बैठ कर चक्रवर्ती महोदय ने जनेऊ म गांठ लगायी थी। ललित से पूछा था, 'चडी पढना सिखाया था। पढते हो न?'

उसके बाद माधव चक्रवर्ती मन-ही-मन बड़बड़ाये थे, 'आचमन भूल गये, पूजा-पाठ छोड़ दिया; अब गायत्री भूलोगे, गोत्र भूलोगे और फिर अपने बाप का नाम भूल जाओगे।'

ललित हसा था।

'चडी पाठ करो। तुम्हें पाकेट चडी दी थी न, है तो?'

ललित ने 'हां' म सिर हिलाया।

'पाठ किया करो। चडी पाठ से असाध्य रोग दूर होता है। मैं चालीस साल से पाठ कर रहा हू। कभी बुखार तक नहीं हुआ।

ललित के गांव म माधव पुरोहित थे। यहा पास ही रहते हैं। कभी-कभार आते हैं। ललित के पिता के जमाने में हर रोज लक्ष्मीनारायण की पूजा कर शाम को अखबार पढने आते थे। एक बार ललित को टायफाइड हुआ था। माधव चक्रवर्ती उसके लिए

प्रसाद लाते थे। वह उनके आने का इंतजार करता था। प्रसाद मिलने पर ललित धीरे-धीरे खाता था, ताकि जल्दी खत्म न हो जाय। बस, इतना ही कुपथ्य करता था ललित। प्रसाद खत्म कर वह मरियल आवाज मे कहता, अपने खाने की गप्प सुनाइये पंडित जी। माधव हसते और फिर जारी हो जाते। किस तरह गाव की एक कंजूस बुढ़िया से डेढ़ सेर मलाइ लेकर वह चट कर गये थे। क्या क्या खाया था, कितना खाया था—सब कुछ विस्तारपूर्वक सुनाया करते माधव चक्रवर्ती। 'अच्छा होने पर तरह-तरह का खाना खाऊंगा, सोचते-सोचते ललित सो जाता था।

माधव चक्रवर्ती तो वही हैं, पर आज वह ललित को क्या दे सकते हैं? अब क्या माधव के पास वह अलौकिक प्रसाद है, जिसे ललित धीरे धीरे खाता था। नहीं, अब उनके पास ऐसा कुछ नहीं है। फिर भी न जाने क्यों ललित को आज उनकी हर बात अमृत-सी लगी। नहा-धोकर उसने जनेऊ पहना। पता नहीं क्यों जनेऊ से उसे बड़ी आशा बंधी। उसे लगा कि जनेऊ उसे रोग-मुक्त कर देगा, यहां तक कि उसे किसी सुंदरी का प्यार भी दिलायेगा।

दो-चार दिन वह शैशव के नशे मे डूबा रहा। उसने बड़ी आस्था से चंडी पाठ किया। पाठ करते करते वह आत्म विस्मृत हो जाता। उसका शैशव उसे घेर लेता। पाठ करते वक्त वह मन-ही-मन देवी से प्रार्थना करता, 'आज तक मैं ने जो कुछ सीखा है सब भुला दो मां। मुझे मेरा शैशव लौटा दो मा। मैं फिर से सब कुछ विश्वास कर सकूं, जैसा शैशव म किया करता था।

अब सिमान बहुत कुछ अच्छा हो गया है। ललित के कहने पर मुहल्ले का कम्पाउंडर उसकी मरहम-पट्टी कर दिया करता है। छ-सात दिनों म पट्टियों की संख्या कम गयी है। अब सिर्फ सिर पर पट्टी है।

ललित दोनों वक्त टिफिन कैरियर म सिमान का खाना ले जाता है। अब सिमान को शर्म आती है। ललित से कहा करता है, 'अब मैं अच्छा हो गया हूं। खुद खाना बना सकता हूं। झूठमूठ म तुम्हारा अन्न क्यों बर्बाद करूं?'

ललित हस कर जवाब देता है 'तुम्हें दो मुठी खिला कर मैं भूखों नहीं मरूंगा।'

खाने के बाद सिमान ललित का कैरियर खुद साफ करता है और फिर आमने-सामने बैठ कर दोनों बातें करते हैं। सिगरेट के धुआं से कमरा भर जाता है। विभिन्न विषयों पर बातें होती हैं।

एक दिन सिगरेट का कश लेकर सिमान बोला, 'ललित, कालेज म तुम बहुत अच्छा भाषण देते थे। तुम से वैसा ही भाषण सुनने की इच्छा होती है। सुनाओगे?

विमान का बचपना देख कर ललित ने हस कर जवाब दिया, 'अब सब भूल गया हू भाई।'

ललित के जवाब ने विमान को गहरे सोच म डुबा दिया। सोच-समझ कर वह बोला, 'तुम्हें क्या अपनी बातों पर विश्वास नहीं था ललित? यदि विश्वास होता, तो भूल कैसे जाते? तुम्हारा जोशीला भाषण मेरे अदर तूफान मचा देता था। कभी कभार मैं अकेले कमरे म तुम्हारी नकल करता। उस समय मुझे लगता कि मैं हजारों की भीड़ मे भाषण दे रहा हू। सब मुझे ध्यान से सुन रहे हैं। भाषण खत्म होते ही आदोलन शुरू हो जायेगा। सब जान की बाजी लगा देंगे। तुम तो जानते ही हो कि मैं किसी से बात नहीं कर सकता था। लेकिन मुझे भी एक श्रोता मिल गयी थी। उन दिना मैं एक बच्ची को पढाता था। वह अमीर बाप की लाडली थी। मैं तुम्हारी बातें तुम्हारे ही लहजे में सुनाया करता। वह कुछ समझ तो नहीं सकती थी, पर मन-ही मन सहम जाती थी। मैं कहा करता था, जिस दिन शोषित जगेगा, उस दिन शोषक खत्म हो जायेगा। व्यक्तिगत सपत्ति खत्म हो जायेगी। सब पर समाज का अधिकार होगा। नन्हीं मुनी बच्ची के पल्ले शोषक, शोषित, समाज—कुछ भी नहीं पड़ता, वह सिर्फ सहमी-सहमी आखों से मुझे देखती और मुझे उसका भयभीत चेहरा देख कर बड़ा आनद आता। मुझे यह सोच कर बड़ा सतोष मिलता कि कम-से-कम एक जगह ऐसी है जहा मैं भाषण दे सकता हू। एक श्रोता है जिस पर मेरे भाषण का प्रभाव पडता है।'

कुछेक क्षण के लिए विमान गहरे सोच म डूब गया और फिर दुखी स्वर में बोला, 'अब यह सोच कर क्या फायदा! तुम तो सब कुछ भूल गये हो।'

नहीं, ललित सब कुछ नहीं भूला है। अभी भी कभी-कभार पुरानी बातें उसके दिमाग मे उथल-पुथल मचाती हैं, लेकिन उसने सिर्फ इतना ही कहा, 'अब तो तुम उन बातों पर विश्वास नहीं करते।'

'हु, अब मैं विश्वास नहीं करता।'

'फिर क्यों सुनना चाहते हो?'

'बस, यू ही। तुम्हें फिर उस रूप म देखने की इच्छा होती है। तुम्हारा तेज तर्रार चेहरा उत्तेजित हो उठा है। हाथ उठा कर तुम शपथ ले रहे हो।—तुम्हारे उस रूप पर मैं मुग्ध हो गया था। तुम्हारी हर बात मेरी बात बन गयी थी। हो सकता है तुम्हारे उस रूप को देख कर मैं फिर से तुम्हारी बातो पर विश्वास कर सकू। तुम क्या सचमुच में भूल गये हो?'

'नहीं, भूला नहीं हू, पर तुम्हें अब उन बातों पर विश्वास दिलाना नहीं चाहता।'

'क्यों? तुम क्या अब समझ रहे हो कि तुम्हारी उन बातों में कोई सार नहीं था?

ललित सिर्फ मुस्कराया। उसने कोई उत्तर नहीं दिया।

'हां, तुम्हारी बातों में कोई दम नहीं था। मनुष्य को समष्टिगत रूप से देखना ही गलत है। लेकिन तुम्हारा दृष्टिकोण यही था। सामाजिक परिवर्तन के लिए तुम क्रान्ति चाहते थे और क्रान्ति के लिए मनुष्य की भीड़। तुम्हारे लिए समष्टि ही सब कुछ था। तुम सिर्फ भीड़ को पहचानते थे। भीड़ से जो अलग हो जाता, उसे तुम नहीं पहचानते थे। क्या, है न यही बात? जो वक्त पर खेती नहीं करता, बुड्ढे बाप को सताता है, धान के बीज बेच खाता है, दूसरों के खेत से धान चुराता है, बीवी के जेवर बेच डालता है, दगा-फसाद कर जेल जाता है वह स्वभावतः अपना सर्वस्व गवा बैठता है और उसी को तुम सर्वहारा समझ कर गले लगाते हो। ऐसे हजारों सर्वहारा तुम्हारे जुलूस में नारे लगाते हैं, तुम्हारे भाषण पर तालियां बजाते हैं। तुम किसी के गुण दोष पर विचार नहीं करते क्योंकि तुम्हारे लिए सर्वस्व गवाना ही सबसे बड़ा गुण है। तुम कभी उसके काम, क्रोध, लोभ, मोह पर विचार नहीं करते। तुम उसे आंदोलन में शामिल करते हो, उसे सिंहासन पर बैठाना चाहते हो, क्योंकि तुम्हारी दृष्टि में वह सर्वहारा है। तुमने कभी सोचने की कोशिश की कि सर्वस्व खाना अयोग्यता का परिचायक है? नहीं, तुम ने कभी इस पर विचार नहीं किया। तुम ने तो व्यक्ति को समष्टि के रूप में देखना सीखा है इसलिए हर सर्वहारा तुम्हारी दृष्टि में सामाजिक व्यवस्था का दुष्परिणाम है। तुम समझते हो कि समाज बदलने से मनुष्य बदल जायगा। क्या, ठीक कह रहा हूं न? यही कारण है कि तुम उससे नारे लगवाते हो। उसे लोभ देते हो कि उसका सब अभाव दूर कर दोगे।

'सब तो ऐसे नहीं होते।'—

'नहीं, सब ऐसे नहीं हैं। सचमुच के शापित भी हैं। लेकिन बुर्जुआ के आदमी भी भीड़ में शामिल हो जाते हैं। व्यक्तिगत स्वार्थ सिद्धि के लिए भी लोग नारे लगाते हैं। लेकिन तुम्हारे लिए सब एक जैसे होते हैं। तुम्हें तो उनकी स्थूल शक्ति से मतलब है। तुम किसी के गुण-दोष पर विचार नहीं करते क्योंकि तुम्हें भीड़ चाहिए, भीड़ की स्थूल शक्ति चाहिए। तुम स्थूल शक्ति को धार देते हो, हिंसक प्रकृति को भड़काते हो, क्योंकि तुम समाज को बदल डालना चाहते हो। और जब यह शक्ति हिंसक रूप से समाज को चूर चूर कर देती है, तब एक वर्ग जन्म लेता है जिसका चरित्र बुर्जुआ से भिन्न नहीं होता। उसके पास पुराने बुर्जुआ जैसी पूंजी नहीं होती। वह सत्ता हथियाने की कोशिश करता है। सत्ता हासिल करने के लिए उचित-अनुचित सब कुछ करता है। और फिर एक समय का शापित स्वयं शोषक बन उठता है। समाज बदल जाता है पर व्यक्ति नहीं बदलता।

विमान का बचपना देख कर ललित ने हंस कर जवाब दिया, 'अ
गया हू भाइ।'

ललित के जवाब ने विमान को गहरे सोच म डुबा दिया। सोच-स
बोला, 'तुम्हे क्या अपनी बातों पर विश्वास नहीं था ललित ? यदि विश्वा
भूल कैसे जाते ? तुम्हारा जोशीला भाषण मेरे अदर तूफान मचा
कभी कभार मैं अकेले कमरे मे तुम्हारी नकल करता। उस समय मुझे
हजारों की भीड मे भाषण दे रहा हू। सब मुझे ध्यान से सुन रहे
खत्म होते ही आदोलन शुरू हो जायेगा। सब जान की बाजी लगा
तो जानते ही हो कि मैं किसी से बात नही कर सकता था। लेकिन
श्रोता मिल गयी थी। उन दिनो मैं एक बच्ची को पढाता था
बाप की लाडली थी। मैं तुम्हारी बातें तुम्हारे ही लहजे म सुनाया
कुछ समझ तो नहीं सकती थी, पर मन-ही मन सहम जाती थी। मैं
जिस दिन शोषित जगेगा, उस दिन शोषक खत्म हो जायेगा। व्यक्ति
हो जायेगी। सब पर समाज का अधिकार होगा। नही मुनी
शोषक, शोषित, समाज—कुछ भी नहीं पड़ता, वह सिर्फ सहमी-सहम
देखती और मुझे उसका भयभीत चेहरा देख कर बडा आनद आता
कर बडा सताप मिलता कि कम-से-कम एक जगह ऐसी है जहा
हू। एक श्रोता है जिस पर मेरे भाषण का प्रभाव पडता है।'

कुछेक क्षण के लिए विमान गहरे सोच मे डूब गया और
बोला, 'अब यह सोच कर क्या फायदा! तुम तो सब कुछ भूल

नहीं, ललित सब कुछ नहीं भूला है। अभी भी कभी-कभा
दिमाग म उथल-पुथल मचाती हैं, लेकिन उसने सिर्फ इतना ही क
बातों पर विश्वास नहीं करते।'

'हूं, अब मैं विश्वास नहीं करता।'

'फिर क्यों सुनना चाहते हो ?'

'बस, यू ही। तुम्हें फिर उस रूप म देखने की इच्
तेज तर्रार चेहरा उत्तेजित हो उठा है। हाथ उठा कर तुम दाप
उस रूप पर मैं मुग्ध हो गया था। तुम्हारी हर बात मेरी
हो सकता है तुम्हारे उस रूप को देख कर मैं फिर से तुम्हारी बा
सकू। तुम क्या सचमुच मे भूल गये हो ?'

'नहीं, भूला नहीं हू, पर तुम्हें अब उन बातों पर विश्वास दिल

'क्यों ? तुम क्या अब समझ रहे हो कि तुम्हारी उन बातों म प

?'—ललित विस्मित हुआ ।

मुह लाल हो उठा । मुह नीचे कर वह बोला, 'वही लड़की जो
ंक्षित के पास आती है ।

ललित भूल चुका था । बोला, 'लड़की ने क्या किया है '

ो हसा और दूसरी ओर मुह फिरा कर बोला, वह भला क्या
एक लड़की एक वेचलर से मिलने आती है । दरवाजा बद कर
ा आप ही सोचिये मुहल्ले के बच्चों पर क्या असर होगा ? यह
है न । इसलिए हम ने खोज खबर ली है ।'—

शर्माया । िमान उसका सहपाठी है । उसके पास कोइ लड़की
म उम्र म छोटा सुबल से बात करने की इच्छा उसे नहीं हुइ ।
ता चला ?'

की लडकी है । हिदुस्तान पार्क म आलीशान मकान है । बहुत
फुलवारी है । दो तीन गाड़िया हैं । कुत्ता है । छत पर
।

सुबल उत्तेजित हो उठा, शायद उस अपनी उत्तेजना का आभास
ललित ने उसे क्रमश उत्तेजित होते देखा । सुबल की आखें
ाले-कलूटे चेहरे पर शिराए उभर आयीं हैं ।

ा स्वर म बोला, लड़की ब्रेबार्न कालेज म पढ़ती है । अच्छी
शान म गाती है । ऐसी लड़की के साथ विमान जैसे आदमी का
है क्या, कारपोरेशन के मेहतरा का ठप्पा बाबू ही तो । गरीब
है । लिक-पिक बदन, चोहाइ सा चेहरा, ऐसे थड क्लास आदमी
ानदान की लड़की क्या आती है ? इसका साफ मतलब है कि
ा लड़की को ब्लफ दे रहे हैं । अमीर लड़की से शादी हो जाय,
मौज म कटेगी । लगता है कि उस लड़की का काइ और लवर
ण्डों से उसी ने विमान बाबू की मरम्मत करायी होगी । चमारी
ठ है । आप विश्वास करते हैं ललितदा, कि उस जैसे मरियल
टेगा ?

होकर बोला, 'क्या करना चाहते हो ?'

ा है । हम क्या कर सकते हैं ? हाँ, आप उसे समझा दीजिए कि
तो शरीफ बनकर रहे । आपही बताइए, वैसी लड़की की तरफ
सके हैं ? शायद लड़की भी विमान बाबू का इतिहास
े । अमीर लड़की को ब्लफ देकर

ऐसी स्थिति मे जो सचमुच म मनुष्य का भला चाहते हैं, वे नये सिरे से मनुष्य पर विचार करना शुरू करते हैं। वे देखते हैं, समाज बदलने पर भी बुर्जुआ चरित्र खत्म नहीं हुआ। कल का शोषित आज शोषक बन गया है। इसलिए मनुष्य का मूल चरित्र बदलना आवश्यक प्रतीत होने लगता है।

क्षण भर ललित की ओर देख कर विमान वाला, 'तुम ने अभी इस तरह से सोचना शुरू नहीं किया है। लेकिन अब तुम भीड़ का चेहरा देखना नहीं चाहते। शायद अब तुम मनुष्य का मूल तलाशना शुरू करोगे। मैं भी तलाश रहा हू।

प्रतिवाद करने की इच्छा हुइ, पर ललित चुप रहा। वह जानता है कि विमान की बातों मे ढेर सारी खामियां हैं पर उसे पागल समझ कर वह कुछ नहीं बोला। सिर्फ मुस्कराया।

वापसी म ललित एक पीपल के पेड़ तले चबूतरे पर बैठा। वह बहुत उत्तेजित था। टिफिन कैरियर रख कर उसने सिगरेट जलायी। उसके दिमाग म उथल-पुथल मची थी। उसका पुराना ललित जग उठा था। वह मनुष्य से बात करना चाहता था। उसे फिर से सगठन बनाने की इच्छा हो रही थी। इतने दिनों तक उसके मन में कीड़ों की तरह कुलबुलाता उसका विश्वास उसे डसने लगा था। अधेरे की ओर देख कर वह सहसा मृदु स्वर मे बोल उठा, 'कामरेड, मुझे माफ करना। मैं आपको भूल गया था। श्रेणी सग्राम की बात भूल गया था। मैं शपथ लेता हू कि मैं फिर से आपके लिए लड़ूगा। प्रतिक्रियाशील शक्तियों का सफा के लिए अपना दू गा, गणतात्रिक शक्तियों को सून बद्ध करू गा '

लेकिन ललित को बड़ी थकावट महसूस होती है। मानसिक उथल पुथल सोने नहीं देती। शरीर की गरमी से बिस्तर गर्म हो उठा है। वह उठ कर बाहर आता है और सीढी पर बैठ कर सिगरेट पीता है। मन-ही मन बड़बड़ाता है, 'नहीं, हम शैशव नहीं चाहिए। हम यौवन चाहते हैं। अर्थनैतिक, राजनैतिक शैशव का अतिक्रमण कर हम समृद्ध यौवन चाहते हैं। '

ललित सोचता है, एक दिन वह अविनाश के पास जाकर कहेगा, मैं फिर से पार्टी में आना चाहता हू। तुम इतजाम करो। एक दिन क्यों, कल ही वह अविनाश से मिलेगा। बहुत समय बर्बाद कर चुका है, अब नहीं करेगा।

लेकिन सुबह से ही एक-एक कर अप्रत्याशित घटना घटती गयी।

ललित चाय की चुस्किया ले रहा था और अखबार पढ रहा था। उसी समय सुरू आकर बोला, 'ललितदा, जरा बाहर आइये न। आपसे कुछ जरूरी बात करनी है।'

गली म ललित को ले जाकर वह उत्तेजित स्वर म बोला, 'हम लोगों ने उस लड़की का पता लगा लिया है।'

'किस लड़की का ?'—ललित विस्मित हुआ।

सहसा सुबल का मुंह लाल हो उठा। मुंह नीचे कर वह बोला, 'वही लडकी जो आपके दोस्त विमान रक्षित के पास आती है।

उस लड़की को ललित भूल चुका था। बोला, 'लड़की ने क्या किया है'

सुबल फीकी हंसी हंसा और दूसरी ओर मुंह फिरा कर बोला, वह भला क्या करेगी! मुहल्ले में एक लड़की एक बैचलर से मिलने आती है। दरवाजा बंद कर बातें होती हैं। अब आप ही सोचिये मुहल्ले के बच्चों पर क्या असर होगा? यह तो अच्छी बात नहीं है न। इसलिए हम ने खोज खबर ली है।'—

सुन कर ललित शर्माया। विमान उसका सहपाठी है। उसके पास कोई लड़की आती है, इस संदर्भ में उम्र में छोटा सुबल से बात करने की इच्छा उसे नहीं हुई। सिर्फ बोला, 'क्या पता चला?'

'अमीर घराने की लडकी है। हिंदुस्तान पार्क में आलीशान मकान है। बहुत बड़ा अहाता है। फुलवारी है। दो तीन गाडियां हैं। कुत्ता है। छत पर संगमर्मर की परी है।

बोलते-बोलते सुबल उत्तेजित हो उठा, शायद उसे अपनी उत्तेजना का आभास तक नहीं, लेकिन ललित ने उसे क्रमश उत्तेजित होते देखा। सुबल की आंखें चमक रही हैं। काले-कलूटे चेहरे पर शिराएं उभर आयीं हैं।

सुबल उत्तेजित स्वर में बोला, लड़की त्रेबोर्न कालेज में पढ़ती है। अच्छी गायिका है। फंक्शन में गाती है। ऐसी लड़की के साथ विमान जैसे आदमी का क्या संबंध। वह है क्या, कारपोरेशन के मेहतरों का छप्पा बाबू ही तो। गरीब मेहतरों से घूस लेता है। सिंक-पिंक बदन, चोहाड़ सा चेहरा, ऐसे थर्ड क्लास आदमी के पास उतने बड़े खानदान की लड़की क्या आती है? इसका साफ मतलब है कि विमान रक्षित उस लड़की को ब्लफ दे रहे हैं। अमीर लड़की से शादी हो जाय, फिर सारी जिंदगी मौज में कटेगी। लगता है कि उस लड़की का कोई और लवर है। उस दिन गुण्डों से उसी ने विमान बाबू की मरम्मत करायी होगी। बटमारी की बात सरासर झूठ है। आप विश्वास करते हैं ललितदा, कि उस जैसे मरियल आदमी को कोई लूटेगा?

ललित गंभीर होकर बोला, 'क्या करना चाहते हो?'

'आपका दोस्त है। हम क्या कर सकते हैं? हाँ, आप उसे समझा दीजिए कि मोहल्ले में रहना है तो शरीफ बनकर रहे। आपही बताइए, वैसी लड़की की तरफ हाथ बढ़ाना क्या उसके लिए उचित है? शायद लड़की भी विमान बाबू का इतिहास नहीं जानती—ऐसा तो आजकल अक्सर होता है। अमीर लड़की को ब्लफ देकर

ऐसी स्थिति में जो सचमुच म मनुष्य का भला चाहते हैं, वे नये सिरे से मनुष्य पर विचार करना शुरू करते हैं। वे देखते हैं, समाज बदलने पर भी बुर्जुआ चरित्र खत्म नहीं हुआ। कल का शोषित आज शोषक बन गया है। इसलिए मनुष्य का मूल चरित्र बदलना आवश्यक प्रतीत होने लगता है।

क्षण भर ललित की ओर देख कर विमान बोला, 'तुम ने अभी इस तरह से सोचना शुरू नहीं किया है। लेकिन अब तुम भीड़ का चेहरा देखना नहीं चाहते। शायद अब तुम मनुष्य का मूल तलाशना शुरू करोगे। मैं भी तलाश रहा हूं।

प्रतिवाद करने की इच्छा हुई, पर ललित चुप रहा। वह जानता है कि विमान की बातों म ढेर सारी खामियां हैं पर उसे पागल समझ कर वह कुछ नहीं बोला। सिर्फ मुस्कराया।

वापसी म ललित एक पीपल के पेड़ तले चबूतरे पर बैठा। वह बहुत उत्तेजित था। टिफिन कैरियर रख कर उसने सिगरेट जलायी। उसके दिमाग म उथल-पुथल मची थी। उसका पुराना ललित जग उठा था। वह मनुष्य से बात करना चाहता था। उसे फिर से सगठन बनाने की इच्छा हो रही थी। इतने दिनों तक उसके मन में कीडा की तरह कुलबुलाता उसका विश्वास उसे डसने लगा था। अंधेरे की ओर देख कर वह सहसा मृदु स्वर म बोल उठा, 'कामरेट, मुझे माफ करना। मैं आपको भूल गया था। श्रेणी सग्राम की बात भूल गया था। मैं शपथ लेता हू कि मैं फिर से आपके लिए लडूगा। प्रतिक्रियाशील शक्तियों को सत्ता के लिए दफना दूगा, गणतांत्रिक शक्तियों को सूत्र बद्ध करूगा'

लेकिन ललित को बड़ी थकावट महसूस होती है। मानसिक उथल पुथल सोने नहीं देती। शरीर की गरमी से बिस्तर गर्म हो उठा है। वह उठ कर बाहर आता है और सीढी पर बैठ कर सिगरेट पीता है। मन-ही मन बड़बड़ाता है, 'नहीं, हमे शैशव नहीं चाहिए। हम यौवन चाहते हैं। अर्थनैतिक, राजनैतिक शैशव का अतिक्रमण कर हम समृद्ध यौवन चाहते हैं।'

ललित सोचता है, एक दिन वह अविनाश के पास जाकर कहेगा, मैं फिर से पार्टी में आना चाहता हू। तुम इतजाम करो। एक दिन क्यों, कल ही वह अविनाश से मिलेगा। बहुत समय बबाद कर चुका है, अब नहीं करेगा।

लेकिन सुबह से ही एक-एक कर अप्रत्याशित घटना घटती गयी।

ललित चाय की चुस्किया ले रहा था और अखबार पढ रहा था। उसी समय सुबल आकर बोला, 'ललितदा, जरा बाहर आइये न। आपसे कुछ जरूरी बात करनी है।'

गली में ललित का ले जाकर वह उत्तेजित स्वर म बोला, 'हम लोगों ने उस लड़की का पता लगा लिया है।'

'किस लड़की का ?'—ललित विस्मित हुआ।

सहसा सुबल का मुह लाल हो उठा। मुह नीचे कर वह बोला, 'वही लड़की जो आपके दोस्त विमान रक्षित के पास आती है।

उस लड़की को ललित भूल चुका था। बोला, 'लड़की ने क्या किया है ?'

सुबल फीकी हसी हसा और दूसरी ओर मुह फिरा कर बोला, वह भला क्या करेगी। मुहल्ले मे एक लड़की एक बैचलर से मिलने आती है। दरवाजा बन्द कर बातें होती है। अब आप ही सोचिये मुहल्ले के बच्चा पर क्या असर होगा? यह तो अच्छी बात नहीं है न। इसलिए हम ने खोज खबर ली है।'—

सुन कर ललित शर्माया। विमान उसका सहपाठी है। उसके पास कोइ लड़की आती है, इस सदर्भ मे उम्र म छोटा सुबल से बात करने की इच्छा उसे नहीं हुई। सिर्फ बोला, 'क्या पता चला ?'

'अमीर घराने की लड़की है। हिंदुस्तान पार्क म आलीशान मकान है। बहुत बड़ा अहाता है। फुलवारी है। दो तीन गाड़िया हैं। कुत्ता है। छत पर सगमर्मर की परी है।

बोलते-बोलते सुबल उत्तेजित हो उठा, शायद उसे अपनी उत्तेजना का आभास तक नहीं, लेकिन ललित ने उसे क्रमश उत्तेजित होते देखा। सुबल की आखें चमक रही हैं। काले-कलूटे चेहरे पर शिराए उभर आयीं हैं।

सुबल उत्तेजित स्वर म बोला, लड़की ब्रेबार्न कालेज म पढ़ती है। अच्छी गायिका हैं। फक्शन म गाती है। ऐसी लड़की के साथ विमान जैसे आदमी का क्या सबध। वह है क्या, कारपोरेशन के महतरों का ठप्पा बाबू ही तो। गरीब मेहतरों से घूस लेता है। सिंक-पिक बदन, चोहाड़ सा चेहरा, ऐसे थर्ड क्लास आदमी के पास उतने बड़े खानदान की लड़की क्या आती है? इसका साफ मतलब है कि विमान रक्षित उस लड़की को ब्लफ दे रहे हैं। अमीर लड़की से शादी हो जाय, फिर सारी जिंदगी मौज म कटेगी। लगता है कि उस लड़की का काइ और लवर है। उस दिन गुण्डों से उसी ने विमान बाबू की मरम्मत करायी होगी। बम्मारी की बात सरासर झूठ है। आप विश्वास करते हैं ललितदा, कि उस जैसे मरियल आदमी को कोई लूटेगा?

ललित गभीर होकर बोला, 'क्या करना चाहते हो ?'

'आपका दोस्त है। हम क्या कर सकते हैं? हाँ, आप उसे समझा दीजिए कि मोहल्ले म रहना है तो शरीफ बनकर रहे। आपही बताइए, वैसी लड़की की तरफ हाथ बढ़ाना क्या उसके लिए उचित है? शायद लड़की भी विमान बाबू का इतिहास नहीं जानती—ऐसा तो आजकल अक्सर होता है। अमीर लड़की को

उससे शादी की जाती है। लेकिन यह अच्छी बात तो नहीं है न। उस लड़की को बचाना हमारा फर्ज है। हम लड़की को भी होशियार कर देंगे।'

ललित ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसका मन उदास हो गया। अन्य मनस्क-सा वह अपने कमरे में आया। वह चिन्तित हो उठा, विमान या उस अनजान लड़की के लिए नहीं, बल्कि मुकुल के लिए। उसकी चमचमाती आंखों और तमतमाए चेहरे पर न जाने क्या था कि ललित बेचैन हो उठा। एक अमीर युवती विमान के पास आती है, यह क्या मुकुल बर्दाश्त नहीं कर पाता? न करना ही तो स्वाभाविक है। विमान जैसे मरियल आदमी के पास कोई मूल्यवान वस्तु देखकर मरियल से मरियल आदमी भी थप्पड़ मारकर छीन लेना चाहता है।

शम्भू और मुकुल वगैरह को पता है कि एक जमाना था, जब ललित भी अमीर घराने की मितु के पीछे दीवाना था? मितु को घर बुलाकर मां ने बहुत समझाया था। ललित की बड़ी प्रशंसा की थी। उसे शादी के लिए राजी करने की हर सम्भव कोशिश की थी। लेकिन सभी कोशिश असफल रही। यह सब जानते हैं, आज के छोकरे? उन्हें पता है कि मोहल्ले में ललित सिर झुकाकर चलता था?

उन्हें क्या पता कि आज भी जब मितु मायके आती है, ललित कितना बेचैन हो उठता है। नहीं, शम्भू वगैरह यह सब नहीं जानते। उस समय बड़े बच्चे थे। हाफ-पैण्ट पहन कर रास्ते पर रबर की गेंद से फुटबाल खेलते थे। अगर जानते होते तो आज मुकुल ऐसे लहजे में ललित से बात नहीं करता।

मितु की याद आयी और ललित एक दूसरे ही लोक में पहुंच गया। निस्तब्ध लोक। वहां ललित की असफलताएं सुसज्जित रखी हैं। मितु ने उसकी उपेक्षा की। वह न नेता बन सका, न सफल आदमी। यौवन के बीच रास्ते पर अब आखिरी वेला की पीली रोशनी फैली है। दूर-बहुत दूर की एक निस्तब्धता धीर गंभीर गति में उसकी ओर बढ़ रही है। यह निस्तब्धता उसे निस्तब्ध बना देगी!—ललित धीरे-धीरे मां के पास जाकर बैठा। मां की गोद में सिर रख कर बोला, 'मां, मेरे सिर पर हाथ रखो। रखो न मां।

मां सिर पर हाथ फेरते-फेरते बोलीं, 'क्या हुआ बेटे?'

*ललित का बोलना जारी था। उसने शायद मां की बात नहीं सुनी।* वह बड़बड़ा रहा था, 'सब भुला दो मां। मैं सब कुछ भूल जाना चाहता हूं। बुद्धि, स्मृति, अविद्या को भूलना चाहता हूं। नन्हा मुन्ना ललित बन तुम्हारी गोद में आना चाहता हूं मां।

कभी-कभार मन बेचैन होने पर ललित मां की गोद में सिर रख कर ऐसी ही बातें किया करता है।

## पन्द्रह

*

दूसरे दिन राका ने कालेज में शाश्वती को पकड़ा। चहक उठी राका, 'क्या री छोरी, भैया भाये ?'

बेचारी शाश्वती एक अजीब-सी परेशानी में पड़ गयी। उसकी आँखों में एक विचित्र प्रकार की विवशता उभर आयी।

'बोल न साली, भैया कैसे लगे ?'

अपनी सारी शक्ति बटोर कर बोली शाश्वती, 'अच्छे हैं।'

'भैया कह रहे थे कि उन्हें तुमसे कोई सीरियस बात करनी है। वक्त मिलते ही वह एक दिन गाड़ी लेकर आयेंगे। हम गंगा किनारे किसी निर्जन स्थान में बैठेंगे।'—राका के चेहरे पर शरारती मुस्कान उभरती गयी। शिकायती लहजे में बोली, 'क्या यार, अब तक बताया भी नहीं कि दोनों के बीच क्या खुसुर-फुसुर हुई। बड़ी सीरियस बात हुई होगी। जरा मैं भी तो सुनूँ तुम दोनों की सीरियस बात।'

बेचारी शाश्वती! शुद्ध शाश्वती! सिर से पैर तक पवित्र शाश्वती ने एक अजीब-सी ठंडक महसूस की। उसे कुछ बोलने की इच्छा नहीं हुई।

थर्ड पीरियड में क्लास नहीं था। कामन रूम में खिड़की के करीब बैठी शाश्वती कापी में चेहरे बना रही थी। वह अक्सर ऐसा किया करती है। वह रेखाओं में कोई चेहरा उतार रही थी कि शिवानी ने आवाज दी, 'ऐ।'

शाश्वती ने गर्दन घुमा कर देखा।

शिवानी मुस्कराती हुई उसके पास आ खड़ी हुई और एक विशेष मुस्कान में बोली, 'जा न, तेरे वो पेड़ तले खड़े हैं।'

शाश्वती अवाक न हुई। वह जानती थी कि आज वह जरूर आयेगा। अक्सर आफिस से भाग आता है।

लेकिन और दिन की तरह आज हड़बड़ा कर नहीं भागी शाश्वती। बड़े इत्मीनान से उसने कापी बंद की। खड़ी होकर साड़ी ठीक की। कपाल तक आयी दो-चार लटें

उनसे शादी की जाती है। लेकिन यह अच्छी बात तो नहीं है न। उस लड़की का बचाना हमारा फर्ज है। हम लड़की को भी होशियार कर देंगे।'

ललित ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसका मन खराब हो गया। अन्य मनस्क-सा वह अपने कमरे में आया। वह चिन्तित हो उठा, विमान या उस अनजान लड़की के लिए नहीं, बल्कि सुनल के लिए। उसकी चमचमाती आंखों और तमतमाए चेहरे पर न जाने क्या था कि ललित बेचैन हो उठा। एक अमीर युवती विमान के पास आती है, यह क्या सुबल बर्दाश्त नहीं कर पाता? न करना ही तो स्वाभाविक है। विमान जैसे मरियल आदमी के पास कोई मूल्यवान वस्तु देखकर मरियल से मरियल आदमी भी थप्पड़ मारकर छीन लेना चाहता है।

शम्भू और सुबल वगैरह को पता है कि एक जमाना था, जब ललित भी अमीर घराने की मितु के पीछे दीवाना था? मितु को घर बुलाकर मां ने बहुत समझाया था। ललित की बड़ी प्रशंसा की थी। उसे शादी के लिए राजी करने की हर सम्भव कोशिश की थी। लेकिन सभी कोशिश असफल रही। यह सब जानते हैं, आज के छोकरे? उन्हें पता है कि मोहल्ले में ललित सिर झुकाकर चलता था?

उन्हें क्या पता कि आज भी जब मितु मायके आती है, ललित कितना बेचैन हो उठता है! नहीं, शम्भू वगैरह यह सब नहीं जानते। उस समय बड़े बच्चे थे। हाफ-पैण्ट पहन कर रास्ते पर रबर की गेंद से फुटबाल खेलते थे। अगर जानते होते तो आज सुबल ऐसे लहजे में ललित से बात नहीं करता।

मितु की याद आयी और ललित एक दूसरे ही लोक में पहुंच गया। निस्तब्ध लोक। वहां ललित की असफलताएं सुसज्जित रखी हैं। मितु ने उसकी उपेक्षा की। वह न नेता बन सका, न सफल आदमी। यौवन के बीच रास्ते पर अब आखिरी वेला की पीली रोशनी फैली है। दूर-बहुत दूर की एक निस्तब्धता धीर गंभीर गति में उसकी ओर बढ़ रही है। यह निस्तब्धता उसे निस्तब्ध बना देगा।—ललित धीरे-धीरे मां के पास जाकर बैठा। मां की गोद में सिर रख कर बोला, 'मां, मेरे सिर पर हाथ रखो। रखो न मां।

मां सिर पर हाथ फेरते फेरते बोलीं, 'क्या हुआ बेटे?'

ललित का बोलना जारी था। उसने शायद मां की बात नहीं सुनी। वह बड़बड़ा रहा था, 'सब भुला दो मां। मैं सब कुछ भूल जाना चाहता हूं। बुद्धि, स्मृति, अविद्या को भूलना चाहता हूं। नन्हा मुन्ना ललित बन तुम्हारी गोद में आना चाहता हूं मां।

कभी-कभार मन बेचैन होने पर ललित मां की गोद में सिर रख कर ऐसी ही बातें किया करता है।

## पन्द्रह

*

दूसरे दिन राका ने कालेज म शाश्वती को पकड़ा। चहक उठी राका, 'क्या री छोरी, भैया भाये?'

बेचारी शाश्वती एक अजीब-सी परेशानी म पड गयी। उसकी आखो म एक विचित्र प्रकार की विवशता उभर आयी।

'बोल न साली, भैया कैसे लगे?'

अपनी सारी शक्ति बटोर कर बोली शाश्वती, 'अच्छे ह।'

'भैया कह रहे थे कि उन्हें तुमसे कोइ सीरियस बात करनी है। वक्त मिलते ही वह एक दिन गाड़ी लेकर आयेंगे। हम गगा किनारे किसी निर्जन स्थान मे बैठेंगे।'—राका के चेहरे पर शरारती मुस्कान उभरती गयी। शिकायती लहजे मे बोली, 'क्या यार, अब तक बताया भी नहीं कि दोनो के बीच क्या खुसुर-फुसुर हुइ? वही सीरियस बात हुइ होगी। जरा मैं भी तो सुनू तुम दोनो की सीरियस बात।'

बेचारी शाश्वती। शुद्ध शाश्वती। सिर से पैर तक पवित्र शाश्वती ने एक अजीब-सी ठडक महसूस की। उसे कुछ बोलने की इच्छा नहीं हुइ।

थर्ड पीरियड म क्लास नहीं था। कामन रूम म खिड़की के करीब बैठी शाश्वती कापी म चेहरे बना रही थी। वह अक्सर ऐसा किया करती है। वह रेखाओं म कोइ चेहरा उतार रही थी कि शिवानी ने आवाज दी, 'ऐ।'

शाश्वती ने गर्दन घुमा कर देखा।

शिवानी मुस्कराती हुइ उसके पास आ खड़ी हुइ और एक विशेष मुस्कान म बोली, 'जा न, तेरे वो पेड़ तले खड़े हैं।

शाश्वती अवाक न हुइ। वह जानती थी कि आज वह जरूर आयेगा। अक्सर आफिस से भाग आता है।

लेकिन और दिन की तरह आज हड़बड़ा कर नहीं भागी शाश्वती। बड़े इत्मीनान से उसने कापी बद की। खड़ी होकर साड़ी ठीक की। कपाल तक आयी दो-चार लटें

पढ़े लिखों से मेरी दोस्ती है। सभव है, मैं इस परिवार में धीरे-धीरे नयी चेतना [illegible] सकूं, व्यवसाय को सम्मानजनक बना सकूं। हमारे बच्चे पढ़ेंगे, आत्म-सम्मान के [illegible] साज होंगे, मनुष्यमात्र से प्यार करेंगे। हमारे बच्चे गिरवी जेवर नहीं [illegible]। एक श्रेणी को बाबू, हुजूर और एक श्रेणी को नौकर कह कर नहीं [illegible]।—आखिरकार बहुत सोच-समझ कर मैं ने पिता जी से कहा, मैं कारोबार [illegible], रूनी। सर्वनाश तो मैं कर ही चुका हूं। अब बताओ, मैं ने ठीक [illegible]

[illegible] के शीशे पर उंगली से किसी का चेहरा बना रही थी। [illegible]

बड़ी देर तक आदित्य मुंह झुकाये बैठा रहा। शाश्वती का दिल धक धक कर रहा था। वह भी चुप बैठी रही।

बड़ी देर बाद आहिस्ते आहिस्ते आदित्य बोला, 'मैं नौकरी छोड़ रहा हूं सती। कारोबार में पिता जी के हाथ बटाऊंगा। कल रात सब ठीक हो गया है।'

शाश्वती अवाक हुई। ऐसी तो बात नहीं थी। पिता के कारोबार से आदित्य को सख्त नफरत थी, इसलिए तो उसने नौकरी की थी। और फिर शाश्वती से प्यार करने के दौरान एक दिन वह समझ गया कि उसके घर शाश्वती को कभी बहू की मर्यादा नहीं मिलेगी। इसलिए उसे शाश्वती के साथ अलग घर बसाना होगा। अलग घर बसाने के लिए नौकरी जरूरी थी। पिता के व्यवसाय में भाग लेने से क्या वह अलग घर बसा सकेगा? ब्राह्मण कन्या का बहू के रूप में उसके पिता स्वीकार करेंगे? शायद आदित्य ने यह सब नहीं सोचा है।

शाश्वती ने इतने सारे प्रश्न नहीं किये। सिर्फ तीखी आवाज में बोली, 'अच्छा ही तो है। तुम्हारे पिता जी भी तो यही चाहते थे। अब पिता की पसंद से शादी कर लो।'

आदित्य सहसा रुक गया। गुस्से में बोला, 'बकवास बंद करो। पूरी बात भी नहीं सुनी और लगी बकवास करने। क्या समझती हो तुम? पिता के कारोबार में हाथ बटाऊंगा, तो तुम से शादी नहीं कर सकूंगा, यही न?'

आदित्य की आंखों में आंखें डाल कर शाश्वती धीर-गंभीर स्वर में बोली, 'मुझे तुम्हारे माता-पिता, आत्मीय-स्वजन स्वीकार नहीं करेंगे। मुझ से विवाह करने पर तुम्हें मां-बाप से अलग रहना होगा। पिता के कारोबार में रह कर तुम अलग घर बसा सकोगे?

आदित्य सिर के बाल खींचने लगा। झटपट बोला, 'कुछ तो करना ही होगा। यह सब तुम्हें नहीं सोचना है। पिता जी को मैं मना लूंगा। उनके पांव पकड़ूंगा। वे मान जायेंगे।

सहसा शाश्वती के होठों पर व्यंग की मुस्कान थिरक आयी, अब तो तुम अपने ग्राहकों को बाबू कहा करोगे?

एकाएक आदित्य सीधा होकर बैठा, 'हां, बाबू कहूंगा। इससे क्या आता-जाता है? मेरे बाप-दादा ग्राहकों को बाबू कह सकते हैं, तो फिर मैं क्या नहीं कह सकता?

शाश्वती अचानक सांस फेंक कर बोली, 'तब तो सचमुच में तुम से मेरी जात नहीं मिलेगी।

सुन कर बड़ी देर तक वह स्तब्ध रहा। कई बार बोलना चाहा, पर बोल न सका। बड़ी देर बाद उदास स्वर में बोला, 'इसलिए न कह रहा था कि कल रात

को सवार कर इत्मीनान से धीरे-धीरे चल पड़ी। न जाने क्यों आज उसका कलेजा धक धक कर रहा है! शायद आदित्य से वह आँखें न मिला सकेगी।

पेड़ की छाया में आदित्य खड़ा है। आज उसकी रंगत ही कुछ और है। गाल पर दाढ़ी का नामो-निशान नहीं—एकदम साफ। बगुले के पंख की तरह धुली धोती और कमीज। इत्मीनान से सवरे बाल। इतना साफ-सुथरा, इतना चुस्त-दुरुस्त आदित्य विरले ही रहता है। अक्सर जब दाढ़ी कमाता है, तो कपड़े गंदे होते हैं। साफ कपड़े पहनता है, तो बाल रूखे सूखे रहते हैं। लेकिन आज का आदित्य तो कोई और ही आदित्य है। यहां तक कि करीब पहुंचने पर शाश्वती को पावडर की मीठी मीठी सुगंध भी मिली।

आज आदित्य मुस्कराया नहीं। उसके चेहरे पर ढेर सारी गंभीरता चिपकी है। नपी तुली आवाज में बोला, 'कल कहां गयी थी?'

'एक सहेली के साथ आकाशवाणी भवन गयी थी।'—शाश्वती की आँखें जमीन पर जा टिकीं।

'सुना, एक गाड़ी में एक लड़के और एक लड़की के साथ गयी थी। लड़का कौन है?'

जवाबतलबी का लहजा शाश्वती को कतई पसंद न आया, फिर भी वह शांत स्वर में बोली, 'राका का भाई सुमन्त।'

'बहुत जरूरी काम था?'

'नहीं। यूं ही साथ गयी थी।'

आदित्य क्षण भर चुप्पी में डूब गया। बालों की एक लट उंगली में लपेटता हुआ अजीब-सी आवाज में बोला, 'कल तुम मिल जाती, तो इतना बड़ा सर्वनाश नहीं होता।

शाश्वती की भृकुटी आगे तत्क्षण उठीं और आदित्य पर जम गयीं। बोल उठी शाश्वती, 'सर्वनाश! कैसा सर्वनाश?'

लंबी सांस लेकर आदित्य बोला, 'बताऊंगा। लेकिन यहां नहीं। चलो, कहीं और चल कर बैठते हैं।'

'एस० पी० का क्लास रोज छूट जाता है। क्लास कर लेती।

'कह रहा हूं न, जरूरी बात है।'

सकपका उठी शाश्वती। आदित्य इतना रूखा हो सकता है, यह नहीं जानती थी।

आदित्य फिर दहाड़ उठा, 'क्यों, चलना है?'

शाश्वती मीठी आवाज में बोली, 'चलो।'

दरीबाग स्टेशन जाने के रास्ते में बायें फुटपाथ पर एक रेस्तरां है। दोनों वहां अक्सर आकर बैठते हैं।

बड़ी देर तक आदित्य मुंह झुकाये बैठा रहा। शाश्वती का दिल धक-धक कर रहा था। वह भी चुप बैठी रही।

बड़ी देर बाद आहिस्ते आहिस्ते आदित्य बोला, 'मैं नौकरी छोड़ रहा हूं मती। कारोबार म पिता जी के हाथ बटाऊंगा। कल रात सब ठीक हो गया है।'

शाश्वती अवाक हुई। ऐसी तो बात नहीं थी। पिता के कारोबार से आदित्य को सख्त नफरत थी, इसलिए तो उसने नौकरी की थी। और फिर शाश्वती से प्यार करने के दौरान एक दिन वह समझ गया कि उसके घर शाश्वती को कभी बहू की मर्यादा नहीं मिलेगी। इसलिए उसे शाश्वती के साथ अलग घर बसाना होगा। अलग घर बसाने के लिए नौकरी जरूरी थी। पिता के व्यवसाय मे भाग लेने से क्या वह अलग घर बसा सकेगा? ब्राह्मण कन्या को बहू के रूप मे उसके पिता स्वीकार करेंगे? शायद आदित्य ने यह सब नहीं सोचा है।

शाश्वती ने इतने सारे प्रश्न नहीं किये। सिर्फ तीखी आवाज म बोली, 'अच्छा ही तो है। तुम्हारे पिता जी भी तो यही चाहते थे। अब पिता की पसंद से शादी कर लो।'

आदित्य सहसा गुस्सा गया। गुस्से मे बोला, 'बकवास बंद करो। पूरी बात भी नहीं सुनी और लगी बकवास करने। क्या समझती हो तुम? पिता के कारोबार मे हाथ बंटाऊंगा, तो तुम से शादी नहीं कर सकूंगा, यही न?

आदित्य की आखों में आंखें डाल कर शाश्वती धीर गभीर स्वर म बोली, 'मुझे तुम्हारे माता-पिता, आत्मीय-स्वजन स्वीकार नहीं करेंगे। मुझ से विवाह करने पर तुम्हें मां-बाप से अलग रहना होगा। पिता के कारोबार म रह कर तुम अलग घर बसा सकोगे?

आदित्य सिर के बाल खींचने लगा। झटपट बोला, 'कुछ तो करना ही होगा। यह सब तुम्हें नहीं सोचना है। पिता जी को मैं मना लूंगा। उनके पांव पकड़ूंगा। वे मान जायेंगे।

सहसा शाश्वती के होठों पर व्यंग की मुस्कान थिरक आयी, अब तो तुम अपने ग्राहकों को बाबू कहा करोगे?

एकाएक आदित्य सीधा होकर बैठा, 'हां, बाबू कहूंगा। इससे क्या आता-जाता है? मेरे बाप-दादा ग्राहकों को बाबू कह सकते हैं, तो फिर मैं क्या नहीं कह सकता?

शाश्वती अचानक सास फेंक कर बोली, 'तब तो सचमुच मे तुम से मेरी जात नहीं मिलेगी।

सुन कर बड़ी देर तक वह स्तब्ध रहा। कई बार बोलना चाहा, पर बोल न सका। बड़ी देर बाद उदास स्वर मे बोला, 'इसलिए न कह रहा था कि कल रात

मेरा सर्वनाश हो गया। वह कालेज में मिल जाती, तो कोई-न-कोई रास्ता निकल ही आता।'—आदित्य का चेहरा मासूम हो उठा।

शाश्वती को उस पर दया आयी। बोली, 'क्या हुआ था कल?'

आदित्य धीरे धीरे बोला, 'परसों तुम से भोंडा व्यवहार किया और फिर अपने आप पर गुस्सा गया। तुम रोयी थी। कलप-कलप कर रोयी थी। मैं ने तुम्हें उल्टा सीधा कहा था। लेकिन मैं क्या करूं सती, मुझे तो अपने आप पर शक है। लाख कोशिश कर भी मैं यह नहीं भूल पाता कि मेरी रगों में एक ऐसे बनिये का खून बहता है जो पैसे की खातिर एक श्रेणी के पाँव पकड़ता है और फिर पैसे से ही एक श्रेणी को खरीद लेता है। गद्दी में मेरे पिता ग्राहकों को बाबू कह कर पुकारते हैं और घर में सिंहासननुमा विशाल कुर्सी पर बैठ कर चांदी की रिकाबी में फल खाते हैं। नौकर खड़ा खड़ा पंखा झलता है। मेरी मां गिरवी के जेवरों से लदी रहती हैं। हमारे खानदान में कोई ज्यादा पढ़ता लिखता नहीं। अगर ज्ञान हुआ और पढ़ना छोड़ कर कारोबार में जुट गया। गद्दी में हम ग्राहकों के पाँव पकड़ते हैं और घर में डेढ़ सौ साल पुराना सामंत बन जाते हैं। तुम नहीं जानती, शोभा बाजार के एक पृथक महल में मेरे पिता की रखैल रहती है। हम उसे मां कह कर पुकारते हैं। यही है हमारी खानदानी शिक्षा। असली शिक्षा तो घर में मिलती है सती। बी० ए०, एम० ए० करके भी मैं ललित जैसा न बन सका। दौलत रहने पर भी मैं रमेन न हो सका। वे अपनी पारिवारिक शिक्षा के कारण मुझ से बहुत आगे हैं। ललित और रमेन को अपने आप पर विश्वास है, पर मुझे नहीं। वे स्वयं पर विश्वास करते हैं और दूसरों पर विश्वास कर सकते हैं। लेकिन मैं क्या कर किसी पर विश्वास करूं जब मुझे अपने आप पर संदेह है। यही कारण है कि तुम से प्यार करता हूं पर मन-ही मन सशंकित रहता हूं कि तुम मेरी कमजोरी न पकड़ लो। देखो न, खुद तुम्हें ललित से मिलाया और फिर संदिग्ध हो उठा। तुम नहीं जानती सती ललित कितना स्मार्ट था! मुझ जैसे बनिया के बच्चे को उसने कम्यूनिस्ट बनाया था। अपने परिवार से नफरत करना सिखाया था। उसी की वजह से मैं ने अपने खानदानी कारोबार में दिलचस्पी नहीं ली। उसने मुझे जहर पिलाया और मैं चुपचाप पी गया। तुम नहीं जानती सती, मैं जानता हूं कि वह कितना खतरनाक है, कितना आकर्षक है! इसलिए न उस दिन तुम्हें बार बार पूछा था कि ललित तुम्हें कैसा लगा?'

सहसा शाश्वती को बड़ा भय लगा। जोरों से छाती धड़कने लगी।—कहीं आदित्य तो यह सब नहीं भाप गया?

नहीं, आदित्य कुछ न भाप सका। अपनी ही बातों में डूबा आदित्य फीकी

मुस्कान मुस्करा कर बोला, 'खैर, छोड़ो यह सब। उस दिन, यानी परसों जब मैं तुम से वैसा व्यवहार कर घर लौटा, तब मेरे मन में ज़हर भरा था। मन सिर्फ एक ही बात कह रहा था कि तुम मुझे प्यार नहीं करती। प्यार नहीं करती, क्योंकि मैं ललित या रमेन जैसा नहीं हूं। क्योंकि मेरी रगों में एक बनिये का खून बहता है। मुझ में नीचता भरी है। मैं मतलबी हूं। लेकिन मैं जो कुछ हूं, अपने परिवार की वजह से हूं। मेरी बुराइयों के लिए जिम्मेवार हैं मेरे माता-पिता और हमारी विशाल इमारत। यही कारण था कि घर पहुंचते ही मेरा गुस्सा उबल पड़ा। पिता जी ने फल का एक टुकड़ा भी नहीं लिया था कि मैं उनके सामने जा खड़ा हुआ और चीख पड़ा, आप पढ़े क्या नहीं? पिता जी अवाक रह गये। मैं मां पर भी उबल पड़ा। खूब उल्टा सीधा सुनाया। पिता जी बर्दाश्त न कर सके। उन्होंने मुझे घर से निकाल दिया। सारी रात अस्तबल में कटी। सुबह अपने एक दोस्त के मेस में गया। उसके गंदे बिस्तर देख कर उबकाई आने लगी। तामचीन के बर्तन देख कर भूख गायब हो गयी। लेकिन एक बात मैं अच्छी तरह समझ गया कि मैं अभ्यास का दास हो गया हूं।'

आदित्य क्षण भर चुप रहा। कुछ सोच कर फिर शुरू हुआ। तुम से मिलने कालेज गया। तुम नहीं मिली। गड़ियाहाट जंक्शन पर खड़े-खड़े शाम ढल आयी। कहां जाऊं? इतने बड़े कलकत्ता में सिर छुपाने की जगह न खोज सका। यूं तो ललित, तुलसी या संजय के घर जा सकता था, पर नहीं गया। जाने की इच्छा ही न हुई। मन ने कहा, वे लोग तुम से ऊंचे हैं। कालेज के दोस्त हैं तो क्या हुआ, हैं तो तुम से ऊंचे। उनसे तुम्हारी जात नहीं मिलती। आखिरकार मैं ने सोचा घर छोड़ कर मैं ने गलती की है। और फिर लाज-शरम पी कर मैं वापस घर चला गया। मां ने छाती से चिपका लिया। बोली, 'उनके चरण छू कर क्षमा मांग।'

'मांगी?'—शाश्वती ने सायास प्रश्न किया।

'मांगी।'—आदित्य मुस्करा कर बोला, 'हां शाश्वती, बचपन के बाद मैं ने पिता का कभी प्रणाम नहीं किया। मैं उनसे घृणा करता था। लेकिन कल रात मैं ने उनके पांव छू कर प्रणाम किया। उन्हों ने मुझे अपनी छाती में भींच लिया। बड़ी रात तक मुझ से बातें करते रहे। बोले, परिवार के विरुद्ध विद्रोह कर कोई शान्ति नहीं पा सकता। पारिवारिक जीविका से अच्छी और कोई जीविका नहीं हो सकती।—मैं ने सोचा। खूब सोचा। घर में रहना है तो घरवालों की तरह रहना होगा। घर में बाहरी बन कर रहने से कोई फायदा नहीं, बल्कि नुकसान है। मैं महान तो बनूंगा नहीं, हां, परिवार से सम्पर्क अदृश्य विषाक्त हो जायेगा। इससे तो अच्छा है कि मैं तन मन-धन से परिवार का बन जाऊं। मैं कुछ पढ़ा-लिखा हूं।

पढ़े-लिखों मे मेरी दोस्ती है। सभव है, मैं इस परिवार म धीरे-धीरे नयी चेतना ला सकू, व्यवसाय को सम्मानजनक बना सकू। हमारे बच्चे पढ़ेंगे, आत्म-सम्मान के प्रति सजग होंगे, मनुष्यमात्र से प्यार करेंगे। हमारे बच्चे गिरवी जेवर नहीं पहनेंगे। एक श्रेणी को बाबू, हुजूर और एक श्रेणी को नौकर कह कर नहीं पुकारेंगे।—आखिरकार बहुत सोच-समझ कर मैं ने पिता जी से कहा, मैं कारोबार करूंगा। सती! सर्वनाश तो मैं कर ही चुका हूं। अब बताओ, मैं ने ठीक किया है न!

शाश्वती टेबिल के शीशे पर उंगली से किसी का चेहरा बना रही थी। वह चुप रही।

अधीर आदित्य ने झुक कर उसका हाथ पकड़ना चाहा। शाश्वती ने हाथ हटा लिया। बोली, 'प्रश्न तो अब तक प्रश्न ही है।'

'प्रश्न? कौन-सा प्रश्न?'

'मैं।'

क्षण भर चुप रह कर शाश्वती बोली, 'प्रश्न तो सिर्फ मैं ही हूं। मेरे कारण तुम्हारे परिवार में अशान्ति होगी। माता-पिता से झगड़ा होगा। वे विजातीय विवाह स्वीकार नहीं करेंगे।

बच्चे की तरह बोल उठा आदित्य, 'करेंगे। मैं पिता जी को मना लूंगा।'

'अगर राजी न हों?'

आदित्य बोलने ही जा रहा था कि वह नौकरी नहीं छोड़ेगा। कारोबार छोड़ देगा। घर द्वार छोड़ देगा। शाश्वती के साथ अलग घर बसायेगा। लेकिन बोलने से पहले उसने कुछ सोचा और फिर सोचता ही रहा।

सोचते-सोचते आदित्य के कई दिन बीत गये। दाढ़ी बढ़ गयी। रूखे-सूखे बाल। गंदे कपड़े। अन्यमनस्कता का मना बोझ लिए वह आफिस जाता है। अपनी कुर्सी पर ज्यादा देर बैठ नहीं सकता। इस टेबिल से उस टेबिल घूमता रहता है। कैन्टीन मे एक कप चाय लिए गुमसुम बैठा रहता है। आफिस से निकल कर पैदल चलता है। तीन-चार दिन से वह शाश्वती से भी नहीं मिला। वह सिर्फ सोचता है। दिन-रात सोचता है।

और इधर शाश्वती एकान्त मिलते ही अपनी कापी खोल कर बैठ जाती है। तीन-चार दिन से वह एक तेज-तर्रार चेहरा बनाने की कोशिश कर रही है। लेकिन मन में गढ़ा चेहरा कागज पर नहीं उतरता।

एक दिन पहली घंटी खत्म कर शाश्वती अर्थशास्त्र की कक्षा में जा रही थी कि चहक कर राका सामने आ खड़ी हुई। आंखें नचा कर बोली, 'आज भैया आयेंगे।

ठीक साढ़े चार बजे। लेकिन आज मैं नहीं जाऊंगी। तुम अकेली जाओगी। भैया को तुम से सीरियस बात करनी है।

शान्तनी आश्चर्य से बोली, 'कौन आयेंगे?'

रमा अवाक होकर बोली, 'अरे! सुमत भैया को इतनी जल्दी भूल गयी!'

सचमुच म शाश्वती भूल गयी थी। सुमत सुन्दर है, पर उसकी सुन्दरता म ऐसी कोई बात नहीं जो याद रखी जाये। यही कारण है कि वह उसे एकदम भूल गयी थी।

शाश्वती बोली, 'लेकिन आज तो मुझे बहुत काम है।'

'भैया बड़ी आशा लेकर आ रहे हैं।'

बड़ी मुश्किल में फंस गयी शान्तनी। बड़ी नम्र लड़की है बेचारी। सहज-सरल कौशल भी प्रयोग नहीं कर सकती। क्या करे, क्या न करे, म जकड़ी शान्तनी विरस होकर बोली, 'तब क्या करूं?'

'काम को मार गोली। यह सबसे जरूरी काम है, आज भैया तुमसे प्रपोज करेंगे।'

शाश्वती जम गयी, हाथ पांव जकड़ गए।

बड़ी मुश्किल से कामन रूम में आकर बैठ गयी बेचारी। एक अजीब-सी बेचैनी उसके मन म उछल-कूद करती रही। अर्थशास्त्र की कक्षा मे नहीं गयी। उल्टी-सीधी चिन्ताओं म वह डूबती गयी। छाती धड़कती रही, धक-धक। पसीना म डूब गयी बेचारी। अब वह क्या करे।



दफ्तर मे ललित टिफिन कैरियर लेकर निकल ही रहा था कि ठीक उसी समय आदित्य आ धमका। पागल जैसा चेहरा-मोहरा। आंखों में अजीब-सी बेचैनी। एकदम दीवाना-सा लगता था वह।

ललित बोला, 'आज छुट्टी है क्या?'

आदित्य दोनों हाथ ललित के कंधों पर रखकर बोला, 'डार्लिंग, तुमसे कुछ जरूरी बात है। सुनोगे?'

हमेशा हंसमुख आदित्य को गंभीर देख कर ललित घबड़ा गया। बोला, 'आओ अन्दर बैठते हैं।'

आदित्य कमरे में आया और सीधे बिस्तर पर लम्बा हो गया। बड़ी देर तक न के बल लेटा रहा।

बड़ी देर तक ललित चुप-चाप इन्तजार करता रहा, और फिर उसकी बगल में बैठ कर हमदर्दी की आवाज म बोला, 'बोल न, क्या बात है।'
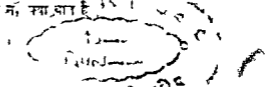
ललित को लगा कि आदित्य रो रहा है। हल्के-हल्के कांप रहा है। मुंह ढक रखा है उसने। हां, आदित्य रो रहा है। रोना पहचानता है ललित।

वह विह्वल बना बुद्धू-सा बैठा रहा। कुछेक क्षण बाद फिर बोला, 'आदित्य, क्या बात है? बोलते क्यों नहीं?'

आदित्य चुप रहा। नल के जल पूर्ववत लेगा रहा।

मां कमरे में आयी। आंखें सिकोड़ कर बोली, 'कौन है ललित?'

मां को कमरे से बाहर भेजने की खातिर ललित उठ ही रहा था कि आदित्य ने मुंह घुमाया। फीकी मुस्कान में बोला, 'आपका बेटा आदित्य। एक कप चाय मिल सकती है मां?'

मां हंस कर बोली, 'अच्छा, तो तू है। उठ कर बैठ, चाय पिलाती हूं। चूल्हे में आंच है, तुरन्त बन जायगी।'

आदित्य उठा। कुछेक क्षण शान्त-संयत सा कुर्सी पर मुंह रख कर चुपचाप बैठा रहा, फिर बोला, 'ललित, सती मुझे प्यार नहीं करती।'

सुनते ही ललित स्तब्ध हो गया। अब तक उसका अवचेतन मन यही आशा कर रहा था।

ललित ने थोड़ा समय लिया, फिर बोला, 'वजह?'

आदित्य मातमी आवाज में बोला, 'उससे मेरी जाति नहीं मिलती।'

थोड़ा अवाक होकर ललित बोला, 'मजाक है क्या! इतने दिनों बाद तेरी शादमनी को जाति का ख्याल कैसे आया?'

'नहीं, नहीं, जाति का सवाल तो सबसे पहले मैंने उठाया था, इसमें उसका कोई दोष नहीं।'

'तुम जात-पात मानते हो आदित्य?'—ललित ने मृदुल स्वर में प्रश्न किया।

आदित्य दीन-हीन स्वर में बोला, 'मैं बनिया का बच्चा हूं। अपने खानदान का पहला ग्रेजुएट। हमारे खानदान के कल्चर से उसका मेल नहीं खाता।'

यह सुन कर ललित को बड़ा कष्ट हुआ। आदित्य की यह दुर्बलता ललित से छुपी नहीं है। बाहर से तो कुछ समझ में नहीं आता, पर अन्दर से आदित्य बड़ा दुर्बल है।

आदित्य के सिर पर एक हाथ रख कर ललित बोला, 'क्या बात है, खुल कर बताओ। झगड़ा हुआ है क्या?'

थोड़ा सोचकर आदित्य बोला, 'नहीं, झगड़ा तो नहीं हुआ। बस, कुछ-कुछ वैसा ही समझो।'

'सब कुछ खोल कर बताओ।'

आदित्य लम्बी सांस लेकर बोला, 'शुरुआत तो तुम्हारी वजह से हुयी थी।'

'मेरी वजह से !'—ललित विस्मित हुआ।

'हां, तुम्हारी वजह से। जिस दिन सती को लेकर मैं तुमसे मिलने आया था उसी दिन मुझे एहसास हुआ था तुमसे उसकी जाति मिलती है, मुझसे नहीं।'

'क्या मतलब ?' ललित की समझ में कुछ नहीं आया।

आदित्य फिर से लेटा हो गया। बोला, 'मैं ठीक-ठीक समझा नहीं सकता। गुस्सा न करना ललित, मेरा मन-मिजाज ठीक नहीं है।'

ललित चुप रहा।

मां चाय देकर बोली, 'भात खाकर आए हो ?'

'हां।'—आदित्य उठ बैठा।

चाय की चुस्की लेकर आदित्य ने आंखें बंद कीं, मानो चाय का स्वाद अमृत सा लगा। कुछेक क्षण की चुप्पी के बाद बोला, 'पांच-छः दिन से अजीबो-गरीब घटना घट रही है। मैं नौकरी छोड़कर कारोबार करूंगा इससे और भी गड़बड़ी पैदा हो गयी। अब तो खुद सती कहती है कि उससे मेरी जाति नहीं मिलती।'

थोड़ा दम लेकर आदित्य फिर शुरू हुआ, 'और भी एक बात है, एक दिन सती अपनी सहेली और उसके भाई के साथ रेडियो-स्टेशन गयी थी। उस दिन मैं उससे मिलने कालेज गया था पर वह नहीं मिली। बाद में मुझे ख्याल आया कि मेरी बगल से जो सफेद रंग की गाड़ी गुजर गयी उसमें सती बैठी थी। स्टियरिंग पर एक नौजवान बैठा था, बीच में एक लड़की और खिड़की के पास सती बैठी थी। उस समय मेरा मन-मिजाज अच्छा नहीं था इसलिए मैंने गौर नहीं किया लेकिन मेरा मन कहता है कि सती ने भी मुझे देखा था। उसने मुझे आवाज नहीं दी। बाद में सती ने ही बताया कि उस दिन वह कहां गयी थी। लेकिन यह नहीं बताया कि उसने मुझे गाड़ी से देखा था।'

'हो सकता है, नहीं देखा हो।'

आदित्य दृढ़ स्वर में बोला, 'नहीं। उसने मुझे देखा था।'

क्षण भर चुप रह कर आदित्य बोला, 'अभी-अभी मैं उसके कालेज से आ रहा हूं। कालेज में हरसिंगार का एक पेड़ है, मैं उसी पेड़ के नीचे खड़ा होकर उसका इन्तजार किया करता हूं। आज भी मैं इंतजार कर रहा था, पर वह नहीं आयी। आती भी क्या कर, वह तो किसी नौजवान की गाड़ी में कालेज से जा चुकी थी। यह सब मुझे शिवानी ने बताया। शिवानी सती की सहेली है। सती के पड़ोस में रहती है। बड़ी सीधी है बेचारी। बस, थोड़ा ज्यादा बोलती है। उसने मुझे सब कुछ बता दिया। उसने बताया कि वह नौजवान राका का भाई है।

उसने मती की शादी की बातचीत चल रही है। मती भी राजी है। दिवानी म यह सब सुन कर मैं सीधे तुम्हारे पास आया हूं।'

सहसा ललित के सिर से पैर तक बिजली दौड़ गयी। क्रोध, घृणा और अपमान म वह थर-थर कांपने लगा। बार-बार उसके दिमाग म ऐसा क्यों होगा, ऐसा क्या होगा, उथल पुथल मचाने लगा।

आदित्य का हाथ दबा कर ललित बोल उठा, 'तुम क्या छोड़ोगे? छोड़ना नहीं है आदित्य। अगर तुम सही हो, तो '

मरियल आवाज म आदित्य बोला, 'तो ?'

'तो आज ही तुम्हें शादी करनी होगी। रजिस्ट्री।'

आदित्य आश्चर्य से बोला, 'क्या ,

एक जमाना था जब ललित का दिमाग मशीन की तरह काम करता था। अभी-अभी कालेज का यूनियन लीडर ललित जग गया था। चेहरे पर कई निष्ठुर रेखाएं उभर आयी थीं। आंखें उग्र हो उठी थीं। वह अब अपने असली रूप म आ गया था। उसका यह रूप किसी किस्म की बाधा नहीं मानता। अब वह विकट-से विकट परिस्थिति का सामना कर सकता है। उसने हाथ पकड़ कर आदित्य को उठाया और ठोस आवाज म बोला, 'चलो, बहुत कुछ करना है।'

आदित्य बुद्धू की तरह उठ खड़ा हुआ। बोला, 'क्या करना है?'

'रजिस्ट्री। दो-तीन घंटे के अन्दर रजिस्ट्री होगी।'

आदित्य फिर बैठ गया, 'सती राजी नहीं होगी।'

'उसे राजी होना होगा।'

'क्या फायदा? वह तो मुझे प्यार नहीं करती।'

'तुम से कहा है।'

'कहा तो नहीं है, क्योंकि अभी तो वह खुद ही नहीं जानती। कुछ दिनों म ही वह समझ जायेगी कि वह मुझे प्यार नहीं करती।

'फिर इतने दिनों तक कैसे करती रही? बच्चों का खिलवाड़ है क्या?'

अन्यमनस्क आंखों से ललित को कुछेक क्षण देख कर आदित्य बोला, 'नहीं खिलवाड़ नहीं है। एक घटना सुनो। हमारे घर की स्त्रियों के बारे म तो जानते ही हो। परदे मे रहती हैं। सूरज की धूप तक उन्हें नहीं छू पाती। इतनी पाबन्दी के बावजूद भी मेरी चचेरी बहन मालू को एक बार प्यार का रोग हुआ। एक काला-कलूटा छोकरा हमारे घर अखबार देता था। किसी दिन सुबह-सुबह मालू ने खिड़की की फांक से नीचे झांका। और ठीक उसी वक्त साइकिल पर बैठा वह छोकरा बरामदे पर अखबार फेंक रहा था। दोनों की आंखें टकरा गयीं। एक दिन आधी

रात का अपने आशिक से मिलने की खातिर मातु रस्सी के सहारे छत से उतरने की तैयारी कर रही थी कि पकड़ी गयी। चाचा ने पूरे पिण्ड की ओर कमरे में बंद कर बाहर से ताला लगा दिया। घर भर को आश्चर्य हुआ कि हम जैसे बाबुओं की लड़की ने उस काले कन्टे दो पैसे के छोकरे को कैसे पसंद किया? उस समय मुझे भी आश्चर्य हुआ था। लेकिन अब मैं समझता हूँ कि यह पसंद-नापसंद की बात नहीं। यह तो सिर्फ एक रहस्य को जानने का आग्रह है। इसमें प्यार का नामोनिशान नहीं, है सिर्फ रहस्य को जानने की ललक। इसमें न श्रद्धा है, न भक्ति है सिर्फ रोमांच। बस, हाथ के पास कोई मिल जाना चाहिए। पसंद नापसंद का कोई सवाल नहीं। सती को मैं अनायास मिल गया। मैं उसकी जिन्दगी का प्रथम पुरुष हूँ। अब मैं उसके लिए रहस्य नहीं हूँ। अब उसे मेरी कोई जरूरत नहीं। उसने मुझे कभी प्यार नहीं किया। और करे भी क्या, मुझ से तो उसकी जाति नहीं मिलती।'

गुस्से में ललित उबल पड़ा, 'मैं नया या पुराना किसी किस्म का वर्णाश्रम नहीं मानता, जाति-पाति नहीं मानता। मैं सब कुछ खत्म करके जाऊँगा। उठो।'

'तुम पागल हो गये हो क्या?'

ललित दहाड़ उठा, 'उठो। आज ही रजिस्ट्री होगी।'

आदित्य मुँह लटका कर सोचने लगा।

ललित ने जल्दी मचायी, 'क्या हुआ?'

'वह राजी नहीं होगी।'

'होगी। मैं उसे राजी करूँगा।'

'यह अच्छा नहीं होगा।'

'न हो, फिर भी करना है।'

धीरे-धीरे ललित के गुस्सैल चेहरे के सामने आदित्य नरम पड़ गया। भौंहें सिकोड़ कर क्षण भर सोचा और फिर बोला, 'गवाही कौन देगा?'

'तुम्हें यह सब नहीं सोचना है।'

'विवाह की तारीख?'

'मैं एक रजिस्ट्रार को जानता हूँ। वह सब मैनेज करेगा।'

सहसा आदित्य की सारी दुश्चिन्ता खत्म हो गयी। हँस कर बोला, 'तुम बड़े खतरनाक हो।'

ललित ने आदित्य से कुछ नहीं कहा। वह अपने आप में बड़बड़ाता रहा। शायद वह अपने आप को अपनी जिन्दगी की कहानी सुनाता रहा। शायद वह अपने आप को प्रतिशोध की याद दिलाता रहा।

विमान का दरवाजा खुला था। आंखों पर हथेली रख कर वह लेटा था। पांवों की आहट सुन कर उठ बैठा। बोला, 'आओ। मैं इंतजार कर रहा था। जोरों की भूख लगी है।'

आदित्य को दिखा कर ललित बोला, 'इसे पहचानते हो?'

एक झलक देख कर ही विमान बोला, 'हां। आदित्य राय। तुम्हारा घर बागबाजार है न?'

आदित्य हंस कर बोला, 'तुम्हें तो सब कुछ याद है।'

'मैं सबको याद रखता हूं पर मुझे सब भूल जाते हैं।'

'नहीं, मैं तुम्हें नहीं भूला हूं। ललित से पूछ कर देखो, उसने तुम्हारा नाम लिया और मैं पहचान गया।' और फिर विमान के चेहरे पर घाव के निशान देख कर आदित्य बोला, 'गुंडों ने तुम्हें बहुत मारा है।'

विमान मुस्कराया।

आदित्य तेज आवाज में बोला, 'तुम ने सालों की मरम्मत नहीं की?'

'की।'—तृप्त स्वर में विमान ने उत्तर दिया।

'की है। शाबाश!'—कह कर आदित्य हंसा और विमान के बिस्तर पर बैठ कर कमरे का मुआयना करने लगा। उसका मजाकिया स्वभाव अब तक लौट आया था। हंस कर बोला, 'तुम बड़े ज्ञानी हो यार। कितनी किताबें हैं! बाप-रे बाप! इतनी सारी किताबें देख कर मुझे तो चक्कर आ रहा है।

फर्श पर बैठ कर अल्मुनियम की थाली में खा रहा था विमान। भिखमंगों जैसा बैठा था वह।

ललित ने उसे खाने के लिए थोड़ा वक्त दिया। उसके बाद बोला, 'कैसे हो?'

'अच्छा हूं।'

चल फिर सकते हो?'

'हां।'

'एक काम कर सकोगे?'

'क्या?'

'एक रजिस्ट्री शादी में गवाही देनी है।'

'शादी! किसकी शादी?'—विमान की आंखों में आश्चर्य उभर आया।

आदित्य मुस्करा कर बोला, 'मेरी। माइ मैरेज टू-डे।'

'गवाही दोगे?'—ललित ने फिर विमान से पूछा।

विमान ने हंस कर उत्तर दिया, 'अवश्य दूंगा।'

'ठीक है, थोड़ी देर में हम टैक्सी लेकर आते हैं। तैयार रहना।'

'बिल्कुल तैयार रहूँगा। आज तो खाना पीना भी जम कर होगा।'

'हाँ, आज तुम्हारे कमरे में हम फीस्ट करेंगे। मुर्गा खरीद कर लायेंगे।'—ललित ने अन्यमनस्क स्वर में उत्तर दिया।

सहसा विमान आदित्य से मुखातिब हुआ, 'इतनी आसानी से शादी होती है, यह तो मैं नहीं जानता था। मेरा ख्याल था कि शादी के लिए लम्बा वक्त और गहरे सोच विचार की जरूरत है।

आदित्य सिर नीचे कर आहिस्ते से बोला, 'तुम ठीक कहते हो। मुझे भी काफी वक्त लगा है। दिन-रात सोचना पड़ा है।'

'सच!'—विमान हँस कर बोला, 'तब गवाह क्यों खोजते फिरते हो? और फिर रजिस्ट्री शादी तो वे लोग करते हैं जिनका सामाजिक सम्पर्क गड़बड़ रहता है।

आदित्य थोड़ी रूखी आवाज में बोला, 'गवाही देने से डरते हो क्या?'

'नहीं। बिल्कुल नहीं। बड़ी सुन्दर हँसी हँस कर बोला विमान, 'मैं जब शादी करूँगा, सब कुछ तैयार रहेगा। यहाँ तक कि मेरी शादी के वक्त प्रकृति भी अनुकूल होगी।'

क्षण भर रुक कर विमान फिर बोला, 'मैं किसी लड़की से प्यार कर उससे शादी करने की खातिर पागल की तरह भाग-दौड़ नहीं करूँगा। ऐसी शादी सच्चे अर्थ में शादी ही नहीं होती। शादी का तो कारण ही कुछ और है।'

'तुम किस कारण शादी करोगे?'—आदित्य का चेहरा लाल हो उठा।

हाथ रोक कर विमान बोला, 'शादी समाज को सतान देती है। इसलिए मैं खूब सोच-विचार कर शादी करूँगा, ताकि समाज को अच्छी सतान दे सकूँ। व्यक्तिगत प्रेम से समाज बड़ा है आदित्य।

'तुम क्या प्रेम नहीं मानते?'

विमान मुस्कान में बोला, 'मानने न मानने का तो प्रश्न ही नहीं उठता। सच्चाई तो यह है कि प्रेम ठीक ठीक समझ में नहीं आता। मुझे तो प्रेम एक भ्रम प्रतीत होता है। अभी है, अभी नहीं है। लेकिन शादी के बाद सतान तो खैर है ही।'—मुँह में एक निवाला डाल कर वह कुछेक क्षण चुप रहा, फिर बोला, 'प्रकृति हमारे प्यार की परवाह नहीं करती। वह हम यन्त्र की तरह प्रयोग कर अपना उद्देश्य पूरा कर लेती है। हम प्रेमी से अधिक प्रजनन यन्त्र हैं।'

विमान की आँखें चमक उठीं। हँस कर बोला, 'हमारे घर एक एलसिसियन कुत्ती थी। जरूरत पड़ने पर उसे मित्रों के एलसिसियन से मिलाया जाता। हर साल वह स्वस्थ, सुन्दर बच्चे देती। लेकिन एक बार वह फुटपाथी कुत्ते से गयी और उस बार उसने मरियल बच्चों को जन्म दिया। प्रजनन-विज्ञान के

नियम हैं। नियम के प्रतिकूल जाने से ऐसा ही होता है। मनुष्य में भी इस प्रकार का वर्ण भेद है। लेकिन मनुष्य विज्ञान का कोई नियम नहीं मानता। वह तो समाज में सब कुछ एक कर डालना चाहता है।'

आदित्य चालने ही जा रहा था कि ललित उसे हाथ पकड़ कर बाहर ले आया और बोला, 'अभी बहस का वक्त नहीं है। बहुत काम है।'

ललित ने रास्ते से चिल्ला कर विमान को तैयार रहने कहा।

वापस आकर आदित्य ललित की मां से बोला, 'मम, मार्ड मैरेज टू-डे।'

'क्या?'—मां ने पूछा।

आदित्य हंस कर बोला, 'आप बड़ी भोली भाली हैं।'

मां हंस कर बोली, 'और तू पागल है। अब शादी कर ले।'

ललित बडबडाया, 'बस, तुम्हारे पास तो सिर्फ एक ही बात है—शादी।

आदित्य कहकहे लगा कर बोला, 'यही तो कह रहा था कि आप बड़ी भोली हैं इसलिए समझ न सकीं।'

बारह के अंदर ही तीनों टैक्सी पर निकल पड़े। संशयात्मक स्वर में आदित्य ने प्रश्न किया, 'पहले कहां जाना है?'

उसके कंधे पर हाथ रख कर ललित बोला, 'पहले तुम्हारी वेश-भूषा बदलनी है। हजामत बनानी है। पूरा दुल्हा बनाना है।'

मैं बिल्कुल ठीक हूं। मुझे दुल्हा-दुल्हा नहीं बनना।

लेकिन उसे बनना पड़ा। दुकान के ट्रायल रूम से जब वह धोती, बनियान और रेडीमेड रेशमी पंजाबी पहन कर निकला, वह एकदम दुल्हा लग रहा था।

ललित हंस कर बोला, 'शाबाश!'

शाश्वती के लिए साड़ी और फूल खरीदते खरीदते करीब सवा दो बज गये। एक पट्रोल पंप पर टैक्सी रोक कर ललित ने संजय को फोन किया, 'आफिस में रहना। बहुत जरूरी काम है। बस, आ रहा हूं।

दो-पचीस पर टैक्सी शाश्वती के कालेज के सामने रुकी। ललित आदित्य से बोला, 'उतरो।'

'मैं पागल तो नहीं।'

'नहीं उतरोगे?'

'समझते क्या नहीं, वह तो मुझे देख कर ही मुंह फेर लेगी। तुम ले आओ।'

'इतनी लड़कियों की भीड़ में पहचान सकूंगा? एक ही बार तो देखा है।'

बाल कर ही ललित मन ही मन चौंक पड़ा। वह झूठ तो नहीं बोला सच्चाइ ता यह है कि शाश्वती को वह लाखों की भीड़ म भी पहचान लेगा।

आदित्य जोर देकर बाला, 'पहचान लोगे। तुम न पहचान सक, ता वह पहचान लेगी। वह रहा हरसिंगार का पड। मैं वहीं खड़ा हाकर सती का इनजार किया करता हू। वहा एक चनाचूरवाला बैठता है। सती रोज चनाचूर खरीदने आती है। थाड़ी देर बाद ही घटी बजेगी। जाओ—'

ललित धीरे-धीरे बुड्ढे चनाचूरवाले के निकट हरसिंगार की छाया म जा खडा हुआ। लेकिन न जाने क्या उसकी छाती धड़कने लगी। न जाने क्या वह खुद को बड़ा कमजोर महसूस करने लगा। उसके मन की गहराइया से एक श्यामागी का स्निग्ध मुख मडल उभर आया। मायावी आखा से वह कह रही है, 'आप अच्छे हो जायेंगे।'

उसके कानो म सिफ एक ही बात गूजने लगी, 'आप अच्छे हो जायेंगे, आप अच्छे हो जायेंगे।'

अचानक दसा दिशाए घटे की आवाज से काप उठीं। ढन! ढन! ढन। माना पाताल से आवाज आ रही है। मानो आसमान से आवाज उतर रही है। ढन! ढन।

चौंक पड़ा ललित। दा उगलिया मे फसी सिगरेट जमीन पर गिर गयी।

## सोलह

*

ललित ने अपनी कमजोरी महसूस की। वह आश्चर्यित हुआ। कहा स यह कमजोरी आयी? वह शाश्वती का प्रेमी तो है नहीं। सिर्फ एक बार दो-चार मिनट के लिए उसने श्यामागी शाश्वती को देखा था और आज वही शाश्वती सच क लिए आदित्य की बन जायगी। वय सधि पार कर गया है ललित। वय सधि के इर्द-गिर्द का ललित कुछ और था। तब मितु को देखते ही दिल की धड़कन बढ जाती। उन दिनों कापती उगलियों से सिगरेट गिर जाती, तो काइ और बात हाती। लेकिन आज! आज ऐसा क्या हुआ? अपनी व्याकुलता और दुर्बलता क कारण स्वय को असहाय समझ कर उसने अपने आपको सभालने की खातिर हरसिंगार की एक डाली पकड ली। पाव के पास ही जलती सिगरेट पड़ी थी। चप्पल से घस-घस कर उसने सिगरेट का भुरता बना दिया।

बहुत पुरानी बात है। उस दिन की सुबह आज भी ललित के मन में तरोताजा है। अपने पिता के साथ वह क्रिकेट खेल रहा था। तुलसी चौरा को स्टंप बना कर नुगी पहने बाप बैटिंग कर रहा था और बेटा बालिंग। उबड़-खाबड़ आंगन में गेंद बार बार उछल जाती थी। बहादुरी दिखाने की खातिर ललित जी जान लगा कर गेंदबाजी कर रहा था। अचानक पिता के घुटने के नीचे की हड्डी में गेंद लगी। ललित का आभास तक न हुआ। खेल खत्म होने पर ललित ने कमरे में आकर देखा, पिता के घुटनों के नीचे गहरा जख्म था। मां आइडिन लगाते-लगाते बोली, 'देख, तूने क्या किया है' ललित बड़ा आश्चर्यित हुआ। उफ-ओह कुछ भी नहीं। खेल खत्म कर कमरे में आये और उसे आभास तक नहीं। सचमुच में पिता की सहन-शक्ति पर उसे बड़ा आश्चर्य हुआ था। सिर्फ आश्चर्य ही नहीं, उस दिन की घटना उसके मन में बैठ गयी थी। धीरे धीरे वह दुःख दर्द पीना सीख गया। उसके दोस्त कहा करते, ललित को चोट लगती है पर दर्द नहीं होता। ललित रोना नहीं जानता। उस दिन के बाद किसी ने ललित को शारीरिक यंत्रणा में तड़पते नहीं देखा, आंतरिक दुःख में बिलखते नहीं देखा। हां, सिर्फ मितु को लेकर थोड़ी अफवाह फैली थी। पास-पड़ोस के लोग जान गये थे। लेकिन इसमें भी ललित का कोई दोष नहीं था। न जाने क्या कर मां उसके मन की बात जान गयी और बात फैल गयी। इसके अलावा ललित की और कोई दुर्बलता उजागर नहीं हुई। हां, अस्पताल में जिस दिन उसे पता चला कि उसे कैंसर हुआ है, उस दिन वह अपने आप पर नियंत्रण खो बैठता लेकिन तुलसी की आत्मा ने ऐसा नहीं होने दिया। वह संभल गया। उसके चेहरे पर मुस्कान बिखर गयी। मन-ही मन उसने ठीक किया, हंसते हंसते सब कुछ बर्दाश्त करेगा। लोग उसकी सहन शक्ति का उदाहरण दिया करेंगे। वह दिखा देगा कि वह कितनी शांति से मर सकता है।

तब यह कमजोरी क्या? यह कमजोरी आई कहां से? अब तक तो वह ठीक था। अभी अभी तो उसने जादित्य को शादी के लिए राजी कराया है। सब ठीक है। तब यह क्या है? क्या है?—ललित ने जमीन पर भुरता बनी सिगरेट पर एक नजर डाली। और फिर अपने आप को गाली दी इडियट!

घन्टी बजने के कुछ देर बाद ही ललित के चारों तरफ रंग बिरंगी लड़कियों की की बाढ़ आ गयी। वह दिग्भ्रमित सा हो गया। क्या कर देखे बेचारा, आखों पर तो भारी-भरकम लाज बैठी थी। चारों तरफ युवतियों की बहार और बीच में खड़ा वह। क्यों कर शाश्वती को पहचानेगा? कौन बतायेगा, देखो, यह शाश्वती खड़ी है?

चार लड़कियां चनाचूरवाले के पास जा खड़ी हुई। उनमें से एक थी शाश्वती। आसमानी रंग की साड़ी में श्यामांगी शाश्वती।

अचानक शाश्वती ने देखा, हरसिंगार के नीचे ललित खड़ा है ।

'आप ?'

ललित ने देखा, शाश्वती सामने खड़ी है ।

सहसा वातावरण शांत हो गया, निर्जन हो गया । मानो शीशे के कमरे में ललित और शाश्वती आमने-सामने खड़े हैं ।

कुछेक क्षण बाद ही ललित ने शीशे का कमरा तोड़ डाला । हाथ जोड़ कर स्वाभाविक स्वर में बोला, 'आप से एक जरूरी बात है ।'

ललित को आभास तक न मिला कि तत्क्षण शाश्वती के हृदय में कितनी कपकपी उठी । थर-थर काँप उठा उसका संपूर्ण अस्तित्व । लेकिन बाहर से वह स्वाभाविक बनी रही । स्वाभाविक स्वर में बोली, 'चलिये !'—उसकी तीनों सहेलियाँ आश्चर्य से दोनों को देख रही थीं ।—शाश्वती सहेलियों से बोली, 'मैं तुरत आती हूँ ।'

थोड़ी दूर पर एक पेड़ की छाया में दोनों आ खड़े हुए । ललित ने भूमिका नहीं बाँधी । बोला, 'सुबह से आदित्य ने परेशान कर रक्खा है । उसे शक है कि आप उसे प्यार नहीं करतीं ।'

भौंह पर बल डाल कर शाश्वती ने सुना और फिर धरती पर आँखें गड़ा कर बोली, 'जानती हूँ । उसके दिमाग में तो कीड़ा घुसा है । मैं क्या करूँ ?'

ललित मीठी, पर मरियल हँसी हँस कर बोला, 'आदित्य गुस्साने पर बहुत कुछ कर सकता है । और मजे की बात यह है कि उसे गुस्सा भी बड़ी जल्दी आता है । वैसे बड़ा गरीब है । भोला-भाला है ।'

शाश्वती बर्फ जैसी ठंडी आवाज में बोली 'मैं उसे पहचानती हूँ ।'

ललित शर्माया, फिर सँभल कर बोला, 'वह मेरे साथ आया है । टैक्सी में बैठा है । आप जरा उसके पास चलिये । उसके बाद हमलोगों के साथ एक जगह चलेंगी । शाम तक हम आपको घर पहुँचा देंगे ।

'कहाँ ?'

'टैक्सी में बताऊँगा ।'

शाश्वती ने साड़ी के आँचल को दाँतों में दबाया । बड़ी अन्यमनस्क दीख रही है शाश्वती । क्षण भर चुप रह कर बोली, 'यहाँ नहीं बतायेंगे ? 'आखिर क्या ?'

स्वर को करुण बनाने की कोशिश कर ललित करुण स्वर में बोला, 'साथ में आदित्य है । आप क्या कहती हैं ?'

शाश्वती हँस कर बोली, 'वह अजीबो-गरीब हरकत करता है । मुझे अच्छा नहीं लगता । कभी कभी बड़ा डर लगता है ।'

ललित मुस्करा कर बोला, 'अब डरने की बात नहीं। वह बड़ा अनुरक्त है। आपसे दोस्ती करना चाहता है।'

'झगड़ा तो हुआ नहीं।'

'नहीं हुआ ? आश्चर्य है। उसकी बातों से तो लगता है कि आप दोनों में जम कर झगड़ा हुआ है।'

शाश्वती ने सिर हिला कर कहा, 'नहीं, झगड़ा नहीं हुआ है।'

'फिर क्या हुआ ?'

शाश्वती लज्जासिक्त मुस्कान में बोली, 'बड़ी हास्यास्पद बात है।'

'क्या ?'

'आपसे नहीं कह सकती। वह हम दोनों की बात है।'

ललित को जानने की बड़ी इच्छा हो रही थी। थोड़ी देर बाद ही शाश्वती आदित्य की पत्नी बन जायेगी, तब पूछ भी नहीं सकेगा कि कल क्या हुआ था

लेकिन ललित ने स्वयं को नियन्त्रित किया। वह शाश्वती से बोला, 'चलिये न।'

टैक्सी की खिड़की से जिराफ की तरह गर्दन निकाल कर आदित्य बैठा था। दोनों को आते देख वह सँभल कर बैठा।

टैक्सी का दरवाजा खोल कर ललित बोला, 'देखिये, कैसा दूल्हा बना बैठा है। अच्छा लग रहा है न ?'

शाश्वती ने बुद्धू की तरह ललित को देखा।

ललित ने जल्दी मचायी, 'बैठिये न, लोग देख रहे हैं। सोचेंगे, आपको फुसला कर ले जा रहे हैं।'

शाश्वती को अच्छा नहीं लगा फिर भी वह टैक्सी में बैठी। ललित ने दरवाजा बन्द कर दिया।

अगली सीट पर ललित और विमान बैठे हैं। आदित्य के पास गारद फ्लैक्स का पैकेट है। आते वक्त खरीदा गया था।

ललित बोला, 'सिगरेट और माचिस दो। तुम दोनों बातें करो।'

'मैं क्या बात करूँ ?'—आदित्य मुस्कराया।

ललित के चेहरे पर मीठी मुस्कान बिखर गयी। उसने देखा, शाश्वती आश्चर्यित आँखों से रजनीगंधा और गुलाब के फूल देख रही है। वह आदित्य से बोला, 'साड़ी दे न।'

आदित्य ने साड़ी का पैकेट शाश्वती की ओर बढ़ाया। शाश्वती अवाक् बैठी थी। उसने भय से साड़ी का पैकेट उसकी गोद में डाल दिया।

किन्तु न आँखें फिरा लीं। अब थोड़ा निश्चिन्त हुआ ललित। आँखों से

ज्यादा परेशानी खत्म हो गयी। अब सिर्फ हस्ताक्षर की जरूरत है। विमान की ओर सिगरेट का पैकेट बढ़ा कर बोला, 'शरद् आ गया, फिर भी गरमी नहीं गयी।'

'तुम उत्तेजित हो क्या ?'—विमान ने प्रश्न किया।

'क्या ?'—ललित अवाक हुआ।

'अब तक उनसे मेरा परिचय नहीं कराया।'

'ओ—'ललित एक बार फिर मुड़ा। आदित्य बाहर देख रहा है। शाश्वती चुपचाप बैठी है।

ललित मुस्करा कर बोला, 'विमान रक्षित, हमलोगों का पुराना दोस्त। विमान, आप हैं शाश्वती।'

शाश्वती ने शायद कुछ नहीं सुना। अपनी उत्तेजना दबा कर वह फुसफुसायी, 'हम कहां जा रहे हैं ?'

उसकी आवाज सुन कर दया आयी। ऐसा लगा कि कोई मासूम बच्ची डर कर बोल रही है।

विमान पट्टी बंधा सिर पीछे मोड़ कर बोला, 'क्या, आपको नहीं पता है ?'

शाश्वती सिर हिला कर बोली, 'नहीं।'

इनमें से कोई नहीं जानता है। बहुत पुरानी बात है। उस समय शाश्वती नन्ही मुन्नी बच्ची थी। एक दिन उसकी बड़ी बहन लीलावती को कालेज के रास्ते से कुछ गुंडे टैक्सी में बैठा कर कहीं ले गये थे। नहीं, इनमें से कोई भी शाश्वती के लिए अनजान नहीं। पास ही बैठा है आदित्य। वह आदित्य से प्यार करती है। हां, प्यार करती है शाश्वती। लेकिन इनमें से किसी को पता नहीं कि शाश्वती इन्हें अजनबी समझ रही है। उसका मन कह रहा है कि तीनों उसे फुसला कर कहीं ले जा रहे हैं। ये लोग उसे धर्म भ्रष्ट करेंगे। उसकी पवित्रता नष्ट करेंगे। एकबार उसने सोचा, ड्राइवर से कहे, 'मुझे बचाइये। मैं इन्हें नहीं पहचानती। ये मुझे जबर्दस्ती ले जा रहे हैं। पांव पड़ती हूं, मुझे मेरे घर पहुंचा दीजिये। मैं अब तक पवित्र हूं। मुझ पर दया कीजिये।'

लेकिन डर के मारे उसके मुंह से आवाज नहीं निकलती। रजनीगंधा की उग्र और गुलाब की मीठी सुगंध से हवा विषाक्त हो उठी है। कम-से-कम शाश्वती को ऐसा ही महसूस हो रहा है। सांस नहीं ले पाती बेचारी। नहीं, वह किसी को नहीं पहचानती। किसी को भी नहीं। तीन अनजान पुरुष और वह अकेली शुद्ध शाश्वती, पवित्र शाश्वती। तीनों उसे कहां ले जा रहे हैं ? डर रही है बेचारी।

पट्टी के अन्दर उंगली घुसा कर विमान ने सिर खुजलाया। दर्द से चेहरा थोड़ा विकृत हुआ। वह ललित से फुसफुसा कर बोला, 'यह ठीक नहीं हो रहा है।'

'क्या ?'

'यही !'

'क्या ?'

विमान बड़ी देर तक गंभीर बना सोचता रहा, फिर सिगरेट सुलगाने के बहाने सिर झुका कर दबी आवाज में बोला, 'लड़की आदित्य को प्यार नहीं करती।'

टैक्सीवाले ने सुना और सशक्ति आगा से दोनों को एक बार देख लिया।

होंठ भींच कर ललित ने गुस्सा पी लिया। पार्क सर्कस से टैक्सी बायीं ओर मुड़ी और पार्क स्ट्रीट पकड़ कर चल पड़ी। चिकना-चुपड़ा रास्ता। पार्क स्ट्रीट जैसी और भी कितनी अच्छी जगह इस संसार में है! कितना सुंदर है यह संसार! जिंदगी कितनी हसीन होती है!—ललित मन-ही मन बेचैन हो उठा। काश! उसकी जिंदगी लंबी होती!

'ललित!'—आदित्य ने आवाज दी।

ललित ने पलट कर देखा, आदित्य का चेहरा लाल हो उठा है। वह कुछ बोलने की कोशिश करता है पर उत्तेजनावश बोल नहीं पाता। ललित ने देखा, आदित्य के पंजाबी पर अब तक दाम का लेबल चिपका है। अब तक किसी ने ध्यान ही नहीं दिया था। वह बोला, 'लेबल तो निकाल फेंको।'

'लेबल? क्या मतलब?'—कह कर आदित्य ने अपने सीने पर नजर डाली और लेबल देख कर घबरा गया। लेबल निकाल कर उसने टैक्सी के बाहर फेंका और गला खखार कर बोला, 'उसे बता दो।'

'क्या ?'

'यही कि हम कहां जा रहे हैं।'

ललित स्वाभाविक स्वर में शाश्वती से बोला, 'इसमें घबराने की क्या बात है? एक न-एक दिन आप दोनों की शादी तो होगी ही। आज सिर्फ रजिस्ट्री कर लीजिये।'

फिर भी शाश्वती कुछ न समझ सकी। रजिस्ट्री! कैसी रजिस्ट्री शादी! एक-न एक दिन किससे उसकी शादी होगी ही?

'हम दोनों एक दोस्त से मिल कर आते हैं। तब तक आप दोनों बात कीजिये।'

'बात!' शाश्वती सोच भी नहीं पाती कि किससे बात करनी है? क्या बात करनी है?

आदित्य यदि अपरिचित होता, तो शाश्वती शोर मचाती, बचाओ, बचाओ। मुझे बचाओ। लेकिन ऐसी बात तो है नहीं। उसे याद आया एक दिन उसने हेमंती में कहा था, 'हम जल्दी ही रजिस्ट्री शादी करेंगे।' उसने गलत कहा था। हां,

उस दिन शाश्वती ने गलत कहा था। गलत क्या?—नहीं, शाश्वती यह नहीं जानती। वह तो सिर्फ इतना ही जानती है कि सब सबके लिए नहीं होता। कोई-कोई किसी के लिए होता है। लेकिन फिर भी गलत आदमी दरवाजे पर दस्तक देता है, अन्दर घुस आता है। सम्भलने का वक्त नहीं मिलता। गलत पते पर प्यार की चिट्ठी पहुंच जाती है और फिर वापस नहीं आती।

एक रात शाश्वती ने एक अद्भुत सपना देखा था। हाथ में लालटेन लिए एक आदमी जा रहा है। उसका चेहरा नहीं दीखता। लालटेन की रोशनी में सिर्फ दो पांव दीखते हैं।—शाश्वती कुछ न समझ सकी थी फिर भी उसका मन गुनगुनाया था, 'शाश्वती वह तेरा है। वह विरागी, दूरगामी तेरा अपना है, बहुत अपना।' आज जगी बैठी शाश्वती ने वही दृश्य देखा। मानो उसका अपना कोई उसे छोड़ कर उससे दूर जा रहा है, बहुत दूर।

उद्भ्रांत आंखों से शाश्वती ने एकबार आदित्य की ओर देखा। वह आदित्य है क्या? नहीं, वह आदित्य नहीं है। नयी धोती-पंजाबी में सिमट कर बैठा है आदित्य। दाढ़ी बना चेहरा चकचक कर रहा है। कान के पास सेविंग के साबुन का दाग लगा है। नहीं, आदित्य सपनेवाला आदमी नहीं। आश्चर्य है, इस सीधे-सादे आदमी से शाश्वती ने प्यार की कितनी बातें की हैं। अपना सब कुछ देना चाहा है। लेकिन उसने गलती की है। हां, उसने बहुत बड़ी गलती की है। आदित्य तो उसके सपने का आदमी नहीं है। शाश्वती तो एक ऐसे आदमी को प्यार करती है जो रात के अंधेरे में अकेले कहीं जा रहा है। जाने-पहचाने आदित्य को अब वह नहीं पहचानती। वह तो किसी अनजान को जानती है। कौन है वह? ललित है क्या? होगा।—शाश्वती नहीं जानती।

पार्क स्ट्रीट। शाश्वती के लिए अनजान जगह। अचानक टैक्सी रुकी। चौंक उठी शाश्वती।

ललित और विमान टैक्सी से उतरे। शाश्वती को सम्बोधित कर ललित बोला, 'हम पन्द्रह मिनट में आ रहे हैं। तब तक आप दोनों समझौता कर लीजिये।

सहसा शाश्वती व्याकुल स्वर में बोल उठी, 'मैं भी उतरूंगी।'

'क्यों?'

शाश्वती उद्भ्रांत आंखों से देखती हुई बोली, 'मैं नहीं जाऊंगी।'

सहसा ललित का चेहरा कठोर हो उठा। निःसंकोच दृष्टि से वह शाश्वती का फीका फीका चेहरा देखने लगा। गड़बड़ी कहां है, वह अब तक नहीं जानता। और न अब जानने की जरूरत है। आज का ललित वह ललित नहीं, जिसने कभी मितु का प्यार किया था। मितु के इंतजार में खड़ा रहता था और मितु एकबार पल-

कर भी नहीं देखती थी। मन ही-मन कितना तड़पता था बेचारा। अब उसके मन में मितु के लिए कोई जगह नहीं है। हां, मितु से प्यार करनेवाले ललित के प्रति सहानुभूति अवश्य है। पुरुष का अपमान वह महसूस करता है। प्रतिशोध का अर्थ वह भली भांति जानता है।—मन-ही मन शाश्वती पर बड़ा कठोर हो उठा ललित। आन्विय नामक किसी शख्स के लिए नहीं बल्कि एक पुरुष के लिए। एक पुरुष के लिए उसे एक अच्छा काम अवश्य करना चाहिए। थोड़ी देर पहले भी शाश्वती के प्रति उसके मन में ममता थी। लेकिन अब उसके हृदय में एक आहत पुरुष शेर की तरह दहाड़ रहा है।

एक मादक मुस्कान में ललित बोला, 'सब ठीक हो जायेगा। आप परेशान न हों। आप क्या नहीं चाहतीं कि आज रात हम आन्विय के पैसे से मुर्गा खाय ?

कुछ न समझ सकी शाश्वती। कुछ न कह सकी बेचारी। सिर्फ पागलों की तरह एकटक ललित को जाते देखती रही।

शीत-ताप नियन्त्रित लम्बा-चौड़ा हाल। हाल के अन्दर ही पार्टिशन से बने कमरे में सजय का दफ्तर है। ललित और विमान को अंदर आते देख व्यस्त सजय बोल उठा, 'क्या बात है ?'

'एक झमेला साथ लेकर आया हूं। तुम्हें हमारे साथ चलना है। अभी, इसी वक्त।'—ललित हांफने लगा।

'जानता हूं। अपने हर दोस्त को जानता हूं। सब सालों का दिमाग खराब है।'—सजय ने एक गहरी सांस ली।

'टेलीफोन डाइरेक्टरी। क्विक—' ललित ने दम लेने की फुर्सत न दी।

कुर्सी पर बैठ कर ललित ने डाइरेक्टरी अपनी ओर खींची और पन्ने उलटता हुआ अपने आप से बोलता रहा, 'डा० बागची बागची मैरेज रजिस्ट्रार। '

सजय के ठीक सामने एकमोटा-सोटा काला आदमी बैठा था। जल्दबाजी में ललित ने उस पर ध्यान नहीं दिया था। वही आदमी अचानक ललित के कान में फुसफुसाया, 'मेरे हाथ में एक मैरेज रजिस्ट्रार है। जायेंगे ?'

ललित ने चौंक कर देखा। पहले पहचान न सका फिर पहचानते ही बोल उठा, 'अरे लक्ष्मीकांत!

'मैरेज पार्टी के लिए भी मेरे पास जगह है। वहां दुल्हा-दुल्हिन रात बिता सकते हैं। बढ़िया से सजा दूंगा। किराया भी कम है।'

'चलो, तुम्हारे रजिस्ट्रार के पास चलते हैं। लेकिन नोटिस नहीं दी गयी है। लड़की आपत्ति कर सकती है, रो धो सकती है। समझे न ?'

लक्ष्मीकांत मुस्करा कर बोला, 'लड़कियां जल्दी राजी नहीं होतीं। आप चिंता मत कीजिये।'

विमान ललित के कान में फुसफुसाया 'तुम बड़े उत्तेजित नजर रहे हो। तुम्हारे हाथ कांप रहे हैं।'

सहसा ललित को महसूस हुआ कि वह बड़ा उत्तेजित है। उसके हाथ-कांप रहे हैं। धड़कन तेज हो गयी है। अपनी उत्तेजना पर उसे लज्जा आयी। बोला, 'समय ज्यादा नहीं है। आज ही सब कुछ करना है।'

'अभी तो सिर्फ साढ़े तीन बजा है। जरूरत पड़ी तो हम ग्यारह बजे रात में भी इंतजाम कर दूंगा।'—लक्ष्मीकांत ने कहा।

संजय मुंह उठा कर बोला, 'बैठो। थोड़ा काम है निपटा लूं। गवाही देने के बाद वापस नहीं आऊंगा। तुम लोगों के साथ निकल पड़ूंगा।'

ललित चुप-चाप बैठा रहता है। एक बार उठ कर खिड़की के पास जाता है। देखता है कि टैक्सी खड़ी है। वह फिर वापस बैठ जाता है। लक्ष्मीकांत ने स्वयं ही विमान से परिचय कर लिया है। विनम्रता के साथ वह विमान से पूछ रहा है कि उसने जीवन बीमा कराया या नहीं। ललित के चेहरे पर मुस्कान खेल जाती है। पता नहीं क्या-क्या करता है लक्ष्मीकांत। सिर्फ दो-चार दिन जीने के लिए इन्सान बहुत कुछ करता है। लोग कहते हैं कि जिंदगी बड़ी हसीन है। कितनी हसीन है जिन्दगी

करीब बीस मिनट बाद संजय उठा। सीढ़ियां उतरते उतरते विमान से बोला, 'लगता है आप को कहीं देखा है। कहां देखा है, बताइये तो?' ललित को ख्याल आया कि उसने विमान और संजय का परिचय नहीं कराया। विमान ने मीठी आवाज में उत्तर दिया, 'रमेन के घर। रमेन गाता था। आप के कमरे बजता था। आप के कमरे बता रखता था कि कमरे में कौन कहां बैठा है। मैं वहां अक्सर जाता था।'

संजय बोल उठा, 'अरे हां, हां! आप तुम विमान हो न!'

शाश्वती चुप-चाप उसी लहजे में बैठी थी, जिस लहजे में ललित उसे छोड़ गया था। मानों बीस मिनट तक उसने सांस न ली थी। ललित ने संजय और लक्ष्मीकांत से परिचय कराया पर उसके चेहरे पर फीकी मुस्कान तक न उठी। न जाने क्यों कर दोनों हाथ जुड़ गए, बस।

संजय की गाड़ी में बैठे लक्ष्मीकांत और विमान। ललित टैक्सी में बैठा। संजय की गाड़ी रास्ता दिखाती हुई आगे-आगे चली। ललित ने पलट कर शाश्वती से पूछा, 'आप दोनों में बात हुई?'

शाश्वती कुछ न बोली। सिर्फ बुझी जैसी आंखों से देखती रही।

ललित हसा। अपने आप से बोला, 'सब ठीक हो जायगा।'

शाश्वती अपने आप म खोयी थी। क्या पता, उसने कुछ सुना भी या नहीं। वह ता सिर्फ, सोच रही थी कि कइ अनजान मर्द अनजान शहर में उसे किसी अनजान जगह लिए जा रहे हैं। वहां ले जाकर उसे धर्म भ्रष्ट करेंगे। उसकी पवित्रता सदा के लिए नष्ट हो जायेगी। जिस तरह वर्षों पहले उसकी दीदी लीलावती अपवित्र कर दी गयी थी, उसी तरह आज वह भी काप उठी बेचारी शाश्वती।

और ठीक उसी समय सजय की गाड़ी में पिछली सीट पर बैठा विमान बोल उठा, 'सजय, शाश्वती आदित्य से प्यार नहीं करती।'

'नहीं करती!'—सजय विस्मित हुआ।

'नहीं।'—विमान सिर हिला कर बोला, 'मैं जानता हू, शाश्वती उसे नहीं चाहती।'

'तब क्या किया जाय?'—सजय ने पूछा।

विमान ने कुछेक क्षण सोचा और फिर बड़ी गभीरता के साथ बोला, 'लेकिन ललित चाहता है कि दोनों की शादी हो।'

विमान फिर कुछेक क्षण के लिए गहरे सोच म डूब गया। सोच कर बोला, 'ब्याह शादी बच्चों का खेल नहीं। सबके साथ सबकी शादी नहीं होती। शादी के भी कुछ नियम है। विवाह बड़ा ही पवित्र बधन है। गलत विवाह आलसी, अकर्मण्य और विश्वासघातक को जन्म देता है। इसलिए गलत विवाह करनेवाले समाज के शत्रु हैं। इन पर विचार करना जरूरी है।'

लक्ष्मीकांत बोल उठा, 'बिलकुल ठीक। आप एकदम ठीक कहते हैं विमान बाबू।'

सजय मुस्करा कर बोला, 'धन्य हुआ गुरु। धन्य हुआ।'

वृद्ध मैरेज रजिस्ट्रार से बातें कर लक्ष्मीकांत अदर से बाहर आया।

आरामदेह तीन बड़े बड़े सोफा। एक पर आदित्य और शाश्वती। एक पर सजय और ललित। एक पर बैठा है विमान। लक्ष्मीकांत विमान के साथ बैठा।

चुप्पी म डूबी शाश्वती विस्मित आंखों से चारो तरफ देख रही है।

सजय ने बोझिल वातावरण को हल्का बनाने की कोशिश की और फिर चुप हो गया। ललित ने लक्ष्मीकांत से पूछा, सब ठीक है न?

रजिस्ट्रार की वृद्ध आखों ने ऐनक के शीशे से एक नजर सब पर डाली और फिर एक मोटे रजिस्टर से एक फार्म निकाल कर लिखने लगा।

कमरे में चुप्पी जम कर बैठी थी।

अचानक मैरेज रजिस्ट्रार की घर्रायी आवाज ने चुप्पी तोड़ी, 'दोनों का नाम ?'

ललित बोलने ही जा रहा था पर बोल न सका। शाश्वती की मीठी-मीठी सिसकियां सुनायी पड़ीं। अब तक वह अपने आप में डूबी थी। अचानक उसे खयाल आया कि वह कहां लायी गयी है।

आदित्य सीधा होकर बैठा। संजय उठ कर बालकानी में जा खड़ा हुआ। ललित की आंखें शाश्वती पर जम गयीं।

आहिस्ते-आहिस्ते विमान उठ खड़ा हुआ। लगड़ाता हुआ मैरेज रजिस्ट्रार के सामने टेबिल पर झुक कर बोला, 'वह शादी करना नहीं चाहतीं।'

लक्ष्मीकांत शाश्वती के सामने फर्श पर आ बैठा। हाथ जोड़ कर बोला, 'सब ठीक हो जायगा बीबी। शुरू-शुरू में घबराहट होती है फिर मन ठीक हो जाता है। मुझे देखिए न, मुझ जैसा कुरूप शायद ही कहीं देखने को मिले। मेरी पत्नी भी पहले राजी नहीं हुई थी और अब हमारे छह बच्चे हैं। बड़ा ही सुखमय संसार है। राजी हो जाइये बीबी। बहुत सुख से रहेंगी। आदित्य बाबू ।'

मैरेज रजिस्ट्रार की आंखों में विवशता घिरी थी।

विमान लगड़ाता हुआ ललित के पास आया और फुसफुसा कर बोला, 'मैं उसे ले जाता हूं। राजी करा कर लाऊंगा। तुम लोग इंतजार करो।'

ललित चुप रहा। उसने देखा, लगड़ाता हुआ विमान बाहर जा रहा है। गठरी बनी शाश्वती उसके पीछे है।

वे बड़ी देर तक इंतजार करते रहे। लेकिन न विमान आया, न शाश्वती आयी।

थकावट से ललित की आंखें बोझिल हो आयीं। बदहजमी की खट्टी डकार से उसकी छाती जलने लगी। मुंह में पानी भर आया। बड़ी मुश्किल से उबकाई दबा कर वह बोला, 'बाथरूम किधर है, बाथरूम ?'

## सत्तरह

*

उसे साथ लेकर नीचे फुटपाथ पर उतर आया। सिर पर पट्टी बंधा एक अनजान आदमी। कौन सी जगह है, शाश्वती पहचान न सकी। परली ओर एक पार्क है। पार्क में पाम के बड़े-बड़े पेड़ हैं। लोगों की भीड़ है। शायद कोई सभा हो रही है। पार्क के एक गेट पर साइनबोर्ड है, बहुबाजार व्यायाम समिति। बो बाजार है? क्या पता! शाश्वती कलकत्ते का बहुत कुछ नहीं पहचानती।

सिर पर पट्टी बंधा आदमी दबी आवाज में बोला, 'आप भाग जाइये।'

भारी आवाज। मीठी आवाज। स्वस्थ-सुन्दर पुरुष की आवाज।

लेकिन भाग कर जायेगी कहां शाश्वती? किससे भागेगी शाश्वती?

वह मीठी आवाज में बोली, 'यह कौन-सी जगह है?'

'आप नहीं जानतीं? वेलिंग्टन स्क्वायर है, जहां अक्सर सभा होती है। और यह है धरमतल्ला स्ट्रीट।'

नहीं, शाश्वती नहीं पहचानती।

'टैक्सी ला दूं? ज्यादा देर मत कीजिये। वे लोग समझा-बुझा कर आपका मन बदल देंगे। आप जल्दी-से-जल्दी भाग जाइये।'

सहसा शाश्वती के मन में आदित्य नामक एक आदमी उभर आया। हां, एक था आदित्य। शाश्वती ने उससे कहा था कि वह उसे प्यार करेगी। लेकिन कर न सकी, ठीक-ठीक कर न सकी। वही आदित्य अभी तीन मंजिले के एक कमरे में सोफा पर बैठा है। नयी धोती-पंजाबी पहने हाथ में फूल लिए दूल्हा बना बैठा है आदित्य।

शाश्वती रुंधी आवाज में बोली, 'अकेले टैक्सी में जाने में डर लगता है। इसके अलावा मेरे पास पैसे भी नहीं हैं।

'मेरे पास भी नहीं।'—कह कर निमाई हंसा, फिर बोला, 'तब बस पर जाइये। वह रहा बस स्टाप।'

शाश्वती की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। भौंहों पर बल डाल कर वह कुछेक क्षण विमान को देखती रही फिर बोली, 'मैं अकेली नहीं जा सकती। मुझे कैसा कैसा न लग रहा है।'

विमान बाल्कनी की ओर देख रहा था। वहां खड़ा था सजय। अन्यमनस्क-सा वह सिगरेट पी रहा था। आंखों से इशारा कर विमान दबी आवाज में शाश्वती से बोला, 'यहां से चलिये। सजय देख सकता है।'

चुपचाप दोनों चल पड़े। आगे-आगे विमान पीछे पीछे शाश्वती। विमान लंगड़ा कर चल रहा था। शाश्वती हांफने लगी थी। फुटपाथ के किनारे दीवार के सहारे शाश्वती खड़ी हो गयी। बोली, 'मैं चल नहीं पाती।'

विमान मृदु स्वर में बोला, 'बैठना चाहती हैं '

शाश्वती ने 'हां' में सिर हिलाया।

विमान बोला, 'तब थोड़ा चलना पड़ेगा।'

धरमतल्ला स्ट्रीट से दोनों चांदनी में घुसे। विमान आगे-आगे। शाश्वती पीछे पीछे। तंग गली में एक चाय की दुकान। विमान शाश्वती को साथ ले दुकान में दाखिल हुआ। काठ की तंग सीढ़ियां चढ़ कर दोनों ऊपर गये। गोदाम जैसी जगह, पर निर्जन, निस्तब्ध। शाश्वती बोधहीन आंखों से देख रही थी। वह कहां से कहां आयी है, किसके साथ आयी है, उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था। लेकिन शाश्वती के पास अभी अपनी स्वतंत्र इच्छा तक नहीं थी। उसकी आंखें बोझिल हो रही थीं। उसे प्यास महसूस हो रही थी। शारीरिक अनुभूतियों के सिवा उसके पास अपना कुछ नहीं था। अभी तो उसे सहारा चाहिए। हां, कोई उसे रास्ता दिखायेगा और वह उस रास्ते पर चलेगी।

एक छोटी टेबिल और दो कुर्सियां। कमरे के एक कोने में एक रस्सी पर फैले मैले कुचैले कपड़े। एक कोने में बोरा, टीन और आलू से भरी टोकरी। फर्श पर मैले-कुचैले बिस्तर। यहां गरीब-दुखिया सोते हैं। एक तरफ एक खिड़की। तीसरे पहर की धूप का एक टुकड़ा शाश्वती के पांव चूम रहा है।

अब शाश्वती ने विमान को गौर से देखा। विमान के चेहरे पर उत्तेजना थी। होंठों में दबी हंसी दबा रखने में उसे कष्ट हो रहा था। कुछेक क्षण वह शाश्वती को चुपचाप देखता रहा, फिर बोला, 'जिन्दगी में यह पहला, नहीं, नहीं, दूसरा काम मैं ने किया है। एक अच्छा काम।'

कह कर विमान अपने आप में हंसता रहा। मानो एक साहसी जासूस की तरह डाकुओं के चंगुल से वह शाश्वती को छुड़ा लाया है। शायद ऐसा ही वह खुद को समझ रहा था।

आहिस्ते-आहिस्ते शाश्वती स्वाभाविक हुई। सहसा बहुत शर्मा गयी। दबी आवाज में बोली, 'मैं ने सही की है क्या ?'

'कहां ?'

'वहां। उस समय मेरा दिमाग काम नहीं कर रहा था।'

'आपमे बहुत ज्यादा कमजोरी है। और थोड़ी देर रहतीं, तो वे लोग सही करा लेते।

'क्या ?'—शाश्वती की आंखों में आश्चर्य उभर आया।

अपनी उत्तेजना दबा कर विमान दार्शनिक लहजे में बोला, 'कभी-कभी ऐसा होता है शाश्वती देवी कि इन्सान अच्छा सोच कर कुछ करता है, पर उसका नतीजा बुरा होता है।'

शाश्वती ने एक गहरी सांस ली।

अभी अभी नींद से जगा एक बच्चा ब्याय नंगे बदन जभाई लेता हुआ टेबिल के पास आ खड़ा हुआ।

'क्या लेंगी ?'

'कुछ नहीं।'

'एक प्याला चाय ?'

'नहीं, मुझे उल्टी हो जायगी। सिर्फ एक गिलास पानी चाहिए। प्यास लगी है।'

'पानी। एक गिलास पानी। जल्दी।'—विमान सहसा उत्तेजित हो उठा।

ब्याय बुद्धू जैसी आंखों से देख कर सीढ़ी की ओर बढ़ा और सीढ़ियां उतरने लगा। विमान गौर से उसके चेहरे का लहजा देखता रहा फिर शाश्वती की ओर मुड कर बोल उठा, 'मजा आ गया। अब वे हम नहीं ढूंढ सकते। सब मुझे गालियां दे रहे होंगे। अच्छा काम करने के लिए बहुत कुछ बर्दाश्त करना पड़ता है। है न ?'

कह कर विमान मन ही मन हंसता रहा।

शाश्वती नहीं हंसी। थकावट महसूस हो रही है। बड़ी निराश है बेचारी।

वह जानती है, भली-भांति जानती है कि आज हो या कल आदित्य उसे ढूंढ निकालेगा। मैरेज रजिस्ट्रार और तीन गवाहों के सामने उसे बुद्धू बना कर चली आयी है। बड़ी देर तक इंतजार करेगा आदित्य। शर्म के मारे मर जायगा बेचारा। अपमान से लाल उठेगा। गुस्से में तड़पेगा। और फिर आज-न-कल रास्ता हो या घर कहीं-न-कहीं उसे जरूर पकड़ेगा आदित्य। तब क्या होगा, शाश्वती नहीं जानती। लेकिन आदित्य उसे ढूंढ निकालेगा, यह जानती है शाश्वती।

पानी पीकर शाश्वती बोली, 'अब चलिये।'

'चलिये।'—विमान उठ खड़ा हुआ।

शाश्वती सकोच म बोली, 'आपने चाय नहीं ली ? अब तक हम मुफ्त म बैठे रहे। कुछ लेना चाहिए था।'

'ऐसी कोइ बात नहीं। यह मेरी पुरानी जगह है। कालेज म पढ़ते वक्त मैं और रमेन अक्सर यहा आते थे। यहीं बैठते थे। जिस कुर्सी पर आप बैठी हैं, उस पर रमेन बैठता था। कभी-कभी हम यहा बैठ कर घटों बातें करते थे। मैं तो अभी भी अक्सर आता हू।'

'ओ।'

काठ की सीढ़िया उतर कर दोनों नीचे आये। मुख्य सड़क आने पर शाश्वती बोली, 'आपके बारे म उसने कभी कोइ चर्चा नहीं की। आप तो उन लोगों के दोस्त हैं न ?'

विमान सिर हिला कर बोला, 'जी नहीं। मैं उन लोगों का दोस्त नहीं हू। कालेज में साथ पढ़ते थे। बस, जान-पहचान है।'

शाश्वती को पूछने की इच्छा हुइ कि तब वह उस दल म शामिल कैसे हुआ? लेकिन मारे शर्म के पूछ न सकी।

लेकिन विमान खुद बोला, 'आज वर्षों बाद आदित्य मिला। ललित उसे मेरे पास ले आया था। उसने मुझे शादी म गवाही देने कहा। दरअसल ललित ने सोचा होगा कि मुझ जैसे पागल को ऐसी शादी में गवाह बनाना ठीक होगा। सयाने दोस्त तरह तरह के सवाल करेंगे और गड़बड़ी देखते ही कट पड़ेंगे।'

इस बार शाश्वती हसी। बोली, 'आप पागल हैं क्या ?

'हां।'—गभीर होकर विमान बोला, 'कभी-कभार मुझे दौरा आता है।'

'क्यों ?'

उगली से आसमान दिखा कर विमान बोला, 'मेरे सिर के अदर आसमान घुस जाता है। सिर म जोरों का दर्द होता है और मैं पागल हो जाता हू। कुछ दिनों के लिए पागलपन रहता है फिर ठीक हो जाता हू।

शाश्वती की ओर देख कर विमान समझदार जैसी मुस्कान मुस्करा कर बोला, 'अभी मैं पागल नहीं हू। मैं जानता हू, लड़किया पागलों से डरती हैं। लेकिन आप डरिये मत; क्योंकि अभी मुझ पर पागलपन का दौरा नहीं है। अभी-अभी मैं ने आपके सामने ही सामान्य आदमी जैसा व्यवहार किया है। आपको उन पागलों के चगुल से छुड़ा लाया हू। आदित्य तो जहर पीना चाहता था, पर मैं ने उसे बचा लिया। अभी तो वह गुस्से म होगा। मिलने पर मुझसे झगड़ेगा। लेकिन समय आने पर वह समझेगा कि मैं ने उसका कितना बड़ा उपकार किया है।

शाश्वती हस कर बोली, 'यानी मैं जहर हू ?'

'नहीं, आप जहर नहीं हैं। न घी जहर है, न शहद जहर है। लेकिन दोनों के मिलने से जहर बन जाता है। बस, यही बात है। प्यार-व्यार मैं नहीं समझता। सिर्फ इतना ही जानता हूँ कि जैसी तैसी शादी का परिणाम कभी सुखद नहीं होता।'—क्षण भर चुप रह कर विमान फिर बोला, 'आप क्या बस पर जायेंगी। बड़ी भीड़ है। दफ्तरों में छुट्टी हुई है न।'

कच्छप गति से ट्राम बस चल रही हैं। धीरे-धीरे चौराहे पर ट्रैफिक जाम हो रहा है।

शाश्वती ने चिंतित आँखों से देखा और बोली, 'बस पर जाना मुश्किल है।'

'तब?'

शाश्वती हँसी, 'अजीब बात है। अचानक मुझे जोरों की भूख लग गयी।'

'तब चलिये उसी दुकान में वापस चलें। वहाँ उधार चलता है। मेरे पास जब पैसे नहीं होते, तब वहीं खाता हूँ। लेकिन खाना अच्छा नहीं होता।'

'नहीं, वहाँ नहीं जाना है। उस माहौल में मुझे घुटन हो रही थी।'

जेब से फटा-चिथा मनीबैग निकाल कर विमान ने पैसे गिने और बोला, 'मेरे पास तिरानबे पैसे हैं।'

'मेरे पास एक रुपया है।'

क्षण भर सोच कर विमान बोला, 'तब किसी मद्रासी रेस्तराँ में चलिये। सस्ता खाना मिलता है।'

दोनों एक शीतताप नियंत्रित सिनेमा हाल के सामने से गुजरे। हाल के सामने का फुटपाथ बड़ा ठंडा था। ठंडक से काँप उठी शाश्वती।

सिनेमा हाल पार कर शाश्वती बोली, 'मुख्य सड़क से चलने में डर लगता है। वे लोग इधर से आ सकते हैं।

'आप ठीक कहती हैं।'—विमान खड़ा हो गया।

और फिर दोनों तंग गलियों में चलने लगे। अनजान आदमी, अनजान गलियाँ। धक्कम-धुक्का। एक अनजान आदमी के साथ शाश्वती किसी रेस्तराँ की ओर जा रही है फिर भी उसे डर नहीं लगता। सिर पर बैंडेज बँधे एक आदमी के साथ उसे चलते देख लोग कौतूहल से देख रहे हैं, फिर भी उसे शरम नहीं आती। वह अपने को आजाद पंछी महसूस कर रही है। मानों दो चोटियों वाली नन्हीं मुन्नी शाश्वती अपने बापू के साथ पूजा (दुर्गा-पूजा) के कपड़े खरीदने निकली है।

फिर काठ की सीढ़ियाँ, फिर दो तल्ला। लोगों की भीड़। शोरगुल और बर्तन माँजने की आवाज। टेबिल के सामने लोग खड़े हैं, जगह खाली होने पर बैठेंगे। वातावरण में खट्टी खट्टी गंध तैर रही है।

विमान दबी आवाज में बोला, 'डरने की कोई बात नहीं। सस्ता खाना मिलता है, इसलिए इतनी भीड़ है। यहां के केबिन में देर तक बैठा जा सकता है।'

थोड़ी देर इंतजार कर दोनों एक केबिन में बैठे। विमान ने खाना का आर्डर दिया और मुस्करा कर बोला, 'डरने की कोई बात नहीं। अभी मैं पागल नहीं हूं। दौरा आने से पहले मुझे पता चल जाता है और मैं लोगों को होशियार कर देता हूं कि मैं पागल होने जा रहा हूं।'

शाश्वती दुधमुंही बच्ची जैसी मुस्कान में मुस्करायी और फिर दूसरे ही क्षण उदास होकर बोली, 'मेरे बापू भी कभी-कभार पागल हो जाते हैं।'

'पागल?' विमान अवाक होकर बोला, 'किस तरह के पागल।'

शाश्वती ने पिता की कथा कह सुनायी। सुनाते वक्त वह कभी सिसकी, तो कभी मुस्करायी। सुना कर उसने अपने आपको बड़ा हल्का-फुल्का महसूस किया।

विमान बड़ा उत्तेजित दीख रहा था। उसके हाथ कांप रहे थे। उसने बोलने की कोशिश की पर बोल नहीं फूटा। थोड़ी देर बाद किसी तरह खुद को संभाल कर बोला, 'संसार में करोड़ों पागल हैं, पर कौन कैसा पागल है, यह बताना मुश्किल है। पागल एक किस्म का नहीं होता, समझीं? किस्म-किस्म के पागल हैं। सबके ढंग निराले हैं। सब अपनी-अपनी दुनिया में जीते हैं। मैं भविष्य नहीं देखता पर जब मेरे सिर के अन्दर आसमान घूमने लगता है और सिर दर्द से मैं तड़पने लगता हूं, तब मैं कभी-कभी अद्भुत दृश्य देखता हूं। एक विस्तृत मैदान। ओर-छोर का पता नहीं। सिर्फ काला कलूटा अंधेरा। हाथों को हाथ नहीं सूझता। हजारों आदमी एक-दूसरे से टकरा रहे हैं, लड़ रहे हैं, चीख और चिल्ला रहे हैं। अंधों की तरह सब रास्ते की तलाश में अंधेरे में भटक रहे हैं। गिरते हैं, उठते हैं। कभी कभी मां-बाप, भाई-बंधु को पुकारते हैं, रोते हैं और कभी किसी के पांव की ठोकर लगने से तुमुल झगड़ा शुरू हो जाता है। मारपीट की आवाज। धक्कम धुक्का की आवाज। दांत किटकिटाने की आवाज। ये सारी घटनायें अंधेरे में घट रही हैं, ये सारी आवाजें अंधेरे में सड़ रही हैं। कहीं रास्ता नहीं मिलता। दसों दिशाओं में अंधेरा है, सिर्फ अंधेरा। न सूरज है, न चांद है और न एक भी तारा है। जो कुछ है, वह सिर्फ अंधेरा है। हजारों आदमी चीखते चिल्लाते हैं। सब कुछ मैं ठीक ठीक समझ नहीं पाता, क्योंकि उस समय मेरे सिर के अन्दर आसमान घूमता रहता है और मैं दर्द से छटपटाता रहता हूं। आंखें खुलती हैं तो चारों तरफ अंधेरा ही अंधेरा देखता हूं। और देखता हूं कि मुझे रौंद कर हजारों आदमी जा रहे हैं। कहां जाना है, उन्हें पता नहीं। बस, भाग रहे हैं और अंधेरे में भटक भटक कर फिर उसी जगह वापस आ जाते हैं, जहां से चले थे।—ऐसे ही मजेदार दृश्य मैं देखा करता हूं।'

शाश्वती को जोरों की हसी आती है पर मुह पर रूमाल रखा कर वह दबी-दबी हसी हसती है ।

लेकिन विमान तो अपने आप म डूबा था । उसे शायद शाश्वती के हसने का आभास तक नहीं । अगर होता तो शायद वह भी हसता । वह तो सिर्फ बोले जा रहा था 'विश्व-युद्ध के दौरान जब हातीबागान म बम गिरा, हम कलकत्ता छोड़ कर पूर्वी बगाल भाग गये । गोयालन्द की स्टीमर से उतर कर जब हम रात के गन्दे अंधेरे में ट्रेन के डब्बे में घुसने की कोशिश कर रहे थे, उस समय हमारे सामने ऐसा ही दृश्य था । गहरा अधेरा । मारपीट । धक्कम-धुक्का । मा मुझे घसीटती हुइ डब्बे म घुसी थी । घुप्प अंधेरा था । धक्के खा कर हम फर्श पर गिर गये थ । पिताजी, भैया और मेरी छोटी बहन का पता नहीं था । हम बिछुड़ गये थे । वही आतक और अंधेरा अब तक मुझ मे कहीं-न-कहीं मौजूद है । कभी-कभी मुझे लगता है कि पागलपन के दौरान मैं वही दृश्य देखता हू । लेकिन मैं ने इस पर सोच कर देखा है कि ऐसी बात नहीं है । गोयालन्द के यात्रियों का एक लक्ष्य था । वे ट्रेन से अपने अपने गतव्य स्थान पर पहुचने की कोशिश कर रहे थे । लेकिन इस अंधेरे मैदान में सिर्फ भटकाव है । किसी को अपनी मजिल का पता नहीं । सब भटक रहे हैं ।—मैं ने इस दृश्य पर बहुत सोचा है और सोच-सोच कर मैं ने इसका एक अर्थ खोज निकाला है । इस पृथ्वी पर मनुष्य जन्म लेता है, जीवन धारण करता है, काम, क्रोध और लोभ का हाथ पकड़ कर चलता फिरता है । लेकिन वह नहीं जानता कि जन्म क्या हुआ, यह जीवन क्यों मिला, मृत्यु क्या है ? इसलिए पृथ्वी पर हमेशा गहरा अधेरा छाया रहता है, पर मनुष्य यह समझ नहीं पाता । और आश्चर्य तो यह है कि उसके मन के अंधेरे से ही सारी पृथ्वी अधेरे में डूबी हुइ है । इसलिए न रेलगाड़ी के पादान पर लटक कर जानेवाला आदमी देख नहीं पाता कि साठ मील प्रति घंटे की गति से उसके सिर को लक्ष्य बना कर बिजली का खभा दौड़ा आ रहा है । मनुष्य मन के अधेरे मे भटकता रहता है । वह देख नहीं पाता कि अचानक ट्राफिक की लाल बत्ती कब हरी हो गयी । उसे आभास तक नहीं मिलता कि हरी भरी लबी घास के अन्दर से चिकना चुपड़ा साप उसके करीब आ रहा है । वह नहीं देखता कि उसके चारो तरफ जीवाणु जगत है । वह नहीं समझता कि कब, कौन-सा रोग उसे आ दबोचेगा ? दरअसल मनुष्य जो कुछ देखता है, वह कुछ भी नहीं है, देखने को बहुत कुछ है जो वह देख नहीं सकता । इसलिए पागलपन के दौरान मैं जो दृश्य देखता हू उसम न सूरज है, न चांद है और न तारे हैं । जन्मांध मनुष्य अधेरी पृथ्वी पर भटक रहे हैं ।'

विमान शाश्वती की आंखों म झांकता हुआ सहसा हस कर बोला, 'घबराइये नहीं । अभी मैं एकदम ठीक हू । आपक पिता एक किस्म के पागल हैं और मैं एक

किस्म का पागल हूं। कुछ पागल ऐसे होते हैं जो साधारण आदमी से ज्यादा देख सकते हैं। उनकी कुछ अनुभूतियां प्रखर होती हैं और कुछ मन्द पड़ जाती हैं।'

कुछेक क्षण विमान उत्सुक आंखों से शाश्वती की ओर देखता रहा फिर बच्चों की तरह हंस कर बोला, 'आज आदित्य आपको कानूनी विवाह के बंधन में बांधने की कोशिश कर रहा था। यह क्या है, एक किस्म के अंधेरे में भटकना ही तो है। वह तो सिर्फ इतना ही समझता है कि उसके दिल में आपके लिए बेहद प्यार है। लेकिन विवाह क्या सिर्फ प्यार का परिणाम है? और कुछ भी नहीं है? आज वह अचानक आया और दो-चार बात बोल कर बोला, मेरी शादी में तुम्हें गवाही देनी होगी। मन-ही मन मैं आश्चर्यित हुआ। शादी करना इतना आसान है क्या? न गवाह ठीक है, न कोई तैयारी है। बस, शादी करनी है। शादी क्या बच्चों का खेल है? खैर, मैं ने मन ही मन ठीक किया कि अगर लड़की स्वेच्छा से शादी करना चाहेगी, तो गवाही दूंगा। और अगर कोई ऐसी वैसी बात हुई, तो झमेला करूंगा।'

इतना कह कर वह कुछेक क्षण चुप रहा और फिर एक प्यारी हंसी हंस कर बोला, 'झमेला मैं ने किया है। आपको राजी कराने के बहाने वहां से निकाल लाया हूं। अगर ऐसा नहीं करता, तो वे आपसे सही कराते ही। क्यों ठीक कह रहा हूं न?'

शाश्वती भयभीत आवाज में बोली, 'हां।'

विमान ठहाका मार कर हंसा। दोसा ठंडा हो रहा था। हंस कर वह बोला, 'मैं आदित्य को विवाह का महत्व समझाना चाहता था। लेकिन वह प्यार में इतना पागल था कि उसके दिमाग में कोई अच्छी बात नहीं घुस सकती थी। उसे क्या कर समझाता कि प्रकृति हमसे संतान चाहती है, समाज चाहती है। विवाह का अर्थ है स्वस्थ सृष्टि। यह क्या, 'क' ने 'ख' को देखा, दोनों में प्यार हुआ और फिर झटपट शादी हो गयी! ऐसी शादी समाज में बर्बादी लाती है। एक खेतिहर भी जानता है कि अच्छी जमीन में अच्छा बीज बोना चाहिए। अच्छी जमीन और अच्छा खेत ही अच्छी फसल दे सकता है। लेकिन प्यार के अंधे इतनी छोटी-सी बात समझने को तैयार नहीं होते। आप क्या चाहती हैं कि आपकी संतान आप से भी निकृष्ट हो? आप क्या चाहती हैं कि आपकी संतान अंधों की तरह इस अंधेरी पृथ्वी पर भटकती रहे?'

शाश्वती लजा गयी। उसका मुंह लाल हो उठा। आंखें झुक गयीं।

विमान ने उसका एक हाथ स्पर्श किया और फिर हाथ हटा कर बोला, 'शर्माइये नहीं। अपने को मासूम बच्ची और मुझे अपना पिता मान कर ध्यान से मेरी बात सुनिये। मैं आपको अंधेरे में चलना सिखाता हूं। मैं चाहता हूं कि हमारी संतान हमसे ज्यादा बुद्धिमान हो। वह हम जैसा अंधा न हो। पृथ्वी पर फैला अंधेरा

उसे भटका न सके। क्या, ठीक है न? सिर्फ किसी लड़की का प्यार कर क्या ऐसी संतान मिल सकती है? नहीं मिल सकती। है न? प्रकृति को मनुष्य ने प्यार से कुछ रोना देना नहीं है। जैसी जमीन है, वैसा ही बीज चाहिए। अगर ऐसा न हुआ, तो फसल कभी अच्छी नहीं होगी। आपने उस दुकान के छोकरे पर गौर किया था? शायद नहीं किया होगा, लेकिन मैं हर आदमी को गौर से देखता हूं। उस छोकरे के बारे में आप नहीं जानतीं। वह चुरा कर खाता है। उसकी बुद्धि मोटी है। उसे मैं ने चाकलेट खिला कर पूछा है, 'कैसा लगा?' अच्छा।— उसने जवाब दिया है। उसने आलूदम और डबल रोटी खायी है। मैं ने पूछा है, कैसा लगा? उसने एक ही जवाब दिया है, 'अच्छा।' उसे सूखी रोटी और रबड़ी का स्वाद मालूम नहीं है। उसे सब कुछ एक जैसा लगता है। अब आप ही बताइए, वह समाज को क्या दे सकता है? वह तो सिर्फ अंधेरे में भटकता रहेगा।'

वह हाफने लगा फिर भी चुप न हुआ। शाश्वती की ओर थोड़ा झुक कर बोला, 'ये अंधे आदमी कहां से आते हैं? क्यों पैदा होते हैं? ये क्या गलत विवाह के परिणाम नहीं?'

कुछेक क्षण वह यूं ही हंसता रहा फिर शुरू हुआ, 'दरअसल इन अंधों के मां-बाप भी अंधे थे। उन्हों ने भी सोच समझ कर शादी नहीं की थी। उन्हों ने खुद अंधेरे में भटक-भटक कर जिंदगी बितायी थी। भूख लगी तो खा लिया। वासना जगी, तो रतिक्रिया से तृप्त हुए। सब कुछ अंधों की तरह किया। कभी किसी का अर्थ समझने की कोशिश नहीं की। मैं कभी-कभी अखबार में रेस के घोड़ों का वंश परिचय देखता हूं, जिसका अध्ययन कर रेस के खिलाड़ी अच्छी नस्ल के घोड़ों पर दांव लगाते हैं। अच्छी नस्ल के कुत्तों के लिए भी एक वैज्ञानिक पद्धति है। लेकिन मनुष्य प्रजनन विज्ञान को नहीं मानता। वह प्यार के नाम पर जैसी-तैसी शादी करता है और समाज को अकर्मण्य संतान देता है। आज आदित्य के चेहरे पर मैं ने अंधे प्यार की उन्मत्तता देखी है। अंधा आदित्य अंधेरी दुनिया में चल रहा है और अंधा ललित उसे रास्ता दिखा रहा है।

कुछेक क्षण वह चुप रह कर बोला, 'एक रेस्तरां चलाने में भी सूझ-बूझ की जरूरत पड़ती है, पर संतान पैदा करने में सिर्फ ही कोई सूझ बूझ से काम लेता है। है न?'

शाश्वती शरमा कर बोली, 'आप खाइये न।'

शाश्वती की ओर देख कर विमान मुस्कराया और फिर डोसा खाते-खाते बोला, पागलों में से कोई-कोई यह सब देखता है जो दूसरे नहीं देखते। ठीक कह रहा हूं न?'

शाश्वती ने 'हां' में सिर हिलाया।

?ानों रेस्तरां से बाहर निकल आये। चलते-चलते विमान नम्र स्वर म बोला 'ललित को आप कब से जानती हैं ?'

शाश्वती कांप उठी। दबी आवाज मे बोली, 'सिर्फ एक दिन का परिचय है।'

'सिर्फ एक दिन।'—विमान अवाक होकर बोला, 'आज वह बड़ा उत्तेजित था। उसे देख कर लगा कि वह आपको अच्छी तरह पहचानता है। शायद किसी वजह से आपसे बदला लेना चाहता है।'

'बदला।'—शाश्वती की छाती धक कर उठी। क्षण भर म ही वह स्वाभाविक हुई और साथ साथ चल पड़ी। चुपचाप।

## अट्ठारह

*

बुड्ढे मैरेज रजिस्ट्रार ने बाथरूम बता दिया। ललित बाथरूम म घुसा और बेसिन पर झुक कर कै करने लगा।

बेसिन के ऊपर दीवार पर लगे आइने म उसने देखा, चेहरा सफेद हो गया है। मोटे-तगडे लक्ष्मीकात के सामने वह ठिगना-सा दीख रहा है। लक्ष्मीकांत ने उसे सभाल रखा है।

अब ललित अपने अधमरे ललित का कधे पर ढो रहा है। उसका शरीर अब उसका शरीर नहीं है। इससे पहले उसे और कभी ऐसा महसूस नहीं हुआ था कि उससे उसका शरीर अलग है। अब वह अपने हलके-फुलके शरीर का भली-भाति महसूस कर रहा है।

लक्ष्मीकात ममताभरी आखो से देखता हुआ उसके मुह और कथ पानी से पोछ कर बोला, 'अब कैसा लगता है भैया ?'

'अच्छा।'

लक्ष्मीकात के हाथ हटा कर उसने चलने की कोशिश की। उसे जमीन हिलती हुई महसूस हुई।

बाथरूम के दरवाजे पर सजय खडा था। ललित का सहारा देकर वह बोला, 'अब कैसा लगता है ?'

'ठीक हू।'

एक हाथ से ललित का शरीर और एक हाथ म चला गया। अब उसका शरीर सजय के सहारे खड़ा है। अचानक उसे महसूस हुआ कि सजय से वह ज्यादा लबा है। कम-से-कम एक इच। लेकिन अब यह सोच कर क्या होगा? एक इच लबा होने के बावजूद भी वह शर्म से गड़ा जा रहा था। एक जवान आदमी किसी का सहारा ले, इससे ज्यादा लज्जास्पद और क्या हो सकता?

सजय दबी आवाज म बोला, 'कुछ समझ म आ रहा है? डाक्टरी भाग तो नहीं गयी?'

ललित को सजय के सहारे कमरे म कदम रखते देख मैरेज रजिस्ट्रार उठ खड़ा हुआ। बोला, 'आपको क्या हुआ है बताइये तो? मैं डाक्टर हू।'

डाक्टर है, पर उसके कमरे म डाक्टरी का कोई चिन्ह नहीं। अचानक ललित ने देखा टेबिल के ऊपर कई मेडिकल जर्नल पड़े हैं। हां, डाक्टर है। लेकिन ललित मैरेज रजिस्ट्रार को डाक्टर न मान सका। धोती, ढीला-ढाला कुरता। पिचके गाल। धसी आखें।

ललित ने हाथ बढा दिया। मैरेज रजिस्ट्रार मिनमिनाती आवाज म बोला, 'मैं आखों का डाक्टर हू पर जेनरल डिजीज भी देख सकता हू।'

आखें बद कर उसने थोडी देर तक नब्ज देखी, फिर बोला, 'क्या हुआ है आपको? अम्ल-पित्त?'

गैसट्रिक कारसिनामा।

'क्या?'

'कैन्सर!'

उसने एक लबी सास ली। ललित के चेहरे पर निराशा घिर आयी।

अपना खयाल रखियेगा। परहेज से रहियेगा।

सोफा पर पसर कर ललित मुस्कराया।

लक्ष्मीकांत की ओर देख कर मैरेज रजिस्ट्रार बोला, 'क्या हुआ? तुम्हारी पार्टी कहा है?'

'देखता हू।'—कह कर लक्ष्मीकांत बाहर निकल गया।

आदित्य हाथो म मुह ढक कर चुपचाप बैठा है। पेशानी पर पसीना की बूदें चमक रही हैं। बाल पहले सवरे हुए थ, अब बिखर गये हैं।

सजय सिगरेट जला कर धीरे-धीरे बालकनी म जा खड़ा हुआ।

बडी देर बाद लक्ष्मीकांत वापस आकर बोला, 'कहीं कोई पता नहीं चला!'

बुड्ढे ने गभीर होकर घड़ी देखी, 'एक घटा हो गया।'

ललित सोच रहा था, इस कमरे म शादी होती है। यहा वर आता है, पर

चहल-पहल नहीं होती। शख नहीं बजता। उऱ्ध्वनि नहीं होती। शुभ दृष्टि नहीं होती। लेकिन शादी होती है। हो जाती है। हमेशा से ललित रजिस्ट्री शादी का समर्थक रहा है, पर आज उसका मन ऐसी शादी को नहीं स्वीकारता। अभी-अभी शाश्वती यहां बैठी थी। रो रही थी बेचारी। हाय! वह कौड़ी न खेल सकी। हाय! वह चावल न बिखेर सकी। वर ने एक-एक चावल चुन कर उसे नहीं दिया। यहां कन्या दान करनेवाला कोई नहीं। वह खुद शादी करने आयी है। जसोर जिले की कपोताक्षी नदी के किनारे शाश्वती का गांव था। वह कलकत्ता म पैदा हुई है क्या? हुई होगी। लेकिन उसके दिल म उसका गांव जमा है।

शाश्वती यहां क्यों आयेगी? रोगियों के इस कमरे म आकर वह निर्लज्ज की तरह क्यों कहेगी, 'हम शादी करने आये हैं। झटपट हमारी शादी कर दो।' बगाल म कब किसने ऐसी बात सुनी है? 'शादी की है।'—कहा और रेस्तरां म खा कर वर-वधू बिस्तर पर चले गये। कौन यह सुन कर नहीं हंसेगा? नहीं, यहां शादी नहीं हो सकती। भागो शाश्वती! बहुत धूम-धाम से तुम्हारी शादी करूंगा। यही वधू-वेश है तुम्हारा? हाथ म कालेज की कापी किताब, पहरावे में सूती साड़ी और पांवों म चप्पल। नहीं, यह किसी बगाली लड़की का वधू-वेश नहीं। इस वेश म तुम्हारी शादी नहीं हो सकती। तुम मजोगी शाश्वती। तुम्हारी सहेलियां तुम्हें सजायेंगी। तुम मोर पहन कर आओगी। तुम्हारे हाथ म सिंदोरा होगा। तुम शत-प्रतिशत नव-वधू लगोगी शाश्वती। दूर, बहुत दूर से नाव पर तुम्हारा वर आयेगा। कपोताक्षी तट पर बसे उस गांव म शख बजेगा। गांव का वातावरण उऱ्ध्वनि की मगल ध्वनि से मगलमय हो उठेगा। तुम कौड़ी खेलोगी। तुम चावल बिखेर दोगी और तुम्हारा वर एक एक कर चावल चुनेगा।

लक्ष्मीकांत फिर वापस आया और दु ख के साथ बोला, 'कहीं पता नहीं चलता।'

गोल दीवारघड़ी पर पाच बज कर पांच मिनट हो रहा है। लक्ष्मीकांत हांफ रहा है।

'जगे रहो।'—आदित्य के कधे पर हाथ रख कर सजय बोला।

आदित्य चेहरे पर से हथेलियां हटा कर कुछेक क्षण सजय की ओर निरर्थक दृष्टि से देखता रहा। उसके बाद चारों तरफ तलाशती आखों से देख कर उसने किसी को तलाशने की कोशिश की, फिर सजय के चेहरे पर आखें जमा कर बोला, 'क्यों?'

उसका बुद्धनुमा चेहरा देख कर सजय अपना मजाकिया स्वभाव न दबा सका। उसने चुटकी ली, 'सो रहे थे? सोओ मत। तुम्हें सोता देख वह आकर फिर वापस चली जायगी? जगे रहो पुत्तर। जब तक सास, तब तक आस।'

आदित्य कुछेक क्षण टुकुर-टुकुर आखों से सजय का देखता रहा और फिर उसका मजाक समझ म आते ही गुस्से से लाल हो उठा। फुफकारती आवाज में वह बोला, 'सब दोष ललित का है। हरामजादे ने मेरी प्रेस्टिज मिट्टी म मिला दी।'

ललित अवाक आंखों से देख रहा था। आदित्य कुछ बोल रहा है। उसकी ओर बढ़ रहा है।

आदित्य को अपनी ओर बढ़ते देख कर भी वह कुछ समझ न सका। वह शायद कुछ सोच रहा था। इसलिए अपने गाल पर आदित्य के झन्नाटेदार तमाचे की आवाज भी वह न सुन सका। उसका दुर्बल शरीर सोफा पर लुढ़क गया।

संजय दौड़ कर आया और आदित्य को झकझोरते हुए बोला, 'क्या कर रहे हो?'

आदित्य पलट कर खड़ा हुआ और फिर अचानक उसने संजय के पेट पर एक लात जमा दी। संजय के मुंह से कराह निकली और वह फर्श पर गिर गया। आदित्य को खींचते हुए लक्ष्मीकांत बोला, 'यह सब क्या हो रहा है दोस्त? छि!

पागलों जैसी आंखों से आदित्य ने चारों तरफ देखा और कमरे से बाहर निकल गया।

ललित को पकड़ कर लक्ष्मीकांत ने उठाया। बोला, 'ज्यादा चोट लगी है?'

कष्टभरी मुस्कान बिखेर कर ललित ने जवाब दिया, 'नहीं।'

बुड्ढा मैरेज रजिस्ट्रार अब तक अवाक था। यह सब कुछ इतनी जल्दी हो गया कि वह समझ न सका। कुछेक क्षण बाद वह अचानक बोल उठा, 'यह सब क्या है? जय! यह सब क्या है लक्ष्मीकांत?'

किसी ने उस पर ध्यान नहीं दिया। बड़ी मुश्किल से संजय उठ खड़ा हुआ और पेट पकड़ कर सोफे पर बैठ गया।

अगल बगल के दफ्तरों से कुछ आदमी दौड़ आये थे। 'क्या हुआ? क्या बात है?' जैसे प्रश्न गूंज रहे थे। 'कुछ नहीं, कुछ नहीं।'—कह कर लक्ष्मीकांत सबको बाहर निकालने की कोशिश कर रहा था, 'कृपया बाहर जाइये। हवा आने दीजिये।'

कमरे में किसी लड़की को न देख कर एक काला-कलूटा ठिगना आदमी चीं-चीं कर बोला, 'देवी जी कहां हैं? अय! किसकी वजह से यह सब हो रहा है?'

थोड़ी देर बाद तीनों धीरे धीरे सीढ़ियां उतरने लगे। आगे आगे रेलिंग पकड़ कर संजय और उसके पीछे लक्ष्मीकांत के सहारे ललित।

संजय की गाड़ी में ललित सामने की सीट पर बैठा। संजय उसकी बगल में बैठा। लक्ष्मीकांत पिछली सीट पर बैठा। संजय ने सिगरेट सुलगायी और ललित की ओर पैकेट बढ़ाया। ललित ने सिगरेट नहीं ली।

स्टियरिंग पर हाथ रख कर संजय फीकी मुस्कान में मुस्कराया। उसने कोई प्रश्न नहीं किया लेकिन ललित समझ गया कि संजय उससे कुछ पूछना चाहता है।

ललित की छाती धड़कने लगी। वह भी तो ठीक-ठीक नहीं जानता कि बात क्या है? संजय के पूछने पर वह क्या जवाब देगा?

लेकिन संजय ने कुछ नहीं पूछा। शायद ललित का असहाय चेहरा देख कर उसे थोड़ी दया आयी। उसने आईने में चेहरा देखा। अपने आप से बोला, 'बेटा संजय, अब तक तुम में थोड़ी दया माया है। साले, जरा और जोर से लगता तो अभी अस्पताल होते या चार कंधों पर चढ़ कर केवड़ातल्ला श्मशान की यात्रा करते।'

गाड़ी चलाते-चलाते संजय बोला, 'तबीयत ठीक है न?'

'हां।'—ललित ने जवाब दिया।

'साला हम मर गया।'

ललित चुप रहा। उसकी छाती धड़कती रही।

संजय मुस्करा कर बोला, 'मार-पीट किये अरसा बीत गया। पेट में चर्बी जम गयी है। इसलिए आदित्य महाराज की लात लगते ही दम अटक गया। ऐसा लगा कि अब मर रहा हूं। यह सब और कुछ नहीं उम्र का तक़ाज़ा है प्यारे। समझे न? इस उम्र में चोट-फोट लगने से मरा जाता है।'

ट्रैफिक पुलिस ने हाथ दिया। गीयर बदलने की आवाज हुई। संजय हंस कर बोला, 'लात लगी, दम अटका और मन हाय-हाय करने लगा। हाय! कितना कुछ करने को रह गया! कितनी तरह की जिन्दगी जी सकता था! हाय! मैं मर रहा हूं! जानते हो ललित, उस वक्त मैं क्या सोच रहा था? मैं बड़ी तेजी से सोच रहा था कि कौन-सा काम मैं अधूरा छोड़ कर जा रहा हूं। विश्वास करो, अचानक मेरे अंदर से एक चीख उभर आयी, चार हजार, चार हजार का चेक कहां गया?'

ललित अवाक होकर बोला, 'कैसा चेक?'

संजय दबी आवाज में बोला, 'उस वक्त तो मैं भी नहीं जानता था कि यह चार हजार क्या बला है? मेरे अंदर से सिर्फ एक ही आवाज चीं-चीं कर निकल रही थी, चार हजार। चार हजार कहां गया? कैसा चेक? क्यों चेक? किसको चेक?—यह सब कुछ नहीं। आश्चर्य है, उस समय न मुझे पिकलू याद आया, न रिनि याद आयी। बस, एक ही बात चार हजार का चेक। बड़ी देर बाद अचानक चार हजार का रहस्य समझ में आया। जानते हो क्या बात है? मेरी छोटी-मोटी कंपनी पर चार हजार का बकाया था। भुगतान देने के लिए परसों भैया को चार हजार रुपये का एक बीयरर चेक दिया था। ज्वाइंट एकाउंट का चेक। भैया और मेरे हस्ताक्षर होते हैं। आज ग्यारह बजे भैया ने फोन पर बताया कि परसों उनकी जेब कट गयी। चेक जेब में था। आज उन्हें पता चला कि जेबकतरा उनका चेक ले उड़ा है। भागे-भागे बैंक पहुंचे। चेक कैश हो चुका था। मैं ने सब सुना

और बैंक को फोन किया। बैंक का एजेंट मुझे पहचानता है। उसने कैशियर को बुलाया। चेक नंबर बताने पर कैशियर ने बताया कि चेक कैश हो चुका है। चेक भुनानेवाले का हुलिया पूछने पर उसने जो कुछ बताया वह भैया के हुलिया से मिलता-जुलता है। कैशियर से बात करने के बाद मेरे दिमाग में सिर्फ चार हजार का चेक घूम रहा है। चार हजार रुपया कोई अहमियत नहीं रखता। लेकिन मन बार-बार कहता है, संजय तुम ठगे गये। यही वजह है कि आदित्य की लात लगते ही मैं सिर्फ चेक की चिंता में घुलने लगा। अब मुझे हंसी आती है कि उस वक्त मुझे अपना कोई याद नहीं आया। पिकट, रिनि, मेरी अंधी बहन, मेरी मां—किसी का चेहरा मेरे मन में नहीं उभरा। ऐसी क्या खास बात थी चार हजार के चेक में कि मैं सबको भूल गया?"

पार्क स्ट्रीट में गाड़ी रोक कर संजय बोला, 'चलो सेलिब्रेट किया जाय।'

'किस खुशी में?'—ललित ने प्रश्न किया।

'आदित्य की प्यारी प्यारी लात की खुशी में।'

ललित फीकी मुस्कान में बोला, 'नहीं। मुझे मनाही है।'

'अरे हां! मैं तो भूल ही गया था। तब चलो, तुम्हें घर छोड़ आऊं। आज थोड़ा लोड करना ही होगा।'—कह कर संजय ने गाड़ी स्टार्ट कर दी।

घर आने पर ललित ने सुना, तुलसी आया था।

'उसे रोका क्यों नहीं मां?'

'बड़ी देर तक बैठा था। सिनेमा का टिकट कटा था, इसलिए चला गया। आज बड़ा खुश था। बोला, 'फुटबाल खेल में गोल दे आया है।'

'गोल! कैसा गोल? किसको गोल?'

'क्या पता।

तलपेट सूज कर टीला बन गया है। मानो पेट में नौ महीने का बच्चा हो।—दांत भींच कर संजय मुस्कराया।

लक्ष्मीकांत को रासबिहारी मोड़ पर उतार कर संजय ने गाड़ी बढ़ा दी।

आइने में चेहरा देख कर संजय बोला, 'क्या मि० सेन, मजा आ गया न? बेटे, बुढ़ापे की चोट जल्दी ठीक नहीं होती। खुद को मुर्गी मत समझो प्यारे। कब, किधर से लात पड़ेगी, पता भी नहीं चलेगा।'

संजय की गाड़ी पार्क स्ट्रीट के एक बार के सामने रुकी। वह बार में दाखिल हुआ।

वापसी म सजय ने गड़ियाहाट म गाड़ी रोकी। रिनि का रोजी ड्रीम और पिकडू के लिए विलायती फीडर लेना वह राज भूल जाता है। आज उसने खरीद लिया।

घर पहुच कर सजय ने देखा, उसका बडा भाइ अजय दास बैठा है। टेबिल पर खाली प्याला पडा है। पपरवेट के नीचे दबा पडा है एक नया चेक।

'क्या बात है '

'दस्तखत कर दो। भुगतान देना है।'—सजय के भैया अजय दास अपराधी क लहजे म बोले।

सजय कुछ नहीं बोला। बाथरूम गया। फ्रेश हुआ। और फिर कपड बदल कर एक कुर्सी पर बैठा। उसने सिगरेट सुल्गायी और इत्मीनान से सिगरेट पीता रहा।

बड़ी देर बाद वह बैठक म आया। भाइ साहब अब तक बैठे थे।

सजय ने चेक पर दस्तखत कर दिया।

एक बार सजय की इच्छा हुइ कि कहे जिसने चेक भुनाया है, कैशियर उसे पहचानता है। सुनते ही अजय दास का चेहरा सफद पड़ जायगा। सजय अगर चाहे ता यह भी कह सकता है कि उत्तरपाडा म चुपके-चुपके भाभी के नाम से जा जमीन खरीदी गयी है, इसकी जानकारी उसे है।

जानता है। हा, सजय सब कुछ जानता है। अजय ने बुद्धू की तरह उसे ठगा है। अजय ने ऐसी बवकूफी की है कि उसे हसी आती है। झगड़ने की इच्छा नहीं होती। अजय का बिना कुछ कहे वह जाने देता है।

तलवे भारी हो रहा है। क्या हागा, भगवान जाने। एक दिन मैं भी रमेन की तरह सब कुछ छाड़ कर साधु बन जाऊगा। नहीं, रमेन जैसा मैं नहीं कर सकूगा। वह ता बीच रास्ते म सब कुछ छोड़ कर चला गया। मैं अपनी अधी बहन अनीता के नाम कपनी ट्रांसफर करूगा। रुपया ही ता बेचारी का एकमात्र सहारा हागा। रिनि और पिकडू के नाम बैंक म दस-बारह लाख रुपये जमा कर दूगा। और फिर मि० सजय साधु बन जायेंगे।

## उन्नीस

*

संजय ने जिस दिन तुलसी को शराब पिलायी थी और वह बड़ी रात गये नशे में धुत होकर घर वापस आया था, उसके दूसरे दिन सुबह अंदर के बरामदे पर एक कोने में वह सेविंग सेट लेकर बैठा था। रसोई में मृदुला छोटी-छोटी डिबिया खोल कर कुछ खोज रही थी। आइना घुमा कर वह मृदुला को आईने में देख रहा था। जीरा, सरसों या और कोई मसाला खोजते-खोजते अचानक मृदुला ने मुंह उठा कर देखा। आईने में आँखें चार हुईं और उसने इस कदर आँखें झुका लीं मानो कुएं में झांक रही हो।

सुबह से ही कोई तुलसी से बात नहीं कर रहा था। यहां तक कि मृदुला भी। हालांकि रोज की तरह भाभी चौके में बैठी थी, भैया कमरे में अखबार पसार कर पढ़ रहे थे लेकिन घर का कोना-कोना गुमसुम था।

भाभी उठी और उसकी बगल से बाथरूम जाने लगी। भाभी को उठते देख तुलसी खुद को आईने में देखने लगा। जब भाभी बाथरूम चली गयी, तब मृदुला एक प्याला चाय लेकर आयी। तुलसी ने झप से उसका एक हाथ पकड़ लिया, 'कल रात क्या हुआ था?'

'नहीं जानती। छोड़ो, छोड़ो भी।'

'तुम्हारे पांव पड़ता हूं। बोलो न।'

'छि! तुम पूज्य हो न!'

'नहीं। पूज्य नहीं, पाखण्डी हूं। सब संजय की वजह से हुआ। उसी साले ने पिलायी थी। बताओ न क्या किया था मैं ने?'

'बहुत कुछ। शराबी जो कुछ करता है। मुझे सीटी भी दी थी।'

'सच।'

'भैया कह रहे थे कि तुम्हें घर से निकाल देना चाहिए, नहीं तो बच्चों पर बुरा असर पड़ेगा।'

'मैं चला जाऊंगा।'

'कहां ?'

'कहीं भी। घर खोज रहा हूं।'

क्षण भर चुप रह कर तुलसी फिर बोला, 'एक दिन पीने से क्या होता है? संजय तो रोज ही पीता है।'

'तुम संजय हो क्या ?'

मृदुला ने उत्तर की प्रतीक्षा नहीं की। हाथ छुड़ा कर चली गयी।

तुलसी ने देखा, आइने में बुड्ढा चेहरा चोर निगाहों से देख रहा है। आखिरी मार्च में वह तैंतीस का हो जायगा। लेकिन तुलसी ने अपना चेहरा कल, परसों या दस बारह साल पहले जैसा देखा था, आज भी वैसा ही देख रहा था। शायद दस-पन्द्रह साल बाद भी आज जैसा ही देखेगा। यही तुलसी है—तुलसी चंदन नदी—सिर्फ तुलसी बने रहने के अलावा इस तुलसी का और कोई चारा नहीं। वह संजय नहीं है। लेकिन फिर भी 'तुम संजय हो क्या ?'—उसके दिमाग में दिन भर गूंजता रहा।

मौका समझ कर मृदुला फिर उसके पास आयी और फुसफुसा कर बोली, 'तुम पलाशपुर में ही घर ले लो न।'

'छि: वह कोई रहने की जगह है। वहां दुनिया भर के सांप हैं। कल ही कितनों का काटा है।'

'लोग तो रहते ही हैं।'

'सब गन्दे हैं। एक-दूसरे से जलते हैं। दो-चार दिन इंतजार करो, कलकत्ता में ही घर खोज निकालूंगा।'

मृदुला जाने लगी। तुलसी उसका हाथ खींच कर बोला, 'कल कहां गया था, जानती हो ? ग्रैंड।'

तुलसी फिर हंस कर बोला, 'ग्रैंड।'

सब कुछ पूर्ववत चलता रहा। कहीं कोई रदोबदल नहीं। बस, दिन-रात सोचना है तुलसी। उसका दिमाग कभी खाली नहीं रहता। दिन-रात सोचना है न।

स्कूल में तुलसी ने सुना, आज मैच है। जबर्दस्त मैच। विद्यार्थी बनाम शिक्षक। सुन कर तुलसी उत्तेजित हो उठा। टिफिन में टीम तैयार हो गयी। शिक्षकों के कप्तान हरि चक्रवर्ती किसी जमाने में दो चार दिन कलकत्ता में सेकेंड डिविजन से खेले थे। कप्तान साहब तुलसी से बोले, 'आप दुबले-पतले हैं। दौड़ सकेंगे। राइट आउट से खेलिये। पिछले साल भी तुलसी राइट आउट था। हाफ टाइम में तुलसी बैठ कर हांफ रहा था फिर भी कोई बात नहीं। आखिरी दम तक वह राइट आउट में जमा रहा।

आज विद्यार्थियों ने बूट नहीं पहने थे। लेकिन उनके नंगे पांव भी इस्पात से कम ले रहे थे। सब ने लाल पीली जर्सी पहन रखी थी। विद्यार्थियों का गोलकीपर था हाफिज—एकादश विज्ञान का विद्यार्थी। पीली जर्सी, हाथों में चमड़े का दस्ताना और सिर पर टोपी। इलाके भर में हाफिज का नाम है। गोल मछली जिस तरह पानी में उछल कर कूदती है, उसी तरह हाफिज शून्य में तैर जाता है।

हाफ टाइम तक गोल नहीं हुआ। शुरू से तुलसी लाइन के इर्द-गिर्द रहा है। कभी आगे बढ़ा है, कभी पीछे हटा है। उसका दिया गया पास उसके पास नहीं पहुंचता, लाल-पीली जर्सी के पांवों तले पहुंच जाता है। खिलाड़ियों का पहचानता है बाल। एकदम पालतू बन गया है। पालतू कुत्ता की तरह लाल पीली जर्सी के पास पहुंच जाता है।

'क्या कर रहे हैं तुलसी बाबू? लाइन पर रहने से क्या होगा, मैदान में आइये। बाल पकड़ने की कोशिश कीजिये।'—हरि बाबू चिल्ला कर बोले।

लेकिन कैसे? तुलसी तो देखता है कि बाल कभी हरी भरी घास पर फुदक रहा है, तो कभी नीले आसमान में तैर रहा है। नहीं, बाल पकड़ना उसके वश की बात नहीं। इसलिए वह कोशिश भी नहीं करता। अच्छा, ह्विस्की के नशे में उसने मृदुला को देख कर सीटी क्या बजायी थी? मृदुला तो उसकी पत्नी है। उसे देख कर सीटी बजाना कोई मतलब नहीं रखता। सीटी तो बजाता था संजय। जहां भी लड़कियां दीखतीं, मुंह में दो उंगलियां डाल कर वह सीटी बजाता, सी इ सी इ! कमाल की सीटी बजाता था संजय। तुलसी ने सीखा था पर कभी आजमाया नहीं था। क्योंकि वह संजय तो है नहीं। उसके पांव छू कर बाल चला गया। लाइन के उस पार चला गया। थ्रो इन। 'क्या कर रहे हैं? बाल नहीं पकड़ सके!'—तुलसी को शर्म आयी। हरि बाबू बड़े सीरियस हो रहे हैं। छात्रों के साथ खेल रहे हैं फिर भी जान लगा दी। यह कौन नहीं जानता कि विद्यार्थी गोल देने का मौका देंगे। शिक्षकों के जीतने से कल छुट्टी मिलेगी। यह तो हर विद्यार्थी जानता है कि उनकी टीम आज जानबूझ कर हार जायेगी।

आसमान से उतर रहा है सफेद बाल। उसे लक्ष्य कर उतर रहा है सादा बाल। बड़ा अच्छा लगता है। सफेद रंग के बाल के पीछे नीला आकाश और नावों के पाल जैसे बादल।—तुलसी अलसायी आंखों से बाल का उतरना देखता रहा।

वह क्यों पकड़ेगा बाल? क्या स्वार्थ है उसका? वह संजय तो है नहीं जो अत्यव्यसायी संजय अपनी पत्नी के लिए गुलाबी सपना खरीदता फिरता है, बच्चे के लिए विलायती फीडर तलाशता है, तीसरे पहर बार में बैठ कर ह्विस्की पीता है। वह ललित भी नहीं है जो ललित अस्पताल के बिस्तर पर लेटा है और अच्छी तरह

जानता है कि वह अब कुछ ही दिनों का मेहमान है फिर भी उससे मजाक करता है, 'क्यों, आज बड़े गंभीर नजर आते हो ? क्या बात है ? होनेवाली घरवाली काली कलूटी, बेगन लूटी तो नहीं ?' मरेगा, फिर भी ललित के चेहरे पर कितनी शान्ति रहती है। और न वह रमेन है जो रमेन गाड़ी चलाता था, पियानो पर पूर्वी बंगाल के मल्लाहों के गीत गाता था। वह तो तुलसी है सिर्फ तुलसी। हां, तुलसी चंदन भी नहीं। सिर्फ तुलसी। वह एक दिन सुबह शाम अपने रोते बच्चे को गोद में लेकर उं-उं कर सुलायेगा। बाजार में लोगों से कहेगा, यह महंगाई जान ले लेगी। और फिर एक दिन सारी पृथ्वी के भार से दब जायेगा। फिर वह क्यों पकड़ेगा बाल ?

आश्चर्य है, बाल बार-बार उसके पास ही लुढ़कता हुआ जाता है। धीरे धीरे, बड़ी विनम्रता के साथ। अपराधी छात्र की तरह सिर झुकाये उसके सामने आ खड़ा होता है।

'क्या बात है भग्नदूत ?'

तुलसी बाल लेकर दौड़ता है। लाइन के बाहर से विद्यार्थी चिल्ला रहे हैं, 'मर, मैन बिहाइंड, मैन बिहाइंड !'

ठीक इसी तरह दौड़ता था रमेन। इन आउट, इन आउट करता हुआ सेंटर में बाल फेंक देता था या चीता बाघ की तरह बाल लेकर गोल में घुस जाता था।

तुलसी बाल लेकर दौड़ रहा है। थोड़ी ही दूर पर लाल झंडा फहरा रहा है—कार्नर फ्लैग। तुलसी दौड़ रहा है। क्या करेगा वह, समझ नहीं पाता। अगर अभी रमेन होता तो क्या करता ? काला-कलूटा ठिगने कद का गोपीकांत दौड़ा आ रहा है। उसकी लाल-पीली जरसी झिलमिला रही है। यह क्या गोपीकांत ने उससे बाल छीन लिया ? अचानक तुलसी ने खुद को कंगाल महसूस किया।

लेकिन वह क्या हमेशा सिर्फ तुलसी ही बना रहेगा ? आजन्म ? आमृत्यु ?

गोल देने के लिए लाल-पीले खिलाड़ी सेंटर लाइन के उस पार जा पहुंचे हैं। शिक्षकों को नचा रहे हैं लाल पीले खिलाड़ी। वाह ! गोल तक पहुंच कर भी लाल-पीली जर्सियां वापस आ जाती हैं। इधर खुला मैदान है। सिर्फ एक बैक इत्मीनान से चहलकदमी कर रहा है। गोल कीपर हाफिज पोस्ट से उठंग कर मुरलीधर श्री कृष्ण की मुद्रा में खड़ा घास का डंठल चबा रहा है।

अचानक शून्य में उड़ता हुआ बाल आ रहा है। खुला खाली मैदान।

मुसीबत है। तुलसी अलसाये कदमों से आगे बढ़ा। लाल-पीला बैक आठवीं श्रेणी का छात्र पीयूष आगे बढ़ा। हाफिज ने अपनी मुद्रा बदली।

खाली मैदान ! आश्चर्य ! शून्य से सीधे बाल अद्वाट शिष्य की भांति तुलसी के चरण स्पर्श करने लगा। सामने अकेला पीयूष है। लोहे के खम्भे जैसे उसके

पाव हैं। तुलसी ने कगने की असफल कोशिश की, पाव लडे, लगाम की आवाज हुई और गेना चारों खाने चित्त। तुलसी उठ खड़ा हुआ। पीयूष अब उठ रहा है। आश्चर्य! बाल पीयूष के पाव से उछल कर तुलसी के करीब आ गया। जिस तरह किसी अपरिचित की गोद छोड कर बच्चा अपने बाप के पास आ जाता है।

तुलसी बाल लेकर दौडा। लाइन के बाहर विद्यार्थियों का शोर मचा, 'शाबाश सर, शाबाश।'

तुलसी दौड रहा है। आदि अन्तहीन मैदान। कहीं कोई नहीं। तुलसी हांफ रहा है। हाथियों की दौड़ जैसी आवाज दौड़ी आ रही है। तुलसी बाल लेकर दौड़ रहा है। *विद्यार्थियों का स्वर गूंज रहा है, 'मैन विहाइण्ड सर! मैन विहाइण्ड सर*! वह रमेन जैसा कुशल खिलाडी क्या नहीं है? वह न रमेन जैसा उद्यमी है, और न ललित जैसा आत्मविश्वासी। वह तुलसी है—क्या? वह सिर्फ तुलसी क्यों है?

*दायीं ओर से तुलसी गोल की ओर बढ रहा है। दो-तीन लाल-पीले खिलाड़ी* आगे बढ रहे हैं। तुलसी बाल कब्ज कर लाल-पीले खिलाड़ियों की अली-गली में दौड रहा है। अचानक उसकी छाती म एक चुभन-सी हुई। हांफ रहा है तुलसी। *बाल जिद्दी बच्चे की तरह उसके पांवों से लिपटा है। बाल लेकर दौड़ रहा है तुलसी।*

'शाबाश सर! शाबाश सर! गोल म मारिये सर!'—दर्शक विद्यार्थियों म शोर मच गया।

*लेकिन किधर है गोल पोस्ट? तुलसी उद्भ्रांत आखों से देखता है। किधर है* गोल पोस्ट? वह रहा तीन बांसों से बना गोल पोस्ट। अकेला हाफिज खड़ा है। बायें पाव से तुलसी दायें पाव म बाल लेकर दौड पड़ा। वह क्यों तुलसी है? वह *क्यों सदा से वही तुलसी है? और कुछ क्यों नहीं?* रमेन, सजय या ललित कुछ भी तो वह हो सकता था!

*अचानक कुकुरमुत्ते की तरह एक लाल-पीला छोकरा आ खड़ा हुआ। तुलसी के पांव से खिसक कर बाल लाल-पीले के पाव तले चुपके से चला गया। लाल-पीला* मीठी मुस्कान में मुस्कराया और कच्छप गति से आगे बढ़ा। तुलसी देख रहा है कि किसी नमक हराम बच्चे की तरह बाल उसके दुश्मन के पांव के इशारे पर फुदक रहा है। *अचानक उसे गुस्सा आ गया। वह करीब ही है फिर भी लाल-पीला छोकरा* इतने इत्मीनान से बाल क्या उछाल रहा है? सतर्क क्यों नहीं होता? उपेक्षा! तुलसी की उपेक्षा!

*अचानक तुलसी दुगर-फुर्ती क्षमता से दौड़ पड़ा। लाल-पीले के तीन-चार* हाथ दूर पर बाल उछल रहा है। तुलसी ने इत्मीनान के साथ बाल को अपने कब्जे म लिया। लोकन बुद्धू जैसी आखों से टुकुर-टुकुर देखने लगा। तुलसी उसे जरा भी

समय नहीं देता, नायीं ओर पलट कर बाल के साथ दौड़ पड़ता है। सामने खड़ा है गोलपोस्ट। गोलकीपर हाफिज साप की तरह फण काढे बलखा रहा है। उसकी क्रूर आखें चमक रही हैं। 'अब क्या होगा ? तुलसी क्या हार जायेगा ? हा, हाफिज को पार पाना असभव है।'—मन ही-मन बोल तुलसी ने गाल पर लात जमाई।

हाफिज शून्य मे तैरा।

अचानक चारों तरफ की हवा उसे गुनगुनाने लगी।

गो ओ ल

मैदान के बाहर लड़के उछल-कूद रहे हैं।

हरि चक्रवर्ती ने छाती से लगाया। जगत्तारण कधा पर उठा कर नाचने लगे।

तुलसी की धाती लाग खुल कर झलने लगी।

कल छुट्टी है।

तीसरे पहर सिनेमा की दो टिकट लेकर तुलसी ललित के घर पहुचा। ललित की मा ने बताया, विमान और आदित्य को साथ लेकर ललित दोपहर म निकला है। काइ खास काम है। अब वापस आता होगा। यह सुन कर तुलसी बैठ गया। ललित की मा से बात-चीत करने लगा और फिर एक प्याला चाय पीकर उठ खड़ा हुआ। वह अपने घर आया और मृदुला से जल्दी करने को कहने लगा, 'जल्दी करो देवी, जल्दी। झटपट साड़ी बदल डालो।'—कह कर उसने सिनेमा की टिकट दिखायी।

'सच्ची।'—मृदुला चहक उठी और फिर दबी आवाज मे बोली, 'सिर्फ हम दोनों। घरवाले क्या सोचेंगे।'

'सोचने दो। तुम जल्दी करो। समय नही है।'

तुलसी खूब उत्तेजित दीख रहा है। मन-ही-मन हस रहा है।

सिनेमा हाल के परली ओर है सुरुचि केबिन। तुलसी बोला, 'चलो।'

'देरी हो जायगी।'

'धत्। न्यूज रील पहले खत्म हो।'

कविराजी कटलेट का एक टुकड़ा मुह म डाल कर तुलसी बोला, 'क्यों, आ गया न मजा'

गोश्त, अडा और वनस्पति के स्वाद से मुह भर गया। मृदुला लजीली मुस्कान म बोली, 'रोज खाने की इच्छा होती है। घर का खाना अब अच्छा नहीं लगता। भात की गध से उल्टी आती है।'

'रोज खिलाऊगा।'

'रोज बाहर निकलना सभव है क्या ?'

'क्यों ? घर ले जाऊंगा।'

मृदुला आंखें गोल-गोल कर बोली, 'सबके सामने ?'

'नहीं। छिपा कर तुम्हें दूंगा। रात में दरवाजा बन्द कर मसहरी के अन्दर बैठ कर चुपके-चुपके खाना।'

मृदुला हंसी, 'छि !'

'क्यों ? छि क्या ? आपद् धर्म में सब कुछ चलता है। देस में देखा था पिता जी मां का चोरी-छिपे जो-सा मसहरी के अन्दर बैठ कर खिलाते थे। उन दिनों मां के पेट में छोटा भाई था, जो बचा नहीं। मां जब खा सकती थी, तब तुम क्यों नहीं खा सकती ?'

मृदुला का चेहरा चमक उठा। उत्तेजना में तुलसी स्वाद भूल गया। उसकी आंखों के सामने अब हाफिज था—गोलकीपर हाफिज। उसने देखा, हाफिज शून्य में तैर रहा है गो ओ ल। अचानक शून्य में तुलसी का एक पांव उठ गया। उसने अपने आपको सम्भाल लिया। मृदुला देखेगी तो मजाक उड़ायेगी। लेकिन उत्तेजना तो सम्भाले नहीं सम्भलती। कितनी वाह-वाही मिली थी उसे। यहां तक कि हेडमास्टर ने भी कहा था, आप तो मजे हुए खिलाड़ी हैं तुलसी बाबू।'

इतने में सफेद वर्दी पहने, हाथ में ट्रे लिए एक फेरी वाला पोटेटो चीप्स बेच रहा था। तुलसी हाथ उठा कर बोला, 'दो पैकेट।'

मृदुला फुसफुसायी, 'एक।'

'धत्।'

कुछेक क्षण बाद फेरी वाला वापस आया। डेढ़ रुपया।—सुनकर चौंक उठा तुलसी। आंखें गोल-गोल कर मृदुला फुसफुसायी, 'देखा न !'

तुलसी मुस्कराया, 'ठीक है।'

एक दिन संजय के साथ वह ग्राण्ड गया था। उस दिन की याद कर उसने खुद को सम्भाल लिया। हां, और कभी चीप्स लेगा तो दाम पहले पूछ लेगा।

बाहर आते वक्त तुलसी ने देखा कि मृदुला की आंखों में लाली उतर आयी है। 'रो रही थी क्या ?'

फीकी मुस्कान में मृदुला ने उत्तर दिया, 'आह ! कितना करुण दृश्य था !'

अचानक तुलसी का हृदय मृदुला के प्रति करुण हो उठा।

लाबी में ठसाठस भीड़ थी। नाइट-शो देखने वाले खड़े थे। अचानक सिहर कर कांप उठी मृदुला और तुलसी का हाथ पकड़ कर बोली, 'देखो, देखो, वह नीली शर्ट वाला मेरी जांघ में चिकोटी काट कर भाग रहा है !'

'कौन ? कहां ?' दिग्भ्रमित-सा बोल उठा तुलसी।

'वह रहा। दौड़ कर पकड़ो।'

तुलसी ने देखा, नीली हवाइ शर्ट और पैंट पहना एक काला-कलूटा लंबा आदमी चला जा रहा है। लेकिन देखकर भी उसने नहीं देखा। उसे पकड़ कर वह क्या करेगा। कर ही क्या सकता है वह? उस लम्बे धड़ंग गुण्डे सरीखे आदमी को कैसे पकड़ेगा तुलसी? उसने अपने आपको बड़ा असहाय महसूस किया, फिर भी आगे बढ़ा और इधर-उधर देखकर वापस चला आया, 'भाग गया साला।'

अपमान और लज्जा से मृदुला की आखें भर आयीं। आसुओं भरी आवाज में वह बोली, 'तुम्हारी आखों के सामने से चला गया और तुम देख न सके?'

दार्शनिक की तरह तुलसी बोला, 'जाने भी दो यार। संसार में गुण्डे, बदमाश तो भरे पड़े हैं। किस-किस को पकड़ोगी?'

बस स्टाप पहुच कर मृदुला ने आखें पोछीं। क्षण भर चुप रह कर बोली, 'उसका चेहरा न देख सकी। लेकिन वह ठीक विभु जैसा ही लगा। विभु का चेहरा मोहरा गुण्डों जैसा है। वह भी काला-कलूटा लम्बा ताड़ है। पकड़ पाती तो चप्पलों की बौछार कर देती।'

रात! गहरी रात! बिस्तर पर लम्बा पड़ा है तुलसी। उसके अंग अंग में मानो हजारों फोड़े टनटना रहे हैं। दर्द के मारे छटपटा रहा है बेचारा। शायद जोरों का बुखार अभी-अभी उसे दबोच लेगा। कराह रहा है तुलसी।

मक्खन जैसे हाथों से पांव दबाते दबाते मृदुला बोली, 'क्या खेलते हो? हाथ-पांव टूट जाय तो?'

तुलसी कराहती आवाज में फुसफुसाया, 'वह क्या सचमुच में विभु था? तुम ने ठीक से देखा था न?'

मृदुला मुह बिचका कर बोली, 'क्या पता। लगा तो वैसा ही था। भाग गया। चेहरा ठीक-ठीक नहीं देख सकी।'

बड़ी देर तक तुलसी चुप्पी में डूबा कुछ सोचता रहा फिर नींद में डूबता-डूबता बोला, 'कलकत्ता बड़ा गंदा शहर है समझी न बड़ा गन्दा शहर है। यहां सम्मान के साथ जीना मुश्किल है। भीड़-भाड़ शोरगुल छि। यहां कोइ भला आदमी रहता है। चलो, पलाशपुर में रहेंगे। खेती करेंगे। समझी न खेती खेत खलिहान गाय-बैल। ताजा मछली ताजा साग-सब्जी। गांव के आदमी बड़े सीधे-सादे होते परनाम मास्टर साहब कहते हैं। बड़े भोले-भाले।

बोलते-बोलते गहरी नींद में डूब गया तुलसी।

शाश्वती को बस पर चढा कर विमान धरमतल्ला की सड़कों पर घूमता रहा। मैदान म खड़ा-खड़ा उसने सूर्यास्त देखा। डूबता हुआ सूरज उसे आश्चर्य म डुबाता गया। सूर्यास्त के बाद आसमान म उठ गयी गाधूलि। नहीं, गाधूलि नहीं। जब गायों का झुण्ड नहीं, तब गाधूलि कैसी। तब क्या दौड़ते-भागते आदमिया के पावों की धूल है? वह भी नहीं। बस, सूर्यास्त और सध्या के बीच लटकता एक क्षीणकाय काल-खड। गालगप्पों के लिए भीड़, भेलपूरी के लिए भीड़, जड़ी-बूटियों के लिए भीड़। शहीद मीनार के नीचे सभा। श्रोताओं की भीड।

विमान चल पड़ा। ट्राम लाइन के ऊपर तारा का जाल। कर्जन पार्क म आलसिया की जमात। कहीं प्रेमिका के इतजार म मूगफली खाता प्रेमी, तो कहीं प्रेमी के इतजार म बार-बार घड़ी देखती प्रेमिका। कहीं निठल्लों के वेमतलब कहकहे। दौड़ती भागती ट्राम बस, दौडते-भागते आदमी।

विमान चल रहा है, देख रहा है, सोच रहा है। उसे हर चलने-फिरते आदमी से दो बात करने की इच्छा होती है। अनजान आदमी के कधे पर हाथ रख कर चलने की इच्छा होती है। एक आदमी एक भिखारी बच्चे का हाथ पकड़ कर सडक पार करा देता है। बच्चे के चेहरे पर कृतज्ञता उभर आती है। चारा तरफ असहाय आदमी, जन्माध आदमी। यह भी नहीं जानता कि कहा से आया है क्यों आया है, क्यों कर आया है? बस, अधा की तरह चल रहा है। पूछने पर मुश्किल से अपने बाप का नाम बता सकेगा।

विमान चल रहा है, देख रहा है, सोच रहा है। वहा एक छोटी मोटी सभा हो रही है। कोई भाषण दे रहा है। विमान सुन रहा है, 'हड़ताल होगी। बगाल बद बगाल बद बगाल बद ट्रेन का चक्का—नहीं चलेगा नहीं चलेगा इनकलाब जिन्दाबाद

एक छोटा मोटा जुलूस सभा की ओर बढ रहा है। चलने-फिरते कुद्ध नर ककाल हाथ उठा कर चीख रहे हैं, मुर्दाबाद मुर्दाबाद

विमान मुस्कराता है और आगे बढ जाता है।—रेल का चक्का नहीं चलेगा नही चलेगा विमान चल रहा है, देख रहा है, सब कुछ देख रहा है और सोच रहा है इन अधा को इतना भी पता नहीं कि विद्रोह क्राति के बीज का नष्ट कर देता है। पचास प्रतिशत माग पूरी होते ही सबके सब शात हो जायेंगे। रेल का चक्का चलेगा। कारखानों म भापू बजेंगे, दफ्तरा की कुर्सिया फिर से बाबुओं की गप्पें सुनेंगी। आजकल एसे आदमिया का जन्म नहीं होता—ऐसे नगे आदमियों का जिनके चलने से पृथ्वी कापती है। आज ऐसे आदमिया का जन्म नहीं होता जा मांगना नहीं जानते, जा अभिशाप देना नहीं जानते। वे सिर्फ देने आते हैं, लेने नहीं।

आज तीसरे पहर विमान ने एक अच्छा काम किया है। बड़े साहस का काम। इसलिए आज वह अपने आप को बड़ा सजीव महसूस कर रहा है। राह चलता की आखों म आखें डाल कर आज वह देख सकता है। विमान के साहमी कदम आगे बढ़ते गये। वह सीना तान कर सड़क पार कर गया।

ट्राम म विमान ने देखा, पीछे वाली लबी सीट पर एक भारी-भरकम आदमी ढेर सारी जगह छेंके बैठा है। मुह से शराब की बू निकल रही है। लाल लाल आखों से वह चारों तरफ मरियल आदमियों की ओर देख रहा है। वह अगर ठीक से बैठे तो वहा एक दुबला पतला इन्सान मजे म बैठ सकता है। लेकिन कोइ बोलने का साहस नहीं कर रहा है। लाल-लाल आंखों से आखें मिलीं। विमान मुस्कराया। भारी भरकम मीठी आवाज म बोला, 'कृपया सिमट कर बैठिए।'

भारी-भरकम आदमी काप उठा। वह एकदम गठरी बन गया। विमान आत्मविश्वास के साथ बैठा। खड़े यात्री ईर्ष्यालु आखा से उसके सर पर बधी पट्टी देख रहे हैं। शायद ये लोग आज अपने-अपने घर जाकर विमान के आश्चर्यजनक साहस के किस्से सुनायेंगे।

तबीयत अच्छी नहीं लग रही है। बड़े रास्ते से उसने एक रिक्शा लिया। घर के सामने रिक्शा छोड़ते समय उसने देखा रिक्शे की पीठ पर एक पोस्टर सटा है। रास्ते की मद्धिम रोशनी म उसने पढा। लिखा था, रोज की कमनी रोज का खाना, बगाल बन्द म फाके खाना।

उधर सभा हो रही है और इधर उसका प्रतिवाद।

'यह क्या है ' विमान ने प्रश्न किया।

रिक्शावाला कपाल से पसीना पोंछ कर बोला, 'मुझे नहीं मालूम है बाबू। एक आदमी चिपका गया है और कह गया है कि फाड़ने से जान मार देगा। क्या लिखा है उसम बाबू ?

'लिखा है, तुम रोज कमाते हो और खाते हो।'

रिक्शावाला हसा।

'तुम बगाल बद नहीं चाहते ?

'क्या पता!'

विमान को सिर्फ पिछले साल की बारिश याद आ रही है। बारिश ही इन बेचारों की कमाइ का वक्त है। साल भर बाद आयेगा यह समय फिर भी हड़ताल। बाबुओ का क्या जाता है, वे तो अपनी बना ही लेते हैं।

रात का खाना लेकर आया शभू। साथ मे सुबल।

'ललितदा ने खाना भेज दिया है। उनकी तबीयत खराब है।'

टिफिन केरियर वापस ले जाने की खातिर दोनों चारपाई पर बैठे रहे। फर्श पर बैठ कर विमान चुपचाप खाता रहा।

अचानक सुबल बोल उठा, 'गलीगंज के ए० क० दत्त को पहचानते हैं '

मुंह फेर कर विमान बोला, 'हां।'

'उसकी लड़की अपर्णा को जो गाना गाती है ?'

विमान ने सिर हिलाया, 'पहचानता हूं। बचपन से ही पहचानता हूं।'

'आप दोनों में क्या संबंध है ?'

विमान हंसा और फिर भारी-भरकम मीठी आवाज में बोला, 'बचपन में ही अपु और मेरी शादी ठीक हो गयी थी। हमलोग एक ही गांव के हैं। अगल-बगल में हमारा घर था। बचपन में मैं बड़ा अच्छा विद्यार्थी था। सबको मुझ से बड़ी आशा थी। सब समझते थे, पढ़ लिख कर मैं बड़ा आदमी बनूंगा। उन लोगों ने मुझे बचपन में ही पसंद कर रखा था।'

'अब '—सुबल ने प्रश्न किया।

विमान सिर हिला कर बोला, 'अब वे मुझे पसंद नहीं करते। क्योंकि मैं कुछ बन नहीं सकता हूं। उन्हों ने अपना विचार बदल लिया है। लेकिन अपु बचपन से मुझे अपना पति मानती है। अक्सर मुझ से मिलने आ जाती है। उसमें अब तक बचपना है। समझदारी आते ही मिलना जुलना छोड़ देगी। वह अभी भी नहीं समझती कि मैं कुछ नहीं हूं।'

'और आप ? आप में उसके लिए कोई कमजोरी नहीं ?'

'नहीं।' विमान ने सिर हिलाया और फिर धीरे-धीरे बोला, 'नहीं, मुझ में किसी भी लड़की के लिए कोई कमजोरी नहीं। मेरे दिल में सिर्फ संतान के लिए कमजोरी है।

विमान चुपचाप खाता रहा और फिर अचानक बोल उठा, 'दो-दो चार होता है। शादी-ब्याह में जो गणित को मान कर नहीं चलता, वह समाज का शत्रु है। मैं खूब सोच-विचार कर शादी करूंगा। और फिर संसार में एक ऐसे आदमी को जन्म दूंगा—ऐसे आदमी को—

बोलते-बोलते विमान उत्तेजित हो उठा। कुछेक क्षण बाद संभल कर धीरे-धीरे बोला, 'ऐसे आदमी को जो मुझ जैसा नहीं होगा। वह स्वस्थ-सबल होगा। शत प्रतिशत पुरुष होगा। उसमें सारे पुरुषोचित गुण होंगे। वह परम ज्ञानी होगा। जन्म से मृत्यु तक देख सकेगा। उसे पता होगा कि वह कहां से आया है, क्यों आया है, और कहां जायेगा ? वह संसार से कुछ लेने नहीं बल्कि संसार को कुछ देने

आयेगा। स्वभावत वह ऐश्वर्यवान होगा। पृथ्वी एक ऐसे महापुरुष की प्रतीक्षा में बैठी है।

'क्या कर लायेंगे ?' सुबल ने प्रश्न किया।

'खूब सोच-समझ कर शादी करूंगा !'

'कर सकेंगे ?' सुबल और शंभू मुस्कराये।

विमान सिर हिला कर बोला, 'भगवान जाने ! मैं न कर सकूं तो मेरा लड़का करेगा, वह न कर सका तो उसका लड़का कोशिश करेगा। हमारे खानदान में यह कोशिश जारी रहेगी। ऐसे महापुरुष के जन्म लेने से पहले न जाने हम कितनी बार जन्म ले चुकेंगे।

'वह कैसा होगा ? कार्ल मार्क्स या स्वामी विवेकानन्द जैसा ?'—सुबल ने प्रश्न किया।

कार्ल मार्क्स या स्वामी विवेकानन्द ? विमान यह प्रश्न नहीं समझ सका। वह मन ही-मन बड़बड़ाता रहा, 'हां, कार्ल मार्क्स ! लम्बी दाढ़ी। महात्मा जैसा मुख-मंडल। ओजस्वी स्वर में बोल रहे हैं, मैं ईश्वर का शत्रु और मनुष्य का मित्र हूं। अद्भुत मनोबल था उस महापुरुष में। हां, कार्ल मार्क्स को पहचानता है विमान। विवेकानन्द हां, विवेकानन्द। शिकागो स्टेशन के प्लेटफार्म पर काठ की पेटिंग पर बैठे आप्ता में रात काटते हैं फिर भी गेरुआ वस्त्र और माथे में पगड़ी बांधे सीधे खड़े होकर गुरु गम्भीर वाणी में कह रहे हैं, मैं आप लोगों का भाई हूं। आप सब मेरे भाई-बहन हैं। मैं आप सबका भाई हूं। मैं जीव को ईश्वर मानता हूं। ईश्वर प्राप्ति ही जीवन का लक्ष्य है। लेकिन कैसा होगा वह आदमी, क्या पता विमान बड़बड़ाता है पर थाह नहीं मिलती। कैसा होगा वह आदमी ? दरअसल संसार के किसी भी आदमी से उसके सपनों के आदमी का शत-प्रतिशत मेल नहीं है।

टिफिन कैरियर लेकर दोनों चल गये। विमान अपने आपसे बोला, 'आज रात मैं गीता पढूंगा। बहुत दिनों से नहीं पढ़ी है।'

सुबल ने शंभू से कहा, 'एकदम पागल है !'

क्षण भर चुप रह कर शंभू बोला, 'तुम ए० के० दत्त को कैसे जानते हो ?'

'उस लड़की के पीछे-पीछे उसके घर तक गया था। गेट पर नेम प्लेट है। उसी पर लिखा है, ए० के० दत्त। वहीं दत्त को फोन किया था।

'फोन पर कहा, आपकी लड़की एक बहुत गंदे आदमी से मिलती-जुलती है। उधर से भारी-भरकम मरदानी आवाज में आयी, 'आप कौन हैं ?' मैंने कहा, 'मैं सुबल मित्र हूं। बी० काम० पास हूं। आपकी लड़की जिससे मिलती-जुलती है,

मैं उसी महल्ले में रहता हूं।' उसने पूछा, 'आपको मेरा फोन नंबर कैसे मिला ?' मैं ने जवाब दिया, 'डिरेक्टरी से।' 'मेरा नाम कैसे जान गये।' यह तो कह नहीं सकता था कि आपकी लड़की के पीछे पीछे आपके घर तक गया था। कहा, 'आप इतनी बड़ी फर्म के मालिक हैं। आपको कौन नहीं जानता।' उधर से आवाज आयी, 'विमान रक्षित को मैं जानता हूं। सूचना के लिए धन्यवाद।'—कह कर उसने फोन रख दिया।

सुनल का यह सोच कर बड़ी शर्म महसूस हुई कि उसने यह क्या कहा कि मैं बी० काम० हूं। *आजकल बी० काम० को पूछता ही कौन है ? गली-कूचे में* मारे मारे फिरते हैं बी० ए०, बी० काम०।

विमान रक्षित बच गया। क्योंकि अपर्णा रक्षित के साथ उसका प्यार नहीं है। अगर होता ? सुनल का तन-बदन गर्म हो उठा। क्या होगा ? इतने बड़े घर की लड़की कार्पोरेशन के हाजिरा बाबू से प्यार क्या करेगी ?

भोर रात में आदित्य बिहार के किसी जंक्शन स्टेशन पर ट्रेन से उतरा। ठिठुरती सरदी। *थोड़ा थोड़ा कुहासा।*

स्टेशन के बाहर तांगे रिक्शे खड़े हैं। एक छोटी-सी चाय की दुकान पर लोग कुल्हड़ में चाय पी रहे हैं।

चार बज कर दस मिनट। इतनी सुबह आदित्य और कभी नहीं उठा। अभी तक अंधेरा है। गंतव्य ठीक नहीं। ट्रेन में एक बुड्ढे ने कहा था, यहां रहने के लिए एक अच्छा-सा डाक बंगला है।

वह एक छोकरे तांगेवाले से बोला, 'डाक बंगला जाना है। क्या लोगे ?'

'दो रुपये।'

'गला मत काटो। दो मिनट का तो रास्ता है।'

'चढ़ाव है बाबू। पहाड़ी रास्ता है न।'

आदित्य हंसा, 'बीच रास्ते में अगर घोड़ा हांफ दे।'

तांगेवाला हंसा।

हिचकोले लेता हुआ तांगा चल पड़ा। आसमान के गहरे रंग से एक चमक आ रही है। आदित्य ने देखा, दायीं ओर तराइ और बाइं ओर पहाड़। खुले मैदान से *गंध में लिपटी हवा आ रही है।*

*'यहां की सुबह देखने लायक होगी।'*—आदित्य ने मन ही-मन सोचा। यहां जगह मिल जाय, तो वह बहुत दिनों तक रहेगा। आदमियों के कोलाहल में वापस नहीं जायेगा।

## बीस

*

गहरी रात की गहरी चुप्पी। गहरी नींद म डूबी शाश्वती न जाने क्या फुसफुसा रही थी।

हैमती की जाघ पर उसकी टाग चढी थी। हैमती ठेल कर बोली, 'ऐ, टाग हटा कर सो।'

शाश्वती की नींद भरी आखें खुलीं और मुद गयीं। उसके बाद वह फुसफुसायी। शायद वह फुसफुसा कर कह रही थी, 'शाश्वती को क्षमा करो। शाश्वती नहीं जानती कि उसका मन क्या चाहता है? अगर तुम लोगों को मेरे कारण दु ख पहुचा हो, तो मुझे क्षमा कर दो।'

शाश्वती ने सोचा है कि शीघ्रातिशीघ्र वह ललित से मिलेगी। पूछेगी, 'इसमे आपका क्या स्वार्थ था? आपने ऐसा क्या किया? आप क्यों ऐसा करना चाहते थे?

ललित से झगड़ने के लिए शाश्वती के मन म ढेर सारी बातें उमड़-घुमड रही हैं। क्या नहीं मुझे खुद को समझने का वक्त दिया गया? क्यों मुझे जबर्दस्ती मैरेज रजिस्ट्रार के यहा ले आया गया? तुम ने ऐसा क्यों किया ललित? आखिर तुम्हारा क्या स्वार्थ है? नहीं, इस तरह और कभी उतने मर्दों के बीच शाश्वती का पकड़ कर कहीं मत ले जाना। उसे थोड़ा वक्त दो। थोड़ी दया करो शाश्वती पर। उसे थोड़ा स्नेह दो। वह क्या अपने आपको खाक समझती है। और तुम! हा, ललित तुम! सुना है, आज टेलिफोन डायरेक्टरी के पन्ने उलटते वक्त तुम्हारे हाथ काप रहे थे। तुम्हारी दो उगलिया सिगरेट पकड़ कर नहीं रख सकती थीं। मुझ पर तुम्हारा गुस्सा क्यों? किस बात का मुझ से प्रतिशोध लेना चाहते हो तुम? तुम्हें तो यह भी पता नहीं था कि तुम क्या कर रहे हो। फिर भी इतना बड़ा सर्वनाश करना चाहते थे। क्यों? आखिर क्यों?

बड़ी रात तक सजय जगा था। सामने है एक ग्रिल दिया हुआ बरामदा। वहीं आरामकुर्सी पर बैठा था सजय। उसके सामने एक छोटी-सी टेबिल पर ह्विस्की

रखी थी। जोरों की गरमी लग रही थी। सोने की इच्छा नहीं हो रही थी। यूं तो नींद भी कम गयी है उसकी। आखें लगती हैं तो उल्टे-सीधे सपने देखता है। दरअसल नींद आती ही नहीं। नशा में खुद आंखें बंद हो जाती हैं। बस, बेहोशी-सी रहती है। इसलिए सुबह उठ कर तरोताजा महसूस नहीं करता। बेहोश था, हाथ में आ गया, बस। दिन भर ह्विस्की की तलब सताती है। आदित्य, तेरी लत को धन्यवाद। अब तक दर्द है प्यारे।—संजय मन-ही-मन बोला और मन-ही मन मुस्कराया।

बरामदे पर हल्की फुल्की हवा थी। नहा-धोकर रोटी और गोश्त खाने के बाद ह्विस्की का मजा ही कुछ और है। रिनि पहले खरी-खोटी सुनाती थी, रोती धोती थी अब कुछ नही बोलती। सिर्फ इतना ही कहती है, बाथरूम सभल कर जाना। शीशे की आलमारी पर मत गिरना।

आहिस्ते-आहिस्ते पी रहा था संजय। पिन्टू को सुला कर कुछेक क्षण के लिए रिनि बरामदे पर आ खड़ी हुई। बोली, 'और कब तक पियोगे ?'

सोते वक्त भी रिनि के होठों पर लिपस्टिक देख कर संजय की इच्छा हुई कि कहे, 'सोते वक्त तो लिपस्टिक धो लिया करो। हमेशा लिपस्टिक लगाये रहना अच्छा नहीं। होठों पर सफेदी पड़ सकती है। कुष्ट-फुस्ट बहुत कुछ हो सकता है। आजकल के केमिकल्स का क्या भरोसा ?'

लेकिन संजय ने कुछ कहा नहीं। कहता तो रिनि भी बहुत कुछ कहती। शराब की बात उठाती, उसके अतीत को उघारती और इस तरह झगड़ा शुरू हो जाता। क्या जरूरत है ? उसे जो अच्छा लगे करे। मा दिन भर पान खाती है। मुंह धोने के बाद मुंह के दोनों तरफ सफेदी नजर आती है। संजय को बड़ी घिन लगती है। लिपस्टिक की वजह से रिनि के होठो पर भी वैसा दाग पड़ सकता है न।

रिनि की प्रदीप्त देहयष्टि चूनियां रंग की साड़ी में चतुर्दिक आक्रमण कर रही थी। वह जब आठ-नौ महीने की गर्भवती थी, उस समय भी उसके अंग अंग में सम्मोहक कांति थी। आज भी उसे देख कर कोई नहीं कह सकता कि वह अब मा बन चुकी है। कपाल पर वह लिपस्टिक से ही एक गोल टीका लगाती है। मांग में एक चुटकी सिंदूर। अक्सर रंग-बिरंगे कास्मेटिक की फरमाइश करती है, पर सिंदूर कभी नहीं मंगाती। एक दिन संजय मजाक में बोला था, 'खैर, सिंदूर के खर्च से तो बचा हूं।' इस पर रिनि ने कहा था, 'औरतों के मामले में क्यों टांग अड़ाते हो ? यह भी नहीं जानते कि पति को कभी सिंदूर की बात नहीं करनी चाहिए ? विवाह के बाद रिनि को शायद सेर भर सिंदूर लगता था। मांग भर कर सिंदूर लगाती थी रिनि। शायद दुनिया को बताती थी, 'देखो, अब मैं कुमारी नहीं हूं। मुझ

पर नजर न गडाना।' लेकिन अब वह फिर से मानो कुमारी बन गयी है। सिंदूर छिपाती है।

संजय पूछना चाहता है, 'क्या, किसी से चक्कर तो नहीं चल रहा है? तुम्हें एक नौजवान गिटार सिखाने आता है न? उसे मैं ने अब तक देखा ही नहीं। कैसा है देखने में? विमेन इटर तो नहीं?'

चिढ़ाने की इच्छा होती है, पर चिढ़ाता नहीं। पेट पर अब तक आदित्य की लात महसूस हो रही है। पता नहीं क्यों साले ने लात जमा दी? अबमरे ललित को भी भन्नाटेदार चपत रसीद कर दी। भगवान जाने उसने ऐसा क्या किया? क्या नाम है उस काली-कलूटी छोकरी का? शाश्वती है न? उसमें कोई खास बात तो है नहीं। न जाने क्यों फिर भी आदित्य उसके पीछे दीवाना है? अंधा है साला। अरे, देखना है तो आकर मेरी रिनि को देख जा। आंखें जुड़ा जायेंगी। गोरी-चिट्टी चमड़ी में बंधी मेरी बीवी को एक नजर देख लेगा न तो आंखें खुल जायेंगी। ऊंच नीच का भेद समझ में आ जायेगा। एक काली-कलूटी छोकरी के लिए नाहक जान देता है। ललित बाधा देता है, तो दे दे न उसी को। दो-चार दिन भोग करेगा बेचारा। चंद दिनों का ही तो मेहमान है। उसके मरने के बाद—मरने के बाद मनुष्य का अपना तो कुछ रह नहीं जाता—हम ही तो उसका सब कुछ भोग करेंगे। थोड़ा उदार बन यार, थोड़ा उदार बन। अपने उस दोस्त के प्रति थोड़ा उदार बन जो मौत की घड़ियां गिन रहा है। दो-चार दिन शाश्वती का भोग करेगा फिर तो मर ही जायेगा।

रिनि आगे बढ़ी और ग्रिल पकड़ कर कुछेक क्षण रास्ते की ओर देखती रही। खाली रास्ता। कहीं कोई नजर नहीं आता। सिर्फ उस तरफ गैरेज के सामने चारपाई पर लेटा पड़ा है एक बुड्ढा दरबान। हिंदुस्तान पार्क में इस वक्त भूतों का राज्य होता है। चुप्पी में डूबी रात की छाती को नोचती खसोटती भिखारिनों की भुतहा चीख रह-रह कर पछाड़ खाती है, 'मा ां ा बाबू ऊ ऊ एक मुट्ठी ई इ भात

रिनि पलट कर बोली, 'सुन रहे हो?'

'क्या?'

'चीख। बड़ा डर लगता है।'

रिनि हंसी और फिर गंभीर होकर बोली, 'यह चीख बड़ी अभिशाप-सी सुनायी पड़ती है। इस तरह चीखती है मानो उसका सर्वस्व चला गया हो।'

झूठमूठ में रिनि इतनी कीमती लिपस्टिक लगाती है। फालतू खर्च है। संजय

अच्छी तरह जानता है कि गिटार मास्टर से रिनि प्यार नहीं करती। उंगली छू जाय तो सतीत्व के भय से गठरी बन जाती है बेचारी। धत्!

सजय मुस्कराकर कर बोला, 'मैं उनलोगों के बीच रह चुका हूं। चितपुर रोड के फुटपाथ पर कितनी ही रातें मैंने गुजारी हैं। दो-चार बार भिखारियों की तरह लोगों के सामने हाथ फैलाया है। इसका मजा ही कुछ और है।'

'क्या मजा है?'

'है। लेकिन अब यह नहीं समझा सकता। सर्वस्व गवाने में भी एक आनंद है?'

चूड़ियां खनका कर रिनि बोली, 'अब वैसे बन सकते हो।'

सजय सिर हिला कर बोली, 'नहीं।'

रिनि मीठी मुस्कान में मदमाती आखों से बोली, 'क्यों नहीं? तब क्या कहते हो कि इसमें बड़ा मजा है? मुझे चिढ़ाना आसान है क्या? मैं इतनी बुद्धू नहीं।'

'नहीं, अब वैसा नहीं बन सकता। इसका एक कारण है। अब यदि लुंगी पहन कर फुटपाथ पर सोऊं, तो मन में एक खटका रहेगा कि रात में घर में चोर घुसेगा। कुछ-न-कुछ चुरा ले जायेगा। चोरी हो या न हो, पर मन में खटका लगा रहेगा। लेकिन सब कुछ अगर हाथ से निकल जाय, तब

रिनि ने जंभाई ली। और फिर अंगड़ाई लेकर सजय के सामने आ खड़ी हुई। कमरे में ड्रीम लैंप जल रहा है। उसकी रोशनी उसके अंगों में थिरक उठी। साधु सन्यासियों जैसा पवित्र मुंह बना कर सजय बोला, 'गिटार बजाओ न। जरा सुनूं, तुम ने नया क्या सीखा है'

'नींद आ रही है।'

'तब सो जाओ।'

रिनि झल्ला कर बोली, 'वाह! मैं सोना चाहती हूं और जनाब सोने की इजाजत देते हैं। क्यों, हुक्म नहीं दे सकते कि मैं अभी गिटार सुनना चाहता हूं? जाओ, गिटार ले आओ और मेरे पैरों के पास बैठ कर बजाओ। मैं ने कहा और हुजूर ने इजाजत दे दी। मर्द हो, मर्द की तरह

सजय हाथ उठा कर बोला, 'आहिस्ते। इतनी तेज आवाज में नशा कट जायगा।'

रिनि रूठ कर बोली, 'जाओ, मैं नहीं बजाती।'

शांत स्वर में सजय बोला, 'गिटार लाओ।'

रिनि ने थोड़ी-थोड़ी प्यारी-प्यारी तकरार की। लेकिन आज पहली बार सजय ने सुनना चाहा है। मन-ही-मन वह बेहद खुश हुई। गिटार लेकर सजय के पैरों के पास बैठी। जिस तरह पिकर को गोद में लेकर बैठती है, ठीक उसी तरह गिटार लेकर बैठ गयी रिनि।

'क्या सुनाने ?'

'देहाती गीत जानती हो ?'

'देहाती भुच्चड़ !'—रिनि के होंठो पर प्यारी-प्यारी मुस्कान थिरक गयी ।

'तब जो जी चाहे बजाओ ।'

थोड़ा टुन-टांग करके रिनि सचमुच में बजाने लगी । बजाते-बजाते विभोर हो गयी रिनि ।'

सजय सुन रहा था । गिटार की स्वर लहरी में वह किसी युवती की दर्दनाक रुलाई सुन रहा था । शायद रिनि कोई देहाती गीत बजा रही थी । बोल समझ में नहीं आ रहा था । लेकिन सजय देख रहा था, रंग-बिरंगे कपड़ों में पहाड़ी नदी पार कर लोग मेला देखने जा रहे हैं । अस्ताचलगामी सूर्य की लाली से प्रकृति लाल हो उठी है ।

रिनि ने बजाना बद किया । सजय ने पूछा, 'यह क्या हिन्दी फिल्म का गाना है ?'

'नहीं ।'

'तब ?'

बचपन में सुना था । देवघर में । सुर याद था ।'

'बोल क्या है ?'

रिनि हस कर गुनगुनायी, गाड बाबू गाड बाबू, सीटी न बजाना, झंडी न दिखाना, लाटफारम प रह गयी गठरिया हसते-हसते सजय ने महसूस किया कि उसके पेट में कोई भारी भरकम चीज हिचकोले ले रही है । प्लेटफार्म पर गठरी रह गयी । हे भगवान ! गाड़ी छूट रही है ! हे गार्ड बाबू ! आपके पाव पड़ता हू ! मेरा सर्वस्व प्लेटफार्म पर पड़ा है ।

'रिनि !'

'उ !'

'अब मत बजाओ । अब अच्छा नहीं लगेगा । तुम ने खूब मन लगा कर बजाना सीखा है । बहुत अच्छा लगा ।'

'तब प्राइज दो ।'

सजय प्राइज ही देने जा रहा था कि मुह हटा कर रिनि बोली, 'छि कितनी बदबू आ रही है ! क्या मिलता है इसमें !'

रिनि उठ कर चल दी । एक नाव की तरह सजय चेतन से अवचेतन की ओर बहता गया ।

एक बजे रात तक विमान ने गीता पढ़ी है । ससार का अन्यतम काव्य पढ़ते-पढ़ते

हाथ आया तब, जब सिर के पीछे अचानक भयकर दर्द उठा। आँखें टीसने लगीं। तब किताब रख कर विमान ने बत्ती बुझायी। लेकिन बिस्तर पर लेटते ही उसने समझ लिया कि अब नींद नहीं आयेगी। नींद आने का अब सवाल ही नहीं उठता। उसने बैंडेज के ऊपर से कस कर सिर मे एक रूमाल बाधा। उसके बाद खुली हवा म घूमने के लिए दरवाजा बद कर बाहर निकल पड़ा।

बरगद के पेड़ तले बैठ कर कई छोकरे मिट्टी के पुरवा से चाय की तरह शराब की घूट ले रहे थे। धुआंधार सिगरेट चल रही थी। विमान को चाय पीने की इच्छा हो रही थी। आसपास मे कहीं दुकान दिखाई नहीं पड़ी। सिर्फ एक पान की दुकान खुली थी। विमान दुकान के पास आ खड़ा हुआ और बरगद के पेड़ की ओर देखने लगा। एक छोकरा उठ कर उसके करीब आया और एक सवाल दाग दिया, 'क्या चाहिए ?'

विमान सकपका कर बोला, चाय।'

छोकरा अवाक हुआ 'चाय।'

महफिल म बैठे किसी छोकरे ने पूछा, 'कौन है ? क्या चाहता है ?

छोकरे ने पलट कर जवाब दिया, 'जनाब चाय पीने आये हैं।'

एक विकट हसी खिलखिला उठी। किसी ने कहा, 'ले आओ। हम हुजूर को चाय पिलायेंगे।'

और कोई बोला, 'पिलाओ सब को जहर। पी-पी कर सब साले मरेंगे।'

'खबरदार! शराब को कभी जहर मत कहना। घोर पाप होगा। अरे ऐ सचिया, हुजूर को यहां ले आ!'

सिर के अदर खून मचल रहा है। आँखें टनटना रही हैं। विमान की समझ में कुछ नहीं आता। ये लोग उसे शराब पिलाना चाहते हैं। उसने आज तक शराब नहीं चखी। शायद पीने से नशे म सो जाय।

छोकरा म थोड़ी शराफत तो है। विमान के लिए उन्होंने जगह बना दी। वह बैठ गया। उसने देखा एक छोकरी भी बैठी है। सस्ते दाम की रंगीन साड़ी। चेहरे पर पाउडर की मोटी परत और होठो म सस्ती लिपस्टिक। शायद महफिल गरम करने के लिए छोकरी लायी गयी थी। अब महफिल ठडी है। इसलिए छोकरी भी उपेक्षित है। विमान ने आखें फेर ली।

विमान ने घूट ली। पेट से जीभ तक एक चीख उठी, 'नहीं, नहीं, हम यह नहीं लेगे। इससे हमारी पटरी नहीं बैठेगी।' वह मुह में घूट लिए बैठा रहा। न गिल सका, न उगल सका।

'क्यों, कैसा लगा ?'

'बड़ा कड़ुआ है। इसमें क्या है'—मुँह बिचका कर विमान ने प्रश्न किया।

'क्या पता! बहुत कुछ मिलाते हैं साले। कारबाइड हो सकता है, अगर हो सकता है, इन साला का क्या विश्वास? लेकिन घबराओ मत यार। दो-चार दिन में पक्के हो जाओगे। मैं पहले अंग्रेजी पीता था, अब बगला पीता हूँ। बगला की तुलना नहीं होती। बगला की मिट्टी में बगालिया के हाथ बनी बगला शराब की बात ही कुछ और है। कहा जा रहे हो?'

'कहीं नहीं। सिर में बड़ा दर्द है। चाय पीने निकला था।'

'बस चाय समझ कर एक बोतल गटक जाओ। तब सिर रहेगा ही नहीं, फिर सिर दर्द कैसा? कहाँ रहते हो?'

'करीब ही।'

'अकेले?'

'हाँ।'

छोकरा हँस कर विमान के कान में बोला, 'तब तो फर्स्ट क्लास इंतजाम कर दूँगा गुरु। छोकरी को साथ ले जाओ। अपनी छाती में भींच कर तुम्हें सुलायेगी। उसे कुछ देने की जरूरत नहीं। जो देना है, हम दे देंगे। तुम्हें सिर्फ मौज करना है। उसके हाथ लगाते ही तुम्हारा सिर दर्द भाग जायेगा।'

छोकरी! छोकरी लेकर विमान क्या करेगा? बेचारा सकपका कर बोला, 'नहीं, मुझे उसकी जरूरत नहीं।'

छोकरा थोड़ा निराश हुआ, फिर भी बोला, 'ले जा यार। मौज मस्ती के लिए बुरी नहीं है। उम्र भी ज्यादा नहीं है। हमारे लिए थोड़ी पुरानी हो गयी है, बस। लेकिन तुम्हें मजा आ जायेगा। मजा देना जानती है साली।' इतना कह कर वह छोकरी से मुखातिब हुआ, 'पारुल, इनके साथ जा। बड़े अच्छे आदमी हैं।'

अचानक एक छोकरा चिल्ला कर बोला, 'खबरदार! पारुल आज मेरी है। किसी साले ने पारुल को छूने की कोशिश की तो हाथ काट डालूँगा।'

छोकरा पारुल के सामने आ खड़ा हुआ। माचिस की एक तीली जला कर उसने उसे देखने की कोशिश की। एक हाथ से उसकी ठुड्डी पकड़ कर वह बोला, 'तुम मेरी हो न?'

छोकरी ने उसका हाथ झटक दिया। छोकरे ने माचिस की तीली फेंकी और उसे बाहों में कस लिया। अरे छोड़ो भी—कह कर वह खिलखिलाती रही।

इस बार विमान को पुरबे का तरल पदार्थ कड़ुआ नहीं लगा। गटगटा कर पी गया। अंग प्रत्यंग में बिजली कौंध गयी, बादल घुमड़ उठे। आँख, कान, नाक, मुँह में अपरूप बाजे बज उठे, झम झम उसे याद आया, आज ही तीसरे पहर उसने

एक सरल, सुबोध लड़की को बचाया है। रा रही थी बेचारी। हर औरत रोती है। क्योंकि मनुष्य के जन्म का रहस्य उसके पल्लू में बंधा रहता है। वह जानती है कि उसे ही संतान का भार वहन करना होगा। प्रसव-पीड़ा उसे ही बर्दाश्त करनी होगी। तब वह क्यों जैसे-तैसे की संतान का बोझ वहन करेगी? वह क्यों चाहेगी कि जो-सो उसके गर्भ में संतान का बीज बोये? वह तो मन ही-मन किसी श्रेष्ठ पुरुष के लिए प्रतीक्षा करती है। किसी को मनोवांछित पुरुष मिल जाता है, किसी को नहीं मिलता है। लेकिन जिसे नहीं मिलता है, वह भी प्रतीक्षा करती है, आखिरी दम तक प्रतीक्षा करती है। सैकड़ों मर्द उसके जिस्म के तार-तार कर दें, फिर भी मन से वह किसी एक की होती है। संभव है जिसे उसने कभी देखा तक न हो फिर भी उसीका इंतजार करती है। इसलिए औरत को बगैर ठीक से पहचाने छूना भी नहीं चाहिए। लेकिन बहुगामी पुरुष यह सब विचार नहीं करता। संसार में न जाने कितने पुरुष अपनी विवाहिता स्त्रियों से अनजाने में बलात्कार करते हैं! कोई समझने की कोशिश नहीं करता कि एक छोटी-सी प्रतिक्रिया कितना बड़ा सर्वनाश कर सकती है!

थोड़ी ही दूर पर अंधेरे में बत्ती बुझाये एक टैक्सी खड़ी है। छोकरा पारुल को पकड़ कर ले जा रहा है। शायद टैक्सी में बैठा कर वह उसे कहीं ले जायेगा। पारुल जाना नहीं चाहती, पर उसे जाना होगा। उसने रुपये लिए हैं। वह खी खी हंसती है और उस छोकरे को नोचती-खसोटती है। और सब छोकरे चुपचाप बैठे सिगरेट फूंक रहे हैं।

जानलेवा सिरदर्द भुथरा पड़ गया है। विमान को अब अपना सिर मिट्टी के ढेले जैसा अर्थहीन लग रहा है। उसके हाथ-पांव शिथिल हो रहे हैं। सिर भनभना रहा है। वह अचानक पास बैठे छोकरे से फुसफुसा कर बोला, 'मैं पारुल को ले जाऊंगा।'

छोकरा हो-हो कर हंसा और चिल्ला उठा, "अबे ऐ गदा! पारुल को छोड़ दे। साहब ले जाना चाहते हैं।"

गदा बोला, "फूट साला। पारुल अब मेरी है। साली दांत काटती है, नोचती है फिर भी मैं उसके प्यार में जला जा रहा हूं।"

सुन लिया न, वह नहीं छोड़ेगा। लड़ कर पारुल को हासिल कर ले यार। अगर जीत गये तो हम तालियां बजायेंगे। जा मेरे यार, गदा की खटिया खड़ी कर दे।

विमान उठ खड़ा हुआ। नहीं, ठीक से खड़ा नहीं हो सकता। पांव शिथिल हो रहे हैं। उसने खुद को गिरते-गिरते बचा लिया। ऐसा अश्लील, ऐसा कुत्सित दृश्य उसने और कभी नहीं देखा था। एक औरत के लिए इतने मर्दों की खींचातानी। आज ही तीसरे पहर उसने एक लड़की को बचाया है। वह बचना चाहती थी। लेकिन पारुल!

हे भगवान्! यह तो रोना भी नहीं जानता। थोड़ी ही देर म वह शक्तिहीन हो जायेगा। तब क्या होगा?

अचानक दोनों हाथ ऊपर उठा कर विमान चीख उठा, 'बचाओ-बचाओ

लेकिन कुछ नहीं हुआ। आवाज गले म फस कर रह गयी। भयभीत आखो से विमान ने देखा, अधरे म खड़े सब छोकरे उसकी ओर देख रहे हैं। फुक फुक कर सिगरेट जल रही है।

लेकिन कोइ कुछ कहे उसके पहले ही विमान धीरे धीरे जमीन पर गिर गया। आखें बद होते होते उसे महसूस हुआ कि अकेला वह बड़ा असहाय है, बड़ा दुर्बल है। विपक्षी बड़े प्रबल हैं। काश! यदि इस वक्त कोइ बहादुर साथी होता!

आहिस्ते आहिस्ते विमान गहरी नींद में डूबता गया।

सुबह सुबह आखें खुलीं। सिर टनक रहा है। सिर के अदर की एक-एक शिरा तड़प रही है। अच्छी तरह आखें खोलने मे उसे थोड़ा समय लगा। उसने देखा कि वह बरगद के पेड़ तले पड़ा हुआ है। चारों तरफ मिट्टी के फूटे पुरवे, साल के जूठे पत्ते, देसी शराब की बोतलें और जूतों की छाप। राहगीर चलते चलते कौतूहल भरी आखों से उसकी ओर देखते हैं और आगे बढ़ जाते हैं।

घर वापस आया विमान। ताला खोलकर कमरे म कदम रखते ही उसे महसूस हुआ कि उसका सिर एकदम खाली हो गया है। उसने सिर झकझोरा और उसे महसूस हुआ कि उसके सिर के अदर एक टुकड़ा आकाश घुस गया है। उसने फिर जोरों से सिर झकझोरा पर कोइ फायदा नहीं। आसमान का टुकड़ा आसन जमाये बैठा है। आहिस्ते-आहिस्ते वेला बढ़ती गयी और धीरे-धीरे उसे महसूस होने लगा कि आकाश की शून्यता उसके मस्तिष्क म ओस की तरह टपक रही है। जमती जा रही है आकाश की शून्यता।

बड़ा उदास हुआ विमान। बड़ा निराश हुआ। सिर्फ दो-तीन दिन का वक्त है। उसके बाद ही वह कुछ दिनों के लिए पागल हो जायेगा। हा। विमान इन लक्षणो को अच्छी तरह पहचानता है। उसे विश्वास है कि वह दो-चार दिन के अदर निश्चित रूप से पागल हो जायेगा। परिचितों को यह बता देना आवश्यक है। वह सबसे कहेगा, 'होशियार! मैं पागल हो रहा हू।'

## इक्कीस

*

और एक बार ललित ने असफलता का स्वाद चखा। गहरी हताशा में वह डूबता गया। वह अब पृथ्वी पर किसी भी प्रकार की घटना का जन्मदाता नहीं हो सकता।

दोपहर के भोजन के बाद पुराने अम्ल के हजारों तीर ललित की छाती में बिंध रहे थे। थोड़ी ही देर म उल्टी हो जायेगी। करवट लेट कर तकिए म मुह डाल कर वह उल्टी रोकने की कोशिश कर रहा था। दो उंगलियों में दबी सिगरेट यूं ही जल रही है। ललित के होठों तक पहुच नहीं पाती। तकिए म मुह घुमा कर वह अ क करता है।

मा घर में नहीं है। किसी के घर महफिल जमाये बैठी है। दोपहर का अकेलापन ललित को खाने दौड़ता है। दोपहर बीतना नहीं चाहती। आसन जमाए बैठी है दोपहर। खाय-खाय कर रही है। और हां, दोपहर के समय ही मिठु उसे बेहद याद आती है। और याद आती है कि वह चन्द दिनों का मेहमान है।

खिड़की की सलाखों मे मुह डालकर अमरूद के कोमल पत्ते हवा में मचल रहे हैं। इन मासूम पत्तों पर अबतक धूल नहीं गिरी है। शिशु सदृश निष्पाप दीख रहे हैं ये मासूम पत्ते। ललित का जी चाहता है कि उठकर मासूम पत्तों को दुलारे-पुचकारे।

अमरूद के पत्तों में मासूम बच्चों के चेहरे देखकर वह बड़ा अचरज होता है। उसे बहुत अच्छा लगता है। एकटक वह मासूम पत्तों को हवा में झूमते देखता रहा। आंखें धीरे-धीरे बन्द होती रहीं। आहिस्ते-आहिस्ते तन्द्रा की गोद म डूबता रहा ललित। शायद अब उल्टी नहीं होगी।

और ठीक ऐसे ही समय खुले दरवाजे से चुपचाप कोइ अदर आया। मां? नहीं, मा की गध ललित पहचानता है। उसने आंखें न ी खोलीं। वह इतजार करता रहा। उसे एहसास हो रहा था कि कोइ उसके मुह पर झुक कर उसे देख रहा है। सास बद किए वह चुपचाप पड़ा रहा। आगंतुक शायद इस पृथ्वी का नहीं है। वह कौन है और क्या आया है, ललित अच्छी तरह जानता है। उसे यह भी पता है कि वह कहां से

आया है ? चट दिनों में उसे भी तो वहीं जाना है न। आखें खोलते ही वह देखेगा कि आगतुक उसकी ओर एक टिकट बढा रहा है, 'चलो, जहाज खुलने का वक्त हो गया।'

यह भी हो सकता है कि आनेवाला और कोई नहीं, आदित्य हो। ललित आखें खोलेगा और वह चीख उठेगा, 'धोखेबाज, मेरी शाश्वती मुझे लौटा दो।'

'ललित!'

ललित ने चौंक कर आखें खोलीं। धीरे-धीरे उठ बैठा। थकी-थकी आवाज म बोला, 'बैठो विमान!'

लाल लाल आखें। रूखे सूखे बाल। धूल भरा चेहरा। वह एकटक ललित का देख रहा था। एक लबी सास लेकर बोला, 'मैं फिर से पागल हो रहा हू ललित!'

'क्या'—ललित अवाक होकर बोला, 'क्या हुआ?

'क्या पता? कभी कभार यू ही ऐसा होता है। और कभी कभी धक्का लगने से होता है। कल रात मैं ने कुछ गुडा से एक बच्चलन लडकी को बचाने की कोशिश की थी।'—क्षण भर चुप रह कर विमान फिर बोला, 'दो-चार दिन म ही मैं पागल हो जाऊगा।'

'कल तीसरे पहर भी तुम ने एक लडकी का बचाने की कोशिश की थी न विमान?'

विमान कुछेक क्षण सिर झुकाये चुप बैठा रहा, फिर बोला, 'इसे बचाना कठिन था। क्योंकि यह खुद को बचाना नहीं चाहती। बरगद के पेड तले वह कुछ छोकरों के बीच बैठी थी। अधेरे मे मैं उसका चेहरा भी नहीं देख सका।'

'अरे! वह तो मचिया का अड्डा है। वहा सब चुल्लू पीते हैं।'—ललित आश्चर्यित हुआ।

'जानता हू। वहा वह छोकरी क्या थी, मैं यह भी जानता हू। मैं चाय पीने निकला था और उस चडाल चौकडी म फस गया।' क्षण भर चुप रह कर वह फिर बोला, 'और जब एक आवारा छोकरा उस आवारा छोकरी को घसीट कर ले जा रहा था, मैं अपना सतुलन खो बैठा। यह जानते हुए भी कि पागल खुद को बेच चुकी है, फिर भी न जाने क्या मेरा मन कह रहा था कि वह ऐसी जिन्दगी नहीं चाहती।'

जीभ से चु चु की आवाज निकाल कर ललित बोला, 'तुम रातोंरात ससार का चलन टालना चाहते हो?'

एक लबी सांस फेंक कर विमान बोला, 'हा, ऐसी इच्छा तो होती है। पहले मैं एकदम निरीह था। किसी को गलत काम करते देखना, तो आँखें फेर लेता था। मुझे पता है कि मैं कितना कमजोर इसान हू। लेकिन कल रात जब मैं बचाओ-बचाओ कर

चीख रहा था, कोई भी बचाने नहीं आया। मुझे विश्वास है बहुतों ने मेरी आवाज सुनी होगी, फिर भी कोई नहीं आया। जानते हो क्यों? सब मेरी ही तरह निरीह हैं। आंखों के सामने अन्याय होते देखते हैं और आंखें फेर लेते हैं। सुनते ही कानों में उंगलियां डाल लेते हैं। मैं हमेशा दूसरों को अपनी अपेक्षा साहसी और शक्तिशाली समझता था, लेकिन कल रात मुझे यकीन हो गया कि सब मुझ जैसे ही हैं।

ललित मुस्करा कर बोला, 'लेकिन मैं ने तुम्हारी आवाज नहीं सुनी।'

'सुनते तो क्या करते? जाते?'

'अवश्य जाता।'

'और जाकर जब देखते कि मैं आवारा छोकरों के चंगुल से एक आवारा छोकरी को बचाने की कोशिश कर रहा हूं, तब क्या करते? उन छोकरों से लड़ते?'

'नहीं।'

अचानक विमान ललित का एक हाथ पकड़ कर उत्तेजित स्वर में बोला, 'क्यों? नहीं क्यों ललित?'

'क्योंकि इसमें कोई फायदा नहीं होता।'

'नहीं होता!'—विमान हताश हुआ, 'तुम क्या उनका समर्थन करते हो?'

'नहीं, समर्थन नहीं करता। ऐसी बात नहीं कि वे अन्याय कर रहे थे। अपने पैसे खर्च कर कोई शराब पिये या छोकरीबाजी करे, इससे अपना क्या आता-जाता है। शराब पर पाबन्दी नहीं है। वेश्याओं के पास लाइसेंस है।'

'तुम्हारी बात मानता हूं। लेकिन तुम्हारा दिल क्या कहता है? कल तुम आदित्य और शाश्वती की शादी कराना चाहते थे। वह शादी करने को तैयार नहीं थी। वह अपनी गलती महसूस कर रही थी। लेकिन तुम जबर्दस्ती उसे आदित्य के पल्ले बांध देना चाहते थे। तुम्हारा मन कह रहा था कि तुम अन्याय कर रहे हो, पर तुम्हारा अहम् तुम्हें मन की बात सुनने नहीं देता था। तुम निरपेक्ष बने थे। मैं तो अभी भी नहीं जानता कि शाश्वती से तुम्हारा क्या संबंध है, लेकिन मुझे विश्वास है कि तुम उससे कोई व्यक्तिगत प्रतिशोध लेना चाहते थे। इसलिए तुम जबर्दस्ती पर उतर आये थे। कल तुम निरपेक्ष नहीं थे, सिर्फ निरपेक्षता का अभिनय कर रहे थे। तुम्हारा चेहरा सफेद पड़ गया था। तुम कांप रहे थे। कल शाश्वती के लिए मुझे उतना कष्ट नहीं हुआ, जितना तुम्हारे लिए हुआ था।'

ललित आंखें झुका कर बोला, 'लेकिन कल रात की घटना का उससे क्या संबंध?'

विमान मीठी मुस्कान में बोला, 'कल यदि मैं भी तुम्हारी तरह निरपेक्ष होता, तो आज तुम अपने बाल नोचते। दीवार से सिर टकराते। इतना निरपेक्ष मत बनो ललित।

ऐसी निरपेक्षता तुम्हें ले डूबेगी। तुम्हारे घर चोर घुसेगा और तुम दीवार की तरफ मुह किये पड़े रहोगे।

ललित सिर झकझोर कर बोला, 'बताओ, कल रात तुम उस छोकरी को क्यों बचाना चाहते थे?'

विमान कुछेक क्षण अपने सिर पर हाथ फेरता रहा, फिर बोला, 'जब वह आवारा छोकरा उस बदचलन छोकरी को घसीट कर ले जा रहा था, तब वह लाचार थी। वह किसी घर की सती-साध्वी बहू नहीं थी। तीस-चालीस रुपये में वह खुद को बेच चुकी थी। खरीदार को पूरा हक था कि जैसा जी चाहे उसका व्यवहार करे। लेकिन मेरा मन कह रहा था कि वह साग भाजी की तरह व्यवहार होना नहीं चाहती। मुझे उस वक्त निरुपाय शाश्वती का चेहरा याद आ रहा था। तुम लोग उसे जबर्दस्ती ले जा रहे थे। शायद वह दस्तखत भी कर देती। क्योंकि वह समझ रही थी कि इसके अलावा उसके पास और कोई चारा नहीं। तुम गुस्सा मत करो। मैं शाश्वती के साथ उस लड़की की तुलना नहीं कर रहा हूं। लेकिन तीसरे पहर मैं ने शाश्वती को जैसा देखा था, रात में पारुल भी मुझे वैसी ही दीख रही थी। शाश्वती की तरह पारुल भी मुझे विवश दीखी थी।

ललित गहरी सांस लेकर बोला, 'तुम्हारा दिमाग खराब है।'

'बिल्कुल ठीक।'—विमान गंभीर होकर बोला, 'जिस दिन दो बदमाशों को मैं ने घड़ी और मनीबैग नहीं दिए, उसी दिन मैं समझ गया कि अब मैं ऐसा काम अक्सर किया करूंगा। इसका नतीजा यह होगा कि एक दिन बाधा समझ कर मुझे रास्ते से हटा दिया जायेगा। उस वक्त कौन मेरा सहायक होगा? कौन मेरी रक्षा करेगा? कौन मेरी आवाज पर दौड़ा आयेगा। ऐसा एक भी आदमी नजर नहीं आता। इससे तो बेहतर है कि मैं पागल बन जाऊं। कुछ दिनों की शांति तो मिलेगी।

कुछेक क्षण आखें बंद किये विमान बैठा रहा। उसके चेहरे पर मीठी मीठी मुस्कान मचलती रही। उसके मस्तिष्क में नीला आसमान आहिस्ते-आहिस्ते घुसता गया। चिंता, स्मृति और क्षोभ मस्तिष्क से निकलते रहे।

घुटने में घुटना ललित दांत से नाखून काट रहा था। दोनों के बीच भारी-भरकम चुप्पी खड़ी थी। आखिरकार ललित की आवाज से चुप्पी भाग खड़ी हुई। विमान के सिर पर हाथ फेरते हुए वह बोला, 'क्या सोच रहे हो?

'आसमान!'—धीर गंभीर स्वर में यह बोल कर विमान ने आखें खोलीं और दार्शनिक लहजे में बोला, 'दो-चार दिन में ही मेरा मस्तिष्क आकाश से भर जायगा। तब जिसका जो दिल चाहे करे, मैं देख कर भी कुछ नहीं कर सकूंगा। कोई शाश्वती से जबर्दस्ती विवाह करे या पारुल का संभोग करे, मैं चुप रहूंगा।'

सहसा ललित शर्मा गया। सिर झुका कर बोला, 'हम क्या कर सकते हैं, तुम्हीं सोचो!'

'हम कुछ नहीं कर सकते। सचमुच में हम कुछ नहीं कर सकते। कल रात मेरे मन में बार-बार एक बात उठती थी कि एक ऐसे आदमी की जरूरत है जो किसी की आवाज सुनते ही दौड़ पड़ेगा। वह शाश्वती को बचायेगा। पारुल, ललित और विमान की रक्षा करेगा। किसी की आवाज सुन कर वह बैठा नहीं रहेगा।'

'कहां मिलेगा ऐसा आदमी?'—ललित हंसा।

विमान की आंख चमक उठीं, 'नहीं मिलेगा, तो बनाना होगा।'—कह कर विमान धीरे-धीरे अन्यमनस्क हो गया और फिर कुछेक क्षण बाद करुण स्वर में बोला, 'मेरा एक काम कर दोगे?'

'क्या?'

जेब से एक चिट्ठी निकाल कर बोला, 'अपर्णा को दे आओगे?'

ललित अवाक हुआ, 'लेकिन मैं तो किसी को जानता नहीं। अपर्णा को भी नहीं पहचानता। मैं कैसे उसके घर जा सकता हूं!'

'उसके घर जाना भी नहीं है। फोन नंबर लिख दिया है, लेकिन तुम फोन नहीं करोगे। मर्दानी आवाज सुन कर उसे फोन नहीं दिया जायेगा। किसी लड़की से फोन कराना। फोन पर ही मिलने की जगह और वक्त ठीक कर लेना।'

'तुम खुद क्यों उसके घर नहीं जाते?'

'पागल हो गये हो क्या? मुझे वहां घुसने नहीं दिया जायेगा।'

'क्यों?'

'मैं पागल हूं न!'

ललित ने कुछ सोचा और फिर उसके हाथ से चिट्ठी ले ली।

'चार बजे के बाद जाना। तब तक वह कालेज से वापस आ जायेगी।'

ललित चार बजे के पहले ही घर में ताला बंद कर निकल पड़ा। शंभू का छोटा भाई सीढ़ी पर बैठ कर जमा किये सिगरेट के खाली पैकेट गिन रहा था। उसे बुला कर ललित बोला, 'मां कहां है, जानते हो?'

'हालदार बाबू के घर।'

'मां को चाभी दे देना और कहना कि मुझे लौटने में देर होगी।'

अनवरशा रोड पर दो नंबर न्यू थियेटर स्टूडियो के सामने ललित ने एक खाली टैक्सी को हाथ दिखाया। पुराना अम्ल उसे बड़ा कष्ट दे रहा था। वह मन ही मन बोला, 'हे भगवान! टैक्सीवाला उसका इशारा समझ ले।'

टैक्सी रुकी। वह टैक्सी में पसर गया। आंखें बंद कर लीं। अचानक उसे याद आया, 'अभी अभी उसने टैक्सी के लिए भगवान नामक एक अदृश्य सत्ता से प्रार्थना की थी!' वह मुस्कराया, तब क्या भगवान पर विश्वास करना चाहिए? हा, कभी-कभार विश्वास करने की इच्छा तो उसे होती है, पर कर नहीं पाता। खैर, विश्वास करे या न करे, पर टैक्सी यदि भगवान की इच्छा से मिली हो, तो उसे कम से कम भगवान को धन्यवाद तो देना ही चाहिए। वह फुसफुसाया, 'धन्यवाद। और फिर अपने आप में लजा गया।

वह गरियाहाट में टैक्सी से उतरा। अम्ल के हजारों तीर छाती और पीठ म बिंध रहे थे। उबकाई आ रही थी। उसने अपने आपको सभाल रखा था। ढेर सारी दुकानें हैं, जहा से फोन किया जा सकता है। लेकिन लड़की? वह मन-ही मन फुसफुसाया, 'हे भगवान! कोई ऐसी लड़की मिल जाय जो अपर्णा को फोन कर सके। लड़की भद्र हो, सुशील हो। उसकी बात सुन कर बिगड़ न जाय। यह क्या, पेट्रोल पप पर एक लड़की फोन कर रही है!

वह उस लड़की के पीछे चुपचाप जा खड़ा हुआ। आखों में चश्मा, पीली साड़ी, हाथ में बटुआ, तीखे नाक-नक्श। कुछेक क्षण बात कर उसने पलट कर देखा और फिर फोन पर बोली, 'अब छोड़ती हू। एक सज्जन खड़े हैं!'

'प्लीज!'

'फरमाइये!'— वह जरा भी न घबरायी।

'एक लड़की को फोन पर बुला देंगी। उसके गार्जियन '

वह मुस्कान बिखेर कर बोली, 'समझ गयी। नबर बताइये।'

उसने नबर बताया। नबर डायल कर वह बोली, 'हैलो, अपर्णा है? मैं मीरा हू। हम दोनों '

माऊथपीस पर हाथ रख कर दबी आवाज मे वह बोली, 'कालेज में पढ़ती है न '

'हा!'

'किस कालेज म '

'हे भगवान! अब क्या होगा?'—वह मन-ही-मन बुदबुदाया और अचानक उसे याद आया, सुजल ने कहा था, लेडी ब्रेबार्न।

'ले लेडी ब्रेबार्न।'

वह मीठी आवाज में फोन पर बोली, 'हां मौसी जी, हम दोनों एक ही क्लास म पढ़ती हैं। अपर्णा? मैं मीरा बोल रही हू।'

मुस्करा कर उसने उसे फोन दे दिया। उसने उसे धन्यवाद दिया। वह चल दी।

ऊपर से एक सतर्क और सुरीली आवाज आयी, 'कहो मीरा, कैसी हो ? क्या बात है ?'

'मैं विमान रक्षित का मित्र ललित हूँ।'—उसकी आवाज कांप रही थी। वह घबरा रहा था। बड़ी मुश्किल से वह बोला, 'विमान ने एक चिट्ठी दी है।'

'कहां से बोल रही हो ?'

'गरियाहाट से।'—ललित ने कहा।

'क्या कहा, आज ही लखनऊ जा रही हो। समय तो नहीं है, फिर भी तुम से मिलना ही होगा। ठीक है, म्यूजिक कालेज जाते वक्त मैं तुम से मिल लूंगी। पी० एस० का नोट भी तुम से लेना है। बस, आध घंटे मे आती हूं।

ललित को समझते देर नहीं लगी कि अपर्णा मिलने का समय दे रही है। बोला, 'हिंदुस्तान मार्ट के रेस्तरां में आ जाइये।'

'अरे तू तो लखनऊ से हथिनी बन कर आयेगी। पहचान ही नहीं सकूंगी।

इशारा समझ कर ललित बोला, 'आप अपनी पहचान बताइये।'

'परसों एक साड़ी खरीदी है मीरा। देखोगी तो डेढ़ सौ भी सस्ता लगेगा। जामदानी के ऊपर गुलाबी बाटिक। आज वही पहन कर जाऊंगी। अच्छा अब छोड़ती हूं। ठीक साढ़े चार बजे।'

रेस्तरां में चाय लेते-लेते सहसा ललित को याद आया कि अब तक भगवान का उस पर बकाया रह गया है। ठीक वक्त पर भगवान ने उसे मनोनुकूल लड़की से मिला दिया। अपर्णा से भी बात हो गयी। अब तो बकाया चुका ही देना चाहिए। वह फुसफुसाया, 'धन्यवाद। भगवान तुम्हें कोटिशः धन्यवाद।'

ललित थोड़ा अन्यमनस्क था। सिगरेट जलाते वक्त उसने देखा, एक नवयुवती सामने खड़ी है। मुख-मंडल पर कैशोर्य की छाप। बड़ी-बड़ी आंखें। गोरा-चिट्टा रंग।

वह मुस्करा कर बोली 'आप ही का नाम ललित है ?'

ललित 'हां' में सिर हिला कर बोला, 'बैठिये।'

वह बैठी। उसके बाद मुस्करा कर बोली, 'फोन पर मेरी बेतुकी बातें सुन कर खूब हंसे हैं न ? क्या करूं, हमारे घर का नियम ही कुछ ऐसा है। चिट्ठी दीजिये।

'दो-तीन पंक्तियों की चिट्ठी उसने बड़ी गंभीरता से पढ़ी। उसके बाद फीकी मुस्कान में बोली, 'आप दोनों की दोस्ती बड़ी पुरानी होगी ?'

'हां, हम कालेज के दोस्त हैं। बीच में हमारा मिलना जुलना बंद हो गया था। अब हम पड़ोसी हैं।

'वह कैसा लगा ?'

'खूब शान्त।'

'क्या ?'

बोलना ठीक नहीं होगा। इसलिए वह पिछली रात की घटना छिपा गया। सिर्फ बोला, 'वह ज़रा-ज़रा-सी बात पर उत्तेजित हो जाता है।'

'कुछ दिन पहले किसी ने पिता जी को फोन पर उसके बारे में जो-सो कहा है। बता सकते हैं, कौन है ?'

तत्क्षण सुबल का चेहरा ललित की आखों के सामने नाच उठा पर वह बोला, 'मैं नहीं जानता।'

सहसा अपर्णा की आखों में आंसू छलक आये। रुंधी आवाज में वह बोली, 'उसे तंग देकर किसी का क्या मिलेगा ? पिता जी जब चाहें उसकी नौकरी खा सकते हैं। उसे मुसीबत में डाल सकते हैं। मैं उसे बचपन से जानती हूं। उस जैसा शरीफ आदमी देखने को नहीं मिलता।'

'चाय लगी ?'

'नहीं।'—वह धीरे-धीरे बोली, 'मैं पिता की एकलौती संतान हूं। पिता का सब कुछ मेरा है। लेकिन इससे किसी को क्या फायदा ? मैं उसे प्यार करती हूं और आजीवन उसी की बनी रहूंगी।'

ललित बोल उठा, 'यह सब क्या बोल रही हैं ?'

कुछेक क्षण चुप रह कर वह फिर बोली, 'पता नहीं क्या मेरा मन कहता है कि हम पर कोई विपत्ति आ रही है।'

## बाईस

*

कैसी विपत्ति ? ललित आश्चर्यित हुआ।

अपर्णा कुछेक क्षण कुछ न बोली। सिर झुकाये रक्त शून्य-सी एक उंगली से व॰ वृत बना रही थी। थोड़ी देर बाद उसने अपना मुंह उठाया। उम्र की अपेक्षा अधिक गंभीर आवाज में वह बोली, 'कुछ दिनों से देखती हूं कि एक काला-कलूटा छोकरा हमारे घर के सामने चक्कर लगाता है। बालकनी और खुली खिड़की की ओर एकटक देखता रहता है। कालेज जाते समय देखती हूं कि वह चौराहे पर खड़ा सिगरेट पी रहा है। कई बार कालेज के गेट तक जा पहुंचा है।'

चाय पीने के बाद ललित अम्ल से परेशान हो रहा था। छाती और पीठ में चुभन हो रही थी। उसे खाने की इच्छा हो रही थी।

अपर्णा की बात सुन कर वह हंस कर बोला, 'आप झूठमूठ में घबराती हैं। लाखों लड़के लड़कियों के पीछे लगते हैं और जब बुद्धि खुलती है तब किनारे लग जाते हैं। उस छोकरे को ज्यादा महत्व मत दीजिये।'

अपर्णा को उपदेश देते वक्त ललित को मितु याद आ गयी। शायद मितु भी अपने मां-बाप से कहती होगी कि एक गोरा-चिट्टा, दुबला-पतला छोकरा मेरे पीछे लगा है। एकटक हमारे घर की ओर देखता रहता है।

भगवान जाने अपर्णा ने ललित का उपदेश सुना या नहीं ? वह बोली, 'ऐसे लड़के मैं ने देखे हैं। लेकिन यह मेरे पीछे हाथ धोकर पड़ा है। एक दिन हमारे दरबान से माचिस लेकर सिगरेट जलायी और कुछ कह कर चला गया। पूछने पर दरबान ने बताया कि वह फूल का चारा मांग रहा था। मैंने दरबान से कह दिया है कि उससे मुंह न लगाये।'

क्षण भर चुप रह कर वह फिर बोली, 'एक दिन शायद इसी लड़के ने फोन पर पिता जी को मेरे और विमान के बारे में जो-सो कहा था। यह भी बताया था कि वह विमान का पड़ोसी है। अब तो मुझे वहां जाने में भी डर लगता है।'

'अगर अकेले जाने में डर लगता है तो आप मेरे साथ चल सकती हैं। मैं भी उसी मुहल्ले में रहता हूं।'

फीकी मुस्कान म अपर्णा बोली, 'लेकिन उसने तो मना किया है।'

उठते उठते ललित बोला, 'वह जब मेरे घर आया था, उस समय एकदम नार्मल था। आपको देख कर वह खुश होगा।'

क्षण भर कुछ सोच कर अपर्णा बोली, 'चलिये।'

अपर्णा ने सिर्फ तर्जनी के इशारे से टैक्सी रोकी। दोनो टैक्सी म बैठे। ललित को उबकाई आ रही थी। एक गिलास पानी के बाद चाय पीना शायद ठीक नहीं हुआ।

'आपकी तबीयत खराब है?'

'नहीं।'—ललित ने उत्तर दिया।

कुछेक क्षण अन्यमनस्कता में डूबी अपर्णा चुप रही और फिर बोली, 'कारखाने के श्रमिकों ने हमारा घर घेराव किया था। यूनियन लीडर एक छोकरा हमारी बैठक में पिता जी से बात करने आया था। वह पिता जी के सामने सिगरेट पी रहा था। उसकी हरकत देखकर पिता जी बेहद खफा हुए थे। उसका ब्लड प्रेशर बढ़ गया था।'

'उसे सिगरेट पीते देखकर?'

अपर्णा मीठी मुस्कान में बोली, 'पिताजी पुराने ख्याल के आदमी हैं। वह बर्दाश्त नहीं कर सकते कि उनके कारखाने का श्रमिक उनके सामने सिगरेट पिये।'

ललित का बात करने म कष्ट हो रहा था फिर भी वह बोला, 'सदियों से पूंजीपतियों ने श्रमिकों का शोषण किया है इसलिए अब श्रमिक तथाकथित शिष्टाचार पर विश्वास नहीं करते।'

'यूनियन लीडर छोकरा एक रिक्शेवाले का लड़का है। नौकरी मांगते वक्त उसने पिताजी के पैर छुए थे और लीडर बन कर उसने उनके सामने सिगरेट पी थी। मुझे विश्वास है कि उसने सिगरेट पीने के लिए नहीं पी थी बल्कि पिताजी को गुस्साने के लिए पी थी।'

'अखबारों में मैं ने ढेर सारी ऐसी तस्वीरें देखी हैं कि बीस-बाइस साल का नीग्रो नौजवान अपनी मांग पर अमेरिका के प्रेसीडेन्ट से हाथ म शराब का गिलास लिए बहस कर रहा है।'

'मैं यह सब नहीं जानती। बचपन से ही मैं अपने कारखाने के श्रमिकों को भैया, चाचा, ताऊ कहती आई हूं। हमारे बीच किसी किस्म की दूरी नहीं थी। लेकिन इसने पिताजी के सामने सिगरेट पी कर हमारे बीच एक दरार डाल दी।'

ललित मन-ही मन उत्तेजित हुआ। उसकी उत्तेजना उसकी आवाज म फूट पड़ी,

'दरार तो थी ही, सिर्फ दिखाई नहीं पड़ती थी। दो परस्पर विरोधी स्वार्थ क्यों कर एक हो सकते हैं?'

अपर्णा कुछेक क्षण चुप रही, फिर उदास स्वर में बोली, 'परस्पर प्रेम होता तो अच्छा होता।'

ललित हंस पड़ा, लेकिन ठीक उसी वक्त उसे उबकाई आयी। उसने झट से सिगरेट जलायी और धुआं में खुद को डुबो डालने की कोशिश की।

अपर्णा ने भौंह सिकोड़ कर उसकी ओर देखा। बड़ी सुन्दर लगी अपर्णा। बोली, 'आपको कष्ट हो रहा है?'

'जी नहीं। आप बोलती जायं।'

'पिताजी की हालत देख कर मुझे बड़ा डर लगता है। उत्तेजना उनके लिए अच्छी नहीं। कल रात हावड़ा के कारखाने में श्रमिकों ने उनका घेराव किया है। अब तक हमें उनकी कोई खबर नहीं।'

'क्या घेराव किया है?'

उन्होंने नब्बे आदमियों को निकाल दिया है।'—अपर्णा के चेहरे पर मीठी मुस्कान बिखर गयी।

ललित चौंक उठा, 'नब्बे मजदूरों को! इस महंगाई के जमाने में!'

'इसमें चिंता करने की कोई बात नहीं। यह तो सिर्फ पांच मजदूरों को निकालने की भूमिका है। अब आन्दोलन होगा, हड़ताल होगी, वार्ताबाजी होगी और पिताजी एक-एक कर श्रमिकों की मांग मानते जायेंगे। सिर्फ पांच मजदूरों के मामले में वे अड़ जायेंगे। यूनियन वृहद् स्वार्थ के लिए पांच मजदूरों की छटाई स्वीकार कर लेगा।'

'लेकिन यह तो शत्रुता है।'

अपर्णा हंस कर बोली, 'हां, शत्रुता ही तो है। अब हमारे बीच आत्मीयता नहीं रही। आपको यह सब कहना उचित नहीं है।

ललित ने अपर्णा की ओर देखा। वह मीठी मुस्कान में बोली, 'फिर भी कह रही हूं। क्योंकि मेरा मन-मिजाज अच्छा नहीं है। अगर उन्हें कुछ हो गया तो हम क्या करेंगे!'

ललित दबी आवाज में बोला, 'आप मालकिन बनेंगी।'

'हां, मैं मालकिन बनूंगी। लेकिन हम मां-बेटी अकेली हो जायेंगी। मजदूर हमारा घेराव करेंगे, तब हमारा क्या होगा? यह सब सोच-सोच कर मेरा मन बहुत घबराता है।'

क्षण भर चुप रह कर वह सकोच में बोली, 'पिताजी जल्दी-से-जल्दी मेरी शादी कर देना चाहते हैं। वह ऐसे लड़के की तलाश कर रहे हैं जिसे मालिक बनने की योग्यता

विरासत में मिली हा। वह भले ही शराबी-कबाबी हो, पिताजी इस पर विचार नहीं करेंगे। दो-तीन महीना म ही वह मेरी शादी कर देंगे। और अगर ऐसा हुआ, तो श्रमिकों के साथ हमारी शत्रुता कभी नहीं मिटेगी।'

'आप क्या चाहती हैं?'—ललित ने प्रश्न किया।

'मैं चाहती हूं कि मालिक ओर मजदूर एक-दूसरे के पूरक हा। दोना मिल कर काम करें। दोनों के बीच आत्मीयता हो।'

ललित जी-जान से उल्टी रोकने की कोशिश कर रहा था। उसकी आखा म आसू छलकने लगे थे। वह हाफने भी लगा था।

'आपको क्या हुआ है?'

ललित की इच्छा हुई कि कहे, देखिये न, जन्म से साथ-साथ रहने के बावजूद भी अपने शरीर से मेरा समझौता नहीं हो सका। यह केवल मुझे कष्ट देने के लिए पैदा हुआ है। हम दोना का स्वार्थ आज तक एक न हो सका।

लेकिन अपनी इच्छा दबा कर वह बोला, 'तबीयत अच्छी नहीं है पर आप चिंता न करें। हा, आप मालिक और मजदूर के सबध म क्या कह रही थीं?'

अपर्णा के मुख-मडल पर लज्जा की लाली थिरक उठी। लजीली आवाज म बोली, 'यह सिर्फ मेरा ख्याल है। सच्चाई तो यह है कि अब हमारे साथ श्रमिका की शत्रुता कभी नहीं मिटेगी। लेकिन उन्हें शत्रु समझना मुझे अच्छा नहीं लगता। इच्छा होती है कि उनकी सारी माग मान लू। लेकिन सोच-सोच कर मैं इस निष्कर्ष पर पहुची हू कि सारी माग मान लेने पर भी वे खुश नहीं होंगे। वे हमें अपना शत्रु ही समझेंगे। दिन रात उनके दिल म एक बात कांटों की तरह चुभती रहेगी, क्यों कोइ हमारा मालिक होगा? हम क्या उसका सम्मान करेंगे? क्यों हम उसके सामने सिगरेट नहीं पियेंगे? आज कोइ भी किसी के अधीन रहना पसन्द नहीं करता। मनुष्य उसी के अधीन रह सकता है जिसे वह प्यार करता है। जहा प्यार नहीं, वहां अधीनता नहीं।

अपर्णा जैसी किशोरी के मुह यह सब सुन कर ललित थोडा अवाक हुआ। यह सब शायद उसकी बात न हो। सभव है, विमान की बात वह दुहरा रही हा। वह मीठी आवाज में बोला, 'व्यक्तिगत स्वामित्व का यही ता दोष है। राष्ट्र के हाथ में जब स्वामित्व होगा, राष्ट्र जब सबके स्वार्थ के लिए काम करेगा, तब ऐसी बात नहीं होगी। जब तक मालिक और मजदूर रहेंगे, तब तक दोनों के स्वार्थ टकराते रहेंगे। दोनों एक-दूसरे के दुश्मन बने रहेंगे।'

अपर्णा हसी, 'आप कम्यूनिस्ट हैं क्या?'

ललित चुप रहा।

'इस प्रश्न का उत्तर देना लोग पसद नहीं करते। लेकिन मैं जानती हू कि आप कम्यूनिस्ट हैं।'

'सो कैसे ?'

'आपके मित्र विमान के मु ह मैंने उसके कइ मित्रों क बारे मे बहुत कुछ सुना है।'

ललित अविश्वास के स्वर म बोला, 'सच ?'

अपर्णा मुस्करायी, 'एक समय विमान मुझे पढाता था। उन दिनो वह कालेज मे पढता था। बहुत अच्छा विद्यार्थी था। पिताजी ने बहुत समझा बुझा कर उसे मुझे पढाने लिए राजी किया था। शुरू-शुरू में वह पढाता नहीं था। चुपचाप बैठा-बैठा किताब-कापी उलटता रहता था। उन दिनों मैं फ्राक पहनती थी। इसलिए कुछ ही दिनों म उसका सकोच दूर हो गया। धीरे-धीरे वह बात करने लगा। पढने-लिखने की बात नहीं। अक्सर वह ललित नामक किसी सहपाठी की चर्चा किया करता था। वह ललित कम्यूनिस्ट यूनियन का लीडर था। यही कारण है कि जब फोन पर आपने अपना नाम बताया, मुझे उस ललित का नाम याद आ गया। इसके अलावा आप भी तो उसके कालेज के दोस्त हैं इसलिए मुझे लगता है कि आप और कोइ नहीं, बल्कि वही ललित हैं। हैं न ?'

ललित को अद्भुत आनद आया। आश्चर्य है, उसका नाम कहा-कहाँ तक जा पहुचा है। यहा तक कि यह लडकी भी उसका नाम जानती है। उसे जानने की इच्छा होती है कि और कहा कौन उसे जानता है।

अपर्णा ने गर्दन टेढी कर उसे क्षण भर देखा फिर हस कर बोली, 'एक समय आपका मित्र आपसे बड़ा प्रभावित था। अक्सर व्यक्तिगत स्वामित्व के विरुद्ध राष्ट्रगत स्वामित्व की बात करता था। मुझसे कहा करता, अपने कारखाने की पू जी म श्रमिकों को हिस्सा दो अन्यथा श्रमिक शासन म तुम लोगो पर विचार होगा। उन दिनों मैं बच्ची थी। मैं अवाक होकर उसकी बातें सुनती। कभी कभार हसती, पर उसकी हर बात मुझे अक्षरश: सत्य प्रतीत होती।'

'क्यों ?'—ललित सहसा पूछ बैठा।

अपर्णा शर्मा कर बोली, 'बचपन म हम दोनों की शादी की बात हुइ थी। हम एक ही गाव के हैं। गाव मे हम पड़ोसी थे। और जैसा कि ऐसे माहौल मे अक्सर हुआ करता है कि मां-बाप बचपन म ही शादी ठीक कर लेते हैं और बाद म भूल जाते हैं, हमारे साथ भी वैसा ही हुआ है।'—क्षण भर चुप रह कर वह फिर बोली, 'जब वह मुझे पढाता था, मैं जानती थी कि यही आदमी एक दिन मेरा सर्वस्व होगा।'

ललित अपनी हसी दबा कर बोला, 'रुक क्या गयीं ?'

कुछेक क्षण खोयी-खोयी आंखों से अपर्णा ललित की ओर देखती रही, फिर बोली, 'आपसे प्रभावित होकर वह पक्का कम्यूनिस्ट बन गया था। मेरे सामने वह मेरे पिता की निंदा करता। मुझसे कहा करता, तुम लोगों के खून में व्यक्तिगत स्वार्थ का जहर है। एक दिन तुम लोगों को खत्म कर दिया जायेगा।'

'यह सब सुन कर आप गुस्साती होंगी ?'

'नहीं। गुस्सा तो नहीं आता था, लेकिन डर जरूर लगता था। सोचती, वह जो कुछ कहता है, एकदम ठीक कहता है। इच्छा होती कि घर-द्वार छोड़ कर उसके साथ चल दूं। वह मुझे बचायेगा।' क्षण भर चुप रह कर वह फिर बोली, 'लेकिन आपका प्रभाव उस पर ज्यादा दिनों तक नहीं रहा।

टालीगंज रेल-ब्रिज पार कर टैक्सीवाले ने पूछा, 'किधर चलना है ?'

ललित ने गंतव्य बताया और अपर्णा से बोला, 'उसके बाद ?'

'उसके बाद वह और एक मित्र के प्रभाव में आया। वह पूर्व बंगाल (बंगला देश) में कहीं का जमींदार था। देश-विभाजन के बाद सब कुछ छोड़ कर कलकत्ता आ बसा था। क्या नाम था उसका—'

'रमेन। रमेन्द्र नारायण चौधुरी।'

'हां, रमेन ही। उससे परिचय होने के बाद एक दिन विमान मुझ से बोला, 'रमेन बड़ा अद्भुत आदमी है। उसकी प्रजा उसका बहुत सम्मान करती है। उसकी खोज-खबर लेती है। मिलने पर प्रणाम करती है। बस ट्राम में उसके लिए सीट छोड़ देती है। मुझे यह सब बड़ा विचित्र लगता है। दो परस्पर विरोधी स्वार्थ के बीच इतना अपनापन! जरा सोच कर देखो, अब न रमेन जमींदार रहा और न अब उसकी प्रजा रही फिर उसका इतना सम्मान क्या ? रमेन का कहना है कि उसकी प्रजा उसे हृदय से प्यार करती है। शायद वह ठीक ही कहता है। उसके लिए उसकी प्रजा देवी-देवताओं की पूजा करती है, मनौतियां मानती है।'

ललित गंभीर होकर बोला, 'प्यार के नाम पर किया गया शोषण भी बड़ा मधुर होता है अपर्णा जी। शोषित समझ भी नहीं पाता कि उसका शोषण हो रहा है।'

'खैर कुछ भी हो। लेकिन वह आपके प्रभाव से मुक्त हो गया था। अक्सर मुझ से कहा करता, व्यक्तिगत स्वामित्व कोई बुरी चीज नहीं। यदि इस प्रकार दो वर्ग एक-दूसरे के पास आ खड़े हों, एक दूसरे के दुख-द्वन्द्व में सहायक हों, तो एक बहुत अच्छा कम्यून बन सकता है।'—अपर्णा चुप हो गयी।

'और क्या कहता था ?'

कुछेक क्षण की चुप्पी के बाद वह बोली, 'रमेन बाबू के प्रभाव में आकर वह एकदम बदल गया। साम्यवाद के स्थान पर वह पूंजीवाद का समर्थन करने लगा। राष्ट्र

को वह एक यंत्र समझने लगा। अक्सर कहा करता, राष्ट्र तो एक यंत्र है। यंत्र क्या किसी से प्यार कर सकता है? इंसान रोजी-रोटी से ज्यादा इंसान का प्यार चाहता है। रमेन और उसकी प्रजा के आत्मिक संबंध को देख कर मैं हैरान हो जाता हूं। आज भी उसकी प्रजा हर मामले में उससे सलाह-मशविरा लेती है। यहां तक कि लड़का लड़की की शादी भी उससे सलाह लेकर करती है। राष्ट्र क्या इतना प्यार कर सकता है? जमींदार की जगह कम्यून आयेगा या ब्लाक आफिसर होगा। कारखानों में सरकारी डाइरेक्टर होंगे, इससे क्या जनसाधारण सुखी होगा? इंसान तो प्यार का भूखा होता है। उसे तो हमेशा एक ऐसे आदमी की जरूरत रहती है जिसे देख कर ही उसका दुःख-दर्द कम जाता है।'

यह सब सुन कर ललित खुश नहीं हुआ। बोला, 'आर्थिक वैषम्य में ऐसा प्यार नहीं टिक सकता। यह कौन कह सकता है कि रमेन का लड़का भी रमेन जैसा ही होगा? मालिक और मजदूर का संबंध बड़ा ही भयावह है अपर्णा जी। दोनों के स्वार्थ में आसमान-जमीन का फर्क है। दो विपरीत स्वार्थ कभी भी एक दूसरे पर विश्वास नहीं कर सकते।'

*अपर्णा गंभीर होकर बोली,* '*इसलिए मैं दो विपरीत स्वार्थ का एक ऐसी जगह* लाना चाहती हूं जहां दोनों एक-दूसरे पर विश्वास कर सकें। मैं रमेन जैसा बनना चाहती हूं। मैं मालकिन बनना नहीं चाहती पर आवश्यकतावश मेरे श्रमिक मुझे मालकिन बना कर रखेंगे। मैं उनके दुःख-दर्द में हाथ बटाऊंगी।

ललित मुस्करा कर बोला, 'आपको मालकिन बनने की बड़ी इच्छा है न?'

'नहीं। मैं तो सिर्फ एक प्रयोग करना चाहती हूं। मैं देखना चाहती हूं कि मालिक और मजदूर एक-दूसरे की आवश्यकता बन सकते हैं या नहीं। दरअसल मैं रमेन बनना चाहती हूं।'

'वाह! आप मालकिन न रह कर भी मालकिन रहना चाहती हैं। आपका भी जवाब नहीं।'

'रमेन क्या यही चाहते थे?'

'शायद वह भी यही चाहता था। उसकी रगों में जमींदारी खून बहता था। व्यक्तिगत स्वामित्व जाने के बाद आदमी नेता बनना चाहता है। हमारे देश में कितने ही नेता अभिजात वर्ग के हैं। जनता उनके त्याग की महिमा गाती है। लेकिन कभी यह सोच कर नहीं देखती कि कल का भक्षक ही आज उसका रक्षक बन बैठा है।'

'ऐसा क्यों कहते हैं आप? अच्छे को अच्छा कहने में क्या दोष है?'

'कोई दोष नहीं। लेकिन जो कल तक अच्छा नहीं था, आज वह अचानक अच्छा बन गया। कल तक जो जहरीला सांप था आज वह अमृत उगलने लगा। ऐसा न कभी

हुआ है और न कभी होगा। साप अपना स्वभाव नहीं बदल सकता। सर्वहारा समाज मालिक या जमींदार पर विश्वास नहीं करेगा। आपका मजदूर आपका सम्मान नहीं देगा। वह आपके सामने बडल्ले से सिगरेट पियेगा। वह छोकरा आपसे '

ललित ने बात पूरी नहीं की। वह कहने जा रहा था कि वह छोकरा आपसे प्रेम-निवेदन करेगा। लेकिन ऐसी निष्ठुर बात नहीं कही जा सकती।

कुछेक क्षण की गहरी चुप्पी के बाद अचानक अपर्णा बोली, 'मुझे यह सब कुछ भी अच्छा नहीं लगता। कारखाना, हड़ताल, श्रमिक असंताप—यह सब याद आते ही मेरा मन घबराने लगता है। इच्छा होती है कहीं चली जाऊं।'

'कहां जाना चाहती हैं ?'

अपर्णा आहिस्ते-आहिस्ते बोली, 'बचपन में जिस तरह उसकी बातों से डर कर उसके साथ भाग जाना चाहती थी, आज भी उसके साथ कहीं भाग जाने की इच्छा होती है। काश ! वह मुझे इन झंझटों से छुटकारा दिला कर कहीं ले जाता ! लेकिन वह बार-बार पागल क्यों हो जाता है ?' कहते अपर्णा के होंठ थर थर कांपने लगे। आंखों में आंसू मचलने लगे।

बड़ा व्यथित हुआ ललित। उसने बड़ी निष्ठुर बातें कह डाली हैं। कहने की कोई जरूरत नहीं थी। लेकिन एक बात उसे कांटे की तरह चुभ रही थी। यह लड़की रमेन जैसा बनना चाहती है। क्या, रमेन जैसा ही क्या ? यह तो रमेन को पहचानती तक नहीं।

अचानक ललित बड़ी अजीब बात बोल बैठा 'रमेन अपनी प्रजा की आंखों में तो देखता था पर अपनी पत्नी की आंखों में क्या था ? आपको पता है कि उसकी पत्नी घर छोड़ कर भाग गयी इसलिए वह साधु बन गया।'

अवाक हुई अपर्णा। कुछेक क्षण वह चुप्पी में डूब गयी फिर बोली, निश्चितरूप से वह अच्छी औरत नहीं थी।'

टैक्सी बरगद के पेड़ के पास आ खड़ी हुई। यहीं कल रात विमान ने छोकरा के साथ बैठ कर शराब पी थी और पारुल को बचाने का असफल प्रयास किया था। किराया देने के लिए ललित ने जेब में हाथ डाला। अपर्णा बोल उठी, 'यह नहीं हो सकता। टैक्सी मैं ने बुलायी है।'—कह कर उसने किराया चुकाया।

'दया !'—ललित मन ही-मन हंसा।

विमान लेटा था। ललित को देख कर उठते-उठते बोला, 'चिट्ठी ले आये ?'

ललित दरवाजे पर खड़ा था। उसके पीछे थी अपर्णा। हंस कर बोला, 'ले आया। जवाब भी साथ ले आया हूं।'

'दो।'—विमान ने हाथ बढाया।

ललित हटा और जोरों से हस पड़ा।

लेकिन वह समझ गया कि उसकी हसी उन दोनों का छू तक नहीं सकी। अपर्णा कमरे में आ खड़ी हुई। विमान और अपर्णा की आँखें एक-दूसरे में समा गयीं।

ललित समझ गया कि दोनों बिना कुछ बोले भी एक-दूसरे की बात समझ रहे हैं। उसे बड़ा दुःख हुआ। विमान पागल है। और अपर्णा एक कारखाना मालिक की बेटी है। लेकिन ऐसा लगता है कि दोनों ही भिखारी हैं। उन दोनों के लिए उन दोनों के अलावा ससार में और कोई नहीं है। दोनों पागल हैं।

उसकी इच्छा हुई कि अपर्णा को बुला कर कहे, 'यदि भविष्य का समाज व्यक्तिगत स्वामित्व को खत्म करना चाहे, तो आपको क्षमा कर दिया जायेगा। क्योंकि आपने इस पागल से प्यार किया है।

*ललित बाहर निकल आया। उसने धीरे से दरवाजा भिड़ा दिया।*

# तेईस

*

*उस दिन के बाद शाश्वती और कई दिन कालेज नहीं गयी। मा के साथ घर में काम किया। कमर में आंचल बाँध कर पिता के बाग में खुरपी चलायी। बाच्चू से जान-बूझ कर झगड़ा किया। प्रतिक्षण वह यह सोच कर भयभीत रहती थी कि आदित्य जिस किसी क्षण आ सकता है।*

लेकिन आदित्य नहीं आया। तीन दिन बाद दफ्तर से आकर कालीनाथ ने उससे पूछा, 'आदित्य मिलता है?

'नहीं।'

*'पता नहीं, क्या हुआ? कई दिन से दफ्तर भी नहीं आ रहा है।'*

यह सुन कर शाश्वती का दिल एकबार धक कर उठा। उसने कहीं आत्महत्या तो नहीं कर ली? वह पागल तो नहीं हो गया? उसने क्या शाश्वती को इतना प्यार किया था! भगवान जाने! अगर उसने ऐसा कुछ किया हो, तो लोग उसकी ओर उगली उठा कर कहेंगे, इसी छोकरी ने आदित्य की जान ली। वह दिन-रात मन-ही-मन भगवान से प्रार्थना करती है, 'हे भगवान! मैं बड़ी मामूली लड़की हूँ। मेरी खातिर कोई आत्म-हत्या न करे। मेरी खातिर कोई बैरागी न बन जाय।'

उसके मन में ममता भर आयी जिनके लिए उसके हृदय में कभी प्रेम का दीप न जगा। क्यों नहीं किसी ने उसकी अवहेलना की? आश्चर्य है, ये अपने को पुरुष कहते हैं। पुरुष क्या नहीं कर सकता? वह रहस्य से पर्दा उठाता है। नई नई चीजों का आविष्कार करता है। अपने आदर्शों का प्रचार करता है। संसार में पुरुषों के कितने काम हैं, तब क्यों एक काली कलूटी मामूली-सी लड़की के लिए वह सब कुछ छोड़ देता है? आश्चर्य है कि किसी ने शाश्वती का अपना मन पढ़ने का समय तक नहीं लिया।

पांच-सात दिन बाद एक दिन शिवानी आकर बोली, 'आज भी कालेज नहीं जाओगी? एम० बी० का क्लास है। पालिटिक्स पर नोट्स देंगे।'

मन-ही मन हिचकिचायी शाश्वती। बाहर निकलने में बड़ा डर लगता है उसे। उसका मन कहता है कि जगह-जगह गुस्सैल पुरुष उससे प्रतिशोध लेने की खातिर घात लगाये बैठे हैं।

पल भर सोचकर शाश्वती बोली, 'चल!'

बड़ी अनिच्छा से तैयार हुई बेचारी शाश्वती।

बस में शिवानी बोली, 'आजकल तो रोज कालेज से भागती हो। खूब सिनेमा रेस्तरां चलता होगा?'

शाश्वती चुप रही।

'उड़ा उड़ रहा था!'—गहरी सांस फेंक कर शिवानी बोली, 'जानती है, अलक नौकरी करने गौहाटी गया, लेकिन आज तक एक चिट्ठी भी नहीं दी। मर्दों का कोई विश्वास नहीं।'

शाश्वती कुछ न बोली।

बस स्टापेज आ गया। उतरते वक्त शाश्वती ने देखा, कालेज के सामने कृष्णचूड़ा (पुष्प वृक्ष) की छांव तले एक लम्बा-छरहरा आदमी खड़ा है, ठीक उसी जगह जहां टैक्सी में बैठा आदित्य उसका इंतजार कर रहा था।

वह आदित्य तो नहीं? दूर से ठीक-ठीक पहचान में नहीं आता पर आदित्य का वहां होना असंभव तो है नहीं। बेचारी के पांव शिथिल पड़ गए। छाती धक् धक् करने लगी। बड़ी मुश्किल से वह बोली, 'मैं नहीं उतरूंगी।'

'क्या हुआ।'

'नहीं।' शाश्वती सिर हिलाकर बोली, 'मुझे एक जगह कुछ काम है।'

'कहां?'

वह शाश्वती झटपट सोच न सकी। बोली, 'पालिटिक्स के नोट्स मुझे देना, उतार लूंगी।'

मन ही मन शाश्वती ने फैसला किया, रासबिहारी मोड़ उतर कर दूसरी बस से वापस आ जायेगी। लेकिन रासबिहारी पहुंच कर सहसा उसे खयाल आया कि दक्षिण की ओर थोड़ी ही दूर पर ललित रहता है। पता तो उसे नहीं मालूम पर घर पहचान लेगी। उसी दिन से ललित पर उसे बड़ा गुस्सा है। ज्यादा देर होने से शाश्वती का गुस्सा ठंडा पड़ जाता है, साहस कम जाता है। और बगैर गुस्सा के बेचारी क्यों कर ललित को खरी-खोटी सुना सकती है?

क्या कर रही है?—इस पर उसने जरा भी विचार नहीं किया। दक्षिण की ओर जानेवाली उनतीस नम्बर ट्राम आ गयी। शाश्वती ट्राम में जा बैठी।

ललित के लिए ललित की मां दुश्चिन्ताओं में डूबी रहती है। ललित क्या सोचता है, भगवान् जाने! बिस्तर पर लेटे-लेटे पता नहीं क्यों क्या देखता रहता है? घर-द्वार से कोई मतलब नहीं। दिन-दिन बैरागी बनता जा रहा है ललित। घर-द्वार छोड़ कर कहीं साधु तो नहीं बन जायेगा?

स्कूल मास्टरी की नौकरी की तो अब तक वही कर रहा है। सो-बैठकर समय बर्बाद करता है। इस उम्र में आदमी कितना उद्यमी होता है, कुछ बनने की कोशिश करता है। कोशिश करता तो बहुत कुछ कर सकता ललित। कुछ कहने पर कहेगा, जितना मिलता है, हम दोनों का मजे में गुजारा हो जायेगा। सारे दोस्त कहां के-कहां निकल गये और यह जहां का-तहां बैठा है। संजय गाड़ी पर घूमता है। तुलसी ने शादी कर ली। एकदम बाप पर गया है ललित। बाप फुटबाल के पीछे पागल था। कभी कमाने-धमाने की कोशिश तक नहीं की। कुछ कहने से सिर्फ एक ही बात सुनने को मिलती, 'सुनो देवी, सूई के छेद से हाथी पार कर सकता है, लेकिन पैसे वाले स्वर्ग नहीं जा सकते।' ललित भी सतापी है। मास्टरी कर रहा है, तो कर ही रहा है। उम्र ही भला कितनी है! चाहे तो बहुत कुछ कर सकता है, पर चाहता ही नहीं। पढ़ने का मुहचोर है। इतने बड़े कलकत्ता में उसे एक भी लड़की नहीं मिली!—दिन-रात ललित की मां ललित की चिंता में घुलती रहती है।

सोनेवाले कमरे में ललित की मां हल्दी खोज रही थी कि अचानक दरवाजे पर हल्की फुल्की डरी-डरी-सी दस्तक हुई। बुढ़िया ने पलट कर देखा और देखती ही रह गयी। दरवाजे पर जयपुरी साड़ी में सिमटी एक देवी प्रतिमा खड़ी है। सांवला-सलोना मुखड़ा। बड़ी-बड़ी भावभीनी आंखें। 'ललित ललित बाबू यहीं रहते हैं?'—बड़ी प्यारी पर डरी-डरी-सी मुस्कान में घुलती बोली।

'ललित और इसकी जोड़ी बहुत अच्छी होगी!'—मन-ही मन ललित की मां बोली।

'कहां से आ रही हो बेटी?'

'यादवपुर से ।'—युवती लजीली आवाज मे बोली, 'ललित बाबू नहीं है ?'

'अभी-अभी निकला है । अन्दर बैठो बेटी । उसे बुला भेजती हूं । ज्यादा दूर नहीं गया है ।'

एक जगह दुबी-सी होकर बैठी बेचारी । बस-स्टाप से चिलचिलाती धूप म काफी पैदल चलकर आयी है । थकी-मादी शाश्वती रूमाल से कपाल का पसीना पोछ रही है ।

'गरम लग रहा है ?'

गहरी लाज में डूबती-उतराती शाश्वती बड़ी मुश्किल से बोली, 'नहीं ।'

पागली हंसी हसती ललित की मां ने पखा खोल दिया ।

ललित की मा ने देखा, लड़की जहां बैठी है, ठीक उसी जगह बरसा पहले एक दिन दोपहर मे मितु बैठी थी । ललित का वह बहुत पसन्द थी । लेकिन रो-धो कर मितु खरी-खोटी सुना कर चली गयी थी । ललित के साथ शादी करने को राजी नहीं हुई थी । ललित की मा अपने आप से बोली, 'यह चौकी ही अशुभ है ।'

'तुम ललित की चौकी पर बैठो बेटी । वहां हवा लगेगी ।'

सरल, सुबोध बालिका-सी शाश्वती उठ कर ललित की चौकी पर आ बैठी ।

ललित की मा मन-ही मन बोली, 'भगवान, इससे ललित की शादी हो जाय ! साक्षात् लक्ष्मी है । ललित है बड़ा मुहचोर । उसने तो अभी तक नहीं बताया कि किसी लडकी को वह चाहता है । एकदम गदहा है । तुम किसी को पसद करोगे और मैं गुस्साऊंगी ? तुम्हारी पसद जानकर ही तो मैं ने मितु को बुलाया था । वह राजी नहीं हुई । मेरा अपमान कर चली गयी , लेकिन इससे मुझे कोई दु ख नहीं हुआ । तुम अन्दर ही अदर जल रहे थे, उसके सामने उतना छोटा-सा अपमान क्या महत्व रखता है । ललित ने अबकी अच्छी जोड़ी चुनी है । मितु सुदर तो थी, लेकिन इस जैसी लक्ष्मी नहीं थी ।

'चाय के साथ क्या लोगी बेटी ? 'चूड़ा भूज दू ।'

'नहीं, नहीं ।'—लज्जा म सिर हिला कर शाश्वती बोल उठी ।

'एकदम बच्ची है ।'—मन-ही-मन ललित की मां बोली और मुग्ध आंखों से शाश्वती को देखती रही ।

शाश्वती कमरा देख रही थी । साफ-सुथरा कमरा । हर चीज सलीके से रखी है । बाहर का शोरगुल भी नहीं । कितनी शांति है यहां । झरोखे पर झुकी है अमरूद की एक हरी भरी टहनी । चिड़िया चहचहा रही है । छोटा-सा आंगन है । आंगन के एक कोने में है तुलसी चौरा । कमरे में सामान भी ज्यादा नहीं है । जो कुछ है उससे साफ पता चलता है कि इन लोगों की अवस्था शाश्वती के घर जैसी ही है ।

अच्छा हो जाऊंगा ! सहसा ललित का मन छलछला उठा, 'अगर सचमुच में अच्छा हो जाऊं '

शाश्वती के चेहरे पर आत्म विश्वास उभर आया। वह जोर देकर बोली, 'मैं कह रही हूं न कि आप सचमुच म अच्छे हो जायेंगे।

अगर कोई इस तरह चाहे, इस तरह बोले, तब क्या कर सकेगा ललित ?

ललित के होंठ थरथराये। आंखें भर आयीं। दुर्बलता! आज तक उसने ऐसी दुर्बलता महसूस नहीं की। खुद को सभाल कर मीठी आवाज में वह बोला, 'सुना है, आपकी शादी ठीक हो गयी।'

भौंह पर बल डाल कर शाश्वती बोली, 'मेरी। किसके साथ ?'

'आदित्य कह रहा था कि आपकी एक सहेली है रामा। उसके भाई के साथ आपकी शादी पक्की हो गयी है।'

शाश्वती सकपका गयी। सुमत उसे याद भी न था। लेकिन आदित्य को यह सब कैसे मालूम हुआ ? ललित के कान में यह बात क्या आयी ?

शर्म से गड़ गयी शाश्वती। यह सच है कि गंगा घाट के रेस्तरां में सुमत से दो-चार बात हुई थी, लेकिन यह बात वह किसे समझाये कि दो दिन पहले भी वह एकदम बच्ची थी। वह क्या अपने आपको साफ समझ सकी थी ? उसने मन ही-मन क्षमा मांगी, 'तुम लोगों मे से किसी को यदि मेरे कारण दुख पहुंचा हो, तो मुझे क्षमा कर दो। मैं बड़ी बुद्धू लड़की हूं। मुझे क्षमा करो।'

सिर झुका कर शाश्वती बोली, 'आपने गलत सुना है। वह चाहते थे, पर मैं नहीं।'

न जाने क्या यह सुनते ही अचानक ललित का मन बड़ा हल्का हो गया। एक दुर्बोध्य आवेग उसके मन में उथल-पुथल मचाने लगा। वह एकटक अपने सामने एक जीवत दृश्य देखता रहा। जयपुरी साड़ी मे सिमटी एक देवी प्रतिमा उसके सामने बैठी थी। अब क्या ललित के प्रेम-निवेदन पर वह लजा कर सम्मति की मुस्कान मुस्करायेगी ?

आत्म-विस्मृत ललित कुछेक क्षण म ही सामान्य हो गया। स्याहीसोख की तरह एक विषाद ने उसके हृदय मे उमड़ते रस को सोख लिया। उसने आंखें फेर लीं।

शाश्वती मृदु स्वर म बोली, 'सुनिये, आप से कुछ बात करनी है।'

'कहिये।'

'आपके मित्र को मैं ने बहुत दुख दिया है। उसे समझा कर कहेंगे कि मैं ने उसे कभी प्यार नहीं किया।'

'उसे पता है।'

क्षण भर चुप रह कर सहसा शाश्वती दबी आवाज में बोली, 'मैं ने अन्याय किया है न ?'

'नहीं। आपने कोई अन्याय नहीं किया।'

शाश्वती उदास स्वर मे बोली, 'वह शायद गुस्सा होगा। मुझ से बदला लेगा। लेकिन मेरे पास और कोई चारा नहीं था।'

यह सुन कर ललित थोड़ा विचलित हुआ। और फिर बोला, 'नहीं, आपने कोई गलती नहीं की। उस दिन आपने ठीक ही किया था।'

शाश्वती मीठी आवाज म बोली, 'उसे जरा समझायेंगे। कोई गलत काम न कर बैठे। मैना कह रहे थे कि वह दफ्तर नहीं आ रहा है। बड़ा डर लगता है। कहीं आत्म-हत्या न कर बैठे।

ललित हस कर बोला, 'नहीं करेगा। उसे मैं अच्छी तरह पहचानता हू। मैं ने उसके घर से खबर ली है। वह कलकत्ता म नहीं है। कुछ दिनो के लिए बाहर घूमने गया है।'

छलछलाती आंखो म बोली शाश्वती, 'अगर कुछ कर बैठे तो लोग मुझ पर उगलियां उठायेंगे। कहेंगे, यही आदित्य के सर्वनाश का का मूल है। यही तो दुनिया की रीति है। बिना सोचे-समझे लोग बदनाम करते हैं। आप उससे कहेंगे कि मैं बड़ी मामूली लड़की हू। मुझ जैसी तुच्छ लड़की के लिए कुछ कर बैठना पागलपन है। उसे एक-से एक अच्छी लड़की मिलेगी।'

'उस दिन जो कुछ हुआ, उसके लिए मैं जिम्मेवार हूं। आप अपनी सहेली के भाई से शादी कर रही हैं, यह सुन कर मुझे बड़ा गुस्सा आया था।

एक पलक ललित को देख कर शाश्वती ने आखें झुका लीं और मुस्करा कर बोली, 'हा, उस दिन आप बड़े भयकर दीख रहे थे। बाल उड़ रहे थे। मुह लाल हो गया था। आंखो से आग निकल रही थी। उस दिन आपसे बड़ा डर लग रहा था। और थोडी देर होती तो मैं दस्तखत भी कर डालती।'

लजीली हसी हस कर ललित बोला, 'मनुष्य अपना चेहरा देख नहीं सकता। उस दिन मैं कैसा दीख रहा था, क्या पता! लेकिन आप सिर्फ मेरी वजह से दस्तखत करतीं, यह भी कोई बात हुई। आप म क्या इतना भी मनोबल नहीं ?'

शाश्वती मृदु स्वर म बोली, 'उतने पुरुषो में घिरी लड़की तो डरेगी ही। अनजान जगह! गुस्से म उफनते पुरुष! ऐसी स्थिति म मेरा मनोबल क्या करता ? छुटकारा पाने की खातिर आप लोग जो चाहते, मैं शायद वही करती।'

ललित को बड़ी दया आयी। क्षण भर कुछ सोच कर वह बोला, 'लेकिन बाद में

मैं ने भी चाहा था कि इस तरह आप दोनों की शादी न हो। आपको जब विमान बाहर ले गया, तब मैं चाहता था कि आप वापस न आयें।'

यह कह कर वह क्षण भर चुप रहा, फिर बोला, 'आप क्या मुझ पर विश्वास कर रही हैं ?'

शाश्वती हसी। अनार के दानों जैसे दांत चमचमाये। सिर हिला कर वह बोली, 'हां।'

और फिर वह सहसा बोल उठी, 'लेकिन आप वैसा क्यों चाहते थे ?'

सच तो, उसने वैसा क्यों चाहा था ? उसे इससे क्या मिलता ? न जाने क्यों उसका मन नहीं चाहता था कि शादी हो। उसे यह कतइ पसद नहीं था कि धूल धक्कड़ भरे दफ्तर में आधुनिक भाषा में मत्र पाठ कर शाश्वती की शादी हो। वह नहीं चाहता था कि सांवली-सलोनी शाश्वती किसी और की हो जाय। लेकिन क्यों ? शाश्वती की शादी न होने से उसे क्या फायदा ?

वह मिनमिना कर बोला, 'मैं समझता था कि आप किसी और को चाहते हैं।'

शाश्वती ने इसका कोइ जवाब नहीं दिया। बैग और कालेज की कापी लेकर वह उठ खड़ी हुई और बोली, 'अब चलूंगी।'

वापसी में शाश्वती बस में सिर्फ अपना मन लिए बैठी थी। कितना कुछ सोच रही थी वह। उसने सुना है कि कैंसर होने से भी कोई-कोइ बच जाता है। उसके मौसा भी तो जिन्दा हैं। तब ललित क्यों मरेगा ? मौत के कगार पर खड़ा ललित बड़ा अकेला है। अकेला है इसलिए न कभी-कभी अपने आप पर गुस्सा जाता है। उस दिन शाश्वती ने उसे गौर से देखा था। कितना भयकर लग रहा था वह। उसका मन नहीं चाहता था फिर भी वह जबर्दस्ती आदित्य से उसकी शादी कराने को तुला था। उसमें इतना अहकार क्यों है ? उसने शाश्वती की अवहेलना क्यों की थी ? मर जायेगा इसलिए ? क्या मृत्यु में भी अहकार है ? नहीं, अब शाश्वती को उस पर जरा भी गुस्सा नहीं। अब पुरुषों को वह अनायास ही समझ सकती है। उस दिन के अवांछित वातावरण में भी वह ललित को समझ गयी थी।

आजकल कभी-कभी शाश्वती का मन धक कर उठता है। वह क्या मर जायेगा ? क्यों मरेगा ? कैन्सर की तो दवा निकल गयी है। उसने अखबार में पढ़ा है। नहीं निकली है। हां, निकली है। निश्चित रूप से निकली है। उसका मन कहता है कि दवा निकली है।

दोपहर में ललित की मां पड़ोसियों के घर-घर गयी। बुढ़ियों की बैठक में बोली, आज कैसी लम्बी लड़की उसके घर आयी थी। भगवान् ने चाहा, तो वह उसके घर बहू बन कर आयेगी।

ललित ने पूरा कमरा खाल कर देखा। शाश्वती कहीं कुछ भूल तो नहीं गयी जो लेने वापस आयेगी? नहीं, वह कुछ नहीं भूली है। ललित मन ही-मन बड़बड़ाया, 'वह अब कभी नहीं आयेगी।'

वह सोचने लगा, कुछ ही दिनों में उसका प्राण-पखेरू उड़ जायेगा। वह फिर वापस नहीं आयेगा। तीसरे पहर की पीली-पीली धूप और अमरूद के हरे-हरे पत्तों में हँसता-मुस्कराता शिशु मुख वह फिर नहीं देख सकेगा। मनुष्य की मुक्ति के बारे में नहीं सोचेगा। लेकिन न जाने क्यों फिर भी उसे लगता है कि उसकी जिंदगी बड़ी लम्बी है।

## चौबीस

*

वर्द्धमान से कई स्टेशन पहले डाउन लाइन के किनारे एक जगह सौदालपुर गांव का एक आदमी खड़ा था। बड़ा दुखी था बेचारा। पैंतालिस साल से वह इस पृथ्वी पर जिंदा है। जन्म से आज तक उसने कभी सुख का चेहरा नहीं देखा। बाप का कर्ज उतारने में जमीन महाजन के चंगुल में फंस गयी। उसके बाद वह बगाइदारी पर खेती करने लगा। किसी तरह जी रहा था वह। लेकिन दो साल से पैदावार नहीं होती। जिंदगी का बोझ ढोना मुश्किल हो गया। हरेन साई की मिल से आवाज आ रही है। वहीं उसका धान कुटा जा रहा है। हरेन सा० के घर लक्ष्मी बरसे!—वह मन ही-मन बुदबुदाया। अस्ताचलगामी सूर्य कितना अच्छा लगता है। दूर दूर तक फैले खेत कितने लुभावने लगते हैं। अगर जिंदगी भी इतनी लुभावनी होती। अब यह सब सोच कर क्या होगा? वह तो अब चन्द लम्हों का मेहमान है। जोरू न जाता खुदा मियां से नाता। उसकी मौत पर रोनेवाला तो कोई है नहीं। हां, बारूइपुर में लड़की रहती है। खबर मिलने पर दो-चार बूंद आंसू बहा लेगी। और खबर भी पहुंचेगी कछुए की चाल से—पहुंचते पहुंचते महीना तो लग ही जायेगा। तब तक वह पंचतत्व में मिल जायेगा।

फलिडाल खरीदने के भी पैसे नहीं थे। इसलिए दाई मील पैदल चल कर वह यहां आया है। वह एक ऊंची जगह पर खड़ा है। ड्राइवर साहब की नजर न पड़ जाय, यह सोच कर वह दो-तीन कदम ढलान में उतर गया। उसने एक बीड़ी जलायी। जोर-जोर से कश लेता रहा। ट्रेन आ रही है। उसने आखिरी कश लेकर बीड़ी फेंक

दी। ट्रेन आ पहुची। ब कु ल वह जोर से चिल्लाया और लाइन पर कूद पड़ा।

वह बहुत कुछ देख रहा है, पर वह क्या देख रहा है, वह खुद नहीं जानता। वह देख रहा है कि रेलगाड़ी का एक डिब्बा उसकी कमर पर खड़ा है। लेकिन वजन महसूस नहीं होता। उसके शरीर के अंदर से नदी निकल कर बह रही है। मिट्टी भीग गयी है। घास भीग गयी है। वह पानी के लिए मुह खोलता है, पर कुछ बोल नहीं पाता। सैकड़ो आदमियों की पदचाप। शोर। लेकिन वह सिर्फ नदी की आवाज सुन रहा है। उसके शरीर से निकल कर नदी बह रही है—कलकल-छलछल। वह पानी के लिए मुह खोलता है, पर कोई समझ नहीं पाता। वह चीखता है, पानी, पर कोई सुन नहीं पाता। *अचानक एक सुंदर मुखड़ा उसके चेहरे पर झुक गया।* वह अवाक होकर सुन्दर मुखड़े को देखता रहा। ऐसे ही आदमी को तो वह आज तक जाने-अनजाने तलाशता रहा है। हां, इसे ही वह आज तक ढूढता रहा है। हां, यही तो दूसरे के दु ख में दुखी होता है, दीन दुखियों को गले लगाता है। अब तक कहां छिपा था यह? काश! पहले मिल जाता! यही एक आदमी उसे पानी पिला रहा है। उसके लिए रो भी रहा है। वह धीरे-धीरे आखें मूद लेता है।

आहिस्ते-आहिस्ते उसका सिर गोद से उतार कर रमेन ने जमीन पर रखा और उठ खड़ा हुआ। ढलान उतर कर एक गड्ढे म उसने हाथ-पैर धोया। खून के धब्बे साफ किये। वापसी में उसने देखा, उस आदमी का एक हाथ कटा पड़ा है। हाथ उठा कर उसने उसके पास रख दिया। और फिर वह चुपचाप अपने डिब्बे मे आया। यात्रियों ने रास्ता छोड़ दिया। दो बेंच के बीच में अपनी जगह पर वह आ खड़ा हुआ। एक आदमी एक बेंच पर होल्ड आल का बिस्तर बिछा कर बीवी-बच्चे के साथ बैठा था। उसने पहले रमेन को बैठने की जगह नहीं दी थी। बोला था, 'बाल-बच्चों के साथ हू। आप कहां बैठेंगे?'

'मर गया क्या?' उस आदमी ने पूछा।

रमेन ने 'हां' मे सिर हिलाया।

'बेचारा!'—होल्ड आल थोड़ा समेट कर वह बोला, 'बैठिये।'

'मेरी गोद में मरा है। आपका बिस्तर छूत जायेगा।'

*'कादासन कभी अपवित्र नहीं होता।'*

रमेन नहीं बैठा।

दुर्गापुर से गाड़ी छूटते वक्त पचीस-छब्बीस साल का एक हृष्ट पुष्ट युवक दौड़ा-दौड़ा डिब्बे में घुसा। हैंडलूम का चेक शर्ट और कार्ड का पैंट। पैरों मे हन्टिंग बूट। कंधे से लटकता किट बैग। गोरा-चिट्टा रग। निष्ठुर चौकोर चेहरा। हत्यारे जैसी आखें।

उसने होल्ड आल वाले से बैठने की जगह मागी। होल्ड आल वाले की पत्नी बोल उठी, 'जगह कहा है ? बच्चे हैं, इतना सामान है, इनकी तबीयत भी खराब है।'

उसने होल्ड आल वाले और उसके बीवी-बच्चों को घृणाभरी आखा से देखा, पर कुछ कहा नहीं। ट्रेन घटे भर लेट चल रही थी। होल्ड आलवाला रमेन से बोला, 'पहुचते-पहुचते रात होगी। मैं बाघा यतीन रहता हू। इलाका अच्छा नहीं है। छीना-झपटी तो खैर है ही, टैक्सीवाले का भी क्या विश्वास ?

यह सुन कर युवक बोला, 'मुझे भी उधर जाना है। मैं साथ रहूगा तो कोई कुछ नहीं कहेगा।'

एक नजर युवक को देख कर वह बोला, 'ऐसी कोई बात नहीं।'

'विश्वास नहीं होता ?'—युवक हसा।

'ऐसी बात नहीं। दरअसल आपको कष्ट देना नहीं चाहता। भगवान देखेंगे। ठीक पहुच जाऊगा।'

'भगवान तो उस समय भी थे, जब आप डर रहे थे।'

युवक को बगैर जवाब दिये वह रमेन से मुखातिब हुआ, 'आज मैं आनेवाला नहीं था। परसों आने की बात थी। पचाग म देखा आज अमृत योग है। अमृत योग म यात्रा शुभ होती है।'—फीकी हसी हस कर वह बोला, 'काशी मे एक बार 'भृगु सहिता' दिखायी थी। दुर्घटना म मृत्यु है। इसलिए बिना पचांग देखे सफर नहीं करता।'

युवक हस कर बोला, 'पृथ्वी पर जगह की बड़ी कमी है और आप छह आदमी की जगह दखल किये बैठे हैं। बीस आदमी का खाना डकार जाते हैं। आपके लिए स्वर्ग बड़ी अच्छी जगह है। जाइये, स्वर्ग जाकर मौज कीजिये। क्यों दीन-दुखिया ससार को कष्ट दे

और ठीक इसी समय इजन ने सीटी दी और धीरे-धीरे गाड़ी की गति धीमी होती गयी।

रमेन अन्यमनस्क था। 'युवक उसके कान में बोला, 'आपको बड़ा धक्का लगा है। शुरू-शुरू म ऐसा होता है। कलकत्ता पहुचते ही एक पेग ब्राडी ले लेंगे। सब ठीक हो जायेगा। मैं ने बहुतों को मरते देखा है।'

रमेन गभीर आवाज में बोला, 'जानता हू।'

युवक मन-ही-मन चौंक उठा।

रमेन ने जगह बदल ली। वह दरवाजे के पास आ खड़ा हुआ। दरवाजे पर भीड़ थी। पश्चिम के आकाश में सूरज डूब रहा था। एक आदमी दूसरे की बीड़ी से अपनी बीड़ी सुलगा रहा था।

फर्श पर एक बौना आदमी उकड़ू बैठा था। इतना बौना कि और डेढ़-दो इंच बौना होता, तो वामनवीर कहलाता। पहरावे में मैला हाफ शर्ट और मैली धोती। उसकी आंखें रमेन पर टिकी थीं। हां, यह तो वही आदमी है जो ट्रेन कटे आदमी का सिर गोद में लेकर बैठा था। उसने लिए रोया था। हां, इससे अपने दुःख की बात कही जा सकती है। वह कहेगा कि पिछले साल उसका दुधमुंहा बच्चा कैसे मर गया? हां, इससे दुःख-दर्द सुनाया जा सकता है। वह चौबीस परगना जिला के मिठीपुर गांव का वासिन्दा है। पिछले साल रात के दो बजे बाढ़ आयी थी। कमरे में पानी भर गया था। बच्चे को छाती से चिपका कर उसने घरवाली से कहा था, 'तुम कस कर मेरी कमर पकड़े रहो। कमरे से बाहर निकलते निकलते कमरे में भर कमर पानी हो गया। बाहर गले भर पानी था। जोरों की बारिश हो रही थी। जानलेवा आंधी बह रही थी। वह बीवी-बच्चे के साथ बढ़ रहा था। पश्चिम की ओर बुड्ढे बरगद के नीचे महावीर थान है। ऊंची जगह है। चबूतरा बंधा है। बड़ी मुश्किल से वह महावीर थान पहुंचा। भर गला पानी पार करते वक्त बच्चे का खयाल नहीं था। महावीर थान पहुंचते ही उसने देखा, छाती में चिपका बच्चा मर चुका है। छाती में चिपका बच्चा पानी में डूबा रहा। बेचारा सांस न ले सका और मर गया। पति-पत्नी दहाड़ मार कर रोते रहे।

वह मन ही-मन बुदबुदाया, 'इससे कहूंगा? हां, इसे कहा जा सकता है।'

हाथ बढ़ा कर रमेन के पांव छूकर वह बोला, 'बाबू!'

रमेन ने झुक कर उसे देखा। गाल में खिचड़ी दाढ़ी। आंखों में लरजते आंसू। इसे उसने देखा है। जब वह ट्रेन कटे आदमी का सिर गोद में लिए बैठा था, यही आदमी दौड़ कर कच्चू के पत्ता में पानी ले आया था। यही उसके कान के पास फुसफुसा कर बोला था, 'बचा लीजिये बाबू। इसे बचा लीजिए। आप ही बचा सकते हैं।

'क्या?' रमेन स्नेहिल आवाज में बोला।

उसने एक बीड़ी बढ़ायी। रमेन ने बीड़ी ली। उसके सामने उकड़ू बैठ कर उसने बीड़ी जलायी। वह गद्गद हो गया। उसने अपना दुखड़ा कह सुनाया। क्षण भर चुप रह कर वह रुंधी आवाज में बोला, 'क्यों मेरी बुद्धि भ्रष्ट हो गयी थी बाबू?' कंधे पर चढ़ा लेता, तो बच्चा बच जाता। लेकिन मुझे हो क्या गया था जो इतनी छोटी-सी बात भी मेरे जेहन में नहीं घुसी?'

हथेली से आंसू पोंछ कर वह बोला, 'बच्चा मरने के बाद मैं ने गिरवी रखने का धंधा छोड़ दिया। अब भगवान का नाम लेता हूं। तीर्थ करता हूं। भिखारियों को भीख देता हूं। किसी का दुःख-दर्द बर्दाश्त नहीं होता। लेकिन इससे क्या

होगा ? आप जैसा लम्बा होता, तो बच्चा नहीं मरता। लेकिन भगवान ने तो मुझे बौना बनाया है।

रमेन मन-ही मन मुस्कराया। बेचारे को यह पता नहीं कि चेहरे पर कितनी मासूमियत है। यह सच है कि जब हमारा कोइ प्रिय हमसे विदा ले जाता है, तब उसके शून्य स्थान में हृदय दया माया से भर जाता है। अब तक बेचारा इस सच्चाई का महसूस नहीं कर सका है। बच्चे का गम अब तक बच्चा बन कर उसके साथ है।

रमेन ने उसके कंधे पर हाथ रखा। वह बोला, आप बड़े दयालु हैं बाबू।

गाड़ी की गति धीमी होने लगी। होल्ड आल वाले ने आवाज दी। रमेन ने पलट कर देखा।

प्लास्टिक की बोतल बढ़ा कर वह बोला, 'आपको बार-बार कष्ट दे रहा हूं। वर्द्धमान आ गया। थोड़ा पानी ला दीजिये न। आप जवान हैं। दौड़ कर ला सकते हैं। मैं सायटिक से परेशान हूं।

आसनसोल में भी रमेन ने उसके लिए पानी ला दिया था। अभ्यासवश उसने बोतल लेने के लिए हाथ बढ़ाया और फिर वापस ले लिया। दुर्गापुर में चढ़नेवाला युवक एकटक उसे देख रहा था। रमेन युवक को दिखा कर बोला, 'इन्हें दीजिये, ला देंगे। मैं ने मुर्दा छुआ है।'

अचानक युवक की आखों में घृणा उभर आयी। रमेन मैत्री की मुस्कान में मुस्कराया। युवक ने मुस्कान वापस नहीं दी। रमेन मन ही-मन बोला, 'मैं तुम्हारा शत्रु नहीं हूं।'

युवक हाथ बढ़ा कर बोला, 'लाइये, ला देता हूं।'

खिड़की के पास एक बुड्ढा बैठा था। रमेन की धोती में खून का धब्बा देख कर वह बोला, 'बचा नहीं न ?'

रमेन ने 'न' में सिर हिलाया।

बुड्ढा क्षण भर चुप रह कर बोला, 'चारों तरफ आदमी मर रहा है। इस महगाई में आदमी कैसे बच सकता है ? आप कहां जायेंगे ?

'कलकत्ता।'

'कलकत्ता में कहां ?'

'कोइ ठीक नहीं।'

'क्या मतलब ? रहने का कोई ठौर-ठिकाना नहीं ?'

क्षण भर चुप रह कर रमेन बोला, 'काशीपुर में गंगा किनारे अपना मकान था। सुना है, शरणार्थियों ने दखल कर लिया है। किसी दोस्त के घर रहूंगा।'

'ओह ! बेदखल हो गया। आप थे कहां ? आजकल घर बनाना मामूली बात

है क्या ? गंगा किनारे बीस-तीस हजार रुपये कट्ठा जमीन है। आदि घर यहीं था?'

'नहीं। आदि घर मैमनसिंह था।'

'मैमनसिंह में कहां?'

'काली मंदिर के पास।'

किसका घर?'

'राय हरेन्द्र नारायण चौधुरी।'

बुड्ढा सीधा होकर बैठा।

'आप उनके कौन हैं?'

'पोता।'

बुड्ढा बड़ी देर तक अविश्वास भरी आंखों से देखता रहा। उसके बाद अचानक फुसफुसा कर बोला, 'छोटे सरकार! आप हमारे छोटे सरकार हैं न?'

बुड्ढे की आंखें भर आयीं। खड़ा होकर वह बोला, 'बैठ जाइये—'

रमेन ने उसके कंधे पर हाथ रखा। वह विह्वल होकर बैठ गया। उसकी समझ में नहीं आता कि यह कैसे हुआ। छोटे सरकार की धाती में खून का धब्बा। ट्रेन कटे आदमी का सिर गोद में लिए बैठे थे छोटे सरकार। अभी-अभी फर्श पर बैठ कर भिखमंगे के साथ बीड़ी पी है। लेकिन यह सब हुआ कैसे! उसने छोटे सरकार को घुड़सवारी करते देखा है, बंदूक चलाते देखा है। तेरह साल की उम्र में छोटे सरकार मोटर चलाते थे। यह सब कैसे हुआ!

'यह कैसे हुआ छोटे सरकार? आप तो पहचान में भी नहीं आते। जमीन, घर-द्वार—सब बेदखल हो गया। यह क्यों हुआ भगवान!

रमेन पास आकर खड़ा हुआ। क्या बोले, कुछ समझ में नहीं आया। वह सिर्फ बुड्ढे के सिर पर हाथ फेरने लगा।

न जाने कितनी बार वह रमेन की ड्योढी दौड़ा गया है। वहां पहुंचते ही हर मुश्किल आसान हो जाती थी। बड़े सरकार आदमी के रूप में देवता थे। पाकिस्तान बनते ही ड्योढी खाली हो गयी। लुटेरों ने ड्योढी लूट ली। कलकत्ता में कोई मुसीबत आते ही उसे मैमनसिंह की ड्योढी याद आती थी। कितनी बार इच्छा हुई कि काशीपुर जाकर छोटे सरकार से मिले। अपना दुखड़ा सुनाये। कहे, आपलोगों ने ही हम दीन दुखियों को हमेशा देखा है। आप नहीं देखेंगे, तो हम कहां जायेंगे? लेकिन अब क्या होगा? अब तो छोटे सरकार के पास कुछ न रहा। काशीपुर में छोटे सरकार हैं, इस विश्वास के सहारे वह आज तक जिंदा रहा है। लेकिन अब?

'मैं मुकुंद घानीवाला हूं। पहचानते हैं छोटे सरकार?'

रमेन ने हां में सिर हिलाया और उससे सट कर बैठ गया।

जैसा बाप वैसा बेटा। रमेन की ड्योढ़ी दीन-दुखिया की मदद करती थी। बेसहारों को सहारा देती थी। छोटे सरकार के पास और कुछ न हो, पर बाप-दादा का हृदय तो है ही। किस तरह ट्रेन कटे आदमी का सिर गोद में लिए बैठे थे छोटे सरकार। आंखों मे आंसू लरज रहे थे। ऐसा तो होगा ही। आखिर उनकी रगों में भी तो बाप-दादों का खून बहता है। यह सब सोच-सोच कर मुकुन्द की आखें भर आयीं। उसने ड्योढ़ी का शासन देखा है। उसने ड्योढ़ी का प्यार भी देखा है। बड़े सरकार दुष्टों के काल और दुखियों के भगवान थे।

'हमें अब कौन सहारा देगा छोटे सरकार ?'—वह दुखी आवाज में बोला।

रमेन कुछ कह न सका, पर वह कहना चाहता था, 'मैं हूं न। मेरे पास आना।'

रमेन की आखों मे उसका बचपन उभर आया। हरे-भरे खेतों म पखों का बोझ उठाये बुड्ढा मोर चर रहा है। पाम गाछ के नीचे लम्बर मोटर गाड़ी बारिश म भीग रही है। पश्चिम के दालान पर बाबा आखों में दूरबीन लगाये बैठे हैं। धूल जमे पियानो पर उंगली से वह अपना नाम लिख रहा है, राय रमेन्द्र नारायण चौधुरी।

## पचीस

*

उसने कहा था, 'जानता हूं।' क्या जानता है ? आठ बजे रात को हावड़ा स्टेशन उतर कर बिशु उसके पीछे-पीछे चला। दायें हाथ में बक्सा और बायीं बगल मे शतरजी दबाये वह भीड़ के साथ-साथ चल रहा था। एक मुफलिसी हाव-भाव। लेकिन वह कुछ जानता है। कल से ही बिशु का मन-मिजाज बड़ा खराब है। आदमी कितनी आसानी से मर जाता है। 'जानता हूं' की गोद में ट्रेन से कटा आदमी कितनी आसानी से मर गया। मरना कितना आसान है! कल भी एक आदमी दुर्गापुर म बड़ी आसानी से मर गया। यूनियन का वह आदमी पौ फटने से पहले ही ड्यूटी पर जा रहा था। हाथ में टिफिन कैरियर और एक थैला। आंखों में बीवी-बच्चों की तैरती तस्वीर। बिशु ने और कभी उसे देखा तक नहीं था। एक जगह रुक कर वह बीड़ी सुलगा रहा था कि बिशु उस पर बम फेंक कर एक तरफ भागा। रेल लाइन के उस पार उसके लिए जीप खड़ी थी। वह जीप मे जा बैठा। जीप में ही लेन-देन हुआ। जेब गरम कर बिशु कलकत्ता वापस आया है। लेकिन फिर भी उसका मन-मिजाज बड़ा खराब है। दो-चार

आदमी के मरने से क्या होता है। कुछ भी नहीं होता। अभी अभी एक आदमी ट्रेन से कट कर मर गया, तो क्या हुआ? कुछ भी नहीं। बीस-पचीस मिनट ट्रेन रुकी रही, बस। उसकी मौत पर यात्रियों को दुख की अपेक्षा खीज ज्यादा हुई। आखिर उसकी वजह से ही ट्रेन लेट हुई न। सिर्फ 'जानता हूं' के हृदय में उसके लिए करुणा उमड़ आयी। आंखों में आंसू छलक आये। उसका सिर अपनी गोद में लेकर उसने उसे पानी पिलाया। बिभु को यह सब अच्छा नहीं लगा। आखिर इतना प्यार-दुलार क्यों? पृथ्वी से दो-चार आदमी कम जाए, तो क्या कमी पड़ जायगी? यूनियन का यह आदमी बिभु का पहला केस नहीं। कलकत्ता में भी एक आदमी उसके हाथों परलोक सिधार चुका है। लेकिन दोनों बार उसकी आंखों के सामने बचपन का एक दृश्य सजीव हो उठा है। देश में उसका बाप खेती-बारी करता था। दल्ली बेला में बिभु अपने बापू के लिए खेत पर भात ले जाता था। एक दिन बापू को भात देकर वह मेड़ों के रास्ते घर आ रहा था कि अचानक मुन्ना रे की आवाज सुनायी पड़ी। उसने पलट कर देखा, एक मुसलमान लम्बी लाठी लिए दौड़ा आ रहा है। मुन्ना टेढ़ा-मेढ़ा दौड़ टेढ़ा मेढ़ा दौड़ और उसने पलट कर देखा एक काला गेहुअन उसका पीछा कर रहा है। वह भागा। उसकी परछाइं पर फन मारता हुआ सांप उसके पीछे पीछे दौड़ रहा था। आ गया हूं मुन्ना, कह कर एक ही लाठी में उसने सांप का काम तमाम कर दिया। हां, कल सुबह जब वह उस आदमी पर बम फेंक कर जीप की ओर दौड़ा जा रहा था, उस समय भी उसने वह दृश्य देखा था।

लम्बोतरे चेहरे ने कहा था, 'जानता हूं।' क्या जानता है? कितना जानता है? क्यों कर जानता है?

हावड़ा स्टेशन का विशाल हाल पार कर बिभु ने उसकी पीठ पर हाथ रखा।

रमेन ने पलट कर देखा।

'आप कहां जायेंगे?'

'यादवपुर।'

'मैं भी उधर जा रहा हूं। टैक्सी लूंगा। आप चाहें तो साथ चल सकते हैं।'

'ठीक है।'—रमेन के चेहरे पर मीठी मुस्कान खेल गयी।

नहीं, बिभु यादवपुर नहीं जायेगा। वह तो बेहला जायेगा। लेकिन वह तो जानना चाहता है कि लम्बोतरा चेहरा क्या जानता है? कितना जानता है? क्या हुआ, थोड़ा घूम फिर कर जायेगा।

टैक्सी में बिभु ने सिगरेट बढ़ायी। रमेन ने सिगरेट ली। बिभु ने दो-चार बात की और फिर चुप्पी साध ली। रमेन बाहर देखने लगा।

कलकत्ता और भी पुराना हो गया है। और भी तंग हो गया है। हां, बुड्ढी मेम

की तरह अपने चेहरे पर कलकत्ता ने ढेर-सा रूज पाउडर पोत लिया है। बीच-बीच में मुस्करा उठती है ट्राफिक की पीली रोशनी। विधाता की तरह पुलिस कहीं-कहीं हाथ बढ़ाती है। मनचली आँखें जुगनू की तरह चमक कर भीड़ में गुम हो जाती हैं।

रमेन बाहर देख रहा था। बिभु उसकी ओर थोड़ा झुक कर बोला, 'मेरे बारे म कुछ बता सकते हैं।

रमेन ने पलट कर देखा। स्नेहिल मुस्कान में मुस्करा कर बोला, 'आदमी का चेहरा उसका आईना है। उस पर उसके स्वभाव और कर्म का प्रतिबिंब उभर आता है।

'मेरे चेहरे पर है?'

'हूं।'—रमेन ने सिर हिलाया।

'है। सौ फीसदी है।'—अपने आप म बुदबुदा कर अधीर बिभु ने सिगरेट फेंक दी। उसके चेहरे पर छाप पड़ गयी है। दरअसल इसके लिए एक लड़की जिम्मेवार है। मृदुला। देखने-सुनने में कोई खास बात नहीं थी। कोयले जैसी काली। भुथरी नाक। मुहासों से भरा चेहरा। फिर भी उसम गजब का आकर्षण था। बिभु कभी उससे दो बात भी न कर सका। सामना होते ही मन कांपने लगता था। वह मृदुला से शादी करना चाहता था। उसके बाप ने जात-पात की बात उठायी और मृदुला को कहीं छुपा आया। आक्रोश म बिभु अंगारा बन गया। उसके दिमाग म खून उबलने लगा। उसकी आँखों मे मनुष्य का मूल्य कम गया। दुनिया लड़कियों से भरी है। उसने तो सिर्फ काली-कलूटी मृदुला को चाहा था। वह उसके मुंहासों से प्यार करता। उसकी भुथरी नाक को प्यार भरा चुम्बन देता। अपने आपको मृदुला के काले रंग से रंग लेता। लेकिन किसी ने उसके मन की बात न सुनी। वह जानता है कि डेढ़ महीना पहले मृदुला की शादी हो गयी। मृदुला ने भी उसे नहीं समझा। कोई बात नहीं! अब सब समझेंगे। हां, वह एक-एक को समझा देगा कि बिभु दादा क्या है? किसकी हिम्मत है जो बिभु दादा से आँख मिलाये। कहां जायगी मृदुला? बिभु दादा उसे पाताल से भी खोज निकालेगा।

'किसकी छाप पड़ी है?'

हाथ बढ़ा कर रमेन ने उसका हाथ पकड़ा। फीकी मुस्कान मुस्करा कर बोला, 'आप तो जानते ही हैं।'

हाथ खींच कर बिभु बोला, 'लेकिन आपको कैसे पता चला?' उस्ताद की तरह आपने कहा, 'जानता हूं।' आप क्या जानते हैं? आप क्या ज्योतिषी हैं?

'नहीं।'—रमेन ने सिर हिलाया।

'तब क्या आपने मुझे कहीं देखा है? कहां देखा है?'

हत्यारे की आँखें स्थिर हो जाती हैं। बाहर से शांत दीखती है, पर

होतीं। पुतलियों पर पलकों की गहरी छाया पड़ती है।—रमेन जानता है, पर कहे कैसे ?

'नहीं, आपको और कभी नहीं देखा, पर आपका चेहरा बताता है कि आपका अपना कोई मारा गया है।

आत्म-विस्मृत हो उठा विभु, 'नहीं, कोई भी मेरा अपना नहीं था। मैं किसी को पहचानता भी नहीं था।'

तत्क्षण उसका हाथ पकड़ कर रमेन बोला, 'मैं समझ गया।'—इशारे से टैक्सी ड्राइवर को दिखा कर फुसफुसाया, 'चुप रहिये।'

विभु अचकचा कर चुप हो गया। रमेन उसके हाथ पर हाथ फेरता हुआ बोला, 'किसने कहा कि वे आपके अपने नहीं थे।'

और कोई बातचीत नहीं। विभु खिड़की से बाहर देखता रहा। रमेन उसके हाथ पर प्यार से हाथ फेरता रहा।

बहुत पुरानी बात है। रमेन दस-बारह साल का होगा। द्वितीय विश्व-युद्ध जारी था। ड्योढ़ी की तीनों बदूकें जब्त होने वाली थीं। उद्धव और ड्योढ़ी का ड्राइवर आशु एक दिन तीसरे पहर उसे बदूक सिखाने ले गये। उस कच्ची उम्र में ही बदूक से निशाना लगाना उसका नशा बन गया। एक दिन तीनों बदूकें जब्त कर ली गयीं। रमेन को बड़ा दुःख हुआ। बाबा की आरामकुर्सी के पास वह घुटनों में सिर छुपाये बैठा था। बाबा उसके सिर पर हाथ फेरते हुये बोले, 'बहुत अच्छा हुआ बेटे। बदूक चलाना तुम्हारा नशा बन रहा था। किसी चीज का नशा अच्छा नहीं होता। एक दिन तुम्हें देख कर अबोध पशु-पक्षी भाग खड़े होते। बदूकें चली गयीं तो क्या हुआ, मेरा असली हथियार तो तुम हो बेटे।

उस दिन रमेन बाबा की बात नहीं समझ सका था। अभी कुछ-कुछ समझ रहा है। उसकी बगल में जो बैठा है, हो सकता है उसके बैग में बम हो, हो सकता है उसके पास रिवाल्वर हो, लेकिन कितना असहाय दीख रहा है बेचारा। यह अस्त्र का व्यवहार नहीं जानता। अस्त्र का प्रकृत अर्थ नहीं जानता। बस, अस्त्र का दुर्व्यवहार सीख गया है। एक दिन अपने ही हाथों मरेगा। अस्त्र उसे कभी क्षमा नहीं करता जो उसका व्यवहार नहीं जानता।

रमेन ममता भरे हाथ से उसके हाथ पर हाथ फेरता रहा।

यादवपुर विश्वविद्यालय के पास रमेन टैक्सी से उतरा। विभु की ओर देख कर मुस्कराया, 'धन्यवाद। फिर मिलेंगे।'

विभु ने हाथ हिलाया। ड्राइवर ने टैक्सी घुमा ली।

यादवपुर अब वह यादवपुर न रहा। अब तो पहचान में भी नहीं आता। जब यहाँ

उसकी प्रजा बस रही थी, तब रमेन अक्सर आया करता था। दोपहर में भी यहां झींगुरों की आवाज सुनायी पड़ती थी। जहां-तहां मिट्टी काटने की आवाज होती थी। जमीन दखल पर झगड़ा होता था। लाठियां तन जाती थीं। कमेटी-कमेटी में मारपीट होती थी। दलालों का आना-जाना लगा था। जीप पर झंडा फहरा कर पार्टीवाले काम दिखाने आते थे। जमीन का लालच देकर कमेटी के मेम्बर घूस मांगते थे। कुकुरमुत्तों की तरह सहकारी समितियां पैदा हो रही थीं। उन दिनों रमेन अपनी प्रजा का कवच बना खड़ा रहता। प्रजा में जमीन का बंटवारा करता। यादवपुर से पुटियारी, बारासात, दमदम, हावड़ा और कभी-कभी वह सुंदरवन तक का चक्कर लगाता था। छब और उद्धव हमेशा उसके साथ होते थे। वे बाहरी हंगामों का मुकाबला करते थे।

रोशनियों में झिलमिलाते यादवपुर को देख कर रमेन खुश हुआ। बहुतों से पता पूछना पड़ा। रमेन को सिर्फ इतना ही याद है कि कालोनी के एकदम एक छोर पर उद्धव ने घर बनाया था। लेकिन अब तो कालोनी के ओर-छोर का पता नहीं चलता। एक तरफ रेल लाइन और एक तरफ सिर्फ घर-ही-घर। सारे प्राकृतिक दृश्य गायब हैं। विश्व-विद्यालय, बस स्टैंड, टैक्सी स्टैंड, बैंक, बाजार। रमेन इस यादवपुर को नहीं पहचानता। वैसे जाने-पहचाने रास्ते पर वह बहुत कम चला है।

डिबिया उठा कर दरवाजे के उस पार से उद्धव की छोटी बेटी ने पूछा, 'कौन ?'

'उद्धव का घर यही है ?'

डिबिया की मद्धिम रोशनी में ताड़ जैसे लंबे आदमी को देख कर नन्ही-मुनी बच्ची अवाक हुई और फिर मां को बुला कर ले आयी।

घूंघट काढे उद्धव की पत्नी सामने आयी, 'क्या बात है ?'

'उद्धव है ?'

नहीं। वह देर से आते हैं। आप कहां से आ रहे हैं ?'

मुद्दत बाद रमेन के मुंह से एक भुलाया हुआ नाम निकला, 'राय रमेंद्र नारायण चौधुरी।'

और यह सुनते ही उद्धव की घरवाली जीभ काट कर मन-ही-मन बोली, 'हाय दैया! यह तो बड़े सरकार के पोते हैं! अब मैं क्या करूं ?'

उसने छोटे सरकार के लिए चारपाई बिछा दी। अभ्यर्थना के शब्द मुंह से नहीं निकलते। श्रद्धापूर्वक उसने छोटे-सरकार की पद-धूलि ली।

दूसरे दिन सुबह उद्धव के आंगन में भीड़ लग गयी। कितनों ने रुपये रख कर प्रणाम किये। यह सब देख कर उसे पुरानी बात याद आयी और उसके चेहरे पर

मुस्कान खेल गयी। रुपये वापस कर वह बोला, 'तुम लोगों ने हमेशा मुझे दिया है। बताओ, मैं क्या दे सकता हूं?'

उद्धव चिल्ला कर बोला, 'तुम हमारे बीच रहो। हम घर बना देंगे। तुम्हारी शादी करेंगे। बदले में तुम हमारी देख-भाल करोगे। जैसा बड़े सरकार किया करते थे।'

लेकिन रमेन तो कहीं टिकता नहीं। वह तो रमता योगी है। आज यहां तो कल वहां। बाहर से बड़ा शांत दीखता है रमेन, पर उसके अंदर एक आनंदमयी उत्तेजना थर-थर कांपती रहती है।

अनंत मण्डल पश्चिम पुर्णियारी में रहता है। जमीन उसका नशा है। देश में खेती करता था। यहां खेती नहीं करता, जमीन का धंधा करता है। जमीन देखते ही वह समझ जाता है कि यहां लोग बसेंगे। वह जमीन खरीद लेता है और फिर दो-तीन साल बाद कई गुणा दाम लेकर बेच देता है। अब उसके घर में फ्लुरेसेंट रोशनी जलती है, रेडियो बजता है, फुलवारी में रजनी गंधा के फूल खिलते हैं। उसकी दोनों पत्नियां आजकल बात-बात पर नहीं झगड़तीं। बच्चे स्कूल-कॉलेज में पढ़ते हैं।

छोटे सरकार को देखते ही अनंत चिल्ला उठा, 'छोटे सरकार।' उसने पूरा घर सिर पर उठा लिया। पत्नियों और बच्चों को ले आया अनंत। दोनों पत्नियों ने अश्रुसिक्त आंखों से पद धूलि ली। बच्चों से अनंत ने कहा, 'साक्षात भगवान हैं। पैर छूकर प्रणाम कर।'

बच्चे अब खुद को समझदार समझने लगे हैं। उन्हें यह सब पसंद नहीं आया, फिर भी सबने पांव छूकर प्रणाम किया। अनंत का बड़ा लड़का आया। वह पार्टी करता है। उसने हाथ जोड़ कर नमस्ते किया। अनंत झल्ला उठा, 'पांव छूकर प्रणाम कर उल्लू।' रमेन उसे छाती से लगा कर बोला, 'ठीक है।'

'आपलोगों की छत्रछाया में हम कितने सुखी थे छोटे सरकार।'—अनंत बोला।

'क्यों?'—रमेन मुस्कराया।

'आपकी ड्योढ़ी हमारी ही ड्योढ़ी थी सरकार। वहां हमें अपनापन मिलता था।'

क्षण भर चुप रह कर रमेन बोला, 'लेकिन अब तो मैं भिखारी हूं अनंत।'

'कौन कहता है सरकार? हम क्या मर गये? हम तो आपके ही हैं।'

रमेन की आंखों के सामने उसके यज्ञोपवीत का दृश्य सजीव हो उठा। गेरुआ कौपीन। गेरुआ उत्तरीय। मुंडित मस्तक। हाथ में दंड और भिक्षा-पात्र। पांवों

में सड़ाऊ। साथ में एक कधे पर हाथ रखे बाबा और कुलपुरोहित सतीश भारद्वाज। दटी घर जाने के पहले रमेन ने विशिष्ट अभ्यागतों के समक्ष भीख की झोली फैलायी, 'भवति भिक्षां देहि। भवान् भिक्षां देहि।'

अहाते में प्रजा की भीड़ लगी थी। बाबा उसे प्रजा के बीच ले गये और कान में फुसफुसा कर बोले, 'अतर की आवाज म जोर-जोर से बोलो, भवति भिक्षां देहि। भवान् भिक्षां देहि।' प्रजा की आंखों में छोटे सरकार के प्रति श्रद्धासिक्त आसू लरजने लगे। भीख देने और छोटे सरकार की पद-धूलि लेने के लिए हड़बड़ी मच गयी। भवति भिक्षां देहि! भवान् भिक्षां देहि।'—रमेन का आतरिक स्वर गूजता रहा। वह बढ़ता गया। अब लौट कर क्या होगा? उसे तो अब यह भी पता नहीं कि वह कौन है? क्या कर रहा है?

कब ड्योढी पार कर गया, वह नहीं जानता। वह आगे बढ रहा है। उसके पीछे जन-समूह उमड़ रहा है। अचानक किसी ने रमेन का हाथ पकड़ा, 'बस, अब वापस चलो।'—नन्हा-सा रमेन अभिभूत आखों से उसकी ओर देखता रहा, कहा वापस जाना है? क्यों वापस जायेगा?'

उस दिन रमेन ने नहीं समझा था। लेकिन आज वह भली-भाति समझ गया है कि प्रजा से भीख मगवाने का उद्देश्य स्वय को आदर्श जमींदार प्रमाणित करना नहीं, बल्कि कुछ और था। दटी घर मे आह्निक सिखा कर बाबा ने कहा था, 'ब्रह्म का अर्थ है विस्तार। इसलिए ब्राह्मण सीमाबद्ध नहीं रहता। तुम यदि स्वय को ब्राह्मण समझते हो, तो तुम्हें अपना विस्तार करना होगा। भीख मागते-मागते तुम ड्योढी पार कर रास्ते पर चले गये थे। तुम रो रहे थे। क्योकि इतने में ही तुम्हें आभास मिल गया था कि विस्तार किसे कहते हैं।

' दटी घर के झुरपुटे अधेरे म बाबा आकर उसके पास बैठा करते। कहते, यह बात कभी मन में न लाना कि तुम जमींदार के लड़के हो, इसलिए तुम्हें भीख देकर लोग रो रहे थे। वे तो उस ब्राह्मण के लिए रोये थे जिसने एक दिन भारतवर्ष को धर्म की शिक्षा दी थी। भीख के बहाने घर घर घूम कर ब्राह्मण मनुष्य के मन म प्रवेश करता था। उसके दु ख-दर्द म हाथ बटाता था। उसे सर्वांगीण विकास की शिक्षा देता था। बौद्ध भिक्षुओं ने भी यही किया था। भीख के बहाने उन्होंने घर घर बुद्ध की वाणी पहुंचायी थी। याद रखना, भिक्षा-प्राप्त से ही भारत मे क्रान्ति शुरू हुई थी। क्योंकि भिक्षा ने ही जन-जागरण लाया था। भिक्षा ने ही मनुष्य को मनुष्य से प्यार करना सिखाया था।'

रमेन को बाबा का एक-एक शब्द याद है। दटी घर में बाबा ने कहा था, 'मैं तुम्हें भीख मांगने नहीं कहता। तुम भीख क्यों मांगोगे? लेकिन अगर किसी दिन

उसके दर्शन हो जाय, जिसने अंधा बना कर तुम्हारा बल छीन लिया था और फिर वापस कर दिया था, तो तुम उसके बताये मार्ग पर चलोगे। अगर वह भीख मांगने कहे, तो तुम प्रसन्न मन से भीख मांगना। लेकिन तुम क्या उसे खोजोगे रमेन ? बेटे दुखी आदमी ही उसे खोजता है। मैं तुम्हें आशीर्वाद देता हूं कि जल्दी-से-जल्दी तुम्हारा जीवन दुखमय हो उठे।'

रमेन के मुंह यह सब सुन कर अनंत की आंखें भर आयीं। आंसू पोंछ कर रुंधी आवाज में वह बोला, 'मुझे याद है। ब्रह्मचारी वेश में आप कितना सुन्दर लगते थे छोटे सरकार! मैं ने भी उस दिन भीख दी थी। चांदी की अंगूठी और चांदी के दो रुपये। आज बहुत कुछ दे सकता हूं। हुक्म दें सरकार।'

'मैं ने तुम्हें क्या दिया ?'

'बहुत कुछ। आपने अधम के घर पांव रखा, हमारे सात पुश्तों का उद्धार हो गया। आपके दर्शन से हमारी आंखें जुड़ा गयीं।'

रमेन मुस्करा कर बोला, 'मैं फिर आऊंगा।'

काले कलूटे तेजस्वी ब्राह्मण सतीश भारद्वाज शय्याशायी हैं। लड़कों से पटरी नहीं बैठती। लड़के अलग रहते हैं। जीवन निर्वाह के लिये पिता को कुछ दे देते हैं। एक लड़की विधवा होकर ससुराल बैठी है। एक लड़की ने प्रेम विवाह किया है।

रमेन को देख कर उठ बैठे। बोले, 'अब तक बुढ़िया के मांग में सिंदूर है समझे न ? बैठो, बेटा। तुम्हारा भी तो सर्वस्व चला गया। मैं तो सद् ब्राह्मण हूं। तब क्या मेरी यह दशा हुई ? मेरे वंश की संतान क्यों भ्रष्ट हुई ?

ब्राह्मणी मोढे पर बैठी। कपाल पीट कर बोली, 'सब चला गया बेटा। सब चला गया।'

कुछ भी नहीं गया। कई गुनों में सब वापस आ रहा है। बस, कुछ ही दिनों की बात है। जिस दिन मनुष्य अपनी गलतियों को हृदय से स्वीकार करेगा, उसी दिन क्रांतिकारी ब्राह्मण भिक्षुओं से देश भर जायगा। वे मानव-धर्म का उपदेश देंगे। वे आत्म-विकास का रास्ता दिखायेंगे। उनकी अमृत वाणी घर-घर में गूंज उठेगी। माननीय गुणों का विकास होगा। भिक्षु की झोली में मनुष्य अपना सर्वस्व दे देगा।

शाम को अंधेरे कमरे में बिस्तर पर पड़ा था रमणी मोहन। एक एक कर दो लड़के मर गये। पुत्र-शोक से टूट गया है रमणी। पहले नदी में डुबकी लगाता और एक मुट्ठी मिट्टी लेकर बाहर निकलता, अब दमा का मरीज है। पड़ोसियों से झगड़ता रहता है। कितना बड़ा कीर्तन किया था रमणी! आज सब उसे भूल गये हैं। विधवा की संपत्ति हड़प कर उसने छोटा-सा घर बनाया है, पर पाप-बोध उसे चैन नहीं लेने देता।

'रमणी!'

## छब्बीस

*

बाबा के आशीर्वाद से रमेन का जीवन बड़ी जल्दी दु:खमय हो उठा।

कभी कभी रमेन की आंखों के सामने उसकी ड्योढ़ी सजीव हो उठती है। पंखों का बोझ लिए बुड्ढा मोर और पुरानी मोटरकार उसे याद आती है। उसे लगता है कि वह पियानो पर जमी धूल की परत पर अपना नाम लिख रहा है, राय रमेंद्र नारायण चौधुरी। बाबा उसे अक्सर याद आते हैं। भुतहा महल की पश्चिमी भीत के पास हाथ में आतिशी शीशा लिए बैठे बाबा आंखें मिलने पर मुस्करा कर कहते, देखो रमेन, चींटियां किस तरह मिट्टी ले जा रही हैं। पश्चिमी भीत से ही घर का टूटना शुरू होगा। मुझे याद है, इधर से ही घर बनना शुरू हुआ था।

रमेन अवाक होकर पूछता, 'यह तो सौ साल पुराना घर है। आप तब कहां थे?'

'मेरा मन कहता है कि मैं उस समय भी यहीं था। मैंने इस घर की नींव पड़ते देखी है।'

'यह कैसे हो सकता है बाबा?'

पश्चिम के निर्जन चबूतरे पर पांव लटकाये रमेन और उसके क्षीण दृष्टि बाबा बैठे हैं।

'मुझे याद है रमेन पिछले जन्म में मैं ब्रह्मपुत्र के उस पार से नाव पर यहां मिट्टी काटने आता था। मैं भगवान से मनाता था कि हे भगवान! मुझे इसी घर में जन्म देना।

'सच बाबा, सच?'

'क्या पता पर मुझे तो ऐसा लगता है।'—बाबा के चेहरे पर मुस्कान बिखर जाती।

बाबा एकदम अंधे हो गये। सुबह-सुबह रमेन हाथ पकड़ कर उन्हें पूरबी दालान के बरामदे पर सूर्य प्रणाम कराने ले जाता। कभी कभार वह शाम के समय खुले आसमान के नीचे छत पर बैठते और रमेन से दृश्य जगत के बारे में पूछा करते।

लेकिन रमेन को बाबा कभी अबे नहीं लगे। वह समझता कि ध्यानस्थ बाबा हृदय जगत की गहराइयों में डूब गये हैं और इसलिए उनका अन्यमनस्क हाथ गड़गड़े का नल नहीं खोज पाता।

एक दिन शाम के समय उसके सिर पर हाथ फेरते हुए बाबा ने पूछा था, 'रमेन, बचपन की कोई बात तुम्हें याद है?'

दस-बारह साल के रमेन ने सोच कर उत्तर दिया था, 'हां।'

'क्या याद है?'

रमेन को पिता की मृत्यु याद हो आयी थी। उस रात ड्योढ़ी में शोर मच गया था, मझले सरकार को लोकनी लगी है। उस समय तो उसने समझा था कि उसके पिता को लोकनी नामक भुतनी लगी है, लेकिन उम्र होने पर उसे पता चला था कि लोकनी का अर्थ दिशा-भ्रम है। पिता की आखें कमजोर थीं। कालीजय की बैठक से शतरंज खेल कर घर आ रहे थे। थोड़ा रास्ता पहचानना था लेकिन वह भी रास्ता भूल गया। विश्व-युद्ध जारी था। जहां-तहां ट्रेंच खुदे थे। थोड़ा रास्ता छोड़ कर फेरंगसाली की ओर भागा जा रहा था। जिसने देखा, उसने मझले सरकार को आवाज दी। मझले सरकार ने चिल्ला कर जवाब दिया था, रास्ता भूल गया हूं। ड्योढ़ी पर खबर आयी और शोर मच गया। लालटेन और मशालें लेकर लोग दौड़ पड़े। दूर से लोगों की आवाज आ रही थी, मझले सरकार पिता की लाश घर लायी गयी। मृतक पिता का मुंह कैसा था, यह रमेन को याद नहीं। हां, उसे याद है, दूसरे दिन सुबह अहाते में जब घोड़ा लाया गया था, उस समय वह कितना लज्जित दीखता था।

रमेन ने बाबा से यह घटना कह सुनायी थी। गड़गड़ा पीते हुए बाबा कुछेक क्षण चुप रह कर बोले थे, 'उस समय तुम पांच-छह साल के थे। इस उम्र की बातें बहुतों को याद रहती हैं। और भी बचपन की कोई बात याद आती है?'

रमेन ने फिर सोच कर कहा था कि एकबार जब वह बीमार था, उसकी जीभ के नीचे थर्मामीटर लगाया गया था और वह कड़-कड़ कर थर्मामीटर चबा गया था। उसे औषधि पिला कर उल्टी करायी गयी थी।

यह सुन कर बाबा प्रसन्न होकर बोले थे, 'उस समय तुम तीन साल के थे। इससे पहले की कोई बात याद आती है?'

रमेन ने बताया था कि उसने अपनी मां के हाथ में नीले रंग की कलगी देखी थी।

बाबा ने खुश होकर कहा था, 'उस समय तुम सिर्फ दो साल के थे। और भी कुछ याद आता है?'

रमेन ने सोचा था। खूब सोचा था, पर और कोई बात उसे याद नहीं आयी थी।

बाबा गंभीर होकर बोले थे, मनुष्य चाहे तो पूर्व जन्म भी उसे याद आ सकता है। तुम अपने जन्म को याद करने की कोशिश करो और फिर पूर्व जन्म में प्रवेश करने की कोशिश करना। स्वयं को स्मृति प्रखर बनाओ रमेन। यदि तुम्हारा हृदय स्वच्छ रहे, पाप-बोध से तुम्हें कष्ट न हो, तुम किसी का अनिष्ट न करो, तुम्हारे आचरण अच्छे हों, तो तुम्हारा पूर्व जन्म भी तुम्हारे सामने होगा।'

ब्रह्मपुत्र के किनारे उसके पिता के नाम बाबा ने एक स्कूल खोला था—नरेंद्र नारायण मेमोरियल स्कूल। उसी स्कूल में चपरासी की नौकरी के लिए अश्विनी ने बाबा के पाँव पकड़े थे। उसने स्वीकार किया था कि बयरा गाँव के—कुलीन कायस्थ की विधवा को भगा कर उसने पाप किया है। उसके साथ एक काली-कलूटी औरत और दो बच्चे थे। एक लड़का, एक लड़की। लड़की दस साल की होगी। भागने के साल भर बाद अश्विनी उस औरत के साथ गाँव आया था, पर गाँववालों ने मार कर भगा दिया। दस साल से वह कायस्थ विधवा को ढो रहा है। बड़े सरकार की जमींदारी के बाहर की दुनिया नरक है।—यह सब कह कर वह रो पड़ा था और फिर बोला था, 'अब मैं कहीं नहीं जाऊँगा सरकार। आप चाहें तो मेरी जान ले लें, पर अपनी छत्रछाया से मुझे दूर न करें।'

उस समय बाबा का मन कहीं और था। उनकी आँखें ब्रह्मपुत्र के उस पार थीं। वह दूर-दूर तक देख सकते थे क्योंकि उनकी आँखें कुछ नहीं देख सकती थीं। कभी कभी अंधेरे में बैठे बाबा के सिर के पीछे रमेन ने अचानक प्रकाश होते देखा है।

देर सोच कर बाबा अश्विनी से बोले थे, 'तुम्हारे बच्चे वर्ण संकर हैं। उनकी क्या गति होगी? हमारे इलाके में तुम लोग पतित हो। स्वजाति की विधवा से शादी करते, तो मैं तुम्हें नौकरी देता। जमीन भी देता। तुम अपने से नीच जाति में शादी करते, तो समाज का उपकार होता। लेकिन यह तो प्रतिलोम है।

अनपढ़ अश्विनी बाबा की बात नहीं समझ सका था। वह तो इतना ही समझता था कि उसने जघन्य पाप किया है। वह क्या जाने अनुलोम और प्रतिलोम किसे कहते हैं।

बाबा ने उस औरत से पूछा था, 'अश्विनी के प्रति तुम्हारे मन में कोई श्रद्धा है?'

वह चुप रही थी।

'इसमें कौन-सा आकर्षण था? तुम्हें विवाह करने की इच्छा थी, तो मुझसे कहती। मैं तुम्हारी शादी करता। आवश्यकता पड़ती तो ब्राह्मण से भी कर देता।'

'इससे क्या होता?'

उद्धव की नजर पड़ती और वह चीख उठता, 'ऐ इरिया ! यहां क्या कर रही है? भाग यहां से।'

लेकिन लड़की बड़ी सीधी-साधी थी। रमेन का हुक्म सिर आंखों। धीरे-धीरे वह रमेन की पालतू कुतिया बन गयी। जहां रमेन, वहीं इरावती। उसके सांवले-सलोने चेहरे पर रमेन के प्रति उसकी चाहत उजागर रहती।

कभी-कभार पावों की आहट सुन कर बाबा पूछते, 'तुम्हारे साथ कौन है रमेन?'

'इरा।'

बाबा की भौंहें कुचक जातीं, वह चुप रहते।

रमेन का खास नौकर था लव। उसे नाड़ी का ज्ञान था। वह होमियोपैथ भी जानता था। रमेन के इर्द-गिर्द इरा पर नजर पड़ते ही वह फटकार सुनाता, बौना होकर चांद पकड़ने की कोशिश करती है छोरी। भला चाहती है तो छोटे सरकार से दूर रहा कर।

अकेले में अश्विनी सुखी था। बीवी बच्चा का वह नाम भी नहीं लेता था। छुट्टी के बाद ब्रह्मपुत्र की ओर देखता हुआ बैठा रहता। कभी कभी आधी रात को ताड़ी के नशे में मस्त आवाज से भरपूर उसका सुरीला गीत सुनायी पड़ता। इरा की मां मिलती तो दूर से ही हाथ जोड़ कर प्रणाम करता। रमेन ने उससे तैरना सीखा था।

विश्व-युद्ध के आखिरी साल बाबा पूजा पाठ करके ससार से विदा ले गये। उस समय रमेन पिता के सफेद घोड़े पर बैठा केवगखाली के मैदान म छलांग लगा कर ट्रेंच पार कर रहा था।

विश्व युद्ध के बाद ससार म बहुत बड़ा परिवर्तन आया।

पिता की मृत्यु के बाद मा कभी कभी भूत देखती थीं। धीरे-धीरे भूत देखना उनका नशा बन गया था। सैतालीस के आखिर म रमेन मा के साथ काशीपुर के मकान म आ गया। मा जाना नहीं चाहती थीं। उनका विश्वास था कि घर छोड़ने पर पिता जी की आत्मा उन्हें दर्शन नहीं देगी।

ताऊजी पिताजी से भी पहले निःसतान मरे थे। ताई अपने मायके गोवरदी म रहती थीं। आखिरकार उसे पता चला कि मां के सिवा इस ससार में उसका अपना कोई नहीं है। लव और उद्धव ने उसे टूटने न दिया। दोनो की किलेबंदी में कोई उसका बाल बाका नहीं कर सकता था। लेकिन किला ढह गया।

अश्विनी देश में ही रह गया था। नरेंद्र नारायण मेमोरियल स्कूल के पिछवाड़े की झोपड़ी म बैठ कर ब्रह्मपुत्र को देखने का नशा वह नहीं छोड सका था। अकेले म वह खुद को बड़ा सुखी समझता था। बड़े सरकार की दया की बात वह लोगों को सुनाया करता था। इरा की मां दोना बच्चे के साथ आ गयी थी। लव और उद्धव ने रसोइघर

व करीब उसके लिए टीन का घर बना दिया था। धमकी दी थी कि वे घर के अदर कदम रखने का दु साहस न करें। लेकिन इरा आती थी। कभी-कभार इरा की मा घूघट के अदर से रमन को तीखी नजरों से देखती। उसके बच्चों को बड़े सरकार ने वर्णसकर कह कर अलग कर दिया था। विवाह करने का अधिकार छीन लिया था। शायद यह अपमान वह भूल न सकी थी।

उन दिना रमेन कालेज मे पढता था। मैगजीन में ललित भट्टाचार्य का एक जबर्दस्त लेख निकला था, 'भारत म साम्यवाद और उसकी कठिनाइया।' लेख में कहा गया था कि प्राचीन आर्यों ने अर्थनैतिक कारण से मनुष्य को चार वर्णों म बाटा था। आपाद दृष्टि से वर्णाश्रम विधान सम्मत प्रतीत हो सकता है, पर है नहीं। वर्णाश्रम वस्तुत शोषण की दीर्घस्थायी व्यवस्था थी जो आज भी भारत म प्रचलित है।

और उन दिनों इरा का सोलहवा चल रहा था। स्निग्ध शरीर। श्यामल रग। दोपहर म मां के पास बैठ कर फ्रेम मे कसे सफेद कपड़े पर वह गुलाब का फूल काढती थी। रमेन के पावों की आहट मिलते ही वह चुपचाप रमेन के कमरे में चली आती। होठों मे चुप्पी लिए रमेन के कपड़े वगैरह करीने से रखती। उस पर कभी-कभी रमेन को दया आती। कभी प्यार करने को जी चाहता। उन दिना अपने समर्थन मे वह कोई ठोस युक्ति तलाश रहा था। परिचय होने पर उसने ललित के आवेग-तप्त स्वर में मानव मुक्ति की बातें सुनीं। उसकी बाता से वह बड़ा प्रभावित हुआ और वह भी मानव-मुक्ति की बातें करने लगा।

दो साल बाद अश्विनी पूर्वी पाकिस्तान से चला आया। वहा वह बड़ा अकेलापन महसूस करता था। इसके अलावा बुढापे की चिंता भी सिर उठाने लगी थी। कुछ दिन काशीपुर क घर मे रह कर वह चला गया। यादवपुर के दक्षिण में उसे कुछ जमीन मिल गयी थी। उसने दो कमरे का घर बना लिया था। एक दिन उद्धव ने रमेन से शिकायत की थी कि अश्विनी बड़े सरकार के हुक्म के खिलाफ काम कर रहा है। हरामजादा कहता है कि अकेलापन उसे बर्दाश्त नहीं होता। इरा की मां भी भागने के ताल म है।

मानव मुक्ति के समर्थक रमेन ने बड़ी उदारता के साथ कहा था, 'बीवी-बच्चे उसके हैं। उसे तो ले ही जाना चाहिए। अगर जाना चाहे तो इरा की मां को जाने दो।'

रमन तब बच्चा नहीं था। उद्धव और लव उसे सम्मान देने लगे थे। दोनों ने सिर्फ बड़े सरकार की दुहाई दी, लेकिन उसके दूसरे ही दिन अश्विनी अपने बीवी-बच्चों को उनकी आखा के सामने ले गया।

उन दिनों अक्सर प्रजा उससे मिलने आती थी। वह सबको कुर्सी पर बैठने कहता। लेकिन कुर्सी पर कोई नहीं बैठता था। वे पीढ़े पर बैठते या जमीन पर।

रमेन को इज्जत देना उन्हें अच्छा लगता था। वह गंभीरता से सोचता प्रजा के व्यवहार में अन्तर्निहित दासता की झलक है या सच्चा प्यार है। प्रजा विभिन्न प्रकार की समस्या पर उससे सलाह लेने आती। किसी को जमीन खरीदनी है, छोटे सरकार से सलाह लेने आ गया, जमीन खरीदूं या नहीं। लड़का-लड़की की शादी तय करनी है, छोटे सरकार से सलाह मशविरा करना जरूरी है। किसे वकील रक्खा जाय, किसी डाक्टर से दिखाया जाय—रमेन की सलाह जरूरी है। फोड़-फाड़ तो डाक्टर का नुस्खा दिखा कर पूछता, नुस्खा ठीक है या नहीं? रमेन को जमींदारी तो नहीं मिली लेकिन प्रजा मिल गयी, प्रजा की जिम्मेवारियां मिल गयीं। सबको बाबा चाहिए। बाबा के पास हर समस्या का समाधान था। उन्होंने पुरखों से प्रजा-पालन सीखा था। वह अच्छे चिकित्सक थे। कानून के दाव पेंच समझते थे। मनु, पातंजल, गीता, भागवत उन्हें कंठस्थ था। खेती-बारी का अच्छा ज्ञान था। वह कपड़ा बुन सकते थे।—प्रजा-कल्याण के उद्देश्य से न जाने उन्होंने क्या क्या सीखा था।

शुरू शुरू में तो रमेन घबरा गया था। लेकिन कुछ ही दिनों में संभल कर बाबा के दायित्व को निभाने के लिए स्वयं को तैयार करने लगा। रूप से होमियोपैथी सीखनी शुरू कर दी। कानून की किताबें पढ़ने लगा। और इसी दौरान कालेज के छात्र यूनियन का तेज तर्रार जनरल सेक्रेटरी ललित से परिचय हुआ। परिचय बड़ी जल्दी घनिष्ठता में बदल गया। उसकी संगति ने ऐसा रंग लाया कि बात बात पर रमेन रूस की दुहाई देने लगा। ललित उसके घर आता। उसके माल-असबाब देखता। पियानो बजा कर वह गीत गाता और ललित बैठे-बैठे सुनता। और फिर हंस कर कहता, 'तुम्हारे शरीर से अब तक धुआं गया नहीं गयी। अभी भी सब तुम्हें छोटे सरकार कहा करते हैं।' रमेन को बड़ी शर्म आती।

यूनियन के चुनाव में रात-रात भर जग कर रमेन ने पोस्टर लिखे थे। जोशीला भाषण दिया था। ललित का जिताने में उसने कोई कोर-कसर बाकी नहीं रखी थी। ललित चुनाव जीत गया था।

दो प्रकार के विचारों के बीच वह पेंडुलम बना था। एक तरफ उस पर बाबा की छाप पड़ रही थी और दूसरी तरफ वह ललित से प्रभावित हो रहा था। वह बाबा और ललित को एक जगह लाना चाहता था, पर ला न सका।

एक दिन हारूदत्त अश्विनी की लड़की इरावती के खिलाफ शिकायत लेकर छोटे सरकार के पास आया था, 'अश्विनी की छोरी इरावती मुहल्ले के लड़कों को बर्बाद कर रही है। मेरा लड़का हरेन उससे शादी करने पर तुला है। आप कुछ कीजिए सरकार। अश्विनी भी किसी के मत्थे अपनी छोरी को मढ़ने के ताक में है। आप

तो जानते हैं कि बड़े सरकार ने अश्विनी के बेटे-बेटी को शादी करने का अधिकार नहीं दिया है। इनमें तो जन्म-दोष है छोटे सरकार।

सुनते ही रमेन आगबबूला हो उठा था। 'जन्म-दोष', यह शब्द उसे बर्दाश्त न हुआ। उस समय उसका मन अचानक बाबा से फिर गया था, 'मनुष्य स्वतंत्र जन्म लेता है। जन्म से ही वह स्वतंत्र है। वह मुक्त है। फिर यह ऊंच नीच, जात-पात क्या? यह अन्याय है। यह शोषण है।' ललित उस पर हावी हो रहा था। कहीं-कहीं बाबा से उसके विचार नहीं मिलते थे। इरा की मा के प्रति बाबा का निष्ठुर आदेश और कई साल पहले की एक शाम की इरा का मुरझाया चेहरा उसे याद आ रहा था।

वह भावावेश में बोल उठा था 'अश्विनी और उसके बीबी-बच्चों से तुम लोग नफरत करते हो। ठीक है, मैं इरावती से शादी करूंगा।'

तत्क्षण बोल उठा था हाल्दत्त, 'आपकी बात कुछ और है सरकार। आप जहर लेंगे फिर भी कुछ नहीं होगा। लेकिन मैं तो मर जाऊंगा सरकार।'

यह सुन कर रमेन को थोड़ा अहंकार हुआ था। उसके बाद एक दिन दोपहर को वह सीधे अश्विनी के दरवाजे पर जा खड़ा हुआ। अश्विनी पिछले दरवाजे से निकल कर तालाब की ओर भाग रहा था कि रमेन की आवाज सुन कर भीगी बिल्ली की तरह उसके सामने आ खड़ा हुआ।

'मैं तुम्हारी लड़की से शादी करूंगा।'

किवाड़ की आड़ में लाल पाड़ की साड़ी के घूंघट में ढके एक चेहरे ने रमेन का फैसला सुना था। और रमेन ने सिर्फ चूड़ियों की खनक सुनी थी।

और ठीक उसी समय रमेन का मन बोल उठा था कि उसने अच्छा नहीं किया।

रमेन की मा अधपगली हो चुकी थीं फिर भी वह बेटे के फैसले पर बहुत रोयी थीं। ब्रज गंभीर आवाज में बोला था, 'बड़े सरकार और तुम में यही फर्क है कि तुम ज्यादा दूर तक नहीं देख सकते, वह बड़ी दूर तक देखते थे।'

उद्धव ने कहा था, 'अब अशना तुम्हारा ससुर हो रहा है। हाथ जोड़ता हूं उसे प्रणाम मत करना।'

लेकिन रमेन ने किसी की परवाह नहीं की। एक दिन इरावती को ब्याह कर वह ले आया। इरावती से ब्याह हुआ और प्रजा में उसका सम्मान कम गया।

शादी के बाद वह इरावती को समझ सका। इरा धधकती हुई आग थी पर रमेन वैसा नहीं था। सुबह उठ कर वह खुद को ताजा महसूस नहीं करता था। एक अजीब-सी थकावट उसे दबोच लेती थी।

एक दिन रमेन ने इरा से पूछा था, 'तुम्हें कोई बीमारी है क्या?'

'नहीं तो। क्या, क्या बात है ?'

'क्या पता! मुझे बड़ी कमजोरी होती है। लगता है कि तुमसे कोई सक्रामक बीमारी मुझ म आयी है। पहले तो ऐसा नहीं होता था।'

रमेन ने यह भी गौर किया था कि कोई मां जी कह कर पुकारता था तो इरा एकदम सिकुड़ जाती थी। एक दिन उसके पूछने पर इरा ने कहा था, 'कोई मुझे मां कहता है, तो मुझे लगता है कि मैं अपराधी हूं।'

इरा की मां बुद्धिमती थी। शादी के बाद कभी सास बन कर रमेन के घर नहीं आयी। कभी-कभी अश्विनी चुपके-चुपके आता और इरा से मिल कर चला जाता। रमेन का सामना होता, तो जमीन छूकर प्रणाम करता। सबध पहले जैसा होकर भी बड़ा हास्यास्पद था।

इरा दिन भर बेचैन रहती थी। वह थोड़ा निर्बोध भी थी। उसका स्वभाव ढीला ढाला था। कोई भी बात देर से समझती थी। उसे विश्वास नहीं होता था कि वह रमेन की पत्नी है। शायद बचपन से ही उसे छोटी मोटी चीज चुराने की आदत भी थी। एक दिन उद्धव ने रमेन से शिकायत की थी कि उसने इरा को चोरी-छिपे अश्विनी के हाथ कुछ देते देखा है। उसकी नजर पड़ते ही इरा रोने लगी और अश्विनी चोर की तरह भाग गया।

रमेन ने शात स्वर म कहा था, 'इससे क्या! उसने अपनी चीज दी है।'

लेकिन उद्धव विश्वास न कर सका था। वह होठ बिचका कर बोला था, 'ओ! अपनी चीज!'

उन दिनों रमेन बड़ा व्यस्त रहता था। अपनी प्रजा के बीच घूम घूम कर वह कम्यून बनाने की कोशिश करता था। लेकिन एक बात वह अच्छी तरह महसूस कर रहा था कि उसकी लोकप्रियता बहुत कम गयी है।

एक दिन इरा हारू दत्त के बेटे परान के साथ भाग गयी। लव ने उसे उदास और लज्जित देख कर कहा था, 'तुम मे नारी ज्ञान नहीं है। जो अपना उद्धार नहीं चाहती, तुम जबर्दस्ती उसका उद्धार करना चाहते थे। बड़े सरकार ने क्या यू ही उन लोगों को समाज से निकाला था? वह दूर द्रष्टा थे।'

'वह दूर द्रष्टा थे।' चारों तरफ यह बात फैल गयी। हर कोई कहता, बड़े सरकार दूर द्रष्टा थे।

इरा को किसी ने खोजा नहीं। उसने भी इरा की खोज खबर नहीं ली।

## सत्ताईस

*

इरा के भागने के बाद रमेन ने घर से बाहर निकलना बहुत कम कर दिया। परिचिता से वह कतराने लगा। कहीं कोई इरा के बारे में पूछे, तो वह क्या कहेगा? पुराने पियानो की आवाज बेसुरी निकलती, फिर भी वह कभी-कभार पियानो बजा कर पूर्वी बंगाल के मल्लाहों के गीत गाता। कभी पुरानी गाड़ी लेकर निकल पड़ता। गंगा किनारे किसी सुनसान जगह गाड़ी लगाता और कमीज खोल कर गंगा में कूद पड़ता। प्रजा का आना-जाना भी कम गया था। घर में वह अकेला रहता था। काम-धंधा तो कुछ था नहीं और न कुछ करने की इच्छा ही थी। एम०ए० की परीक्षा भी उसने नहीं दी। अनिच्छापूर्वक बी० एल० के द्वितीय वर्ष की परीक्षा दी और फेल कर गया। फेल करने का उसे दुःख नहीं था। कभी-कभी वह एकदम भोर में उठता। बाल लेकर वह अब पहले जैसा दौड़ता नहीं था। खेलना उसने छोड़ दिया था। फिर भी वह सुबह-सुबह उठ कर बाहर निकलता। घर के सामने बगीचा लगाने के लिए थोड़ी खाली जमीन थी। लव और उद्धव पर बुढ़ापा सवार होने लगा था। कौन लगाता बगीचा? जमीन में जंगली झाड़ और घुटने भर लम्बी घास का जंगल लगा था। बेल के पेड़ से रह-रह कर तक्षक आवाज देता था। रमेन यूं ही उस जमीन में चक्कर लगाया करता और बचपन में लौटने की कोशिश करता। निर्जन रास्ते से स्नानार्थियों की पद-चाप सुनायी देती। कभी-कभी वह सुबह उठ कर सूर्य नमस्कार करता और कभी जब उसे इरा की याद आती, तो वह सोचने लगता कि आखिर इरा ने उसे पसंद क्यों न किया? वह कभी-कभी अपने बारे में सोचता कि अब वह क्या करेगा?

और इस दरम्यान दो घटनाएं घटीं।

एक दिन कुछ लोगों ने गंगा में बहते एक बच्चे को निकाला। रमेन ने जाकर देखा, नौ-दस साल का बच्चा जमीन पर पड़ा है। नेवी ब्लू पैंट और नया जनेऊ। वहां खड़े सब सिर्फ शोर मचा रहे थे। किसी को पता नहीं कि डूबे आदमी के साथ क्या किया जाता है। रमेन ने बच्चे को औंधा लिटाया और आहिस्ते-आहिस्ते मालिश करने लगा। मालिश करने से पहले वह समझ गया था कि बच्चे में जान है। लोगों की भीड़ बढ़ती जा रही थी। लेकिन भीड़ चुप थी। सब उत्सुक आंखों से रमेन को देख रहे थे। वह जी-जान से बच्चे को बचाने की कोशिश कर रहा था। एक

आदमी बोला, 'पानी निकल रहा है। बच जायेगा।' एक शांत प्रकृति का आदमी उकड़ू बैठा चुपचाप देख रहा था। बच्चे को छूकर बोला, शरीर थोड़ा गरम लगता है। बच जायेगा। भीड़ में से एक आदमी डाक्टर बुला लाया। अचानक रमेन ने सुना, 'यह क्या कर रहे हैं?' सिर उठा कर उसने प्रश्नभरी आँखों से देखा, हाथ में बेग और गले में स्टेथस्कोप लटकाये एक डाक्टर खड़ा है। अकचका कर उसने पूछा, 'तब क्या करूं!' डाक्टर आत्म-विश्वास के साथ बोला, 'इस तरह नहीं। चित्त लिटा कर मालिश कीजिए।' क्षण भर के लिए रमेन को लगा कि डाक्टर गलत बोल रहा है। वह जानता है कि डूबा हुआ आदमी कैसे बचाया जाता है। उसने डूबे आदमी को बचाते देखा है। लेकिन वह क्या करे? इतने आदमियों के सामने अगर डाक्टर की बात न माने और बच्चा मर जाय, तब क्या होगा? उसने गलती की। डाक्टर के कथनानुसार बच्चे का चित्त लिटा कर मालिश करने लगा। दस-बारह मिनट के अंदर ही बच्चा अकड़ने लगा। रमेन मृदु स्वर में डाक्टर से बोला, 'यह सही तरीका नहीं है।' डाक्टर ने झुक कर नाड़ी देखी और सकपकायी आवाज में बोला, तब पहले जैसा ही कीजिये। लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। बच्चा एकदम काठ बन गया। बड़ी देर तक रमेन मृतक के पास बैठा रहा।

यह जानते हुए भी कि डाक्टर गलत कह रहा है, उसने गलती क्यों की? क्या उसे अपने आप पर विश्वास नहीं था? रमेन दिन-रात यही सोचता रहता। वह सोचता, वक्त पर वह सही फैसला क्यों नहीं ले पाता? अगर उसने डाक्टर की बात न मानी होती, तो शायद बच्चा बच जाता। मृतक बच्चे का मासूम चेहरा उसकी आँखों के सामने तैर जाता और उसके दिमाग में उथल-पुथल मच जाती।

एक दिन मुनि का बुड्ढा बाप एक मुसलमान को साथ लेकर आया। रमेन के हाथ दस्तावेज देकर बोला, 'देखिये तो छोटे सरकार कहीं कोई गड़बड़ी तो नहीं है? पाकिस्तान वाली जमीन मियां जी को दे दूंगा। इनकी जमीन यहां है। सब भाई साथ हैं।'

रमेन ने देखा, कहीं कोई गड़बड़ी नहीं है। उसने उस मुसलमान से भी बातचीत की। सब भाई जमीन बदलने को तैयार थे। पूरी तरह आश्वस्त होकर वह बोला, 'हो सकता है मुझ से कोई गलती हो, किसी अच्छे वकील से भी सलाह-मशविरा कर लो।'

'आप तो वकील के बाप हैं सरकार।'

'मुझ से गलती भी तो हो सकती है। वकील से दिखा लेना ठीक रहेगा।'

मुनि का बाप बड़ी देर तक रमेन की ओर देखता रहा। बड़े सरकार का पोता नहीं बना सका! अब वह किधर पास जायगा?

एक दिन एक बार के सामने गाड़ी रोक कर उसने व्हिस्की पी। उन दिनों

कभी-कभार पीता था। उस दिन सजय भी उसके साथ था। वह गैरेज खोलना चाहता था। उसने उसे समझाने की कोशिश की थी कि गाड़िया की मरम्मत मे अच्छा मुनाफा है। पूजी न होने की वजह से वह रमेन को पार्टनर बनाना चाहता था। रमेन पार्टनर बनने को तैयार नहीं हुआ। हा, बार में बैठे बैठे ही उसने चेक लिखा और सजय को देते हुए बोला, 'अपनी सुविधा के अनुसार लौटा देना।'

चेक लेकर सजय मुस्करा कर बोला था, 'तुम जीवन-सग्राम से कतराते हो। तुम मर चुके हो।'

उस रात की एक-एक बात रमेन को अच्छी तरह याद है। बड़ी रात गये गाड़ी ड्राइव करता हुआ वह घर वापस आ रहा था। वह अपना एक प्रिय फ्रांसीनी गीत गुनगुना रहा था, आला ला आ लाला। पुरानी खटारा गाड़ी भर भर हड़हड़ कर भाग रही थी। अचानक उसे शैशव म लौटने की इच्छा हुई। बचपन का घटनायें आंखों क सामने नाचने लगीं। पत्तों का बोझ लिए बुड्ढा मोर चर रहा है। मुनगा घर की भीत के पास आरसी शीशा लिए बैठे हैं बाबा मुकुद के घानीघर के पिछवाड़े बैठा नन्हा-मुना रमेन रो रहा है। शायद रास्ता भूल गया है। या अ.ल नामक लड़की ने उसे चूम लिया है इसलिए रो रहा है। ठीक-ठीक याद नहीं आता कि वह उस दिन क्या रोया था। बचपन म आंखें बद कर चलने का अभ्यास था। अचानक वह आंखें बद कर शैशव म लौटने लगा। पृथ्वी एक बच्चे का पैदा होते देख रही है। रमेन पैदा हो रहा है। सद्यजात शिशु रमन रो रहा है।—उसने मन-ही मन सोचा, 'शैशव कितना अच्छा होता है। मैं जीवन सग्राम नहीं चाहता। मैं फिर से पैदा होना चाहता हू।

रमेन की आंखें बद थीं। गाड़ी भागी जा रही थी। अचानक धक्का लगा। उसकी आंखें खुलीं। सामने एक विशालकाय पेड़ और फुटपाथ पर सोये आदमी। उसने ब्रेक लगा। स्टियरिंग के धक्के से पजरे की एक हड्डी मट से टूट गयी। उसने अपने आप को गाली दी, 'इडियट!' फुटपाथ पर सोये आदमी जगे और फिर सो गये।

सीने में प्लस्टर लिए रमेन पलग पर लेटा पड़ा रहता और कभी-कभी मन-ही मन बोल उठता, 'इडियट!'

उस साल मां ने लल को बुला कर कहा, देश छोड़ने के बाद हमारे यहा दुर्गा पूजा नहीं हुई। इसलिए इतना अमगल हो रहा है। इस बार पूजा होगी। तुम लोग व्यवस्था करो।

मां को दिल की बीमारी थी। यह सुन कर कि नाथूराम गाडसे ने गोली मार कर गांधी जी की हत्या कर दी, मां बेहोश हो गयी थीं। हालांकि उन्हें यह भी पता नहीं

था कि महात्मा गांधी कौन थे? रमेन का इरा से विवाह, इरा का भागना और फिर रमेन का दुर्घटनाग्रस्त होना—एक एक कर मां के दिल पर चोट करता रहा। मां का खयाल था कि पिता जी की आत्मा उनसे मिलने आती है।

बड़ी धूम धाम से पूजा शुरू हुई। अष्टमी के दिन मां चुपके-चुपके ब्लेड का एक छोटा-सा टुकड़ा मुट्ठी में लिए प्रतिमा को अपना खून चढ़ाने मंडप में गयीं। रमेन के लिए उन्होंने मनौती मानी थी। मां ने अपनी छाती पर ब्लेड चलाया और गिर पड़ीं। कुल पुरोहित सतीश भारद्वाज चीख उठे। उनके आसन के निकट ही मां का घूंघट में छिपा मुंह था। रमेन के सीने में प्लास्टर चढ़ा था फिर भी उसने दोनों हाथों से मां को गोद में उठा लिया। लेकिन स्पर्शमात्र से वह समझ गया था कि मां अब संसार में नहीं हैं।

कलकत्ता उत्सव में डूबा था। प्रतिमा दर्शन के लिए रास्तों पर जन समुद्र उमड़ रहा था। रमेन मां की अरथी के पीछे-पीछे चल रहा था। भीड़ भरे रास्ते में वह खुद को बड़ा अकेला महसूस कर रहा था। राह चलते लोगों ने सत्कारवश हाथ जोड़ कर मां को प्रणाम किया था और रमेन का हृदय उनके प्रति कृतज्ञता से भर उठा था। रमणी मोहन ने उस दिन हृदयद्रावक स्वर में कीर्तन किया था। करुण स्वर में 'हरे राम, हरे कृष्ण' सुन कर राह चलते आदमी रुक जाते थे।

मां की मृत्यु के बाद रमेन अंदर और बाहर से एकदम अकेला हो गया। ऐसे ही समय पैंतालीस साल का उद्धव एक कमसिन शरणार्थी विधवा से शादी कर लज्जावश चला गया। रमेन की कुंडली लव के पास थी। वह दिन-रात कुंडली देखता और कभी कभी रमेन से कहता, 'तुम्हें सद्गुरु मिलेंगे। तुम्हारा शनि प्रबल है।'

एक दिन ललित आकर बोला, 'चलो, थोड़ा गांव घूम आयें। हम लोगों से मिलना-जुलना चाहिए। सिर्फ सिद्धांत से काम नहीं चलता।'

कई दिन वह ललित के साथ गांव-गांव घूमा। गांववालों को जुटा कर ललित भाषण देता। उसके भाषण में रमेन को कोई नयापन नहीं दीखा। एक दिन उसने ललित से कहा, 'तुम जो कुछ बोलते हो, उस पर तुम्हें स्वयं ही विश्वास नहीं है।'

'सो कैसे?'—ललित अवाक हुआ था।

'जिसे अपने आप पर सचमुच में विश्वास है, उसे इतना बोलना नहीं पड़ता। उसका एक इशारा ही काफी होता है। बाबा बायें हाथ से गड़गड़े का नल पकड़ते थे और उसमें भी उनका आंतरिक प्यार प्रकट होता था। वह किसी को विश्वास दिलाने के लिए चीखते चिल्लाते नहीं थे।

'तुम्हारे जमींदार बाबा।'—ललित के चेहरे पर व्यंग्यात्मक मुस्कान बिखर गयी थी।

क्षण भर सोच कर रमेन ने कहा था, 'मुझे विश्वास है कि बाबा यदि प्रजा से कहते कि तुम लोग अपना जमींदार चुन लो, तो प्रजा फिर से उन्हें ही जमींदार चुनती। वह सच्चे अर्थ में गणतान्त्रिक नेता थे। उनकी बात पत्थर की लकीर होती थी। वह मन वचन-कर्म से एक थे।'

ललित ने उसे समझाने की कोशिश की थी कि मनुष्य का देवता बनना कितना कठिन है।

लेकिन रमेन ने नहीं समझा था। अब वह अपने अंदर बाबा की छाया देखने लगा था। प्रजा उसमें बड़े सरकार को देखना चाहती थी।

एक दिन दोपहर को रमेन कालेज स्ट्रीट से गुजर रहा था। उसने देखा मेडिकल कालेज के सामने फुटपाथ पर एक बुड्ढा पड़ा है। ऐसा तो कलकत्ते में अक्सर देखने को मिलता है फिर भी वह करीब गया। बुड्ढे के मल मूत्र की दुर्गंध से उसे उबकाई आने लगी। इच्छा हुई भाग जाय, पर भाग न सका। उसने बुड्ढे की नाड़ी देखी। उसमें जान थी। राह चलते आदमी एक गोरा-चिट्टा आदमी को बुड्ढे के करीब देख कर रुक जाते थे? किसी ने पूछा, 'जान है भैया?'

'नहीं।'—कह कर रमेन चल पड़ा। दर्शकों के सामने बुड्ढे को अस्पताल में भर्ती करा कर वह कोई उदाहरण न रख सका। उसने महसूस किया कि वह बहुत कमजोर है।

कभी-कभी उसे इरा याद आती थी। इरा गर्भ लेकर गयी थी। यदि गर्भपात न कराया हो, तो अब तक रमेन की संतान पैदा हो गयी होगी। लेकिन वह कभी न जान सकेगी कि रमेन उसका पिता है। इरा यह बात कभी नहीं बतायेगी। उसकी संतान हारदत्त के बेटे परान को ही अपना पिता समझेगी।—यह सब सोच कर वह बड़ा बेचैन हो जाता था।

रमेन ठीक ठीक समझ नहीं पाता लेकिन उसका मन उससे कहा करता कि वह साधारण जीवन जीने के लिए पैदा नहीं हुआ है। उसका जन्म किसी विशेष उद्देश्य से हुआ है। कभी-कभी वह आधी रात को दरवाजा खोल कर दरवाजे पर सोये लव को लाँघ कर घर से निकल जाता और फिर घूम-फिर कर वापस आ जाता। घर और बाहर के बीच न जाने कौन-सी अदृश्य दीवार थी जो वह लाँघ नहीं पाता था।

लेकिन एक दिन उसने समझा कि अब जाना होगा।

लव उसे ट्रेन पर चढ़ाने हावड़ा स्टेशन गया था। विदाई के वक्त वह ज्ञानियों की तरह बोला था, 'एकदम से चले मत जाना। वापस जरूर आना। तुम्हारे अलावा हमलोगों का और कोई नहीं है।'

## अट्ठाईस

*

पलाशपुर म जितने पढ़े-लिखे लोग आय, उतना अच्छा है। पहले तो यह एकदम गवारों का गांव था। अब यहां मिल खुली है, पी० डी० ओ० आफिस है, हायर सेकेंडरी स्कूल खुला है। बसत जिंधी ने आजतक यहां सस्कृत का श्लोक नहीं सुना। अब गाव का चेहरा थोड़ा बदला है। बसत जिंधी चाहता है कि और भी पढ़े-लिखे लोग यहां आकर बसें। गांव में अच्छे आदमी रहेंगे, तो गाववालों पर अच्छा असर होगा।

इसलिए बसत जिंधी ने तुलसी को बड़े प्यार से घर दिखाया। आंगन मे ट्यूब वेल। पक्का सडास। पक्की दीवार। पक्का फर्श। टीन का छाजन। विधवा चाची मरते वक्त बसत जिंधी के नाम जमीन लिख गयी थी। १६५० में उसने मकान बनाया था। सरकारी दफ्तर को भाड़ा देने का विचार था। ब्रिज कस्ट्रक्शन के आफिसर उसके घर कुछ दिनों तक रहे भी थे। और उसके बाद जूनियर हाइ स्कूल एक छलाग में हाइ हो गया था। पूर्वी बगाल से आये शरणार्थियों की वजह से आबादी बढ़ी थी। स्कूल में जगह की कमी के कारण ऊची कक्षाओं की पढ़ाइ बसत जिंधी के मकान में होती थी। इससे वह अपने को धन्य समझता था।

पिछवाड़ा घिरा नहीं देख कर तुलसी भौंहे सिकोड़ कर बोला, 'उधर से सब कुछ दिखाइ पड़ता है न।'

बसत जिंधी हस कर बोला, 'दिखाइ पड़ता है। लेकिन देखेगा कौन? उधर तो जगल है।'

गीदड़-पीदड़ घुस सकता है।'

'घेर दूगा। आप चिंता न करें।'

पढ़ा-लिखा आदमी पलाशपुर आ रहा है। उसके लिए थोड़ा खर्च होगा और क्या!

किराया सिर्फ तीस रुपये हैं। तुलसी मन-ही मन खुश हो रहा था। वह यहां आकर रहेगा। यह मृदुला और उसका घर होगा। वह अपनी गृहस्थी का मालिक होगा। वह आज तक भैया के अधीन रहा है। अब वह स्वाधीन होगा।

तुलसी बड़ा खुश था, फिर भी बाला, 'मैं ने ता देख लिया है। एक दिन वाइफ का ले आऊगा। घर तो उसकी पसन्द से ही लिया जायेगा न।

'मां लक्ष्मी तो कलकत्ता में पली-चढ़ी है। उन्हें पसद नहीं होगा। लेकिन कलकत्ता से यहां की आबोहवा अच्छी है। साग-सब्जी ताजा मिलेगी।'

शाम को घर वापस आने पर तुलसी ने एकान्त म मृदुला को घर के बारे म बताया।

सब कुछ सुन कर मृदुला उदास स्वर म बोली' 'इस अवस्था म मैं ट्यूबवेल चला सकूगी ?'

'तुम तो नाहक घबराती हो। ट्यूब वेल मैं चलाऊगा। तुम्हारे हर काम म हाथ बटाऊगा। वहा ता मेरे हाथ मे बहुत समय रहेगा। सुबह पौने ग्यारह तक घर रहूगा फिर पौने चार तक स्कूल से घर वापस आ जाऊगा।'

उसके बाद मृदुला मुरझाये चेहरे से बाली, 'जेठ जी से कैसे कहोगे ? उनके सामने बाल सकागे न ?

तुलसी का बड़ा भाइ गभीर आदमी है। थोड़ा बुद्धू भी है। बचपन म सब उसे बुद्धू नारायण कहा करते थे। बडा ही मद बुद्धि छात्र था नारायण। लेकिन था बड़ा परिश्रमी। जिस साल हिंदुस्तान दो हिस्सा में बट कर हिंदुस्तान और पाकिस्तान बना, उसी साल उसने दाना ही देश म मैट्रिक की परीक्षा दी थी। दोनों ही देश म वह तृतीय श्रेणी से पास कर गया। और उसके बाद बैंक में किरानीगिरी करते-करते उसने बी० ए० पास किया। नोआखाली बैंक फेल होने के बाद रेल म नौकरी लगी। दूर दूर ट्रास्फर होगा, सोच कर उसने रेल की नौकरी छोडी और पश्चिम बगाल सरकार के मालगुजारी विभाग मे घुस गया। सबका कहना है कि नारायण भाग्य का धनी है। छात्र के रूप म तुलसी उससे अच्छा छात्र था। लेकिन वह है स्कूल मास्टर और नारायण है आफिसर। नाकतला म नारायण ने डेढ कट्ठा जमीन खरीदी है। अपने गभीर भैया को तुलसी पलाशपुर मे घर लेने की बात कहने का साहस नहीं कर पाता। शादी हुए सिर्फ दो महीने हुए और अलग होने की बात शुरू हो गयी। लेकिन कहना तो पडेगा ही।

तुलसी ने सोच कर जवाब दिया, 'फोन पर कहूगा।'

मृदुला हस कर बोली, 'बुद्धि की बलिहारी है।'

रात मे खाते वक्त धडकते दिल से तुलसी ने घर की बात कह डाली। आश्चर्य है, नारायण पर किसी तरह की प्रतिक्रिया नहीं हुइ। सिर्फ उसकी आखो म थोडा-सा अविश्वास उभर आया।

'कैसा घर है ?'

'अच्छा है भैया। सब अच्छा है।'

पितु आश्चर्य से बोली, 'चाची को ले जायेंगे।'

इस पर भाभी बोली, 'और नहीं तो क्या खुद चुल्हा-चक्की करेंगे?'

'बहू का ख्याल रख सकोगे न?'—नारायण बोला।

मां और भाई को देखे मुद्दत बीत गयी। पिता जी को भी आने का वक्त नहीं मिलता। कभी कभार मृदुला को बेहला जाकर सबसे मिल आने की बड़ी इच्छा होती है। कपड़े के खोल में उसका तानपूरा सोनेवाले कमरे में बेंच पर रखा होगा। बेहला का घर उसका बड़ा जाना-पहचाना है। आंखें बन्द कर भी वह इस कमरे से उस कमरे जा सकती है। पलाशपुर जाने से पहले एक बार बेहला घूम आने की इच्छा होती है। लेकिन जाय कैसे? अब तक विभु का दल उसकी ताक में है।

मृदुला ने अपनी मां को एक कार्ड लिखा कि कलकत्ता में अब भेंट मुलाकात नहीं होगी। एक बार सब को लेकर पलाशपुर आ जाओ। दो-चार दिन रहना। हवा-पानी बदल जायेगा। मेरी हालत तो जानती ही हो। सात-आठ महीने बाकी हैं। भगवान जाने क्या होगा।

रात में मृदुला गहरी नींद में सोयी और तुलसी दुश्चिन्ताओं में घिरा रहा। मृदुला का चेहरा कितना मुरझा गया है। आंखों तले काला पड़ गया है। होंठ सूख गये हैं। बचेगी न?

तुलसी ने सोचा, अब वह भिखमंगों को भीख देगा। दो-चार अच्छा काम करेगा। पवित्र रहेगा। रहना जरूरी है। कभी-कभी मृदुला को साथ ले कालीघाट, दक्षिणेश्वर और तारकेश्वर जायेगा। पलाशपुर में मृदुला को कोई काम करने नहीं देगा। वह पानी भरेगा, बिस्तर बिछायेगा, सम्भव हुआ तो एक रसोइया भी रखेगा।

एक दिन ललित अस्पताल से चेक अप करा आया। नौजवान डाक्टर ने कहा, 'सब ठीक है। अब अपना काम कीजिये। घर में बैठे रहने की जरूरत नहीं।'

पढ़ाते-पढ़ाते ललित बीच-बीच में अन्यमनस्क हो जाता है। आजकल उसके क्लास में बड़ी शांति रहती है। पहले विद्यार्थी उससे कहानियां सुनने की जिद करते थे। अब सबकी आंखें उस पर टिकी रहती हैं। कोई उसे तंग नहीं करता। शायद किसी ने कह दिया होगा कि ललित सर अब कुछ ही दिनों के मेहमान हैं।

गिरिजा हालदार कैश क्लर्क है। जालीदार काउंटर के उस पार बैठा रहता है। पहले क्लास जाते वक्त कभी-कभार ललित हालदार के सामने खड़ा हो जाता था। उसका रबर स्टाम्प लेकर दीवार पर ठप्पा मारता था या झूठमूठ में हैंड्स अप बोल

उठता था। हालदार बनावटी गुस्सा दिखाता था। लेकिन अब वह कुछ भी करे, हालदार कुछ नहीं कहता। जो जी चाहे करो। इसलिए पहले जैसा खेल नहीं जमता।

लेकिन फिर भी पुरानी स्मृतियां परछाइयों की तरह उसके साथ-साथ मंडराती रहती हैं। टीचर्स रूम की दीवारों पर महापुरुषों की दीमक लगी तस्वीरें। सुंदरी-दर्शन कुर्सी यानी जिस पर बैठ कर रास्ते पर आती-जाती युवतियों को देखा जा सकता है—अपनी जगह पड़ी है। पहले सुंदरी-दर्शन कुर्सी को लेकर ललित और विभूति बाबू में अक्सर छीना झपटी होती थी। अब उसके लिए कुर्सी छोड़ दी जाती है। लेकिन ललित बैठता नहीं।

सब उस पर दया करते हैं। उसे अच्छा नहीं लगता। वह चाह कर भी पुराने दिनों में लौट नहीं पाता।

मुकुंद बेरा का लड़का माधव आठवीं श्रेणी का छात्र है। टिफिन में वह टीचर्स रूम में चाय पहुंचा जाता है। इसलिए विद्यार्थी उसे चिढ़ाते हैं। अब वह थोड़ा बड़ा हो गया है। स्कूल की फुटबाल टीम में खेलता है। बाप अब बेटे का डांट फटकार नहीं सुनाता।—ललित यह सब बड़े गौर से देखता है।

नवीं कक्षा के हरेन को देख कर उसे एक पुराना दृश्य याद आ जाता है। हरेन को दाखिला दिलाने एक गोरा-चिट्टा आदमी गाड़ी पर आया था। ललित ने उसे पहचान लिया था। एक वक्त था, जब दोनों दोस्त थे। ललित का परिचय सुन कर वह घबराई मुस्कान में बोला था, 'तुम यहां हो, मुझे तो पता ही नहीं था।'

किसे दाखिल कराना है ?'

'घर का नौकर है। पढ़ने लिखने में रुचि है।' बोलते-बोलते लाज से उसका चेहरा लाल हो उठा।

साम्यवाद के समर्थक ललित को भी अचानक एक धक्का-सा लगा था। 'मैं तुम्हारे नौकर को पढ़ाऊंगा।' लेकिन दूसरे ही क्षण वह संभल गया था और बड़े उत्साह से बोल उठा था, 'वाह ! बहुत अच्छा। ऐसा ही होना चाहिए।'

कभी कभी संजय का फोन आता। बैयरा ललित को क्लास से बुला लाता। प्रधानाध्यापक उसे फोन थमा देते और उसकी ओर देखते रहते। हालांकि क्लास से बुलाने का नियम तो नहीं है, फिर भी उसे बुलाया जाता। प्रधानाध्यापक को जिस दृष्टि से ललित को देखना चाहिए, उस दृष्टि से वह नहीं देखते। उनकी आंखों में ललित के प्रति करुणा उभर आती।

शायद यह सब सच है। शायद यह सिर्फ उसकी कल्पना है। आजकल वह बड़ा भावुक हो उठा है।

अक्तूबर शुरू हुआ है और थोड़ी-थोड़ी सर्दी महसूस होने लगी है। शाम को कुहासा छा जाता है। कुछ ही दिनों में दुर्गा पूजा की छुट्टी हो जायगी।

एक दिन टिफिन से पहले ही तुलसी हाजिर हुआ।

'चल, पिक्चर चलें।'

'पिक्चर !'

ललित पिक्चर भूल ही गया था। पिक्चर देखे मुद्दत गुजर गयी थी।

तुलसी उदास होकर बोला, 'पलाशपुर में अग्रिम दे आया हूं। लक्ष्मीपूजा के बाद चला जाऊंगा। अब सिनेमा थियेटर देखना ही नहीं होगा।'

टिफिन में दोनों निकल पड़े। प्रधानाध्यापक ने सहर्ष अनुमति दे दी।

दोनों ने मैटिनी शो में एक पिक्चर देखी। ललित का मन खराब था। तुलसी कलकत्ता छोड़ कर जा रहा है। कोई दूर जा रहा है सुन कर ललित का मन इन दिनों हाहाकार कर उठता है। दो-चार महीने तक न सकोगे तुलसी ? तुम तो मेरी अरथी उठानेवाले थे न ? नहीं उठाओगे ? उतनी दूर तुम्हें कौन समय पर खबर देगा ?

हाल से निकल कर तुलसी बोला, 'चल, हाथीबगान चलते हैं। कपड़ा खरीदना है। साऊथ में बड़ा महंगा है यार।'

तुलसी की जेब गरम है। छः बजे का शो देखने के लिए टैक्सी से कुछ व्यक्ति उतरे और तुलसी टैक्सी में बैठ गया, 'आओ भाई।'

टैक्सी रोक कर मिठाई की दुकान में दोनों ने छेना की मिठाइयां खायीं।

तुलसी खुशी से बोला, 'जो जी चाहे भर पेट खा।'

'फांसी का खाना खिला रहे हो !'

तुलसी ने मृदुला के लिए विष्णुपुरी सिल्क की एक साड़ी खरीदी। सकोचभरी आवाज में बोला, 'मैंने आजतक उसे कुछ नहीं दिया है। शादी के बाद यह पहली दुर्गा-पूजा है इसलिए ।'

ललित को अचानक मां याद आयी। मां को कपड़ा दिये अरसा बीत गया। क्या पता, यही उसके जीवन की अंतिम पूजा हो। उसने मां के लिए काले पाड़ की एक साड़ी खरीदी। उसने एक प्रिंटेड साड़ी भी ली।

तुलसी अवाक होकर बोला, 'साड़ी किसके लिए ?'

'तेरी मृदुला के लिए। चल, आज तेरी रानी के दर्शन कर आऊं।

तुलसी खुश होकर बोला, 'चल यार, देखना क्या माल लाया है !'

ललित का नाम सुनते ही मृदुला पहले अचकचा गयी। और फिर हाथ जोड़कर बोली' 'ओ आप !'

साड़ी देते ही वह लजा गयी। हल्की फुल्की आपत्ति कर बोली, 'इसकी क्या जरूरत थी?'

पिंटु ललित के पास आ खड़ी हुई, 'चाचा, आपने कहा था सिनेमा दिखायेंगे—'

तुलसी की भाभी आकर बोली, 'आज क्या रास्ता भूल गये लाला। सुना था कि तुम बीमार हो। अब ठीक हो न?

कभी-कभी ऐसा दिन आता है। पहले जैसा स्वाभाविक, सुंदर, हल्का-फुल्का दिन। और उस समय वह अपनी व्याधि भूल जाता है।

तुलसी की पत्नी एक गिलास दूध और संदेश लेकर आयी।

ललित ने कहा, 'यह सब नहीं चलेगा। चाय लूँगा।'

दुविधा में मृदुला ने तुलसी की ओर देखा। ललित ने मीठी झिड़की सुनाई, 'चाय लूँगा देवी, चाय!'

बड़ी देर तक बातचीत होती रही। मृदुला बोली, 'पत्रापुर जायेंगे। वहां तो समय काटे नहीं कटेगा।

जायेगा। ललित जायेगा।

ललित चलने को उठ खड़ा हुआ। तुलसी बोला' 'चल तुझे छोड़ आऊं।'

ललित ने कहा, 'नहीं यार। तू आराम कर। मुझे थोड़ा नार्मल होने दे।'

वापसी में ललित को विमान की याद आयी और वह उसके दरवाजे पर जा खड़ा हुआ। उसने बाहर से ही सुना, विमान बक-बक कर रहा है। कमरे में दाखिल होकर उसने देखा, विमान की आंखें सुर्ख लाल हैं।

ललित को देखकर विमान फीकी मुस्कान में मुस्कराया। उसे बिस्तर पर बैठा कर चाय बनाने बैठा। बड़ी मुश्किल से उसने दो प्याला चाय बनायी। चाय बनाते वक्त भी वह बके जा रहा था।

ललित ने जबर्दस्ती उसे अपने पास बैठाया। उसके कंधे पर हाथ रख कर बोला, 'क्या हुआ विमान?'

'क्या कहूं? कुछ समझ में नहीं आता। देख ही रहे हो, मेरा सब कुछ बर्बाद हो रहा है, हालांकि सब कुछ अच्छा हो सकता था।'

लंबी चुप्पी के बाद वह फिर बोला, 'इस बार मुझे जरा भी इच्छा नहीं होती।'

'क्या?'

पागल होने की।'

विमान ने [illegible] लेकर [illegible] चल पड़ा। [illegible] उसने एक सिगरेट जलायी। मानव-मुक्ति के लिए उसने कितना आन्दोलन किया है! हाय! [illegible] के लिए वह कुछ नहीं कर सकता।

ललित अपने बिस्तर पर लेटा पड़ा था। चुपचाप। एक भी दिन पूरी तरह अच्छा नहीं जाता। बार-बार उसे विमान की बात याद आती थी, 'इस बार जरा भी इच्छा नहीं होती। पागल होने की। तबीयत अच्छी नहीं लगती। तबीयत से ज्यादा मन खराब लगता है।

कितना कुछ सोचता है ललित। एक दु गनाथ और दुर्गा का निमन्त्रण देता है। अब और कितना दिन! कितना दिन! उसके मरने के बाद भी सब कुछ रहेगा। घुटनों तक धोती समेट कर तुलसी स्कूल जायेगा। गाड़ी पर सवार रिनि और रिंकु के पास वापस आयेगा। शाश्वती अपने प्रेमी के साथ घूमेगी। क्या पता उसका पुराना प्रेमी आदित्य ही लौट आये। आदित्य! उसका कितना पुराना दोस्त है आदित्य! भाग गया साला। वापस आयेगा? उसके मरने से पहले आकर पुकारेगा, कहो ललित, कैसे हो?'

दरवाजे पर आकर शम्भू बोला, 'ललितदा, एक आदमी आपसे मिलने आया है।'

गली के झुटपुटे अँधेरे में उसने देखा, एक लम्बा आदमी गैस का बक्सा लिए खड़ा है।

'कौन?

'मैं रमेन हूँ ललित। तुम्हारे पास आया हूँ।'

सहसा ललित का हृदय आनन्दित हो उठा।

## उनतीस

*

ललित जानता है, जो रमेन गया था, वह वापस नहीं आया है। यह तो किसी रहस्यमय जगत का इंसान है। यह कुछ जानता है, जो ललित नहीं जानता। हाँ, यह तो वह रमेन नहीं, जो गाड़ी चलाता था, हुगली में तैरता था, फुटबाल खेलता था और पियानो पर पूर्वी बंगाल के मछुओं के गीत गाता था। यह कोई और है।

आँगन के एक कोने में फैले झुटपुटे अँधेरे में जब रमेन झुक कर हाथ मुँह धो रहा था, ललित दरवाजे पर खड़ा-खड़ा उस अँधेरे में एक दीर्घकाय मूर्ति को एकटक देख रहा था। बड़ा ही अनजान-सा लग रहा है रमेन। अब शायद इसके साथ बैठक नहीं जमेगी।

पर स्वर्ग मिलेगा। अमीरों से कहा जायेगा, दीन दुखिया को भीख दो तो स्वर्ग मिलेगा।'

रमेन धीरे स्वर म बोला, 'नहीं।'

ललित हसा, 'तुम बनाओ। मुझे छोड़ दो। चन्द दिनों का मेहमान हू। जिस किसी क्षण बुलावा आ सकता है।'

रमेन हस कर बोला, 'तुम्हें जितनी भी आयु दी जाय, तुम उतनी ही बैठकबाजी करोगे। चाय पर चाय पियोगे। लेकिन एक-न-एक दिन मरना तो होगा ही। आयु लेकर क्या करोगे ललित?'

'क्या करू गा?'—ललित हस कर बोला, 'बहुत कुछ करना है यार। दोपहर को मा जब अकेली रहती है, उस समय खिड़की के पास चौकी पर बैठ कर उसके साथ गुट्टी खेलू गा। किसी लड़की से प्यार करू गा। शादी करू गा। पहले लड़की होगी। मुन्नी को गोद में लेकर घूमू गा। और फिर बुड्ढा हो जाऊगा। बीमार पड़ू गा और फिर मर जाऊगा।'

'उससे तो यही अच्छा है।'—रमेन हस कर बोला।

क्या अच्छा है?'

यही कि तुम्हें पता है कि तुम चद दिनों के मेहमान हो। मृत्यु का समय जान जाना, सौभाग्य की बात है ललित'

'समझा नहीं।'

'बड़ी साधारण बात है। जिसे मृत्यु का पता होता है, वह सत्ताइस साल का ज्ञान सात दिन म प्राप्त करता है।'

ललित हस कर बोला, 'कौन चाहता है ज्ञान?'

रमेन गभीर स्वर म बोला, 'मृत्यु दु खदायी न हीं होती। वह तो अवश्यम्भावी है। वह तो होगी ही। हां, मृत्यु तब दु खदायी होती है, जब मनुष्य अपना कर्त्तव्य किये बिना मर जाता है। याद है ललित?'

ललित चुप रहा।

'केवल कृतघ्न ही सभ्यता की सारी सुख सुविधा का उपभोग करता है और बदले म सभ्यता को कुछ नहीं देता।'

ललित की आंखें नींद से बोझिल हो रही थीं। वह हसा और अपना सिर रमेन के सीने की ओर बढ़ा दिया। रमेन उसके बालों मे उगलियां फेरते हुए बोला, 'सो जाओ।'

सो गया ललित। बीच बीच मे जाने क्या बिजली की तरह उसे छू जाता और वह बोल उठता, 'रमेन।'

और तत्क्षण उसे शांत स्वर मे उत्तर मिलता, 'मैं यहीं हूं। तुम सोओ।'

ललित सोता है पर बीच-बीच म जग जाता है। रमेन को खोजता है और उसका उत्तर पाकर फिर सो जाता है।

सुबह उसने रमेन से पूछा, 'तुम रात म सोये नहीं?'

रमेन मुस्करा कर बोला, 'मुझे लगता था कि नींद टूटते ही तुम मुझे खोजोगे।'

ललित शर्मा कर बोला, 'और इसलिए नहीं सोये? इतनी दूर से आये हो। थकावट भी महसूस नहीं हुई?'

'मैं बहुत कम सोता हूं। इसलिए मेरा दिन तुम्हारे दिन की अपेक्षा बहुत बड़ा होता है।'

कल रात से ही मा के मन म एक सदेह घुसा है। यह जो रमेन नाम का लड़का ललित के पास आया है, कैसा आदमी है? भिखमगों जैसा रहता है। लेकिन रंग-रूप से तो बडे घर का लड़का लगता है। मुह कितना सुन्दर है! जाना-पहचाना लगता है। वैसे तो ललित ने कहा भी था, 'रमेन है। पहले अक्सर आता था।' लेकिन आजकल साफ-साफ कुछ दिखाई नहीं पड़ता। और फिर देखे भी तो मुद्दत बीत गयी।

चाहे कुछ भी हो लेकिन ललित कह रहा था कि सन्यासी है। किसी आश्रम म रहता है। यह सुन कर मन बडा छटपट करता है। यह ललित के पास क्यों आया है? ललित की मा का बड़ा डर लगता है। कहीं ललित पर जादू टोना करने तो नहीं आया। एक तो ललित यू ही आधा वैरागी है।

बड़ी रात तक दोनो बिस्तर पर पडे पड़े बातें करते रहे। ललित की मा ने सुनने की लाख कोशिश की, पर कानो म फुसफुसाहट और बीच-बीच म माचिस जलने की खस-खस के अलावा कुछ नहीं घुसी। एक तो बेचारी अपने बेटे के स्वभाव से यू ही परेशान है, उस पर यह सन्यासी छोकरा आ जुटा। यह तो वही कहावत हुई, एक तो नीम उस पर करेला चढा। पता नहीं इस छोकरे ने सारी रात ललित को क्या समझाया है?

सुबह ललित बाथरूम गया था। रमेन को अकेला पाकर बुढिया बोली, 'बेटा, ललित को थोड़ा समझाओ। घर गृहस्थी, रुपया-पैसा से उसे कोई दिलचस्पी नहीं। मैं तो कहते कहते हार गयी, शादी करने को तैयार ही नहीं होता। लड़की देखते ही आंखें झुका लेता है। इस उम्र म ऐसा होना तो अच्छा नहीं। तुम उसे शादी करने के लिए तैयार करो बेटा। मैं ने लड़की देख ली है। साक्षात लक्ष्मी है। समझाना बेटा।'

'ठीक है।'

## तास

*

इन दिनों शाश्वती को कभी-कभी अपने ऊपर बड़ा गुस्सा आता है। कैन्सर की दवा के बारे में उसने कहां पढ़ा था, किस अखबार में पढ़ा था, क्या पढ़ा था, लाख कोशिश कर भी याद नहीं कर पाती।

एक दिन अखबारों का ढेर फर्श पर उतार कर शाश्वती एक एक कर पढ़ने लगी। मां कमरे में आयी और उसे अखबारों के बीच बैठी देख कर बोली, 'क्यों री ठड्ड, दिन भर अखबार पढ़ा करता है, कभी नजर उठा कर भी नहीं देखती। आज क्या हुआ जो पूरा कमरा गंदा करके पुराने अखबार लेकर बैठी है?'

'क्या हुआ', का क्या जवाब दे शाश्वती? और जवाब देकर फायदा ही क्या होगा! इसलिए वह खीज कर बोली, 'झाड़ू दे दूंगी। तुम जाओ।'

एक दिन उसने कालीनाथ से भी पूछा था, 'अच्छा भैया, आपको याद है, एक दिन अखबार में निकला था कि कैंसर की दवा निकली है?'

'कैन्सर की दवा!'—कालीनाथ सोच कर बोला था, 'मैं ने तो नहीं देखा। निकली है क्या?'

'हां। मैं ने खुद पढ़ा है।'

'जरा खोजना तो। अखबार मिलने पर बताना। आफिस में सबको बताऊंगा। बड़ी सेन्सेशनल खबर है। किसी ने कहा तक नहीं।'

सुन कर शाश्वती को बड़ा गुस्सा आया था। यह क्या, किसी ने पढ़ा तक नहीं! तब क्या अखबार में नहीं निकला था? उसने क्या उड़ती खबर सुनी थी?

उसे संदेह तो हुआ, पर उसने हार नहीं मानी।

मुहल्ले के मन्मथ डाक्टर को शाश्वती चाचा कहा करती है। दोपहर में वह काल पर जाते हैं। उस समय डिस्पेंसरी खाली रहती है। सिर्फ कम्पाउंडर मदन बैठा-बैठा ऊंघता-रहता है। एक दिन दोपहर को शाश्वती वहां भी जा पहुंची। बैठे बैठे मेडिकल जर्नल पढ़ने की कोशिश की। कुछ भी पल्ले नहीं पड़ा। उसने मदन से

पूछा। बुड्ढे मदन ने कहा, 'अभी तक तो कोइ दवा नहीं निकली, दस बारह साल म निकल जायगी।'

शाश्वती अपने आप से बोली, मदन कुछ नहीं जानता। अगर जानता होता, तो कपाउडरी करता।

कालेज के पुस्तकालय मे डाक्टरी की किताब नहीं है। उसने सूची देख कर फिजियोलोजी की किताबें ली। एक भी अक्षर पल्ले न पडा। उसे अपनी बुद्धि पर बडा गुस्सा आया।

एक दिन वह मेडिकल कालेज पहुच गयी। कैन्सर यूनिट खोजने में कोइ परेशानी नहीं हुइ। गेट पर उसने एक बैयरा से कहा, 'मुझे डाक्टर से बात करनी है।'

बैयरा ने कहा, 'जाइये, उस कमरे म डाक्टर साहब बैठे है।'

कमरे में एक नौजवान डाक्टर बैठा था। उसने हकलाती आवाज म शाश्वती से बैठने कहा।

'अच्छा, कैंसर की एक दवा निकली है न '

'किसे हुआ है ?'

'है मेरा एक परिचित।'

'कहा हुआ है ?'

'पेट में।'

वह हस कर बोला, 'पेट म तो बहुत कुछ है। पेट मे कहा ?'

शाश्वती जितना जानती थी, बोल गयी। उसने सोचकर कहा, 'यानी गैसट्रिक कारसिनोमा। आपरेशन भी हो गया है ?'

'जी हां।'

वह होठ बिचका कर बोला, 'कोइ फायदा नही।'

शाश्वती की छाती धक धक करने लगी। कपी-कपी आवाज म बोली, 'और कोइ इलाज ?'

वह मीठी मुस्कान म बोला, 'गैसट्रिक कारसिनोमा पाच साल टिक जाय तो हम क्यार समझते हें। लेकिन पाच साल कोइ टिकता ही नहीं।'

'मैं ने सुना है, एक दवा निकली है।'

'एक क्यों, ढेर सारी दवाइयां निकली हैं। लेकिन अचूक एक भी नहीं।'

आदमी सिर्फ लम्बी-चौड़ी बातें करता है। आखिर क्या किया है आज तक ? कैन्सर की दवा तक न बना सका। छि।—शाश्वती अक्सर सोचती है और संसार को धिक्कारती है।—वायुयान बना रहा है। राकेट छोड़ रहा है। बम बना रहा है। मगल पर पहुँचने की कोशिश कर रहा है। अरे बाबा, ये सब तो बच्चों का

खेल है। धरती पर रहते हो, धरती की फिक्र करो। आदमी हो, आदमी की फिक्र करो। खुद को ज्ञानी समझते हो तो कैंसर की कोई अचूक दवा खोज निकालो। पांच साल का वक्त दिया। नहीं, पांच साल बहुत होता है। साल भर के अन्दर कैंसर की दवा खोज निकालो। अगर न निकाल सके, तो, तो तो बेचारी शाश्वती क्या सजा देगी, मार न सकी।

नौकरानी इंदु कभी-कभार ठाकुरपुकुर के एक बाबा की चर्चा करती है। बाबा सिद्ध पुरुष हैं। असाध्य से-असाध्य रोग उनकी चौखट पर कदम रखते ही रोगी को छोड़ भाग खड़ा होता है। बाबा मुर्दे को जिन्दा कर सकते हैं। शाश्वती ने एक दिन इंदु से भी पूछा, 'इंदुदी, बाबा कैंसर ठीक कर सकते हैं ?'

इंदु गर्दन टेढ़ी करके बोली, 'एकदम ठीक कर देंगे। मेरे पड़ोसी का उतना पुराना गठिया तक छूट गया। बाबा चाहें तो सब कुछ कर सकते हैं।'—कह कर इंदु ने बाबा के उद्देश्य से हाथ जोड़े।

शाश्वती ने इंदु से बाबा का पता पूछ लिया। दो-चार दिन में कितने ही बाबाओं के पते उसने लिख डाले। सब एक-से एक पहुंचे बाबा थे। अब किसके पास जाय शाश्वती।

कभी-कभी सुबह की धूप में शाश्वती के पिता बगीचे में काम करते हैं। उस समय वह उनके आसपास चुपचाप मंडराती रहती है। कभी-कभी बोलती भी है।

'बापू !'

कोई जवाब नहीं।

'कैंसर कैसे अच्छा होता है ?'

कोई जवाब नहीं।

'आदमी दवा क्यों नहीं खोज निकालता ?'

ललित के घर गये महीना बीत गया। और महीने भर बाद एक दिन समाचार पत्र के रविवासरीय पृष्ठ पर एक कविराज का लेख निकला। हिमालय की जड़ी-बूटियों के संदर्भ में एक दुर्लभ वृक्ष का उल्लेख करते हुए कविराज महोदय ने लिखा था कि इससे असाध्य कैंसर की अचूक दवा बन सकती है।

शाश्वती ने कालीनाथ से छिपाकर लेख का पन्ना वैनिटी बैग में रख लिया। और फिर थोड़ा सज संवर कर, सहेली के घर जा रही हूं—कह कर घर से निकल पड़ी।

ललित के कमरे का दरवाजा भिड़ा था। कुंडी बजाते ही दरवाजा खुला। शाश्वती ने देखा, उसके सामने एक दीर्घकाय गौरांग मूर्ति खड़ी है।

'ललित बाबू नहीं हैं ?'

'हैं, अन्दर आइये !'—शाश्वती को उसकी मुस्कान बड़ी प्यारी लगी।

ललित लेटा था। उठ कर बैठा। रमेन दरवाजे से हटा और ललित की आँखें कुछेक क्षण निर्निमेष रहीं। उसके हृदय में उथल पुथल मच गयी। मन में एक विचित्र, पर सरस अनुभूति उमड़ने लगी।

धीरे धीरे वह उठ खड़ा हुआ।

शाश्वती के मन में लेख का एक एक शब्द गूंज रहा था। वह तो केवल ललित से मिलने आयी थी, लेकिन अब ललित के सामने खड़ी शाश्वती समझ रही थी कि वह पकड़ी गयी। सब समझ रहे हैं कि शाश्वती इस वक्त इतनी दूर क्या आयी है।

जिसको जो समझना है, समझे। अब शाश्वती किसी की परवाह नहीं करती।

'खड़ी क्या हैं? अन्दर आइये'—रमेन ने फिर कहा।

शाश्वती अंदर आयी। बुझी-बुझी मुस्कान में बोली, 'कैसे हैं?'

और फिर उसकी आँखें फर्श पर जम गयीं।

शाश्वती को बैठाकर ललित चौके से मां को बुला लाया।

अब तक मां मन-ही-मन शाश्वती के लिए ही भगवान से प्रार्थना कर रही थी। जब से सन्यासी छोकरा आया है, तब से बुढ़िया का मन बेचैन है। कहीं ललित पर जादू कर दे। ललित को भी साधु न बना डाले। आधा साधु तो ललित है ही। हे भगवान! उसके कुछ करने के पहले ही शाश्वती आ जाय। बड़ी लक्ष्मी लड़की है।

भरगाल पापली हसी हस कर मां ने एक तरह से शाश्वती को अपनी गोद में बैठा लिया। मुंह कितना सूख गया है! धूप में घूमती हो न! और फिर जरा भी देरी न कर पूछ बैठी, तुम तो बाडुज्जो (बनर्जी) हो न? शाण्डिल्य गोत्र।

ललित को कैसा-कैसा न लग रहा था। बोल उठा, 'क्या हो रहा है मां।'

हाय मां! मां के लिए उसे बड़ा कष्ट होता है। मितु द्वारा अपमानित मां का चेहरा उसकी आंखों के सामने तैर जाता है। वह सोचता है, कुछ दिनों बाद मां य! अकेली कैसे रहेगी? वह तो इतना भी नहीं जानती कि ललित—उसका एकलौता ललित सदा के लिए इस संसार से विदा लेकर चला जायेगा। वह मां से कुछ कहना नहीं चाहता। बड़ा कष्ट होता है। आंखें छलछला रही हैं। उसने आंखें फेर लीं।

मां शाश्वती का पकड़ कर चौके में ले गयी। बेहद खुश है मां। चेहरे पर मुस्कान खेल रही है। इस दीन दुखिया घर में शाश्वती जैसी लक्ष्मी आने को राजी होगी? अगर हो जाय! हे भगवान! शाश्वती रानी हो जाय।

शाश्वती को बस तक छोड़ने रमेन और ललित एक साथ निकले थे।

अनवरथा रोड पर थोड़ी दूर चलने के बाद ललित हांफने लगा। कड़ाके की धूप

थी। और फिर वह तेज कम्मा चला भी था। उसकी ओर देख कर शाश्वती बोली, 'आप लोग चले जाइये। मैं तो रास्ता पहचानती हूँ। चली जाऊंगी।'

रमेन ने ललित को लौटा दिया, 'तुम जाओ। मैं छोड़ आता हूँ।'

वक्र-स्निग्ध मुस्कान मुस्करा कर ललित रुक गया। बड़ी देर तक चुपचाप खड़ा रहा और फिर आहिस्ते आहिस्ते घर की ओर चल पड़ा। पलंग पर बैठ कर उसने अखबार में छपा एक लेख पढ़ा जो शाश्वती उसके लिए छोड़ गयी थी। पढ़ कर वह हँसा।

साथ-साथ चलते-चलते एक समय अचानक रमेन ने हाथ पकड़ कर शाश्वती को सड़क के एक किनारे कर दिया। शाश्वती अचकचायी और फिर उसके मासूम चेहरे पर शर्मीली मुस्कान खेल गयी। पीछे बड़ी देर से एक गाड़ी हार्न दे रही थी। लेकिन शाश्वती सुन न पायी थी।

जब तक ललित था, तब तक उसने रमेन को अच्छी तरह देखा तक नहीं था। अब उसने देखा उसके साथ का आदमी ताड़-सा लगा है। उसके गोरे-चिट्टे शरीर से धूप फिसल कर बिखर जाती है। स्वस्थ है, सुन्दर है पर कोई तड़क भड़क नहीं। पहरावे में मामूली-सा कुरता और मामूली धोती। शायद इसे अपने सौंदर्य का ज्ञान नहीं। इसने शायद कभी आइने में अपना चेहरा भी नहीं देखा होगा। शाश्वती को यह अच्छा लगा कि उसने हाथ पकड़ कर उसे एक तरफ खींच लिया पर कुछ कहा नहीं। कोई उपदेश भी नहीं दिया। सिर्फ उसे एक तरफ खींच कर पूर्ववत् निर्विकार भाव से चलने लगा। मानो जरूरत पड़ी तो फिर हाथ पकड़ खींच लेगा और चुपचाप चलता रहेगा।

'आपने अब तक नहीं बताया कि आप संन्यासी हैं या नहीं?'

रमेन शांत स्वर में बोला, 'नहीं, मैं सन्यासी नहीं हूं।'

दांतों में होठ भींच कर शाश्वती बड़ी मोहक हंसी हंस कर बोली, 'आप सन्यासी होते, तो कितना अच्छा होता!'

'क्या अच्छा होता?'

'साधु सन्यासियों को तन्त्र-मन्त्र और जड़ी-बूटियों का ज्ञान होता है। आप सन्यासी होते, तो आपसे मैं कैंसर की दवा मांग लेती।'

रमेन मुस्कराया।

शाश्वती चिंतित स्वर में बोली, 'मुझे जहां तक याद है, मैं ने अखबार में पढ़ा था कि कैन्सर की दवा निकल गयी है। निकली है न?'

'हां, निकली है।'—रमेन ने सिर हिलाया।

शाश्वती का चेहरा प्रसन्न हो उठा। बोली, 'आपने भी पढ़ा है न?'

रमेन सोच कर बोला, 'शायद पढ़ा है।'

'निकली है।'—सहसा शाश्वती निश्चिन्त होकर बोली।

रमेन गभीर होकर बोला, 'मैं एक दवा जानता हू।'

'फिर बताइये न।'

दोनों बस स्टाप के करीब आ पहुचे थे। रमेन बोला, 'और किसी दिन बताऊगा। आपका बस स्टाप आ गया।'

'नहीं। आप अभी बताइये।'—अधीर स्वर म शाश्वती बोली, 'चलिये, उस रेस्तरा मे बैठते हैं।

रमेन दुविधा मे बोला, 'मैं रेस्तरा म कुछ खाता-पीता नहीं।'

'ठीक है, मैं चाय लूगी। आप बैठेंगे। चलिये।'

रेस्तरा में बेकार छोकरों का मजमा जमा था। कोई मुह से-सीटी बजा रहा था, तो कोइ टेबिल पीट-पीट कर ताल दे रहा था। यह सब देख कर शाश्वती फुसफुसा कर बोली, 'बड़ी गदी जगह है। चलिये कहीं और चलें।'

'सब जगह एक जैसी है। आइये।'

दोनों रेस्तरा में दाखिल हुए। एक भी ग्राहक नहीं था। जहा ऐसा मजमा होता है, वहा ग्राहकों का आना-जाना कम जाता है।

'छि किस तरह देख रहा है!'—शाश्वती फुसफुसायी।

'आप भी देखिये। डरिये मत।'

'धत्।'

रमेन सरल सुदर आखा से एकटक छोकरों को देख रहा था।

'क्या कर रहे हैं? बडे गदे लडके हैं।'—शाश्वती फुसफुसाहट म बोली।

रमेन ने उस पर ध्यान नहीं दिया। उसकी आखें छोकरों पर जमी रहीं। छोकरे उन दोनों को देख कर आपस म हस रहे थे। दबी जुबान म बातें कर रहे थे। कुछेक क्षण वे रमेन की आखो से आखें मिलाते रहे। उनम से एक बोल उठा, 'लगता है, हमें जला कर भसम कर देगा।'—सुन कर सब हस पड़े।

धीरे-धीरे ठडी लड़ाइ मे वे ठडे होते गये। और कुछेक क्षण म ही वे एकदम ठडे हो गये। सबकी आखें झुक गयीं।

रमेन शाश्वती की ओर देख कर मुस्कराया। उसके बाद बोला, 'आखो में बहुत बड़ी शक्ति है। आप यदि ऐसे छोकरों को सरल एव निर्भीक आखों से देखें, तो ये बर्दाश्त नहीं कर सकेंगे।'

'लेकिन दवा!'

'दवा और कुछ नहीं, बल्कि आपकी आखें हैं। हमारे घर में शुरू से आख की बीमारी थी। मेरे परदादा अधे थे। जन्म-सूत्र से दादा जी को भी आखों का रोग

था। जवानी में ही वह चश्मा के साथ आतिशी शीशा या दूरबीन का व्यवहार करते थे। दादा जी के दो लड़के थे, ताऊ जी और मेरे पिता जी। एक लड़की थी। तीस पार करने के पहले ही तीनों की आँखें कमजोर होने लगीं और चालीस छूते-न-छूते चौपट हो गयीं। समस्या उठ खड़ी हुई कि इतनी बड़ी जमींदारी कौन सभाले? आखिरकार दादी जी ने बागडोर सभाली। कुछ ही दिनों में वह जमींदारी चलाने लगीं। उनकी दृष्टि बड़ी तीक्ष्ण थी। वह दिन रात आँखों का व्यवहार करती थीं। इसलिए उनकी दृष्टि तीक्ष्ण हो गयी थी। सपत्ति के प्यार ने उनकी दृष्टि तीक्ष्ण बना दी थी। वह मृत्यु शय्या पर पड़ी थीं। उन्हें जलोदर हो गया था। एक पांव गैंगरीन से सड़ गया था। डाक्टरों ने जवाब दे दिया फिर भी वह दो महीने तक बिस्तर पर पड़ी रहीं। अक्सर कहा करतीं, मेरे बाद जमींदारी कौन चलायेगा? प्रजा का खयाल कौन रखेगा? दिन रात उनकी बड़ी बड़ी आँखें खुली रहतीं। क्या मजाल कोई उनकी आँखों में धूल झोंक दे। एक दिन ताई जी उनके कमरे में रखी आल्मारी खोल रही थीं कि वह बोल उठीं, 'क्या लेना है बहू?' ताई जी उत्तर भी न दे सकीं और वह चल बसीं। वह मर गयीं पर उनकी बड़ी-बड़ी आँखें आल्मारी पर जमी रहीं।

स्वभावतः कोमल हृदय शाश्वती की आँखें छलछला आयीं।

'दवा क्या है, जानती हैं? दादी जी के मरने के बाद मैं ने इस पर बहुत सोचा है। सोच सोच कर मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि विषय-सम्पत्ति के प्रति प्यार ने उन्हें काफी दिनों तक बचाये रखा था। हम भारतीय विषय-संपत्ति को तुच्छ समझते हैं। लेकिन तुच्छ वस्तु के प्रति प्यार ने भी उनकी आयु बढ़ा दी थी। प्यार में बहुत बड़ी शक्ति है। प्यार ही सबसे बड़ी दवा है।'

शाश्वती कुछेक क्षण चुप रह कर बोली, 'आप कहते हैं कि आपके दोस्त अच्छे हो जायेंगे?'

रमेन मीठी मुस्कान में बोला, 'आपका क्या खयाल है?'

गूढ़ प्रश्न? शाश्वती इसका उत्तर नहीं जानती। उसके मन की आँखों में ललित का तेज-तर्रार चेहरा उभर आया। मृत्यु-पथ का पथिक ललित। रोगी ललित। शाश्वती को प्यार करता है, पर इतना अहंकारी है कि स्वीकार नहीं करता।

रमेन के सरल सुन्दर मुंह की ओर देख कर शाश्वती के होठ थरथराये। सहसा वह अश्रुसिक्त स्वर में बोल उठी, 'आप उसे बचा लीजिये।

इस विशालकाय आदमी के सामने यह बोलते हुए उसे थोड़ी भी शर्म नहीं आयी।

रमेन ने एक गहरी सांस ली।

चाय ठडी हा रही थी। दो-तीन चुस्किया लेकर वह उठ खड़ी हुइ, 'चलिये, बड़ी देर हो गयी।

रास्ते पर चलते-चलते शाश्वती सहसा बोल उठी, 'आप एक बात किसी से नहीं कहेंगे।'

'कौन-सी बात।'

'मैं उसे प्यार करती हू।'—लाज की हल्की-फुल्की लाली से शाश्वती का मुह थोड़ा लाल हो उठा।

'नहीं कहूगा।'—रमेन मुस्कराया।

वे बस अड्डे पर भीड़ से अलग-थलग आ खड़े हुए। कुछेक क्षण दोनों के बीच चुप्पी रही, फिर वह बोल उठी, 'बता दीजियेगा।'

'क्या?'

'मैं उससे प्यार करती हू।'—लज्जा से बेचारी का सिर एकदम झुक गया।

कुछेक क्षण की चुप्पी के बाद शाश्वती सकोच की मूर्त्ति बन कर बोली, 'मुझे यदि वह प्यार करे तो शायद जैसा आपने अभी-अभी कहा—उसकी आयु बढ सकती है।'

मुस्कराते हुए रमेन ने सिर हिलाया, 'नहीं। लड़कियो का प्यार बड़ा सीधा-सादा होता है। इससे कोई फायदा नहीं। लडकियों के प्रति अधा प्यार मनुष्य में मृत्यु प्रेम जगाता है।'

'क्या कहते हैं?'

प्रेम की कहानी, कविता या उपन्यास, कुछ भी उठा कर देख लें, मृत्यु की चर्चा होगी-ही होगी। किसी भी प्रेमी-प्रेमिका की बातचीत सुनिये, आप निश्चित रूप से मरने की बात सुनेंगी। अगर मैं मर जाऊ तो तुम क्या करोगे? मैं आत्म-हत्या कर लूगा। हम साथ जियेंगे, साथ मरेंगे।—ऐसे प्रेम से कहीं आयु बढती है, जिसमे पग पग पर मृत्यु चेतना काम करती हो?'

'तब?'

उत्तर तो उसके मुह मे था, पर दिया नहीं। 'ईश्वर' शब्द का उच्चारण विशेष समय की अपेक्षा रखता है, अन्यथा वह मनुष्य के मनमे कोइ तरग पैदा नहीं करता। इसलिए वह कुछ बोला नहीं, सिर्फ मुस्कराया।

'अच्छा, आपको कभी आखों की बीमारी हुइ?'—शाश्वती अचानक पूछ बैठी।

'नहीं।'—कह कर वह क्षण भर चुप रहा फिर शरीर बच्चों जैसी मुस्कान मे बोला, 'लेकिन एकबार मैं थोडी देर के लिए अधा हो गया था। आपकी बस।'

'बड़ी भीड़ है।'

क्षण भर सोच कर रमेन बोला, 'चलिये, रासबिहारी तक आपको छोड़ आऊ।'

शाश्वती भी यही चाहती थी। यह तो उसे सुनना ही है कि उसके साथ का

नया-नया परिचित आदमी यहाँ पर आया हुआ था ?' बोली, 'चलिये, वहाँ मुझे यादवपुर के लिए बस भी खाली मिलेगी।'

बड़ी देर तक दोनों चुपचाप चलते रहे। एक समय अचानक शाश्वती बोल उठी, 'अंधा होने की बात आपने बतायी नहीं।'

रमेन मोड़ कर हंसी कर बोला, 'यह बचपन की एक घटना है। मैं सुन्दर-सुन्दर फुटबाल लेकर मैदान में दौड़ा करता था। जब मैं मैदान के पास पहुंच, चक्कर लगा लेता था, तब भी पढ़ती थी। एक दिन अचानक मेरी आँखों के सामने अंधेरा छा गया। हालांकि आँखों में पट्टी बांध कर निशाना लगा सकता था। आँखों में पट्टी बांध कर चल फिर सकता था। लेकिन उस दिन मैं बेहद घबरा गया। मैं अपना हाथ तक नहीं देख सका। मुझे लगा कि मैं अंधा हो गया हूं। उससे पहले मैं ने भगवान को कभी नहीं पुकारा था। भगवान के संबंध में कुछ जानता भी नहीं था। दरअसल कभी जानने की जरूरत ही महसूस नहीं हुई थी। आँखें बंद कर चल सकता था। तेरह साल की उम्र में गाड़ी चला सकता था। यानी हर परिस्थिति के लिए मैं ने खुद को तैयार किया था फिर भगवान की जरूरत ही क्या थी। लेकिन उस दिन जब मैं अंधा हो गया, मेरा आकुल मन भगवान को पुकारने लगा, 'भगवान मेरी आँखें मुझे वापस दे दो।' और अचानक मेरे मन की आँखों में एक विशाल चेहरा उभर आया। वह दादा जी का चेहरा था। मैं ने आँखें खोलीं। आश्चर्य! मैं सब कुछ देख सकता था।'

'सच ?'—शाश्वती की आँखों में आश्चर्य उभर आया।

रमेन धीरी हंसी हंस कर बोला, 'हां।'

'आपने यह बात और किसी से नहीं कही ?'

'हां, दादा जी से कही थी। सुन कर उन्होंने कहा था, 'रमेन भगवान तो घट-घट वासी है। मनुष्य विश्वास नहीं करता इसलिए उसे खोजता भी नहीं। लेकिन तुम उसे खोजो। तुम उसकी वाणी मनुष्य को सुनाना। चाहो कि तुम उसके पास जाओगे। अगर खोजना चाहोगे, तो एक-न-एक दिन कोई तुम्हें उसके पास ले जायेगा।'

'आपने क्या उसे खोजने की कोशिश की है ?'—शाश्वती ने पूछा।

रमेन ने इसका उत्तर नहीं दिया। बोला, 'हम रासबिहारी आ गये।'

शाश्वती का मन खराब हो गया। बोली, 'आपको मेरी वजह से बड़ी परेशानी हुई।'

रमेन मुस्करा कर बोला, 'कतई नहीं।'

यादवपुर की एक दो-तल्ला बस आ खड़ी हुई।

## एकतोम

*

आजकल संजय को रात में बड़ी गहरी नींद आती है, पर तृप्ति नहीं मिलती। कभी-कभी उठ कर देखता, सात-साढ़े सात बज गया। ऐसा तो पहले कभी नहीं होता था। वह तो छः बजे के अंदर ही बिस्तर छोड़ देता था। उसका हर काम समय पर होता था।

कभी-कभी वह खीज कर रिनि से कहता, 'मुझे जगाया क्यों नहीं ?'

'जगाया तो था, पर तुम जगो तब न। तुम तो जग कर भी सो जाते हो।'

पहले वह बिस्तर छोड़ता था और और आलस्य भाग खड़ा होता था। लेकिन आजकल ऐसा नहीं होता। शायद बुढ़ापा आ गया।

संजय आफिस के लिए निकल पड़ा। मोड़ पर पान सिगरेट की दुकान के सामने उसने गाड़ी रोकी। दुकानदार एक पैकेट सिगरेट दे गया। गाड़ी चल पड़ी।

बस के रास्ते पर उसने देखा, बस स्टाप पर एक लड़की खड़ी है। जाना-पहचाना चेहरा है। एक समय था जब दोनों एक ही एक्सप्रेस बस पर आफिस जाते थे। गाड़ी रोक कर संजय ने उसे आवाज दी। आँखें मिलीं और संजय मुस्करा कर बोला, 'आइये, आपको आफिस छोड़ दूं।'

लड़की अवाक हुई। संजय आज पहली बार उससे बोला। दोनों एक ही बस पर जाते थे पर कभी कोई बात न हुई। पहले संजय उसकी ओर देखता था और वह आँखें झुका लेती थी। कुछ दिनों तक ऐसा ही चलता रहा और फिर आँखें मिलाने लगी। लेकिन कोई बातचीत नहीं। चाल ढाल एकदम प्यार जैसा पर प्यार नहीं।

बहुत दिनों तक उसने संजय को नहीं देखा था। आज गाड़ी पर देख कर आश्चर्यित हुई। महाशय को कभी उससे बात करने का साहस नहीं हुआ, पर आज गाड़ी होने की वजह से शायद साहस बढ़ गया है। बोली, 'आप जाइये। मैं बस पर आऊंगी।'

'अरे आइये भी तो।'

बायें हाथ से सामने का दरवाजा खोल कर वह मुस्कराया।

मनभावन शरद्। प्यारी प्यारी धूप। सुहावनी धूप म वह वासती साड़ी म सिमटी खड़ी है। सुडौल, सुन्दर मुह। नाक म नगीनेदार लौंग। दायें हाथ में सफद बैग। बायें हाथ म धूप का चश्मा।

लड़की गाड़ी म बैठी। गाड़ी चल पड़ी। दोना चुप। सजय धीरे-धीरे गति बढाता रहा। कुछेक क्षण बाद लड़की को चुप्पी खलने लगी। एक पलक उसे देख कर लड़की मन-ही-मन बोली, 'आज तक कहां थे? कितना खाजा है तुम्हें।'

ट्राफिक की लाल बत्ती देख कर सजय ने गाड़ी रोकी। सिगरेट जलाते-जलाते उसने एक बार लड़की की ओर देखा। उसके शरीर या मुह की ओर नहीं, सिर्फ उसकी माग की ओर। सिंदूर का कोइ चिह्न नहीं। खुद को छिपाती तो नहीं है। होठों पर हल्की लिपस्टिक। कपाल पर बिंदी तक नहीं। सजय की समझ में कुछ नहीं आता। *आजकल बगाली लड़कियां जन-साधारण को धोखा देना सीख गयी हैं।*
'आपकी आफिस कहां है?'—सजय ने पूछा।

'यू सेक्रेटेरियट के पास। मैक्कारियन।'

मुसीबत है। न्यूसेक्रेटेरियट तक जाकर फिर पार्क स्ट्रीट वापस आना है। एक तो यू ही देर हो गयी है। सजय ने घड़ी देखी, अब भी पद्रह मिनट बाकी है। लेकिन इतने से होगा नहीं। आज तक वह कभी दफ्तर देर से नहीं पहुचा। अगर देर हुई तो आज पहली बार होगी। इस लड़की के कारण ही देर होगी। और फिर आज तो वह उठा भी सात बजे है। समय नहीं था, इसलिए ब्रश भी ठीक से नहीं कर सका। गाल मे जहा-तहा दाढी भी रह गयी। उसने बस यू ही पूछ लिया, 'नौकरी करती हैं?'

'हा।'

'किस डिपार्टमट मे?'

'पब्लिसिटी।'

'मुझे तो एकदम भूल गयी होगी?'

लड़की शायद शर्मा गयी।

हाजरा मोड पार कर सजय ने गति बढा दी। गाड़ी दौड़ने लगी।

'गाड़ी खरीदी है?'

'हां।'

'तब तो आराम है। बस म तो दिन-दिन भीड बढती जा रही है।'

सजय मुस्करा कर बोला, 'जब गाड़ी नहीं थी, तब कभी लेट नहीं हुई। लगता है, *आज पहली बार आफिस लेट पहुंचूगा।*'

'बड़ी अच्छी गाडी है।'

ले देकर गाड़ी क्या ? मैं क्या कुछ भी नहीं ? मुझ से क्या गाड़ी कीमती है ? क्यों नहीं मुझे उस तरह देख रही है जिस तरह बस की भीड़ में विह्वल आंखों से देखा करती थी ?—सजय मन-ही-मन खीज उठा ।

'कहां रहती हैं ?'

'पंडितिया । आप ?'

हिंदुस्तान पार्क ।

लड़की फिर सकोच से बोली, 'अकेले ।'

रहस्यमयी मुस्कान मुस्करा कर सजय बोला, 'नहीं । मेरे आदमी हैं ।'

लड़की समझ न सकी । सजय ने उसे सोचने के लिए छोड़ दिया । वह खुद नहीं बतायेगा कि उसके साथ उसकी रिनि है, उसका पिकड् है । दिन भर सोचती रहे । मैं क्यों बताऊंगा ? तुम लोग सिंदूर क्यों छिपाती हो ? जनसाधारण को धोखा क्यों देती हो ? रिनि भी सिंदूर नहीं लगाती । आखिर ऐसा क्यों करती हो ?

उसने घड़ी देखी । लड़की को गाड़ी पर बैठाना ठीक नहीं हुआ । सिर्फ दस मिनट बाकी है । आज आफिस में लेट होगी ही । उसने क्यों उसे गाड़ी पर बैठाया ? हां, उसने क्या बैठाया ? आखिर वह चाहता क्या है ? अनजान लड़कियों का हम सिर्फ एक ही व्यवहार जानते हैं । सिर्फ एक ही, समझी न । तुम्हें गाड़ी पर क्या बैठाया है, जरा सोच कर देखो । सब कुछ समझ में आ जायेगा । मैं रोज बस स्टाप पर गाड़ी रोक कर तुम्हें बुलाऊंगा । तुम मेरी बगल में आ बैठोगी । और फिर । मैं बड़ा चरित्रहीन हूं, समझी न । लेकिन एक वक्त था जब मेरे पास तीन चीज थीं—सच्चाई, ईमानदारी, और कर्मठता । दो तो कब की विदा ले गयीं । रह गयी एक । वह भी कल तक थी, आज दगा दे गयी । कल तक मैं कर्मठ था । हर काम वक्त पर करता था । लेकिन आज पहली बार दफ्तर में लेट होगी । कर्मठता मुझ से विदा ले रही है । और क्या चाहिए । हुर्रे

आ गया । मैक्फारियन का दफ्तर दीख रहा है । कल फिर मिलेंगे । पता नहीं कब गार्ड सीटी बजा देगा और प्लेटफार्म पर गठरी पड़ी रह जायेगी । इससे अच्छा है कि हम मिलें, बार-बार मिलें ।

दोपहर में सजय ने मैक्फारियन के मुखर्जी को फोन किया । पुराना परिचय है । 'आपकी पब्लिसिटी में एक लड़की है । नाक में लौंग ।

'ओ, मिस दास गुप्त ।'

'मिस ! आर यू स्योर कि मिस है '

मुखर्जी हसा, 'क्या बात है ?'

'बस, यू ही जानना चाहता था कि सचमुच में मिस है या नहीं ?'

'कोई फायदा नहीं। उसके सैंकड़ा भक्त हैं।'

'मेरा एक साला इंग्लैंड से इंजीनियर बन कर आया है। उसी के लिए सोच रहा हूं।'

मुखर्जी मजाक छोड़ कर गंभीर हुआ, 'लड़की अच्छी है, फिर भी खोज-खबर लेकर परसों बताऊंगा।'

'परसों क्या? कल—कल ही बताइये न।'

'कल बंगाल बंद है।'

'ओ, ठीक है। तब परसों बता रहे हैं?'

'श्योर।'

संजय ने फोन रख दिया।

अब लड़की को नाम लेकर पुकारेगा। मुखर्जी जो-जो बतायेगा, वह उस लड़की से कहेगा। वह हैरान होगी। खुश भी होगी। सोचेगी, संजय के लिए वह कितना महत्त्वपूर्ण है। एक लड़की को बर्बाद करना कितना आसान है।

आज कुछ काम करने की इच्छा नहीं होती। परसों से दो आदमी भुगतान के लिए चक्कर मार रहे हैं। संजय को सिर्फ दस्तखत करना है। लेकिन उसने नहीं किया। बोला, 'परसों आइये।'

आज उसे प्रोटक्शन देखने हावड़ा जाना था। इस काम पर उसने ऊपरवाले से कह दिया, परसों जायेगा। बरसों बाद आज उसे दोपहर में सोने की इच्छा हो रही है।

बार-बार उसकी आंखों के सामने नाक में लौंग पहना एक चेहरा उभर आता है। स्त्रियों के अंदर कुछ-न-कुछ है जो पुरुष समझ नहीं पाता। कपड़ों के अंदर जो कुछ है, वही सब कुछ नहीं है। अगर ऐसा होता, तो कोई भी स्त्रियों के प्रति इतना लालायित न होता। रिनि क्या कुछ कम दे सकती है? उसमें बहुत कुछ है जो उसने उसे अब तक नहीं दिया। जब वह पिन्टू को प्यार करती है, उसके चेहरे पर मातृत्व फूट पड़ता है। तब क्या मातृत्व ही स्त्रियों का रहस्य है? लगता है सृष्टि के आदिकाल से ही स्त्री प्रकृति के साथ मिल कर पुरुषों के विरुद्ध षड्यंत्र करती रही है। वह पुरुषों को सिर्फ अपना शरीर देती है और छिपा रखती है कोई मूल्यवान वस्तु। यही कारण है कि पुरुष स्त्री के शरीर को समझता है, स्त्री को नहीं। परिणामस्वरूप वह अतृप्त रह जाता है। जिस तरह संजय को रिनि का शरीर मिला है पर रिनि अब तक नहीं मिली। यह उसकी अतृप्ति ही है कि आज वह आफिस का काम भूल कर मैस्कारियन की मिस दास गुप्त के प्रति आकर्षित हो उठा है। तृप्ति। मिस दास गुप्त क्या उसे तृप्त कर सकेगी? नहीं। तृप्ति तो कभी नहीं मिलेगी। वह उसे शरीर दे सकती है, तृप्ति नहीं। वह रिनि की तरह रहस्य बनी रहेगी। पुरुष सैंकड़ों स्त्रियों

कपाल दक जाता था। सत्तर-अस्सी मील की स्पीड से गाड़ी चलाता और बीच-बीच में मुस्कराता हुआ पलट कर दोस्तों को देखता, कौन कितना डर रहा है?

'गाड़ी बेच डाली?'-गाड़ी चलाते-चलाते सजय ने पूछा।

'नहीं। कुछ भी नहीं बेचा। सब यहीं पड़ा था।'

उसने सुना है, काशीपुर वाला रमेन का मकान शरणार्थियों ने दखल कर लिया है। आज एक छोटा सा घर बनाना कितना कठिन है। लेकिन रमेन को जरा भी दुख नहीं। सब कुछ गवा कर भी वह कितनी प्यारी मुस्कान में मुस्कराता है। क्या इसे ही सन्यास कहते हैं? खेल के मैदान से खेलते खेलते भाग गया, इसलिए वह सन्यासी है? उसने एक नजर रमेन पर डाली। उसके चेहरे पर वह कुछ भी न देख सका। वहां सिर्फ तृप्ति थी, शान्ति थी और शायद थोड़ी थोड़ी उदासी थी। तुम ठगे तो नहीं रमेन? तुम्हारे पास सब कुछ था और मैं फुटपाथ का आदमी था। तुम सब कुछ छोड़ कर चले गये और मुझे कुछ पाने के लिए एड़ी-चोटी का पसीना एक करना पड़ा।

सहसा सजय ने फुसफुसा कर पूछा, 'क्या मिला?'

'अय! कुछ नहीं।'

कुछेक क्षण की चुप्पी के बाद सजय बोला, 'मेरे पास कुछ दिन रहोगे रमेन?'

'क्या?'

'तुम से कुछ सीख लेता।'

'क्या?'

आंखें बन्द कर चलना। अस्सी-नब्बे मील की स्पीड से गाड़ी चलाना। हिरन की तरह दौड़ना। सब सीख लेता। और यह भी सीख लेता कि किस तरह सब कुछ छोड़ कर जाया जाता है।

रमेन! नाम सुन कर रिनि अवाक हुई। सजय से उसने न जाने कितनी बार रमेन के बारे में सुना है। तब यह वही रमेन है। पत्नी के भाग जाने पर जो सन्यासी हो गया था! कौन ऐसी स्त्री है जो ऐसे सुन्दर, सरल पति को छोड़ कर भाग जाय!

कुछेक क्षण किंकर्त्तव्यविमूढ़-सी वह रमेन को देखती रही, फिर सभल कर बोली आप के दोस्त अक्सर आपकी चर्चा किया करते हैं। आप को देखने की बड़ी इच्छा होती थी। भगवान से मनाती थी कि आप वापस आकर फिर से अपनी गृहस्थी बसायें।

रमेन सिर्फ शांत, शिष्ट, सरल मुस्कान में मुस्कराता रहा।

सजय पिकू को ले आया, 'मिलो, आप हैं पिकू महाराज। मुझ से हुजूर को बड़ी चिढ़ है। मौका मिलते ही मुक्की कर डालते हैं।'

सजय और रिनि ने उसे घर दिखाया। उनकी गोद में पिकू हंसता रहा।

एक कमरा दिखा कर संजय बोला, 'हाल ही में यह कमरा किराये पर लिया है। सोचा था स्टडी बनाऊंगा। फर्नीचर का आर्डर भी दे दिया था। लेकिन एक दिन सोच कर देखा कि मैं अगर स्टडी बनाऊं तो दोस्त मजाक उड़ायेंगे। कमरा यूं ही पड़ा है। तुम रहना चाहो तो मजे में रह सकोगे। जबतक जी चाहे रह सकते हो। रहोगे रमेन ?

'रह जाइये न।'—रिनि मीठी आवाज में बोली।

रमेन सिर्फ मुस्कराया।

रिनि ने पूरियां तलीं। प्लेट में मिठाइयां सजायीं। मट्ठे का शर्बत बनाया। रमेन ने सिर्फ नाम के लिए खाया। बोला, 'अच्छा खाना खाये अरसा बीत गया। अब यह सब पचेगा नहीं।

सुनकर रिनि की आंखें छलछला आयीं। बोली, 'आप कहां गये थे ?'

रमेन मुस्कान में बोला, 'किसी ने बुलाया था।'

'कौन ?'

कुछेक क्षण चुप रहकर वह बोला, 'है एक आदमी। एक ऐसा आदमी जिसने संसार को प्यार किया था।

बोलते-बोलते वह आत्मविस्मृत हो उठा और फिर सहसा चुप हो गया। अभी समय नहीं आया। समय की प्रतीक्षा करनी होगी।

संजय के चेहरे पर अविश्वास की हंसी फैल गयी। लेकिन रिनि सुनने को आतुर हो उठी, 'चुप क्या हो गये ? कहिये न।'

रमेन मुस्कराया।

रमन की गोद में ही पिन्टू सो गया था। पिन्टू को लेते वक्त रिनि बोली, 'आप आशीर्वाद दीजिये। हमारा एक ही बच्चा है। आप आशीर्वाद दीजिये कि यह दीर्घायु हो।

## बत्तीस

*

आज बंगाल बंद है।

एक पहर दिन चढ़ने पर बिभु सोकर उठा। और फिर नया टेरीलीन शर्ट, टेरीकाटन पैंट और भारी सोल का जूता पहन कर घर से निकल पड़ा। कलकत्ता के गुंडा में अब बिभु का नाम चमकने लगा है। आदिल की दुकान में उसके वापस आने की खबर फैल गयी है। बिभु दुर्गापुर में कामयाब हुआ है। हर किस्म की कामयाबी में एक किस्म की खुशी होती है।

आखों में धूप का चश्मा लगाये बिभु बादशाही चाल में चल रहा है। दायें-बायें उसके चमचे चल रहे हैं।

आदिल अब बिभु की बड़ी इज्जत करता है। बिभु दा और उसके चमचों को उसने अपनी दुकान की स्पेशल चाय पिलायी। एक बार नहीं दो-दो बार।

'कितना?' सिगरेट का लम्बा कश खींच कर बिभु ने पूछा।

आदिल ने कितना बताया, उसने सुना तक नहीं। पर्स से पचास रुपये का नोट निकाल कर यूं फेंका जैसे रद्दी कागज। 'क्यों रे, आज किस बात की हड़ताल है?'

'खाद्य समस्या को लेकर है गुरु। कम्युनिस्टों ने किया है'—एक चमचे ने कहा। उसने पूरी बात भी नहीं सुनी। अचानक उसे याद आया कि हड़ताल फड़ताल किये मुद्दत बीत गयी। लेकिन अब भी जब हड़ताल होती है या जुलूस निकलता है, तो उसके तन मन में एक अजीब-सी फुर्ती पैदा हो जाती है।

मुहल्ले का हरिश एक पल्ला खोल कर चोरी छिपे सिगरेट बेच रहा है। दो-चार ग्राहक खड़े हैं। बिभु अपना दलबल लिए पहुंचा।

'बंद करो।'

हरिश डर कर बोला, 'बंद ही तो है सिर्फ जाने पहचाने को दे रहा हूं।'

'नहीं। बंद का मतलब एकदम बंद।

'देश को खाना नहीं मिलता और साला पैसा लूट रहा है। बंद कर।'—बिभु आगे बढ़ा। चमचे चल पड़े।

लड़के सड़क पर फुटबाल खेल रहे ह। गलिया म क्रिकेट चल रहा है। खेलने दो। खेल कूद से कोई नुकसान नहीं। लेकिन पकौड़ी की दुकान क्यों खुली है? मिठाइ की दुकान के अन्दर से जलेबी छनने की गध आ रही है न? बद। एकदम बद। देश को खाना नहीं मिलता।

बिभु का शरीर गरमा जाता है। बद। आज सब बद।

दुर्गापुर का आदमी किस पार्टी का था। क्या पता? इतना थोड़े उन लोगों ने बताया था। लेकिन वह जानता है कि इसके पीछे राजनीति है। टालीगज के सचिया ने उसे यह केस दिया था। कहा था, 'तू जा। नया उठ रहा है। हाथ पकेगा?' शायद उसके घर वाले रो रहे हैं। उन्हे क्या पता कि बिभु कितना खतरनाक बम बनाता है। बम तो उसके हाथ मे भी फट सकता है। बम तो पालतू कुत्ता नहीं, जो मालिक को नहीं काटेगा। परसों उस लबे आदमी ने कहा था कि उसे देखने से ऐसा लगता है कि उसका अपना कोइ मर गया है। हकीकत तो वह समझ ही गया था, सिर्फ घुमाकर बात की थी। वह जानता है। वह निश्चित रूप से कुछ जानता है। परसो का लबू उसे देखते ही समझ गया था कि वह किसी की हत्या करके आया है। नहीं, दुर्गापुर का वह आदमी उसका अपना कोइ नहीं था। वह तो सिर्फ उसका एक केस था। उसके बारे म तो वह अब आ तक नहीं जानता। वह उसके हाथा मर गया, इसका उस जरा भी दु ख नहीं। अगर बिभु फौज म हाता, तो न जाने उसके हाथा कितनों की जान जाती। यह काम भी तो कुछ-कुछ वसा ही है। नोट लेकर आदमी मारना। फिर दु ख क्यों! अपने नजरिये से बिभु भी फौजी है। सिर्फ एक बात उसे परेशान कर रही है। दोनो केस करते वक्त उसकी आंखा के सामने बचपन का वह दृश्य क्या सजीव हा उठा? लबी लाठी लिए एक मुसलमान उसे आवाज दे रहा है, भाग मुन्ने, भाग बिभु को एक गेहुअन दौड़ा रहा है। एक लाठी गेहुअन पर पड़ी और वेटा चित। कौन है वह मुसलमान? उसने क्या उसे दाना केस म सतर्क किया?

सोचते-सोचते बिभु का दिमाग भन्ना उठा। बद आज एकदम बद। देश को खाना नहीं मिलता।

चलते-चलते बिभु ने देखा, बठक म मृदुला का बाप आराम कुर्सी पर बैठा है। आजकल उस पर नजर पड़ते ही बेचारा सिकुड़ जाता है। होठ थरथराने लगते हैं। शायद कहता हो, 'मुझे मत मारना। मुझे मत मारना' कुछ ही दिनों म और बुड्ढा हो गया है मृदुला का बाप।

दुश्चिता। मृदुला की शादी का पता चलने पर बिभु और उसके चमचा ने उसे बड़ा डराया धमकाया था। बुड्ढे ने उन लोगों के पाव पकड़े थे। मृदुला का छोटा भाइ

डर-डर कर रास्ता चलता है। बिभु का काइ चेला मिलते ही बेचारे का चेहरा सफेद हो जाता है। दिन-रात उनके घर की खिड़कियाँ बंद रहती हैं। शादी के बाद मृदुला घर वापस नहीं आयी। कब तक छिपती रहेगी? एक-न-एक दिन बिभु के जाल में वह फँसेगी ही फँसेगी।

कुछेक क्षण बिभु दल बल के साथ मृदुला के घर के सामने खड़ा रहा और फिर हिकारत की हँसी हँस कर आगे बढ़ गया। सामने से एक पुलिस-वैन गुजर गयी। बिभु ने एक पत्थर उठाकर दे मारा, भाग साला भाग, हरामी का बच्चा भाग। आज रास्ते पर एक भी गाड़ी नहीं चलेगी। बंद, सब कुछ बंद।

बिभु कान के पास फुसफुसाया, 'भभक मत कर। चारों तरफ गंध फैल जायेगी।

हाँ, बिभु जानता है कि उसकी गंध फैलते देर न लगेगी। खून की गंध दूर-दूर तक पहुँच जाती है। सारी जिंदगी अंग अंग से चिपकी रहती है।

लेकिन बीच-बीच में उसका खून गरम हो जाता है। बरबाद कर दो, सब कुछ बरबाद कर दो। बड़े आदमियों के घर कितना सुन्दर परदा फरफड़ाता रहता है। न्यू मार्केट में सेब जैसी कितनी युवतियाँ मंडराती रहती हैं। नंदी बाबू का एलसिशियन गमले में गेहूँ और मांस का शोरबा चपर-चपर खाता है। शीततापनियंत्रित कमरे में अगरवाला कितनी प्यारी नींद सोता है। उड़ा दो बम मार कर सबको उड़ा दो। छोकरियों को उठा लाओ। फुटपाथ पर सोए भिखमंगों को महलों में सुला दो। बिभु की इच्छा होती है, वह सुभाष बोस बनकर भाग जाए। अस्त्रागार लूट ले। वंदे मातरम गाता हुआ फाँसी के फंदे पर झूल जाए। लेकिन मुसीबत तो यह है कि बिभु को कहीं दुश्मन ही दिखायी नहीं देता। अंग्रेजों के जमाने में हिसाब बड़ा सीधा था। दुश्मन तलाशने की कोई जरूरत ही नहीं थी। अगर वह उन दिनों रहता, तो बड़ी आसानी से हीरो बन जाता। हाँ, कभी-कभार इच्छा होती है कि दो-चार मजिस्ट्रेट को बम से उड़ा दे, दो चार नेताओं को चाकू भोंक दे। लेकिन बिभु जानता है, इससे कोई फायदा नहीं। मजिस्ट्रेट को मारने से कोई उसकी प्रशंसा नहीं करेगा। नेताओं को मारेगा तो जनता लतिया कर उसे मार डालेगी। तब क्या करे बिभु? अब न खुदीराम बनना आसान है और न सुभाष। बचपन में वंदे मातरम का नारा लगाता तो पुलिस दौड़ाती थी, लेकिन आज तो हालात ही बदल गये हैं। आज वंदे मातरम का नारा लगाओ तो लोग भेड़ों की तरह टुकुर टुकुर देखेंगे और अपनी-अपनी राह ले लेंगे।

लेकिन बिभु क्या करे? सब कुछ जानते हुए भी उसका मन कुछ कर दिखाने को बेताब हो उठा है। उसने ईंट का एक टुकड़ा उठाया और मिहिर बाबू के बाथरूम की खिड़की पर दे मारा। खिड़की का शीशा फूट गया। 'कौन? कौन है?'—

कोइ बरामदे पर दौड़ आया। विभु दौड कर एक गली मे घुस गया। दानों हाथ उठाकर चिल्ला उठा, 'बद करो। आज सब कुछ बद रहेगा। देश को खाना नहीं मिलता। बद। आज बगाल बद।'

विभु दौड़ा-दौड़ा आया और फुसफुसाहट म बोला, 'तू कम्यूनिस्ट है क्या? हड़ताल है तो तेरा क्या?'

'मैं। मैं।'—विभु ठीक-ठीक जवाब नहीं दे सका। लेकिन उसके अन्दर अचानक कुछ उबल उठा।

'झभट मत कर। तुझे हड़ताल-फड़ताल म टाग अड़ाने की कोई जरूरत नहीं। तेरी जेब गरम है। तेरे बाप के पास पैसा है

अरे। बापू को तो वह एकदम भूल ही गया था। तीन-चार गायों के दूध में मिल्क पाउडर और सोयाबीन मिलाकर बेचता है बापू। टालीगज नाला के उस पार बापू की मिठाइ की दुकान है। धीरे-धीरे घर की स्थिति सुधार ली है बापू ने।

अच्छा बापू को मार कर शहीद हो सकूगा क्या? धत्। ऐसा भी कभी होता है। जो सुनेगा वही उस पर थूकेगा।

नहीं, अब दुश्मन पहचानना आसान नहीं। सब सबके दुश्मन हैं। अब आदमी मारने पर वाहवाही नहीं मिलती। आदमी मार कर विभु फासी पर चढ जाय, फिर भी कोइ उसे शहीद नहीं कहेगा। 'विभु घोष जिन्दाबाद' की आवाज बुलद नहीं होगी।

हा, अगर कभी लड़ाइ छिड़े तो वह फौज म भर्ती हा जायगा। फौजी वर्दी म उसकी लाश नदी किनारे पड़ी रहेगी।

नहीं, अब यह सब कुछ नहीं होगा। उसे काइ नहीं पहचानेगा। उसके लिए कोइ आसू नहीं बहायेगा। वह तो सिर्फ किराये का गुण्डा बन कर रह जायगा।

विभु को फफक-फफक कर रोने की इच्छा होती है। एक-न-एक दिन वह कोई बड़ा काम करके मर जायेगा। हे भगवान! उसकी वह कीर्ति-कथा मृदुला के कानों तक पहुच जाय। उसके लिए मृदुला आंसू बहाये।

# तैंतीस

*

गहरी रात म रिनि ने अचानक सजय को जगाया, 'ऐ ! सुन रहे हो ! मुझे बड़ा डर लगता है !'

ह्स्की के गहरे नशे में बेसुध सोया सजय निन्यारी आवाज म बोला, 'क्यों ? सपना देखा है क्या '

'सुन रहे हा, कितनी विकट चीख है ! मा मां मुझे डर लगता है !'

सजय ने सुना । यह तो उसकी जानी-पहचानी आवाज है । गलियों और रास्तों से गहरी रात मे ऐसी विकट चीख आजकल अक्सर सुनाइ पड़ती है । आधी रात को जूठे पत्तल उठाने वाली भिखमगिनों की चीख वातावरण को कशा देती है ।

रिनि का भयभीत चेहरा देख कर उसे हसी आयी, 'यह तो रोज सुनती हो । इसमें डरने का क्या है ?

'हा, सुनती तो रोज हू और सुनकर मेरा मन कांपने लगता है । एक दिन खिड़की के पास गोद मे बच्चा लिए घू घट म एक औरत खड़ी थी । मुझे बड़ा डर लगा ! सोचा कि उठ कर देखू पर डर के मारे उठ न सकी ।

'भिखमगों से डर कैसा रिनि !'

'सब-के-सब भिखारी हैं '

'और नहीं तो क्या ! हर साल कहीं न-कहीं कुछ होता है । कहीं सूखा पड़ता है तो कहीं बाढ आती है । और फिर गाव के लोग दो मुट्ठी अन्न के लिए शहर आ जाते हैं !'

'इस बार भी कुछ हुआ है ?

'क्या पता ! अखबार में तो दिया है कि इस बार फसल अच्छी नहीं हुई !'

'बड़ा डर लगता है ?

'क्यों ?'

'भिखारियों की सख्या दिन-दिन बढती जा रही है । ये अगर सघबद्ध होकर

इस पर सजय अलसायी हसी में हसा । और रिनि कुछेक क्षण के लिए चुप्पी म

टुग-टुग कर कालिंग बेल बज उठा। दरवाजा खोल कर संजय ने देखा, बगल वाले फ्लैट का मद्रासी खड़ा है।

'आपका फोन।'

दरखास्त दिये मुद्दत बीत गयी, लेकिन अब तक संजय का टेलीफोन नहीं आया। मद्रासी के फोन से काम चलाता है।

फोन पर अजय की आवाज सुनते ही संजय चौंक उठा।

'कौन! संजु? जल्दी आओ। मां को स्ट्रोक हुआ है।'

हाथ-पांव ठंडे हो गये। खुद को संभाल कर बोला, 'कैसा स्ट्रोक?'

'पता नहीं। हालत ठीक नहीं है। होश नहीं है। जल्दी आ जाओ।'

'कैसे जाऊं? आज तो सब बंद है।'

'पुलिस वैन पकड़ने की कोशिश कर। जल्दी।'

संजय वापस आया। उसके पांव कांप रहे थे। कुछेक क्षण अर्थहीन आंखों से वह रिनि की ओर देखता रहा।

'क्या हुआ?'—रिनि ने पूछा।

बालीगंज से बेलियाघाटा पैदल जाया जा सकता है? तुम्हें कुछ आइडिया है, कितनी देर लगेगी?'

रिनि उठ बैठी, 'क्या बात है?'

'पुलिस वैन लिफ्ट न दे तो पैदल ही जाना होगा।'

## चौंतीस

*

सुबह दस बजे बरामदे में आरामकुर्सी पर राय बाबू एक तरफ गरदन लटकाये बैठे थे। उनकी गोद में एक जासूसी किताब खुली पड़ी थी। उन्हें नहलाने की खातिर बहूरानी बुलाने आयीं, 'बाबूजी उठिये। नहाने का समय हो गया।'

राय बाबू के मुंह से हां-ना कुछ नहीं निकला। खुली किताब के पन्ने हवा में फड़फड़ाते रहे।

थोड़ी ही देर में भीड़ लग गयी। खबर मिलते ही ललित भी दौड़ा आ रहा था कि मां बोल उठी, 'मुर्दा मत छूना। तुम खुद कमजोर हो। हर जगह सरदारी करने की क्या जरूरत है?'

बारह बजते बजते अरथी सज गयी। रमेन को देख कर शभू बोला, 'आप कधा देंगे तो खाट एक तरफ उठी रहेगी।'

'एक नजर म यह आदमी सार्जेंट चुन लिया जाता।'—शभू अपने आप से बोला।

राय बाबू का चार साल का पोता डर कर रो रहा था। ऐसे राजसी समारोह म उसने दादा जी को और कभी नहीं देखा था। वह भीड़ म रास्ता तलाश रहा था कि अचानक किसी ने उसे आसमान म उठा लिया। अवाक होकर उसने देखा, वह ताड़-से लंबे आदमी के कधा पर बैठा है। वहां से उसने आखिरी बार के लिए अपने दादा जी का मुह देखा।

बोल हरि हरि बोल

ललित दबी आवाज म रमन से बोला, 'श्मशान जाओगे ?'

'तुम भी चलो।'

मुरझाये चेहरे म ललित बोला, 'मेरा शरीर ।'

सख्ती से ललित का हाथ पकड़ कर रमेन मीठी मुस्कान म मुस्कराया, 'चल।'

चिता की आच और मुर्दा जलने की गध ललित से बर्दाश्त नहीं हो रहा था। थोड़ी ही दूर पर आड़ म शभू वगैरह बैठे थे। सिगरेट के छल्ले उड़ रहे थे। हसी-मजाक चल रहा था।

रमेन चुप बैठा था। एक छोटी खाट लिए कई आदमी आये। बच्चे की लाश थी। रमेन ललित को बुला कर बोला, 'देखो, हैजा की लाश है।'

'कैसे पता चला ?'

रमेन उत्तर दिये बिना उठ खड़ा हुआ। बच्चे की लाश लानेवालों से बातें करने लगा।

राय बाबू की चिता धू-धू जल रही है। लेकिन अब तक उनके पाव झुलसे तक नहीं। ललित उनके दोनों पाव देख रहा है। अचानक फट की आवाज हुई। शायद लकड़ी की गांठ फटी होगी। ललित ने देखा, अब तक राय बाबू के गोरे-चिट्टे पावों तक आग नहीं पहुची। पाव हिले। अनभिज्ञ होता, तो देख कर चौंक उठता। लेकिन ललित अनभिज्ञ नहीं है। इससे पहले वह दो-तीन मुर्दा जला चुका है।

दस बारह साल का एक डोम लड़का चिता दिखा कर ललित से बोला, 'पैर चिता से गिर जायेगा। उस पर भारी लकड़ी रख दीजिये।

ललित समझ न सका कि पाव क्या गिरेंगे। राय बाबू के दोनों पाव सही-सलामत चिता पर थे।

राय बाबू का पोता घुटनों म मुह छुपाए शभू आदि के साथ बैठा था। अचानक मुह उठा कर वह चीख उठा, 'बाबूजी '

राय बाबू का बेटा अवनीश फोन पर दफ्तर में नहीं मिला था। वह पी० डब्लू० डी० में काम करता है। साइट पर गया था। दफ्तर वापस आने पर खबर मिली और सीधा श्मशान आ गया। डगमगा रहा था अवनीश। कहीं गिर न पड़े। छाया की तरह उसके पास आ खड़ा हुआ रमेन। नहीं, अब यह नहीं गिरेगा।—रमेन का वहाँ देख कर आश्वस्त हुआ ललित। निश्चिन्त मन से उसने आँखें बंद कीं।

ललित ने सुना, कोई चिल्ला कर कह रहा है, 'पांव देखो, पांव।'

आँखें खोल कर ललित ने देखा, राय बाबू के पांव धीरे-धीरे ऊपर उठ रहे हैं। पैंतालीस डिग्री का कोण बना कर पांव स्थिर हो गये और फिर धीरे-धीरे ऊपर उठने लगे।

रमेन पास आ खड़ा हुआ। घुटने से तलवे तक पांव चिता से गिर गये।

बच्चे ने यह दृश्य नहीं देखा। अवनीश ने भी नहीं। रमेन आड़ किये खड़ा था।

डोम से कुछ कहो तो बावल की फरमाइश होगी। 'तुम आड़ किये खड़े रहो। मैं पांव उठा दूं, नहीं तो बच्चा डरेगा।'—रमेन ने ललित से कहा और दोनों पांव उठा कर चिता पर रख दिये।

सिर में चक्कर सा खा कर ललित बैठ गया। और फिर खट्टी-खट्टी उल्टी करने लगा।

'रमेन!' मरियल आवाज में ललित बोला।

'उं।'

'मुझे क्या ले आये '

रमेन चुप रहा।

सात दिन बाद निमान का कमरा खाली हो गया। किताबें ललित ले गया। बर्त्तन-बासन बोरा में बंद कर मकान मालिक के घर रखा गया। बरगद के पेड़ तले अपर्णा की विशाल गाड़ी खड़ी थी। सुनल बड़ा व्यस्त दीख रहा था। उसका चेहरा लाल हो उठा था। अपर्णा से आँखें मिलते ही उसकी आँखें झुक जाती थीं। गाड़ी के इर्द-गिर्द भीड़ लगी थी।

निमान को बीच में बैठा कर उसके दोनों तरफ ललित और रमेन बैठे। गाड़ी स्टार्ट करते वक्त सुनल बोला, 'ललितदा, जरूरत समझें तो मैं साथ चल सकता हूं।'

अपर्णा ने दांतों तले होंठ भींच लिये।

'हम संभाल लेंगे सुनल।'—ललित ने कहा।

सुनल का चेहरा मुरझा गया।

दोनों के बीच चुप बैठा है निमान। मरियल सा दीख रहा है बेचारा। पहले पागल होने पर शांत रहा करता था। लेकिन इस बार उत्पात मचा रहा है। अक्सर लाठी

लेकर जिस किसी पर दौड़ पड़ता। रात में दरवाजा खोल कर निकल पड़ता। आधी रात को जिस किसी के दरवाजे की कुंडी बजा कर चिल्लाता, 'टेलीग्राम! टेलीग्राम' कभी-कभार शंभू वगैरह के जिमनासियम में पैरलल बार उठाने की कोशिश करता।

चुप्पी में डूबा बैठा है विमान। एकदम शांत। कोई बेचैनी नहीं। कोई हलचल नहीं। सिर्फ गड्ढों में धंसी उसकी आंखें चमक रही हैं। पता नहीं क्या तलाश रहा है विमान! कौन हैं ये? कहां ले जा रहे हैं उसे?

विमान का एक हाथ गोद में लिये बैठा है ललित। बरफ-सा ठंडा हाथ पसीना छोड़ रहा है। अपर्णा को सांत्वना देना चाहता है ललित, पर होंठ नहीं खुलते।

रमेन विमान के कान में बोला, 'विमान!'

विमान हिला पर बोला कुछ नहीं। रमेन ने हथेली से उसके कपाल पर चुहचुहाता पसीना पोंछ दिया। वही विमान की देख-रेख करता है। विमान नहाना नहीं चाहता। रमेन उसे धर पकड़ कर नहलाता है। वह खाना नहीं चाहता। रमेन उसे खिलाता है। उसके गाल और हाथ पर विमान के दांत काटने और नोचने-खसोटने के चिह्न दीख रहे हैं।

ललित ने आंखें फेर लीं। उसे कुछ अच्छा नहीं लग रहा है। अपर्णा और विमान में कितना मधुर संबंध था! उसे यह वियोग दृश्य सहन नहीं होता। वह कुछ ही दिनों का मेहमान है। उसे लगता है कि शून्य से कोई कह रहा है, 'तुम अब जल्दी ही मरोगे।' विमान की ओर देख कर उसे लगा कि विमान जैसा कंकाल बन कर वह भी एक दिन मर जायेगा।

तीन दिन हुए आदित्य की एक चिट्ठी आयी है। संक्षिप्त चिट्ठी। लिखा है यहां स्वर्ग है। पहाड़। जंगल। हरे-भरे मैदान। बलखाती हुई बह रही है एक दुबली-पतली नदी। मैं कवि नहीं, पर न जाने क्यों कविता लिखने की इच्छा होती है यार। क्षितिज तक फैला मैदान। भोले-भाले देहातियों की हंसती-मुस्कराती जिंदगी। मैदान में खड़ा होकर चारों तरफ देखता हूं, तो लगता है कि मैं महान हूं। विश्वास कर ललिता, सारी दोपहर पीपल की ठंडी छांव में कुर्सी पर बैठा रहता हूं पर नदी क्षण भर के लिए भी याद नहीं आती। कलकत्ता को भूल जाना चाहता हूं। नदी से यदि मेरी शादी हो जाती, तो विश्वास कर ललित, मैं सारी जिंदगी उस पर संदेह करता। वह कभी मिल जाय, तो उससे कहना, मैं ने उसे बड़ा कष्ट दिया है। एक बार यहां आ जा यार, फिर खुद ही वापस नहीं जायेगा। आदित्य के पेट में लात मारी थी, साला मरा तो नहीं। अरे वह क्या मरेगा। पापियों की मौत तो जल्दी होती ही नहीं। बस यहां आ जाओ।

चिट्ठी पढ़ कर ललित के होंठ कांपे थे। हृदय में आंसुओं का ज्वार उठा था।

शासनी को छोड़ रहा है आन्त्य। लेकिन लाभ। इससे क्या लाभ।

वह जिंदा रहना चाहता है। उसे कोइ अलौकिक शक्ति दहलीज पर खड़ी मौत से बचा ले। उसे बचा ले कोइ।

ललित बाहर देख रहा था। सुन रहा था, विमान घुस-घुस कर कुछ बोल रहा है। दरवाजा खोल कर भागना चाहता है। अचानक चीख उठता है फिर एकदम शांत हो जाता है।

सजय की मां बगाल बद के दिन मर गयी। अशौच में भी दो दिन उसने घर आकर गप्पें मार गया है। रूखे-सूखे बाल। बढ़ी हुइ दाढी। हाथ में कुशासन। शोक का कितना बीभत्स चेहरा। हिन्दुत्व का यह भी एक दोष है। शोक विज्ञापन बना फिरता है। देख कर मन खराब हो जाता है। शोक का प्रदर्शन कतइ अच्छा नहीं। आदमी तो यू ही दिन-रात मृत्यु की बात सोचता है। उसे शोक का चेहरा दिखा कर दु खी करना अच्छी बात तो नहीं।

गोरी चिट्टी, दुबली-पतली अपर्णा कितनी कुशलता से गाड़ी चला रही है। लेकिन उसके मन के अदर क्या हो रहा है, यह ललित समझता है। ऐसी मानसिक अवस्था में भी वह गाड़ी उड़ाये जा रही है।

बीच रास्ते पर हाथ म लाठी लिए एक नग-धड़ग पागल खड़ा है। शर्म से ललित की आंखें बद हो गयी। दिन-ब दिन पागलो की सख्या बढ़ती जा रही है। खास कर पाकिस्तान बनने के बाद आदमी जब-तब पागल हो उठता है। नगा घूमता है। आधी रात को घर से निकल कर पड़ोसियो को आवाज देता है। मन-ही-मन बड़ बड़ करता है। इ ट पत्थर लेकर मारने दौड़ता है।—किस्म किस्म के पागल हैं। अचानक उसकी आखो के सामने दो साल पहले का एक पागल उभर आया। दुर्गा पूजा म उसके कइ दोस्त बाहर घूमने गये थे। लेकिन वह अपनी बुढ़िया मां को छोड़ कर कैसे जाता। पूजा के दिन वह यू ही घूम रहा था कि भवानीपुर म अचानक एक आदमी की आखों से उसकी आखें उलझ गयीं। मरियल चेहरा। लाल-लाल चमकती आंखें। फटे-चिथे कपड़े। उसकी ओर उगली उठा कर वह चीखा, 'तुम।' और चीख सुनते ही उसका मन थरथराने लगा। सिर्फ वही क्या, उसकी जगह कोइ भी होता, वह काप उठता। मैं। मैं क्या। मैं क्या हू ? उसने खुद को तलाशने की कोशिश की पर तलाश न सका। हजारो की भीड़ में आखिर उसे ही उस पागल ने क्या कहा ? उसने जवाब ढूढना चाहा, पर ढूढ न सका। शायद वह कुछ जानता था। शायद उसने ललित म कुछ देखा था, जो और लोग नहीं देख सकते। दो वर्ष भी न बीते और उसे कैंसर हो गया।

उससे कोइ सबध नहीं, फिर भी ललित को लगता है कि कहीं-न-कहीं कोइ

सतर्क है। पगले ने शायद उसे सतर्क कर दिया था।

विमान गुनगुना रहा है। ललित ने मुँह घुमा कर देखा, रमेन सुनने की कोशिश कर रहा है।

'क्या सुन रहे हो ?'

रमेन धीमी आवाज मे बोला, 'समझ मे नहीं आता।'

ललित विमान की ओर झुक कर बैठा। सुनने की कोशिश की। पता नहीं क्या गुनगुना रहा है विमान ? शायद किसी कविता की पंक्तियाँ गुनगुना रहा है।

अचानक रमेन सतर्क हुआ। अपर्णा की ओर मुँह बढ़ा कर बोला, 'एक्सीडेंट होगा।'

अपर्णा ने पलट कर देखा। उत्तेजित चेहरा। डबडबायी आँखें। मुस्काने की कोशिश कर बोली, 'बैलेंस बिगड़ जाता है।'

'रोकिये।'

'क्या ?'

'मैं चलाऊँगा।'

ज्योलोजिकल सर्वे के परली ओर गाड़ी रुकी। रमेन चालक की जगह जा बैठा। गाड़ी चल पड़ी।

ललित दस साल बाद रमेन को गाड़ी चलाते देख रहा है। दस साल पहले रमेन अपनी रूगरा आस्टिन पर दोस्तों को सैर कराता था। ललित को वह गाड़ी चलाना सिखाता था।

अचानक ललित के मन मे एक बात उठी और उसके चेहरे पर मुस्कान उभर आयी। अगली सीट पर रमेन और अपर्णा—एक भूतपूर्व जमींदार और एक कारखाना मालिक की एकलौती बेटी। पिछली सीट पर वह—एक स्कूल मास्टर और कार्पोरेशन का हाजिरा बाबू विमान। घटनावश दो श्रेणियाँ एक-दूसरे से जुड़ गयी हैं।

दक्षिणेश्वर के पास मानसिक अस्पताल। साफ सुथरी जगह। सामने फुलवारी। विमान को पकड़ कर रमेन ले जा रहा है। नतमस्तक अपर्णा पीछे-पीछे जा रही है। ललित साथ नहीं गया। उसका हृदय यह दृश्य सहन नहीं कर पाता। गाड़ी से उतर कर वह फुलवारी मे घूमता रहा। थोड़ी देर बाद दोनों आये और ड्राइवर से विमान का बकसा और बिस्तर ले गये। अस्पताल मे बकसा-बिछौना रखने देते हैं ? क्या पता ! शायद मानसिक अस्पताल मे ऐसी पाबंदी न हो। या रमेन और अपर्णा ने अनुमति ले ली हो।

उन्हें वापस आने मे बड़ी देर लगी। और जब बड़ी देर बाद वे तीन सीढ़ियाँ उतर कर वापस आ रहे थे, ठीक उसी समय विमान के लिए ललित का हृदय [illegible]

उठा। क्या पता विमान कब तक अच्छा होगा! तब तक ललित कहां होगा ?

वापसी में भी रमेन गाड़ी चला रहा था। रमेन के पास ललित बैठा था। अपर्णा पीछे बैठी थी।

एक समय सहसा अपर्णा बोल उठी, 'वे लोग उसका ख्याल रखेंगे तो ?

बिना मुंह घुमाये ही रमेन ने जवाब दिया, 'रखेंगे। सब मेरे पुराने परिचित हैं।'

भरी आवाज में अपर्णा बोल उठी, 'मेरी शादी हो रही है।'

'क्या ?'—ललित चौंक उठा।

सिर झुकाये अपर्णा कुछेक क्षण चुप बैठी रही। मानो रो पड़ेगी। नहीं, रोयी नहीं। कुछेक क्षण बाद रुंधी आवाज में बोली, 'एक दिन पिता जी मुझसे कह रहे थे, अपर्णा समझने की कोशिश करो। मेरा कोई ठीक नहीं। डाक्टरों ने चलने-फिरने को मना किया है। मेरे बाद यह सब कौन देखेगा ? तुम्हारी नजर में कोई हो, तो बताओ। मैं उसे ही अपना दामाद बनाऊंगा। महीने भर के अन्दर शादी हो जानी चाहिए। दामाद को मेरा लड़का बन कर सब कुछ देखना-सुनना होगा।'

'आपने क्या कहा ?'

बड़ी देर तक चुप रहकर अपर्णा बोली, 'कुछ नहीं'।

'क्या ?,

'वह तो पिता जी का लड़का नहीं बन सकेगा।'

'इससे क्या ! '

'क्या पता, मैं तो राजी थी, पर वह राजी नहीं। एक दिन उसने मुझसे साफ-साफ कह दिया, मैं तुम से शादी करके क्या करूंगा ? मैं पागल हूं ?। मेरे दादा भी पागल थे। इसकी क्या गारंटी है कि मेरी सन्तान पागल नहीं होगी। हमारा समाज यदि मनुष्य के प्रति सजग होता, तो मुझ जैसे आदमी को कानूनी तौर पर विवाह के अयोग्य घोषित कर देता। समाज जब ऐसा नहीं करता, तब यह काम हमें खुद करना चाहिए।

'लेकिन आप तो अकेली भी रह सकती हैं।'

कुछेक क्षण अपर्णा चुप बैठी रही। सम्भवतः अपने त्याग के आधार पर विचार करती रही। और फिर बोली, 'रह तो सकती हूं। लेकिन किसके लिए ? किस आशा से '

ललित को कोई सही उत्तर नहीं मिला, फिर भी वह भावावेग में बोल उठा, 'आप विमान के साथ बंधी हैं।

'आप से मैं बता चुकी हूं कि मैं बहुत दुर्बल हूं। डरपोक हूं। कल-कारखाना मुझ से नहीं सम्भलेगा। कर्मचारियों से मैं डरती हूं। घेराव से मैं घबराती हूं। आपके मुल्के

के उस लड़के से मुझे बड़ा डर लगता है। वह बड़ा दुःसाहसी है। आज भी बार बार वह मेरे पास आ खड़ा होता था। वैसे लड़का से मुझे कौन बचायेगा?'

अन्दर ही अन्दर आगबबूला हो उठा ललित। उत्तेजनावश वह बोल उठा, 'भगवान!'

मुंह से भगवान निकला और शरमा गया भाग्यवादी ललित।

अपर्णा अवाक् हुई। बोली, 'भगवान! आप और भगवान की बात!'

कहकहों में फूट पड़ा ललित और फिर बोला, 'इतना डरने से कहीं चलता है?'

'डाक्टर की बातों से मैं इतना ही समझी हूं कि उनका पूरी तरह से अच्छा होना मुश्किल है। अगर अच्छा होने की आशा होती, तो मैं कोशिश करती। इतना कहकर कुछेक क्षण के लिए न जाने कहां खो गयी अपर्णा और फिर यथार्थ में आकर बोली, पिताजी की दृष्टि से विचार करती हूं, तो लगता है कि मुझे जल्दी-से जल्दी शादी कर लेनी चाहिए।'

ललित चुप रहा।

रमेन ने पलट कर पूछा, 'कहां चलना है?'

अपर्णा बोली, 'पराशर रोड। एक सहेली के घर जाऊंगी। मां से कह आयी हूं, वहां मेरा निमंत्रण है।

पराशर रोड पर एक मकान के सामने गाड़ी रुकी और एक लड़की सामने आ खड़ी हुई। अपर्णा का हाथ पकड़कर झटपट दबी आवाज में मुस्करा कर बोली, 'अभी-अभी मौसी फोन पर तुमको खोज रही थी। मैं ने बहाना बना दिया।'

अपर्णा मुस्करायी और फिर रमेन से बोली मैं दो घंटे बाद घर जाऊंगी। आप ललित बाबू को छोड़ आइए।'

रमेन ने ललित की ओर देख कर आंख दबायी और अपर्णा से बोला, 'ठीक है।'

अच्छी मीडियम की गति से गाड़ी दौड़ रही थी।

ललित अचानक बोल उठा, 'झंडूमूठ में गाड़ी ले आए। फिर तुम्हें वापस आना होगा।'

रमेन मुस्करा कर बोला गाड़ी चलाना एक नशा है। स्टियरिंग पकड़े मुद्दत बीत गयी। और गाड़ी कितनी अच्छी है। एकदम नयी-नयी ब्यूक।'

रमेन क्षण भर चुप रह कर बोला, 'शायद अपर्णा मुझसे कुछ कहना चाहती है। इसलिए उसने गाड़ी दे दी।'

'क्यों मेरे सामने कहते शर्म आती थी?'

रमेन ने उत्तर नहीं दिया। बड़ी देर तक गाड़ी चुपचाप चलाता रहा।

सुनसान रेडरोड। गाड़ी फर्राटे से दौड़ रही है।

'खामखाह पेट्रोल जला रहे हो।' —ललित बोला।

सुनसान रास्ते पर रमेन ने गाड़ी खड़ी की। ललित से बोला, 'ड्राइविंग सीट पर बैठ।'

मुझसे नहीं होगा। अब सीखने की उम्र भी नहीं।'

'बैठ तो सही।'

'दूसरे की गाड़ी है यार। कहीं चोट वोट लग गयी तो।'

लेकिन रमेन ने नहीं छोड़ा। आखिरकार ललित ड्राइविंग सीट पर बैठा। बरसों पहले रमेन ने थोड़ा बहुत सिखाया था। उसे सब कुछ समझा कर रमेन बोला, 'चलो।'

स्टार्ट करते ही गाड़ी उछल पड़ी। रमन प्यार से बोला, 'धीरे धीरे चलाओ। जल्दीबाजी की कोई जरूरत नहीं।'

धीरे धीरे गाड़ी ललित के नियन्त्रण में आ रही थी। पहले गाड़ी टेढ़ी-मेढ़ी चल रही थी। पीछे की गाड़ियाँ साँय-साँय कर निकल रही थीं। उसे डर भी लग रहा था। रमेन का एक हाथ स्टियरिंग पर था।

धीरे धीरे ललित का साहस बढ़ रहा है। उसे बड़ी उत्तेजना महसूस हो रही है।

घंटे भर बाद वह गाड़ी मजे में चलाने लगा। रमेन ने स्टियरिंग से हाथ हटा लिया।

ललित गाड़ी चला रहा है। पास में आँखें बन्द किये बैठा है रमेन।

ललित बड़ा साहसी हो गया है। उसके अंग-अंग में उत्तेजना उफन रही है।

दबी आवाज में बोला, 'रमेन!'

'उं।'

'सामने एक गाड़ी जा रही है। ओवर टेक करूं।'

'करो।'

ललित ने किया। गाड़ी एक युवती चला रही थी। ईर्ष्या भरी आँखों से उसने विशालकाय ब्यूक की ओर देखा। ललित को बड़ा आनन्द आया। देखो, मैं ललित हूं। कितनी कीमती गाड़ी चला रहा हूं।

लेकिन दूसरे ही क्षण यह सोच कर वह निराश हुआ कि गाड़ी दूसरे की है।

ललित ने कई चक्कर लगाये। एकाग्र मन से वह गाड़ी चला रहा है।

बंद आँखों में रमेन थोड़ा मुस्कराया।

'रमेन!'

'उं।'

अब वापस चला जाय। भीड़ में मैं नहीं चला सकूंगा। स्टियरिंग सम्भलो।

'भवानीपुर तक चल न ।'

आश्चर्य है, ललित अनायास ही गाड़ी चलाता हुआ भवानीपुर पहुच गया। एल्गिनरोड मे रमेन ने स्टियरिंग पकड़ी । मुस्करा कर बोला, 'शाबाश !'

ललित बच्चा जैसी शर्मीली मुस्कान म मुस्कराया । छोटी मोटी सफलता भी कितना आनन्द देती है !

करीब आठ बजे रमेन अपर्णा को पहुचा रहा था । दोनो चुप थ ।

अचानक अपर्णा बोली, अब लोग मुझ पर उगलिया उठायेंगे । कहेंगे, सारी जिंदगी एक को प्यार करती रही और अब शादी किसी और स कर रही है । लेकिन मैं तो यह नही चाहती थी । कोइ मेरा भार लेता, जिसे धन-दौलत से कोई मतलब न होता, औरत जिसकी कमजोरी न होती, तब कितना अच्छा होता । लेकिन ऐसा कोइ नहीं है, न ?'

'है । विमान ।'—रमेन ने उत्तर दिया ।

'आप आप मुझे क्या करने कहते हैं ?'

झुटपुटे अंधेरे मे रमेन ने एक बार अपर्णा की ओर देखा ।

चौंक उठी अपर्णा । उसे लगा कि यह आदमी जानता है । यह जानता है कि किशोरावस्था मे उसने विमान को प्यार किया था । और फिर सिर्फ याद को प्यार किया था । उसके बाद उसने उस त्याग को प्यार किया है जो किसी अकिंचन को प्यार करने से हृदय मे पैदा होता है । उसके प्यार मे कहीं विमान नहीं है । जो विमान कारपोरेशन म नौकरी करता है, कभी कभी पागल हो जाता है, उसे अपर्णा ने कब प्यार किया ?

यह आदमी शायद सब कुछ जानता है। सब कुछ समझता है ।'

## पैंतीस

*

राय बाबू के श्राद्ध के दिन अविनाश ने कीर्त्तन कराया। निमन्त्रण मिलते ही रमेन खुशी से उछल पड़ा, 'मैं जाऊंगा।'

शाम को वह ललित को भी अपने साथ ले गया।

आंगन में कीर्त्तन हो रहा था। बरामदे पर मुहल्ले की स्त्रियां बैठी थीं। शम्भू अपने दलबल के साथ सक्रिय था।

'इसे कीर्त्तन कहते हैं!'—रमेन फुसफुसाया।

और दूसरे ही क्षण रमेन कीर्त्तनियों के बीच था। मृदंग बजा कर वह कीर्त्तन करने लगा। उसकी सुरीली आवाज गूंजने लगी। फिर पैर पटके वह नाचने लगा। उसकी आंखों से आंसू बहने लगे।

ललित ने बोल सुनने की कोशिश की। नहीं, बोल समझ में नहीं आता। बस, रमेन के साथ सब नाच रहे हैं। बीच बीच में सिर्फ जय ध्वनि सुनायी पड़ती है। भक्ति का समुद्र उमड़ रहा है। बरामदे पर बैठी स्त्रियां फफक रही हैं। भावावेश में रमेन मृदंग लेकर उछल पड़ता है। सुध-बुध खोकर सब कीर्त्तन कर रहे हैं।

एक समय रमेन ने ललित को मंडली में खींच लिया।

'क्या कर रहे हो?'—ललित बोल उठा।

और फिर ललित ने खुद को कीर्त्तनियों के बीच पाया। आश्चर्य है, वह भी तन्मय होकर कीर्त्तन करने लगा। मृदंग की थाप, रमेन की मीठी आवाज और कीर्त्तनियों की समवेत ध्वनि उसके तन मन में गूंज उठी और वह भी भक्ति रस में डूबता उतराता नाचने लगा।

प्रायः सुबह-शाम ललित से मिलने दो-चार आदमी आते। खाली हाथ शायद ही कोई आता था। कोई साग सब्जी लाता, तो कोई रुपया-पैसा।

एक दिन ललित झल्ला कर बोल उठा, 'यह सब क्यों लेते हो?'

रमेन ने हंस कर जवाब दिया, 'लेना चाहिए, इसलिए लेता हूं। किसी के प्यार

का ठुकराना अच्छी बात तो नहीं। और फिर दान-दक्षिणा लेना तो ब्राह्मणों का पेशा रहा है।'

'क्या रहेगा ऐसा पेशा ?'—ललित चीख उठा।

कुछेक क्षण गंभीर रह कर रमेन ने कुछ सोचा और फिर मुस्करा कर बोला, 'हमारे पुरखों ने समाज को बहुत कुछ दिया था ललित। और कृतज्ञतावश समाज ने भी हम बहुत कुछ लिया था। हम धीरे-धीरे जमींदार बन गये थे। जमींदारी चली गयी और मैं ने फिर से ब्राह्मण का पेशा अपना लिया। वे मुझे प्यार से देते हैं और मैं ले लेता हूं।'

'क्यों देते हैं ? तुम उन लोगों के लिए क्या करते हो ?'

'क्यों देते हैं, यह तो वे ही बता सकते हैं। मेरे पास देने को रुपये-पैसे तो है नहीं। मैं सिर्फ उनके पास जा खड़ा होता हूं। देश छोड़ने के बाद उनके पास कोई मानसिक आश्रय नहीं है। एक समय था जब कुछ होते ही वे हमारे घर दौड़े आते थे। उनके सुख-दुःख में हम उनके साथ होते थे। यही कारण है कि मुझे देख कर वे खुश होते हैं। मुझे अपना दुखड़ा सुनाने की खातिर दौड़ आते हैं। मुझ से सलाह-मशविरा करते हैं। मैं उनके घर जाता हूं। उनके बाल बच्चों से बातें करता हूं। उनमें से कोई पैसेवाला बन गया है, तो कोई डूब गया है। मैं उनमें समता लाने की कोशिश करता हूं। सुख दुःख में एक दूसरे का सहायक बनने की प्रेरणा देता हूं। उन्हें मुझ से पैसे कौड़ी की मदद नहीं चाहिए। वे तो इतने से ही खुश हैं कि मैं उनके बीच हूं। उन्हें छोटे सरकार की जरूरत है। छोटे सरकार में वे बड़े सरकार को देखते हैं। मुझे बचाये रखना उनकी जिम्मेवारी है।'

लेकिन ललित सहमत नहीं हुआ। रमेन की बातें साम्यवादी विचार के प्रतिकूल हैं। एक आदमी देवता क्या बनेगा ? यह और कुछ नहीं एक प्रकार का शोषण है।

क्षण भर रुक कर मृदु मुस्कान में रमेन फिर शुरू हुआ, 'याद है ललित, एक समय था, जब रात-रात भर जग कर तुम पोस्टर लिखा करते थे, घर घर घूम कर पार्टी के लिये चंदा वसूलते थे, जुलूस निकालते थे, । जहां-तहां सभा में भाषण दिया करते थे। उस समय तुम्हारे सामने एक आदर्श था। तुम सबका भला करना चाहते थे। और इसलिए तुम्हें बचाये रखना सब की जिम्मेवारी बन गयी थी। मैं देखता था, कोई तुम्हारे लिए सिगरेट ला रहा है। कोई चाय पिला रहा है। बारह बजे रात में दुकान खुला कर कोई तुम्हारे लिये डबल रोटी ले आया है। तुम्हें इसका आभास तक नहीं मिलता था। तुम तो अपने काम में डूबे रहते थे और लोग तुम्हारा खयाल रखते थे। बस, तुम जैसा ही मेरा हाल है। मैं क्या पेट के धंधे में घूमूं ? मेरे लिए रोटी की चिंता तो वे करेंगे, जिनकी चिंता मैं करता हूं।'

'लेकिन यह पेशा तो अच्छा नहीं। यह तो एक किस्म की भीख है।'

'तब क्या नौकरी करूं? बंधी-बंधायी तनख्वाह होगी। माप-जोख कर खर्च करूंगा। पैसे जमा करना सिखूंगा। नहीं ललित, इस तरह मैं स्वयं को छोटा न बना सकूंगा। उस दिन संजय से मिला था। मुझे देख कर वह झेंप गया। बोला, तुम्हारा दो-तीन हजार मुझ पर बाकी है। लेकिन अभी नहीं दे सकूंगा। कुछ ही दिन हुए गाड़ी खरीदी है। बिजनेस में भी नुकसान हुआ है। उसके चेंबर में बैठ कर मुझे लगा कि वह अब भी पहले जैसा ही गरीब है। बेचारा कहां से रुपया देगा? उसे रुपये पैसे की बड़ी जरूरत है। हालांकि वह मुझे बार बार रट रहा था कि दो-तीन साल बाद वह सन्यास लेगा।'

कह कर रमेन मुस्कराया। ललित चुप रहा।

किसी-किसी दिन आधी रात को नींद टूटने पर ललित देखता, रमेन पद्मासन में बैठा है। खिड़की से आसमान की फीकी रोशनी आ रही है। उस रोशनी में वह देखता, रमेन की आंखों से अविरल धारा बह रही है।

दूर कहीं कुत्ता रो रहा है। धुंधला आसमान। ध्यानस्थ रमेन। यह सब ललित को स्वप्न-सा लगता है। सच होकर भी सच नहीं लगता। यह सब देख कर उसके मन में आंधी बहने लगती है। प्रकृति के किस रहस्य में डूबा है रमेन? ललित नहीं जानता और न जान सकेगा।

## छत्तीस

*

उस दिन अणिमा सचमुच में हैरान हुई जिस दिन संजय ने उसे नाम लेकर पुकारा।

'नाम कैसे जान गये?'

संजय गंभीर स्वर में बोला, 'सिर्फ आपका ही क्या, मैं तो आपके भक्तों के नाम भी जानता हूं।'

वह मुस्करायी। कुछेक क्षण फटी-फटी आंखों से संजय का घुटा सिर देख कर बोली, 'मां को क्या हुआ था?'

'उम्र!'—उदास होकर बोला, 'हमारी भी उम्र हो रही है। जिंदगी का बेहतरीन हिस्सा हमसे विदा ले चुका है।

अणिमा अब तक रिनि और पिकलू के बारे में नहीं जानती। संजय ने उसे कुछ

भी नहीं बताया है। लेकिन अणिमा घुमा-फिरा कर जानना चाहती है। संजय टाल जाता है।

संजय को पता है कि अणिमा के भक्तों में से किसी के पास गाड़ी नहीं है। एक गाड़ी का कितना उपयोग है। इस भिखमंगे देश में गाड़ी दिखा कर बहुत कुछ हो सकता है।

आज वह सीधे घर नहीं गया। दफ्तर से निकल कर डलहौसी पहुंच गया। मैस्कारियन के करीब एक गली में गाड़ी लगा कर सिगरेट के कश लेता रहा। थोड़ी ही देर बाद अणिमा गाड़ी में आ बैठी।

बड़ी देर तक कलकत्ता की सड़कों पर गाड़ी दौड़ती रही।

संजय के फ्लैट में फोन लग गया है। फोन लगाने के दो-तीन दिन बाद रात को वापस आने पर उसने देखा, रिनि गुमसुम बैठी है।

उसने ह्विस्की निकाली। रिनि डबडबायी आंखों में बैठी थी।

रोज की तरह वह बरामदे पर ह्विस्की लेकर बैठा। रिनि सामने आ खड़ी हुई।

'आज एक फोन आया था।'

'किसका ?'

'मर्दानी आवाज थी।'

'क्या कहा ?'

'अपने पति की खोज-खबर लीजिये। इन दिनों वह ।'

रिनि और न बोली। संजय ने उसकी ओर देखा। बड़ी नरम दिल औरत है। शायद दिन भर रोती रही है। अभी भी होंठ कांप रहे हैं। लड़ना-झगड़ना नहीं जानती। रिनि को सिर्फ रोना आता है। संजय कभी कुछ कह देता है, तो वह फफक-फफक कर रोने लगती है।

संजय चुप रहा। फोन शायद शुभमय घोषाल नामक नौजवान इंजीनियर ने किया होगा।—उसने अनुमान लगाया। अणिमा के भक्तों में वह थोड़ा महत्त्वपूर्ण है। वह इंजीनियर है, लेकिन रवीन्द्र संगीत भी गाता है। उसके प्रति अणिमा में थोड़ी दुर्बलता भी है।

पैंट के हिप पॉकेट में करीब सात सौ रुपये थे। अचानक वह उठ कर पांच-पांच रुपयों की गड्डी उठा लाया। रिनि को दे कर बोला, 'रख आओ।'

गड्डी लेकर रिनि फटी फटी आंखों से संजय की ओर देखती रही। उसे लगने लगी कि अचानक संजय को जरूरी बात के बीच रुपयों की याद कैसे आयी।

रिनि का मातमी चेहरा देख कर सहसा संजय को बड़ी शर्म आयी।

'वह कह रहा था कि तुम अणिमा नाम की किसी लड़की का साथ लेकर घूमते हो।'

पूजा ( दुर्गा पूजा ) का बाजार शुरू हो गया। दुकानों में भीड़। फुटपाथ पर भीड़। भीड़-ही-भीड़। दुकानों की ओर देखता हुआ ललित चल रहा है। रंग-बिरंगी साड़ियों की बहार। युवतियों की खुसुर-फुसुर और प्यारी प्यारी किलकारियां।

आश्चर्य है, आजकल राह चलती युवतियां उसे देखती हैं। पहले तो उपेक्षा करती थीं। लेकिन अब कभी कभी राह चलती किसी युवती की आंखों में उसकी आंखें अटक जाती हैं। अब तो उसकी बगल से निकल कर भी पलट कर उसे देखती हैं।

बीच-बीच में ललित दुकान के आइने में अपना चेहरा देखता है। कितना सुंदर। कितना आकर्षक। मां कहा करती है कि वह बचपन में बड़ा सुंदर था। उसने सोचा, शायद उसका बचपन फिर से लौट आया है।

शायद मौत से पहले जिन्दगी में कुछ अच्छे दिन आते हैं। एक दिन स्कूल से आकर वह बिस्तर पर चुपचाप लेटा था कि मौसी, मौसी करती हुई एक सुन्दरी आयी। तांत की रंगीन साड़ी में लिपटी एक प्रतिमा। गोद में फूल-सा बच्चा। बच्चे को फर्श पर रख कर उसने मां के पैर छुए। ललित ने तब पहचाना। मितु। मितु और कभी उसके घर स्वेच्छा से नहीं आयी। आज पहली बार वह अपनी इच्छा से आयी है। मांग में सिंदूर। गोद में दूसरी या तीसरी संतान।

मुस्करा कर बोली, 'मैं मितु हूं मौसी।'

'ओ। बैठ। कब आयी?'

'कल। बजबज बड़ी दूर है। चार साल बाद आयी हूं। पूजा के बाद ससुराल जाऊंगी,—बैरकपुर।'

ललित उठ कर बैठा। अब पहले से भी सुंदर दीख रही है मितु। देख कर ही पता चलता है कि बड़े घर की बहू है। ललित को बड़ी शर्म आ रही थी। क्यों आयी है मितु?

मां चौके में गयी। पीछे-पीछे मितु भी। ललित ने सोचा, घर से निकल जाय ताकि मितु से फिर सामना न हो। उसने कमीज पहनी। दरवाजे तक जाकर रुक गया। पता नहीं क्यों उसे बड़ा अच्छा लग रहा था। मितु के आने से उसके दिल का एक पुराना कांटा निकल गया। एक दिन मितु मां का अपमान कर गयी थी और उसी दिन से उसके दिल में एक कांटा चुभ रहा था। आज वह कांटा निकल गया। अब वह खुद को बड़ा हल्का फुल्का महसूस कर रहा है। जिंदगी के आखिरी कुछ दिन से भरते जा रहे हैं। शायद मरते वक्त अब कोई दुःख नहीं होगा।

वह फिर चौकी पर आकर बैठ गया। उसने एक सिगरेट जलायी। चौक से माँ और मितु की आवाज सुनायी पड़ रही है। उसने सुनने की कोशिश की।

कमरे मे अधेरा बढ़ रहा है। शाम की मरियल रोशनी म चुपचाप पड़ा है ललित। थोरी देर बाद मितु दरवाजे पर आ खड़ी हुई। उसके कधा पर मुह रखे बच्चा सोया है।

'कैसे हैं?'

'अच्छा हू।'

'क्या हुआ है?'

उसने सोचा, नहीं बतायेगा। सुन कर मितु दुखी होगी। लेकिन दूसरे ही क्षण विचार बदल गया। मितु हमेशा सुखी क्यो रहेगी?

वह मीठी आवाज म बोला, 'कैसर।'

'क्या।'—मितु समझ न सकी।

उसने फिर कहा।

'झूठ।'

मितु की आवाज म इतना अपनापन है कि फिर सुनने की इच्छा होती है।

'सच।'—वह मुस्कराया।

'लेकिन मैं ने तो सुना है कि आप जल्दी ही शादी कर रहे हैं।'

ललित अवाक हुआ, 'कहा सुना?'

'मुहल्ले में सब कह रहे हैं। लड़की का नाम शाश्वती है।'

'नहीं। यह झूठ है।'

'झूठ?'

मितु क्षण भर चुप रह कर बोली, 'मुझे तो पता नहीं था। मौसी बाकी कि कालिक पन है।'

'मा नहीं जानती है।'

मितु का बच्चा रो उठा। 'मुन्ने का मच्छर काट रहा है। जाती हू।'

'अच्छा।'

मितु सकोच मे बोली, 'पूजा तक हू। बीच-बीच म मिलने आ जाऊगी।'

मितु जाने को मुड़ी कि ललित बोल उठा, 'क्या आयी थी?'

मितु रुकी और फिर सिर झुकाकर फुसफुसायी 'नहीं जानती।'

रात म ललित की एक आवाज पर रमेन उठ कर बैठ जाता है। उधर बगल पर हाथ पर रख कहता है, 'क्या है ललित?'

ललित गहरी सांस लेकर कहता है' 'अब नहीं बचूगा रमन।'

रमन सान्त्वना नहीं देता। कोई उत्तर नहीं देता। सिर्फ चुपचाप जगा बैठा रहता है। और फिर ललित धीरे-धीरे नींद म डूब जाता है।

## सैंतीस

*

कल लक्ष्मीपूजा हो गयी। आज तुलसी और मृदुला जाने की तैयारी कर रहे हैं। बीच-बीच म हाथ रोक कर मृदुला खिड़की के पास जा खड़ी होती है। बाहर दूर-दूर तक कलकत्ता दीख रहा है। उसने कलकत्ता नहीं देखा है। सच तो, कलकत्ता में रह कर भी मृदुला ने कलकत्ता नहीं देखा। बेहला में मां-बाप के साथ थी, शादी होने पर ढाकुरिया आ गयी। हां, बिभु के डर से शादी के पहले कुछ दिनों तक दमदम रही थी। बाटानिकल गार्डन, चिड़ियाखाना और कालीघाट में काली मंदिर भी उसने देखा है। यूं तो देखने-सुनने म स्कूल और कालेज की गिनती नहीं होती, फिर भी मृदुला अपने स्कूल और कालेज का गिन लेती है। इसके अलावा दो-चार रिश्तेदारों के घर गयी, बस। वह कलकत्ता को नहीं जानती। उसकी दृष्टि म कलकत्ता रहस्यमय है, भयावह है।

खिड़की पर खड़ी मृदुला की आंखों म आंसू छलछला रहे हैं। शादी के बाद एकबार भी बेचारी पीहर न जा सकी। ससुराल से पीहर है ही कितनी दूर। ट्राम-बस से तीस-चालीस मिनट का ही तो रास्ता है। फिर भी बेचारी मां से न मिल सकी। कई दिन पहले उसकी चिट्ठी पर उसके बापू आये थे। छोटा भाई टुपु भी साथ आया था। बापू एकदम टूट गये हैं। टुपु थोड़ा दुबला हो गया है। टुपु को लेकर मृदुला छत पर चली गयी थी। उसने दीदी को बताया था कि बिभु कितना खतरनाक गुण्डा बन गया है। उसके डर से मुहल्ला थर-थर कांपता है। सतमी के दिन गली म बिभु ने उससे पूछा था, 'क्या बे, तेरी दीदी कहां है?' बड़ा डर गया था बेचारा। सच-सच बता दिया था, 'मैं नहीं जानता हूं।' उसका जवाब सुन कर बिभु हंस कर बोला था, 'तेरी दीदी को जहन्नुम से उठा लाऊंगा साले। सुना है, साली ढाकुरिया में कहीं रहती है। बिशा कह रहा था कि एक काले-कलूटे मरियल आदमी के साथ उसने उसे घूमते देखा है।'—सुन कर मृदुला का कलेजा धक कर उठा था। लेकिन न जाने क्यों उस दिन बिभु के लिए उसे थोड़ा दुख भी हुआ था। टुपु ने बताया

था कि माँ की छाती में अकसर दर्द रहा करता है। डाक्टर का कहना है कि बीमारी मन की है। —मृदुला सोचती है कि एक-एक परिवार एक-एक किस्म का होता है। छोटी बुआ का परिवार उखेल है। किसी परिवार में लाभ ज्यादा है, तो किसी में कम। किसी के घर रोज भजन-कीर्तन होता है, तो किसी के घर दिन-रात गाली-गलौज। उनके पीहर में सब हरफार हैं। बिभु के डर से उस घर में दबे रहते हैं। कितना सुनसान था बहुला का घर! कितनी शांति थी! रात को खा-पीकर बैठक जमती। बापू-कोर्ट-कचहरी के किस्से सुनाते। भाई शहर में नौकर और छात्र। दीदी के सिरहाने पर रूखा-सूना डुबू रोने-सिसकने लगता। माँ मृदुला को डाँटती। बापू अपने मुवक्किल हरिदास की अलौकिक शक्ति के किस्से सुनाया करते। हरिदास गुरु भक्त आदमी था। वह लोगों को अपने गुरु की महिमा सुनाया करता था। बर्दवान के किसी गाँव में एक नौजवान मृत्यु-शय्या पर पड़ा था। उसकी बिमारी बढ़ी और माँ का रोना धोना उससे बर्दाश्त नहीं हुआ। फिर क्या था, जय गुरु, कह कर हरिदास रोगी के बिस्तर पर आसन जमा कर बैठ गया। रोगी की आँखें पथरा गयीं। शरीर काठ हो गया पर दम अटका रहा। कविराज ने नाड़ी देख कर कहा, रोगी मर चुका है। लेकिन पता नहीं प्रकृति के विरुद्ध कैसे कर जिन्दा है। सात दिन नहाना धोना छोड़ कर हरिदास बिस्तर पर बैठा रहा और रोगी मर कर भी जिन्दा रहा। गाँववालों से सारी बात सुन कर गुरुदेव ने कहा, जब हरिदास रोगी के पास अपनी चादर रख कर पैखाना-पेशाब जाय, उस समय उसकी चादर हटा लो, रोगी का दम निकल जायगा। प्रकृति के विरुद्ध जाना अच्छी बात नहीं। और हुआ भी वैसा ही। चादर हटाते ही रोगी ने दम तोड़ दिया। हरिदास के बारे में मृदुला ने और भी बहुत कुछ सुना है। उसने यह भी सुना है कि बाद में हरिदास का दिमाग खराब हो गया। उसने गुरुदेव के खिलाफ मुकदमा दायर कर दिया। गुरुदेव ने उसकी दी हुई जमीन-जायदाद वापस कर दी और अलौकिक शक्ति उससे छीन ली।

आज मृदुला तुलसी के साथ पलाशपुर जा रही है। पहले तुलसी पलाशपुर को गवारों का गाँव बताया करता था लेकिन वही पलाशपुर उसके लिए स्वर्ग बन उठा। वह जानती है कि तुलसी में यह परिवर्तन सिनेमा हाल की उस घटना के बाद हुआ है। डरपोक मृदुला। डरपोक तुलसी। खिड़की पर खड़ी मृदुला को अचानक बुजुर्गों की एक पंक्ति याद हो आयी। बड़े बुजुर्ग अक्सर कहा करते हैं—

जैसे को तैसा मिले, मिले नीच में नीच।
पानी में पानी मिले, मिले कीच में कीच॥

थोड़ा सुस्ताने के ख्याल से तुलसी सिगरेट सुलगाकर छत की सीढ़ी पर बैठा। मृदुला उसकी पीठ पर हाथ फेरती हुयी बोली, 'ललित बाबू की नौकरी तो तुम्हें मिल सकती है। वह तो नौकरी छोड़ ही देंगे।

'छि!'—मृदुला के मुह यह सुनना उसे कतइ अच्छा नहीं लगा। लेकिन ललित ने भी एक दिन कहा था, 'तुलसी, हेडमास्टर और सेक्रेटरी से कहूंगा कि मेरे बाद मेरी जगह तुम्हें रखा जाय।' और उसी दिन से उसके मन में इच्छा के विरुद्ध भी लोभ सिर उठाने लगा था। ललित की नौकरी मिल जाय, तो अच्छा ही रहेगा। छि। कितना नीच विचार है। तुलसी के मन में उसी दिन से अच्छे तुलसी और बुरे तुलसी का मल्ल-युद्ध चल रहा है। इसलिए मृदुला की बात सुनते ही उसके मन का अच्छा तुलसी बोल उठा, 'छि!'

तुलसी सिगरेट के कश ले रहा था और उसके अंदर अच्छे और बुरे तुलसियों में तू-तू मैं-मैं चल रहा था। बड़ी देर बाद गभीर स्वर में तुलसी बोला, 'आज ललित वाली साड़ी पहनना।

'क्यों?'

'यूं ही।'

'मैं तो नीले रंग की मुर्शिदाबादी—'

'नहीं। आज तुम वही साड़ी पहनोगी, जो ललित ने तुम्हें दी है।'

थोड़ी सकपका गयी मृदुला। बोली, 'अच्छा।'

कुछेक क्षण बाद मृदुला फिर प्यार से बोली, 'ललित बाबू की नौकरी

सुनते ही तुलसी उठ कर सीढ़ियां उतरने लगा। पीछे-पीछे मृदुला, 'लेकिन कलकत्ता तो हमें आना ही है। मैं सारी जिंदगी पलाशपुर नहीं रह सकती।'

पलट कर तुलसी चीख उठा, 'मैं पलाशपुर का हूं। सारी जिंदगी पलाशपुर रहूंगा। आइ हेट कैलकटा। कलकत्ता पर मैं थूकता हूं।

तुलसी को आशा नहीं थी कि उसे विदा करने इतने आदमी आयेंगे। हां, सजय का इतजार उसने जरूर किया था। उसने कहा था कि वह अपनी गाडी पर तुलसी

को स्टेशन पहुंचा देगा। संजय बात का धनी है। जो कहता है, वह करता है। लेकिन आज न जाने वह क्या नहीं आया?

बालीगंज स्टेशन के ओवर ब्रिज के नीचे रमेन, ललित और सार्जेण्ट की पोशाक में शंभू खड़े हैं। दूर से देखने पर ऐसा लगता है कि रमेन और ललित पुलिस की गिरफ्त में हैं। करीब आने पर लम्बी सांस छोड़कर तुलसी शंभू से बोला 'मेरे रहते-रहते अगर सार्जेण्ट बन जाते, तो मैं बड़ी शान से कलकत्ता की सड़कों पर मटरगश्ती करता।'

सुनकर तृप्ति की मुस्कान मुस्काया शंभू और फिर मृदुला के पास साड़ी में सिमटी किशोरी की ओर तिरछी आंखों से देखकर अकारण ही पिस्तौल के खोल पर हाथ फेरने लगा।

प्लेटफार्म की भीड़ में बापू और टुपु को दूर से ही देखकर मृदुला ने हाथ लहराया। टुपु ने देखा और अंगुली से बापू को दिखा दिया कि दीदी वहां हैं। बापू के चेहरे पर कितनी स्नेहिल मुस्कान फूट पड़ी। लाईन पार कर मृदुला बापू के पास जा पहुंची।

'मां को नहीं लाये?

'तबीयत खराब है। और फिर घर कैसे खाली छोड़ा जाय।'

मृदुला के पास इसका कोई जवाब नहीं। कितने विवश हैं बापू। हंसता-मुस्कराता टुपु कितना मुरझा गया है। सबके लिए जिम्मेवार है विभु। मन ही-मन विभु को कोसती हुई मृदुला बोली, पलाशपुर कब आ रहे हैं? आकर दो-तीन महीना रहिए न।' क्षण भर रुक कर मृदुला कुछ सोचकर फिर बोली, 'कलकत्ता छोड़कर पलाशपुर आ जाइए बापू।'

पलाशपुर के संबंध में मृदुला कुछ नहीं जानती। हाँ, उसके मन की आंखों में पलाशपुर एक स्वप्निल देश है। जहां यथार्थ की रूढ़ता नहीं। दिन रात की कचकच-झकझक नहीं। और न जहां विभु जैसे धूमकेतु का अस्तित्व है।

मरियल मुस्कान में मुस्करा कर बापू ने कहा, 'भागना ठीक नहीं बेटे, और कुछ दिन बर्दाश्त कर देख लूं। फिर जैसा होगा देखा जाएगा।'

जरा सा मौका मिलते ही टुपु मृदुला के कान में फुसफुसाया, 'मुझे पलाशपुर ले चलोगी दीदी? जीजाजी के स्कूल में पढ़ूंगा।'

आकुल आंखों से मृदुला ने चौदह वर्षीय मासूम टुपु, को देखा। क्या जवाब दे, बेचारी सोच न सकी।

'बिल्कुल अच्छा नहीं लगता दीदी।'

'क्यों रे।'

टुपु का चेहरा शर्म से लाल हो गया। उसकी आँखें झुक गयीं। वह क्यों कर दीदी से कहे कि बिभु के चेले-चामुडे उसे बिभु का साला कह कर आवाज देते हैं। वह कमजोर है, डरपोक है, मारपीट नहीं कर सकता। किसी का डरा भी नहीं सकता। कभी कभी पढ़ते वक्त लज्जा और अपमान से सिर्फ रोता है बेचारा।

मृदुला टुपु का कष्ट समझती है। वह जानती है कि टुपु निश्चिन्त, निरापद और सम्मानजनक परिवेश म रहना चहता है। लेकिन उपाय ?

टुपु की पीठ पर हाथ रख कर मृदुला स्नेहिल स्वर म बोली, 'तुम यहीं रहोगे तो माँ और बापू और भी टूट जायेंगे। बीच-बीच में पलाशपुर आ जाना।'

बुझ गया बेचारा। इतने दिनों तक उसने सोचा था, पलाशपुर की खुली हवा म रहेगा। दीदी उसे ले जायेगी। और फिर वह कलकत्ता वापस नहीं आयेगा।

बापू और दीदी बातें कर रहे हैं। अब टुपु वहां क्या करेगा ? वह धीरे-धीरे थोड़ी दूर पर जा खड़ा हुआ।

अन्यमनस्क टुपु सोच रहा है। वह शीघ्रातिशीघ्र किसी व्यायामागार म भर्ती होगा। द्राक्षासव के विज्ञापन म एक भीमकाय पहलवान की तस्वीर छपती है, वह वैसा ही बनेगा। उसके बाद बिभु और उसके चेले-चमुडों को वह चुटकी मे मसल देगा।

अन्यमनस्क टुपु चारों तरफ देख रहा था। अचानक उसकी नजर ओवर ब्रिज पर खड़े बिभु पर पड़ी और उसका चेहरा सफेद पड़ गया। उसने झटपट आँखें झुका लीं।

माल पत्तर के पास अपने माँ-बाप के साथ छोटे भाई का हाथ पकड़े अल्प वयस्क खड़ी है पिंटु। विशालकाय सार्जेंट बीच-बीच म चोरी-चोरी उसकी ओर देखता है। 'हु, पहाड़-सा शरीर और मुर्गी के चूजे-सा दिल। डरपोक कहीं का। आँखें मिलते ही आँखें झुका लेता है।' वह तो आँखों से कहना ही चाहती है कि वह उसे पसंद कर रही है। पुलिस सार्जेंट सचमुच मे मुझे बेहद पसद है।

ट्रक पर रखी बेंत की टोकरी इग कर पिंटु बैठ गयी। रूमाल से उसने नाक के नीचे पसीना पोछा। और फिर हथेली पर ठुड्डी रोप कर सार्जेंट की ओर देखती रही। काश! वह साहसी होता! आगे बढ़ कर उससे दो-चार बात करता! ढोंचू कहीं का! पता नहीं किसने इसे सार्जेंट की नौकरी दे दी! चोरी-चोरी देखता है और आंखें चार होते ही जमीन म गड़ जाता है। हिम्मत है आगे बढ़ो। दो-चार बात करो। कल स्कूल म सहेलियों के बीच चटखारे लेकर तुम्हारी चर्चा करूंगी मि० सार्जेंट।

इतने दिनों तक शम्भू ने लड़कियों के विषय म कभी कुछ सोचा तक नहीं। जिमनासियम के इंस्ट्रक्टर ने उसे कट्टर ब्रह्मचारी बनने की सलाह दी थी। आज तक वह सिर्फ अपनी तंदुरुस्ती से प्यार करता आया है। इसलिए लड़कियों से वह हमेशा

कतराता रहा है। लेकिन अब उसे अपने पहलवानी शरीर को मूल्य देने की इच्छा होती है। कोई उस पर मुग्ध हो! कोई उसे प्यार करे! उसके हृदय में नन्ही-मुन्नी चिड़िया की तरह कोई किशोरी पंख फड़फड़ाये!

शम्भू ने बड़ी गम्भीरता से सोचने की कोशिश की 'यह कैसा इशारा है? उसका ब्रह्मचारी मन आज क्या डगमगाने लगा है?'—लाख कोशिश कर भी वह कोई उत्तर न ढूँढ़ सका। उसे अपना परिवर्तन समझ में नहीं आया।

शुक्रवार के तीसरे पहर दफ्तर बंद होने के बाद संजय शायद दीघा गया है। हाँ, रिनि को उसने फोन पर सीधा ही बताया था। लेकिन उस दिन के बाद से उसका कोई अता-पता नहीं। इधर ललित और रमेन का कई दिन पहले ही वह निमंत्रण दे आया था, 'अगले रविवार को हमारे घर पेट पूजा करना।' और रमेन से उसने कहा था, 'अपना नमक खिला कर तेरा कर्ज चुकाऊँगा प्यारे। बुड्ढा हो रहा हूँ। अब धर्म-कर्म का थोड़ा खयाल रखना जरूरी है। इसलिए तुझ से उऋण होना चाहता हूँ।' रविवार को दोनों उसके फ्लैट में पहुँचे। मेजबान गायब। खैर, रिनि ने आवभगत में कोई कोर-कसर नहीं छोड़ी। लेकिन खाने की टेबिल पर अचानक रो पड़ी बेचारी। फफक फफक कर बोली, 'अक्सर एक अनजान आदमी मुझे फोन पर कहा करता है कि आपका पति मिस दास गुप्त के साथ घूमा करता है। उसी चुड़ैल के साथ संजय दीघा गया है।

यह सब सुन कर तुलसी का मन बड़ा खराब हो गया। संजय आज गाड़ी लेकर आनेवाला था, नहीं आया। इसका मतलब है कि वह अब तक दीघा में ही पड़ा है। कुछ सद्गुणों के ऊपर खड़ा है संजय। उसमें धैर्य, अध्यवसाय और कर्म के प्रति निष्ठा है जो उनमें से और किसी में नहीं। यदि संजय का पतन हो, तो तुलसी की दृष्टि में ढेर सारे सद्गुणों का मूल्य खत्म हो जायेगा।

ट्रेन आ रही है। तुलसी चिल्ला कर बोला, 'शम्भू, तुम तो पहलवान हो। माल-पत्तर उठाने में मदद करो। भाई!'

शम्भू ने सुना और ट्रंक के करीब आ खड़ा हुआ। ट्रंक पर बैठी पिंटु उठ खड़ी हुई। वजन का अंदाज लगाने की खातिर झुक कर शम्भू ने ट्रंक की एक कड़ी पकड़ी और उसकी नाक मीठी-मीठी गंध से भर गयी। नहीं, यह स्नो-पाउडर की गंध नहीं। यह तो किशोरी-देह के पसीने की मदमाती गंध है। उस पर नशा छा गया। एक ही हाथ से उसने ट्रंक उठा लिया। वह जानता है कि इस तरह अपनी ताकत की नुमाइश करना बेवकूफी है। चारों तरफ से लोग अवाक होकर उसे देख रहे हैं। लेकिन वह कर भी क्या सकता है? ताकत के अलावा उसके पास और है क्या जो वह सामने खड़ी लड़की को दिखा सके?

ट्रंक फिरसे नीचे रख कर बुद्धू जैसी मुस्कान में वह पितु से बोला, 'भारी नहीं है।'

'क्या!' अवाक् होकर पितु बोली, 'शीशे के बर्तन और किताबों से ठसाठस भरा है। खूब भारी होना चाहिए था।'

शंभू परितृप्ति की बुद्धू जैसी मुस्कान में मुस्कराया।

बड़ी देर से रमेन की आँखें ओवर ब्रिज पर खड़े दुर्गापुर के उस छोकरे पर टिकी हैं। पता नहीं गौर से छोकरा क्या देख रहा है?

टुपु ने ओवर ब्रिज की ओर देखा और आँखें झुका लीं। बेचारे का चेहरा कितना सफेद पड़ गया है। रमेन की समझ में नहीं आ रहा था कि दुर्गापुर का छोकरा किसे देख रहा है। कुछ सोच कर वह तुलसी के साले के पास आ खड़ा हुआ। उसके कंधे पर हाथ रख कर बोला, 'क्या बात है?'

टुपु ने चौंक कर रमेन की ओर देखा और फिर जोर-जोर से सिर हिला कर बोला, 'नहीं, कुछ तो नहीं।'

लेकिन रमेन को शांति नहीं मिली। न जाने क्यों उसका मन किसी विपत्ति की गंध पा रहा। वह खड़ा खड़ा उस छोकरे की ओर देखता रहा। थोड़ी देर बाद वह छोकरा धीरे-धीरे सीढ़ियाँ उतर कर भीड़ में चलता हुआ आगे बढ़ा। वह रमेन की बगल से निकला, पर रमेन को देखा तक नहीं। और फिर वह भीड़ में खो गया।

तुलसी का साला सट कर खड़ा है। बात करते-करते अचानक मृदुला की बोलती बंद हो गयी। न जाने भीड़ में वह किसे देख रही है! उसके होठ क्यों थरथरा रहे हैं? अचानक तुलसी के ससुर को क्या हुआ? उनकी आँखें क्या भयभीत हो उठीं? जल्दी-जल्दी वह साँस क्यों ले रहे हैं?

रमेन ने इन प्रश्नों पर सोचना शुरू ही किया था कि तुलसी की आवाज उसके कानों से टकरायी, 'रमेन, हमारे साथ चलोगे?'

'जाऊँगा।'—रमेन ने तत्क्षण उत्तर दिया।

मृदुला को देख कर विभु का मन रो उठा। यह तो वह मृदुला नहीं जिसे वह प्यार करता था। यह क्या हो गया भगवान! कहाँ गयी मृदुला की मादकता! कहाँ गयी उसकी मुस्कान। इस रूखी सूखी मृदुला से वह क्या माँगे?

सोचा था मृदुला के पीछे पीछे पलाशपुर जायेगा। और फिर एक दिन दोपहर को उसका पति स्कूल में होगा, वह उसका दरवाजा खटखटायेगा। उससे पूछेगा, 'मैं क्या मरियल स्कूल मास्टर से भी बुरा था? देखो मृदुला, देखो, आज मैं तुम्हारी वजह से भागा भागा फिरता हूँ। पुलिस मेरे पीछे पड़ी है। लेकिन यह सब वह कहेगा किसे? नहीं, अब वह मृदुला से नहीं मिलेगा।

कौतूहल है । दो-चार बात करके ही वह समझ गयी कि गांव सुख और शांति की जगह नहीं है ।

लालटेन की मटमैली रोशनी में तुलसी ने जितनी बार मृदुला को देखा है, उतनी ही बार वह थोड़ा नर्वस हुआ है । इतना करने के बाद भी यदि मृदुला सुखी न हो, तब उसका सुख है कहां ?

नयी चौकी के ऊपर अभी-अभी बिछे बिस्तर पर रमेन के सामने बड़ी शान से बैठा तुलसी सिगरेट का एक लंबा कश लेकर बोला, 'इस जगह का बड़ा विकास होगा, समझे न ? सोचता हूं, यहीं जमीन-जगह लेकर बस जाऊंगा ।'

बात मुंह से निकली और उसे खयाल आया कि जिससे वह यह सब कह रहा है, उसके लिए जमीन-जायदाद कोई अहमियत नहीं रखती । मन-ही मन वह बड़ा शर्मा गया । हमेशा रमेन के सामने उसने स्वयं का नगण्य महसूस किया है ।

सुबह सुबह रमेन जाने को तैयार हुआ । लेकिन मृदुला ने रोक लिया । बोली, 'अभी जाकर क्या करेंगे ? कोई काम तो है नहीं । आज भर रह जाइये न ।'

दरअसल अब तक उसके मन में बिशु दहशत बना है । पता नहीं किस वक्त बिशु आ धमके । तुलसी की हिम्मत तो वह जानती है । बिशु को देखते ही वह बगलें झांकेगा । बिशु जैसे खतरनाक गुंडे का मुकाबला तो रमेन जैसा लंबा-चौड़ा हिम्मती मर्द ही कर सकता है । वह कुछ दिन साथ रहे तो अच्छा है । दो कमरों में से एक कमरा उसके लिए छोड़ देगी ।

रमेन रुक गया ।

बालीगंज स्टेशन से बिशु टैक्सी से वापस आ रहा था । गड़ियाहाट पार करने पर उसने देखा, आगे-आगे टैक्सी जा रही है । उस पर एक युवक और युवती एक दूसरे से चिपके बैठे हैं ।

बिशु ने ड्राइवर से कहा, 'ओवरटेक करो सरदारजी ।'

ड्राइवर उसे थोड़ा-थोड़ा पहचानता है । उसे कौन नहीं पहचानता ? जो नहीं पहचानते, वे भी पहचान लेते हैं ।

सरदार जी ने गति बढ़ा दी । तिकोनिया पार्क के पास खिड़की से मुंह बढ़ा कर बिशु बोल उठा, 'अबे साला ठीक से बैठ ।'

छोकरा चौंक उठा । उस टैक्सी के ड्राइवर ने एक नजर बिशु को देखा ।

आगे बढ़ कर बिशु ने पलट कर देखा, प्रेमी-प्रेमिका अलग-अलग बैठे हैं । उसके चेहरे पर परितृप्ति की हंसी खेल गयी ।

'साला प्यार करेगा । देश भूखों मरता है और साले इश्क फरमाते हैं ।'

आजकल कभी-कभार बिभु मे अजीबो गरीब खयाल पैदा होता है। लड़का-लड़की साथ-साथ चल रहे हैं। बिभु सामने से आ रहा है। उसकी नजर पड़ी और वह दोनों के बीच से निकल गया।

एक दिन रामबिहारी मोड़ के करीब रसा रोड पर बिभु ने ऐसा ही किया। लेकिन इस बार पीली गजी पहना छोकरा कमरती जवान था। पलट कर उसने बिभु के कंधे पर हाथ रखा।

बिभु पलट कर खड़ा हुआ। मन ही-मन मुस्कराया। वाह बेग! छोकरी पर बहादुरी का सिक्का जमाना चाहता है।

बिभु ने ताकत इस्तेमाल नहीं किया। ठंडे दिमाग से छोकरे की आखों म सिर्फ दो उगलिया घुसेड दीं।

यही तरीका है, समझे बेग। लाख गुस्साने पर भी तुम किसी की आखा में उगलिया नहीं घुसेड सकते। तुम्हें दया आयेगी।

हृदयद्रावक चीख में छोकरा चीख उठा। पहले छोकरी कुछ न समझ सकी। और जब समझ में आया, तब वैनिटी बैग हथियार की तरह ऊपर उठाये बिभु के पीछे दौड़ी। बिभु चलती बस पर चढ गया। उसने पलट कर देखा, छोकरा सड़क पर तड़प रहा है। लोगों की भीड़ जम रही है।

प्यार! साला प्यार करता है। देश भूखों मर रहा है। दो मुट्ठी अनाज के लिए खून खराबा हो रहा है और साला को प्यार का चस्का लगा है। यह प्यार का वक्त है! प्यार जिंदगी म क्या देता है! प्यार कुछ देता नहीं बेग, बल्कि सब कुछ छीन लेता है। एक छोकरी के लिए खुद का बर्बाद करना कहा की अक्लमदी है? खबरदार! बिभु दादा के राज्य में लैला मजनू की आख-मिचौली बर्दाश्त नहीं की जायेगी।

टुपु जिस दिन दीदी को गाड़ी पर चढा आया था, उसके दूसरे दिन उसने फुटपाथ की दुकान से एक चाकू खरीदा था।

दोस्ता ने देख कर कहा था, 'बड़ा अच्छा चाकू है। क्या करोगे?'

'देखना।'

टुपु है तो बच्चा लेकिन दास्ता को उसने बच्चों जैसा जवाब नहीं दिया था। उस दिन स्टेशन पर जब बिभु उसकी दीदी के सामने से गुजरा था, उसने दीदी के चेहरे पर आतक देखा था। बापू की निवशता भी उसकी आंखों से छुप न सकी थी। उस दिन से उसका मन बडा बेचैन रहा करता था।

रात को दीदी के सोनेवाले कमरे म एक पुराना तकिया दीवार के सहारे खड़ा कर उसने चाकू चलाने का पहला पाठ लिया। आश्चर्य है, ठीक चाकू लगे आदमी की तरह तकिया सामने की तरफ झुक गया।

सिर्फ ट्रुपु ने समझा, ऐसा होगा। और किसी को पता तक न चला।

यह खुला चाकू जेब में रखता है। कभी-कभी जेब में हाथ डाल कर देखता है, चाकू है या नहीं। कई बार उसका हाथ कटा है। चाकू की नोक उंगली में घुसी है। आजकल ट्रुपु जासूसी उपन्यास खूब पढ़ता है। बाहर से वह बड़ा भावुक और गंभीर दीखता है। कोई बिभु का साला कह कर पुकारता है, तो वह पलट कर भी नहीं देखता।

कई दिन रास्ता चलते बिभु से आंखें मिली हैं और वह आंखें झुका कर परे हट गया है।

कइयों से उसने सुना है, पेट ही सबसे अच्छी जगह है। वहां हड्डी नहीं है। चाकू घुमाओ और थोड़ा तिरछा कर खींच लो। बस।

## उनतालीस

*

एक पहर दिन चढ़ गया फिर भी संजय बेसुध सोया है। कल आधी रात को गाड़ी से लंबा रास्ता तय कर संजय वापस आया है। रूखे-सूखे चेहरे पर पाप का कोई चिन्ह नहीं। खिचड़ी दाढ़ी। होठों पर हल्की फुल्की मुस्कान। शायद सपना देख रहा है संजय। थका-मांदा संजय कितना मासूम दीखता है।

रिनि ने बार-बार यह दृश्य देखा। कल रात कालिंग बेल की आवाज सुन कर उसकी नींद टूट गयी थी। दरवाजा खोल कर उसने देखा था, हाथ में सूटकेस लिए हंसता मुस्कराता संजय खड़ा है।

'पिन्टू कहां है?'

पिन्टू! पिन्टू याद था क्या?

फर्श पर सूटकेस रख कर संजय ने मसहरी उठायी थी। और फिर गहरी नींद में डूबे पिन्टू को प्यार किया था। एकदम बाप की तरह।

शायद वह रिनि की आंखों के सामने स्वयं को अपराधी महसूस कर रहा था। आज तक तो उसने और कभी बिना हाथ-मुंह धोए पिन्टू को प्यार नहीं किया।

लेकिन रिनि यह जानती है। यह अपराध बोध संजय में ज्यादा दिन नहीं टिकेगा। शादी के बाद शुरू-शुरू में वह बाहर शराब पीता और जर्दा पान खाकर घर घुसता। लेकिन रिनि को भभक मिलती, और वह कुछ न जानने का स्वांग रचती।

धीरे-धीरे सजय का साहस बढ़ता गया और ह्विस्की की बोतल घर आने लगी। आजकल फ्रिज मे ही ह्विस्की की बोतल हमेशा मौजूद रहती है।

एक दिन दीघा घूमने जैसा प्रोग्राम भी सजय रिनि की आंखों के सामने बनाएगा। एकदम खुल्लम-खुल्ला। उस दिन! नहीं, नहीं, रिनि उस दिन की कल्पना भी नहीं कर सकती।

सजय ने अपने आने की खबर नही दी थी। इसलिए उसके लिए खाना नहीं बना था। यू तो सजय ने कहा था कि वह खाकर आया है। लेकिन उसका चेहरा बता रहा था कि वह भूखा है।

आमलेट, टोस्ट और काफी बनाकर रिनि सजय के सामने बैठी थी। वह खा रहा था और गौर से देख रही थी रिनि। समुद्री हवा म सजय थोड़ा काला हो गया है।

पलग पर लबा होते ही सजय गहरी नींद म डूब गया था और आसूओं म डूब गयी थी रिनि। कलप-कलप कर रोयी थी बेचारी।

सुबह से घुम फिर कर रिनि खाने के कमरे म आयी है। अकारण ही सजय का तकिया ठीक किया है। पिकू को डाइनिंग टेबिल पर सुलाया है ताकि उसकी चिल्ल पो से सजय की नींद न टूट जाए।

पिकू अब घुटनो के बल चलता है। डगमगाते पैरों से खड़ा होता है और फिर धप् से बैठ जाता है। कहीं गिर न पड़े! इस डर से रिनि बार-बार सोने के कमरे से खाने के कमरे और खाने के कमरे से सोने के कमरे का चक्कर लगाती रही है। भूख-प्यास एकदम भूल गयी है बेचारी।

करीब नौ बजे टेलिफोन की घटी बज उठी। रिनि का कलेजा धक् कर उठा। अभी-अभी उसे पहली बार अपनी मौजूदगी का एहसास हुआ।

'कौन?'

'मैं।'

'सजय बाबू आए?'

उसने कभी अपना नाम नहीं बताया। लेकिन रिनि अब उसकी आवाज पहचानती है।

'हां!'—रिनि कांपती आवाज मे बोली। पहले फोन पर उसकी आवाज सुनते ही टेलिफोन रख देती थी। आजकल नहीं रखती। सजय के बारे में वह तरह-तरह की खबरें देता है। अब दोनों मे विचित्र किस्म की मित्रता हो गयी है। शायद वह उस लड़की से प्यार करता है।

'आपने उनसे कुछ कहा?'

'क्या कहू!'

'कहना चाहिये। वरना ऐसा ही होता रहेगा और फिर हम कुछ न कर सकेंगे।'

रिनि चुप रही।

'वह इतनी बड़ी बेवकूफी कर सकती है, मैं सपने में भी नहीं सोच सकता था। इंसान इतना कैसे बदल जाता है!'

रिनि कुछ न बोली।

'आज मैं सजय बाबू से उनके दफ्तर में मिलूंगा। उन्हें समझाने की कोशिश करूंगा। अगर समझ गये तो ठीक है वरना'

वह बीच में रह गया। रिनि का दिल धक कर उठा, 'वरना आप क्या करेंगे?'

'कुछ करूंगा। समधिन भाई। अणिमा का बताता हूँ। आपको भी बताता हूँ।'

रिनि ने फोन रख दिया।

अणिमा का गोल्डमेडल इंजीनियर प्रेमी शुभमय घोषाल सजय के चैंबर में सजय को पुराणपंथियों की तरह अतीत, समाज और चरित्र पर भाषण दे रहा था। सजय मुस्कराता हुआ सुन रहा था।

शुभमय का भाषण खत्म हुआ। सजय ने काफी मंगायी। काफी खत्म हुई। सजय ने सिगरेट केस बढ़ा दिया। शुभमय ने सिगरेट जलायी।

सिगरेट का एक लम्बा कश लेकर सजय बोला, 'अणिमा के लिए और भी कई नौजवान मेरे पास आये थे। पता नहीं उसके चाहनेवाले कितने हैं।'

सजय एकदम झूठ बोला पर शुभमय का चेहरा लाल हो गया।

'अणिमा को तो आप जानते ही हैं। उसे आप सभाल नहीं सकेंगे। मौका मिलते ही वह आपको ठेंगा दिखा देगी। इतना पक्का खिलाड़ी होकर भी मैं उसे सभाल नहीं पाता। आप चरित्रवान हैं। भोले-भोले हैं। आपको तो वह नाकों चने चबा देगी।'

शुभमय चुप रहा। उसके चेहरे पर लाली बरकरार रही।

सजय अपना चेक बुक उसकी ओर बढ़ा कर बोला, 'यह देखिये, चार दिन में हम चार हजार खर्च कर आये हैं।'

शुभमय इंजीनियर है। नयी-नयी नौकरी है। मुश्किल से हजार रुपया वेतन होगा। शायद वह अमीर बाप का बेटा भी नहीं है। इसलिए रुपयों की बात सुन कर उसकी भौंहें सिकुड़ गयीं।

'छि! बंगाली लड़कियों का कितना पतन हो गया!'—कह कर शुभमय उठ खड़ा हुआ। झिझकता हुआ बोला, 'आपकी पत्नी को मैं ही फोन किया करता था। आज सुबह भी मैं ने उन्हें फोन किया है।'

सजय खुश होकर बोला, 'अच्छा, तो आप फोन किया करते थे। जब जी चाहे किया करें। रिनि खुश होगी। बड़ा अकेलापन महसूस करती है बेचारी। आप फोन करेंगे, तो उसका जी बहल जायगा।'

शुभमय चुपचाप निकल गया। उसने सजय से ऐसी बात की आशा न की थी। उसका सस्कार व्यथित हो उठा था।

उसके बाद सजय जब तक दफ्तर म रहा, एक अजीब किस्म की बेचैनी उसे दबोचे रही। अकारण ही उसका मन किसी विपत्ति की आशका से छटपटा रहा था।

सजय की गाड़ी गैरेज म थी। दफ्तर से निकलकर वह पैदल चल पड़ा। धरमतल्ला के गोल पेशाबघर में पेशाब कर वह निकला ही था कि गुडों ने घेर लिया। उसने एक के पेट पर लात जमायी। कइयों का घूसा मार कर गिरा दिया। लेकिन गुडों को तो मारने और मार खाने की आदत होती है। वे सजय पर टूट पड़े। वह जमीन सूघने लगा। पेट की ह्विस्की मुह से निकलने लगी।

एक जमाना था जब सजय दस-बीस पर भारी पड़ता था। उसम गजब की फुर्ती थी। अपने दोस्तों के बीच वह मारने और मार खाने में बेजोड़ था। गुडे भी उसे दादा कहा करते थे। लेकिन अब वैसी बात नहीं। मार-पीट किये मुद्दत बीत गयी न।

मार खाकर सजय कई दिन बिस्तर पर पड़ा रहा। वह मन-ही-मन हसता और रिनि को सबोधित कर कहता, 'यह सब उम्र की वजह से हुआ रिनि। वे सिर्फ चार थे। एक जमाना था, जब मैं दस-बीस पर भारी पड़ता था। मैं नहीं जानता, वे कौन थे? मैं तो यह भी नहीं जानता कि मुझे क्या मारा गया। मनुष्य की जिंदगी मे उम्र से बड़ी और कोई ट्रेजेडी नहीं होती। उम्र ढलते ही प्रायश्चित शुरू होता है रिनि। मैं ने जिन्दगी मे कोई अच्छा काम नहीं किया। अब प्रायश्चित करने का वक्त आ गया है। मैं गलत ढग से रुपये कमाता हू। अवैध प्रेम करता हू। लेकिन यह सब मेरे मन म उठते वैराग्य को छू भी नहीं पाता। तुम देखना, एक दिन घर-द्वार छोड़ कर मैं रमेन की तरह सन्यासी बन जाऊगा।

लेकिन जाना नहीं होता।

कभी-कभी अचानक नींद टूट जाती है और वह निंदियारी आवाज म बोलता है, 'रिनि!'

'ऊ!' नींद मे लिपटी आवाज से रिनि जवाब देती है।

'रिनि!'

'ऊ!'

सजय फुसफुसा कर बोलता है, 'मैं तुम्हें बहुत प्यार करता हू। फिर से भी

मुझे बेहद प्यार है। घर-द्वार, रुपया-पैसा, सबसे मुझे प्यार है। तब, तब मैं सन्यासी कैसे बनूंगा रिनि?

रिनि इन बातों पर विश्वास नहीं करती। चुप रहती है, फिर मा जाती है।

संजय को बड़ा खाली-खाली लगता है। पता नहीं कौन उसे झकझोरने रहता है और उसके मुंह से झड़ी या निकल पड़ती है। वह रमेन नहीं होगा। हां, वह कभी रमेन नहीं बन सकता।

## चालीस

*

रमेन अपना बिस्तर और टीन का बक्सा छोड़कर गया है। साधारणत आदमी कहीं कुछ छोड़ जाता है, तो वापस आता है। लेकिन रमेन पर यह नियम लागू होगा क्या? रमेन क्या अपना सामान लेने वापस आयेगा? नहीं, ललित को तो ऐसा नहीं लगता।

लेकिन न जाने क्यों उसका अवचेतन रमेन के आने की प्रतीक्षा करता है। रमेन जब तक उसके घर था, दोनों दोस्त एक ही बिस्तर पर सोते थे। आधी रात हो या सुबह का तारा आसमान में निकला हो, असहाय ललित मीठी आवाज में पुकारता, 'रमेन!' और तत्क्षण रमेन का उत्तर मिलता, 'क्या?' ललित पूछता, 'अब तक जगे हो?' उत्तर मिलता, 'हां।' और निश्चिंत होकर वह सो जाता। सारी रात रमेन को जगते देख कर वह बड़ा आश्चर्यित हुआ है। वह पुकारेगा, अगर उसकी पुकार का जवाब न मिले, क्या यही सोच कर रमेन रात-रात भर जगा रहता था? तेरा जवाब नहीं रमेन। कहां! और तो कोई मेरे लिए सारी रात नहीं जगा!

कितनी सारी बातें ललित की आंखों के सामने तस्वीर बन कर उभर आती हैं। उस दिन अपर्णा की कार रमेन ने उसके हाथों छोड़ दी थी। उसने मैदान के कई चक्कर लगाये थे। एक सुन्दरी की कार को ओवरटेक किया था। भवानीपुर तक वह कार दौड़ा कर आया था। उसकी बगल में रमेन आंखें बंद किये चुप बैठा था। कहां! और किसी को उस पर इतना भरोसा नहीं! रमेन ही तो उसे श्मशान खींच कर ले गया था। उसके नास्तिक से रमेन ने ही हरि भजन कराया था।

आजकल भी जब रात में नींद टूट जाती है, वह निंदियारी आवाज में पुकारता है, 'रमेन?' उत्तर नहीं मिलता। और फिर अचानक एक विशेष प्रकार की शून्यता उसके सिरहाने प्रेतिनी की तरह आ खड़ी होती है।

रमेन क्या फिर आयेगा ? यदि समय पर नहीं आये ? मरते वक्त रमेन पास हो, तो शायद ललित को ज्यादा कष्ट नहीं होगा।

विजया दशमी के दस दिन बाद एक दिन शाश्वती मा को विजया प्रणाम करने आयी।

मां के पांव छू कर मुस्कराती हुई बोली, 'बडी देर हो गयी।'

खिलते गुलाब-सी मुस्कान। चमचमाते दांतों पर सुबह की धूप और अमरूद के हरे-हरे पत्तों की हरी-भरी आभा छिटक गयी।

इच्छापूर्वक शाश्वती ने ललित की उपेक्षा का स्वांग भरा। 'कैसे हैं ? अच्छे हैं न!' बस, ऐसी ही दो-चार बात कर वह मा के पास चौके में जा बैठी। बडी देर तक मां से गपें करती रही।

जाते वक्त ललित उसे छोड़ने गया। दोनों साथ-साथ चले। चुपचाप। शर्म के मारे दोनों की बोलती बंद थी। शाश्वती ने रमेन से कहा था कि वह ललित से कहे कि शाश्वती उसे प्यार करती है। रमेन ने ललित से कहा था। इसलिए दोनों शरमा रहे थे। रमेन ने कहा है, पर दोनों एक-दूसरे से वह बात नहीं कह पाते।

'आपके सन्यासी दोस्त कहां हैं ?'

'क्या पता !'

रमेन ने कहा था कि वह कैन्सर की दवा जानता है। कैन्सर की दवा अब तक बाजार में नहीं आयी। इसका यह मतलब तो नहीं कि दवा है ही नहीं। दवा तो है ही, लेकिन जो जानता है, वह किसी को बताता नहीं। शाश्वती तो यह भी जानती है कि जाननेवाला और कोई नहीं, बल्कि रमेन है। भगवान ने ही उसे भेजा है। वह फिर ठीक वक्त पर आयेगा और ललित को अच्छा कर देगा। शाश्वती यह बात मुंह से नहीं बोलती, पर मन-ही-मन विश्वास करती है।

# एकतालीस

*

कालीपूजा की रात बिशु मर गया। अद्भुत मौत मरा बिशु। मुहल्ले म पूजा थी। उन लोगा के ट्रक से बोसपाड़ा के एक मडप की स्टिक लाइट फूट गयी। मडप के लड़कों ने ट्रक घेर लिया।' पहले लाइट, फिर प्रतिमा।'—बोस पाड़ा के लड़के अपनी जिद पर अड़े थे।

दो-तीन छोकरों ने दौड़ कर मुहल्ले म खबर दी। बिशु ने सुना और बौखला उठा। बिशु दादा के रहते मुहल्ले की नाक नहीं कट सकती। बोस पाड़ा की ईट से ईट बजा देगा बिशु। वह न शहीद बन सका, न सैनिक।—इसका क्षोभ उसके दिल में कांटों की तरह चुभता रहता है। वह कुछ कर दिखाना चाहता है। वह कुछ कर दिखायेगा। बोस पाड़ा म बिशु खून की नदी बहा देगा।

बिशु दादा के पीछे उसके चेले-चामुडे चल पड़े। बोसपाड़ा के लिए एक चक्करदार रास्ता है। थोड़ा लम्बा पड़ता है। बिशु उस रास्ते से नहीं गया। वह अपने दलबल के साथ महीन के खटाल से होता हुआ बस्ती, नाला और मैदान पार कर बोस पाड़ा पर चढ गया। बमा के धमाके। चाकुओ की चमक। मडप के लड़के मैदान छाड़ कर भागे। दो तीन बुरी तरह घायल भी हुए। बिशु के उभरते चेलों ने बिजली के लट्टू फोड़ने म महारत दिखायी। अंधेरे मडप म असहाय काली हाथ म खड्ग उठाये बिशु की दादागीरी देखती रही। बोस पाड़ा पर अपनी दादागीरी का झडा गाड़ कर वह अपने दलबल के साथ ट्रक पर प्रतिमा लिए अपने मुहल्ले म वापस आया।

अधेरे मे ही वह घटना घटी। अपने ही मुहल्ले के सीमाने पर वह घटना घट गयी। बिशु के काली-भक्त चेले मडप के पीछे गोश्त बना रहे थे। बगला (देसी शराब) की बोतला से भरी एक टोकरी पड़ी थी। जम कर जुआ चल रहा था। यारा के बीच मा-बहन का उद्धार हो रहा था। गोश्त और बगला की गध से हवा बोझिल हो गयी थी।

महीन के सटाल के उस पार अमावस की काली कलूटी रात पसरी थी। कच्चे रास्ते के किनारे पक्का मकान बन रहा है। उस मकान की दीवार पर बैठा बिभु भूख बढाने की खातिर बगला पी रहा था। एक बोतल कब की खत्म हो चुकी थी। दूसरी बोतल आधी रह गयी थी। दुनिया से बेखबर बिभु अपनी दुनिया म डूबा था। उसे क्या पता कि अधेरे मे दुबकी उसकी मौत उसका इतजार कर रही है।

लड़खड़ाते कदमा से बिभु मडप की ओर बढा। सामने झुरपुटा अधेरा। थोड़ी ही दूर पर रोशनियों म नहाता मडप। बिभु ने देखा अधेरे से एक छोकरा उसकी ओर आ रहा है। वह सतर्क न हीं हुआ। सतर्क होने का कोई कारण भी नहीं था। आज कितने ही छोकरे सारी रात जगे रहेंगे। छोकरा एकदम करीब आ गया। जब तक बिभु कुछ समझे, तब तक घटना घट गयी। उसके पट में चाकू घुस गया। नौसिखुआ हाथ, फिर भी जो होना था, हो गया। बिभु चीख उठा, 'चि ..झु !'

मुहल्ले के छोकरों के बयान पर पुलिस बोस पाड़ा के कई छोकरों को गिरफ्तार कर ले गयी। लेकिन आज तक बिभु की हत्या का कोई सुराग नहीं मिला।

लेकिन उस रात टुपु को तेज बुखार आया था। हा, टुपु को ऐसा ही महसूस हुआ था। मां परेशान थी। बापू भी कइ बार अदर बाहर कर चुके थे। घर में कदम रखते ही टुपु बाल उठा था, मुझे बुखार है। मां ने उसके कपाल पर हाथ रखा था, पर कुछ समझ न सकी थी। लेकिन उसे महसूस हो रहा था कि उसे बुखार है।

बिस्तर पर आंखें बद किये वह मन-ही मन काप रहा था। बिभु के पट में उसका चाकू रह गया था। उसके सभी दोस्त उसका चाकू पहचानते हैं। पुलिस उसे पकड़ ले जायगी। और बिभु अगर न मरा तो

दूसरे दिन सुबह बापू मां से कह रहे थे, बोस पाड़ा के किसी लड़के ने कल रात बिभु को चाकू घोंप दिया। रात म ही हरामजादा मर गया।

मुद्दत बाद टुपु ने अपने बापू के चेहरे पर हसी देखी थी। मां बेहद खुश हुई थी। लेकिन टुपु उस दिन घर से बाहर नहीं निकला था।

पितु के मार्निंग स्कूल में ग्यारह बजे छुट्टी होती है। उस समय अक्सर उसकी सहेलियां स्कूल के सामने सड़क पर साइड कार सहित लाल रग की मोटर साइकिल पर पुलिस सार्जेंट शभू को बठा देखती हैं। सहेलियां हसती हैं। पितु से ठिठोली कर करती हैं, 'बम बाज बाजू (मजनू)।'

पितु का चेहरा थोड़ा लाल हो जाता है। लेकिन गर्व से उसका मन मोर की तरह पख फेला कर नाचने लगता है।

दो महीने के अन्दर ही विमान के दिमाग से बचा-खुचा आकाश भी निकल गया। अब वह सोच-समझ सकता है। उसे अस्पताल की छत पर घूमने की इजाजत भी मिल गयी है। वह सुबह शाम फुलवारी में घूमता है। रंग-बिरंगे फूलों को देख कर उसकी आँखें जुड़ा जाती हैं। सुगन्ध से उसका मन सुगन्धित हो जाता है। मालियों के साथ वह दोस्त जैसी बातें करता है।

अपर्णा गाड़ी लेकर आती है। उसे देख कर विमान मुस्कुराता है। दोनों फुलवारी में टहलते हैं। बातें करते हैं। अपर्णा बहुत खुश नजर आती है।

और कुछ दिन विमान अस्पताल में रहेगा। उसके बाद उसे छुट्टी मिल जायगी। और फिर दोनों मिल कर स्वर्ग बनायेंगे।—अपर्णा आजकल दिन-रात यही सोचा करती है।

कभी-कभी अपर्णा का मन रमेन के प्रति कृतज्ञता से भर उठता है। रमेन ने ही तो उसे कहा था कि विमान बिना किसी स्वार्थ के उसकी रक्षा करेगा। उस दिन रमेन की बात सुन कर वह चौंक पड़ी थी। लेकिन उसने सच कहा था। सचमुच में विमान के अलावा और तो उसका कोई है नहीं।

*विमान को छुट्टी मिल गयी। गाड़ी में अपर्णा की बगल में बैठा है विमान।*

'हम नयी जगह जा रहे हैं। तुम ना-नुकुर नहीं करोगे।'

नहीं विमान ने ना नुकुर नहीं किया। बचपन से उसने सुख नहीं देखा। सुख की उसे चाहत भी नहीं थी। लेकिन अब वह सुख का स्वाद चख चुका है। दो महीने अस्पताल में रह कर उसने रुपयों की महिमा देख ली है। रुपयों की बदौलत वह अच्छा हुआ है। अब वह चाह कर भी अपने दिमाग में आसमान नहीं घुसा सकता। आसमान उसके सिर से ऊपर, बहुत ऊपर चला गया है।

उसने एकबार निस्पृह आँखों से नीले आकाश की ओर देखा। और फिर आँखें फेर कर उसने आसमानी रंग की साड़ी में अपर्णा को देखा।

अपर्णा उसकी ओर देख कर मुस्करायी। बड़ी मीठी आवाज में बोली, 'तुम्हें कभी कोई दिमागी बीमारी थी ही नहीं। डाक्टरों का कहना है

,क्या ?'

'पौष्टिक भोजन का अभाव और हद से ज्यादा सोचना अच्छा नहीं। तुम्हें जो कुछ हुआ, उसके यही दो कारण हैं। तुम्हारे दिमाग में किसी किस्म की गड़बड़ी नहीं, समझे न ?'

हां, विमान अब ऐसा महसूस करता है।

'पिताजी राजी हैं ?'

'समझा नहीं।'

लजीली मुस्कान मे बोली अपर्णा, 'तुम तो कभी मेरे बारे में कुछ सोचते ही नहीं। अगर सोचते, तो समझ जाते।'

हा, कल का विमान कुछ और था, आज का विमान कुछ और है। वह अपर्णा से प्यार करता है। अपर्णा और वह! वह और अपर्णा! नहीं, अब अपर्णा का अभाव उससे बर्दाश्त नहीं होगा।

विमान ने समझा और वह भी लजीली मुस्कान म बोला, 'कैसे राजी हुए?'

'वाह! मैं उनकी एकलौती बेटी हू न!'

विमान कुछ न बोला।

थोड़ी झिझक कर अपर्णा बोली, 'अब तुम्हें हाजिरा बाबू की नौकरी छोड़नी होगी। कारखाना सभालना होगा। हम दोनों मिल कर सब कुछ सभाल लेंगे न?'

विमान ने 'हा' मे सिर हिलाया। अब वह किसी काम को कठिन नहीं समझता।

हिंदुस्तान पार्क मे एक गुड़िया जैसे खूबसूरत मकान के सामने गाड़ी रुकी। नया-नया रग हुआ है। अभी भी काम चल रहा है।

'यह अपना ही मकान है। पहले किराये पर था।'—

'किरायेदार कहां गये?'

उनसे खाली कराया गया। पुराने किरायेदार थे। किराया बहुत कम था फिर भी बेचारे दे नहीं पाते थे।

'खाली कैसे कराया? मुकदमा करके?'

'नहीं। मुकदमेबाजी म तो वर्षों लग जाता। मोटी रकम देनी पड़ी।'—क्षण भर चुप रह कर अपर्णा विचित्र मुस्कान म बोली, 'घूम! रिश्वत!'

अपर्णा कह तो गयी पर उसका सिर झुक गया।

लेकिन इसकी कोई जरूरत नहीं थी। कविता और दर्शनकी पुस्तकें खरीदने की खातिर वह भी तो कार्पोरेशन के मेहतरों से रिश्वत ही लिया करता था। सिर पीछे दस पैसा।

धोती-पजामी पहने अपर्णा के पिता मिस्त्रियों से काम करा रहे थे। दोनों को गाड़ी से उतरते देख कर वह आगे बढ़े। वह बड़े गभीर दीख रहे थे।

विमान नि सकोच आगे बढ़ा। उसने झुक कर उनकी पद-धूलि ली।

वह बाहर से गभीर थे अदर से नहीं। कुछेक क्षण अपनी पारखी आंखों से विमान को परख कर बोले, 'आओ बेटे! यह तुम्हारा ही मकान है। सिर्फ यही क्यों मेरा सब कुछ तुम्हारा ही तो है।'

यह सुन कर विमान थोड़ा सिकुड़ गया। क्यों सिकुड़ा, वह खुद भी नहीं जानता। हां, एक धुधली-सी बात उसके दिमाग म तैर गयी, अब वह किसी महापुरुष को जन्म न दे सकेगा।

एक रविवार की सुबह रिनि और पिकलू को साथ लिए संजय गाड़ी लेकर आया। आते ही वह ललित की मां से बोला, 'फटाफट तैयार हो जाइये। चलिये। आपको दक्षिणेश्वर तारकेश्वर, बेलूड़ और जहां-जहां आप जाना चाहें, घुमा लाऊं।'

मां तैयार होने की खातिर चौके में गयी। रिनि भी साथ गयी। संजय ललित से आंखें चुरा रहा था। शायद शर्मा रहा था। ललित की गोद में बैठा पिकलू ललित के गाल थपथपा रहा था।

सिगरेट के कश लेता हुआ संजय खिड़की से बाहर देखता रहा। ललित मन ही मन हंसा। इच्छा हुई कि उसकी पीठ पर धौल जमा कर कहे, 'ईडियट, इतनी अच्छी बीवी के रहते कुत्तियों के पीछे दौड़ता है।'

लेकिन ललित ने धौल नहीं जमायी। उसकी आंखों के सामने एक पुरानी तस्वीर उभर आयी। उन दिनों संजय मैकगुये एंड कंपनी में अफसर था। अक्सर वह सर्कुलर रोड के एक फ्लैट में जाया करता था। एक दिन वह ललित को भी ले गया था। सजा-धजा फ्लैट। दीवारों पर महापुरुषों की तस्वीरें। शीशे की आलमारी में रवीन्द्रनाथ की कृतियां। लड़की भी बदसूरत नहीं थी। इकहरा बदन। खड़ी नाक। बड़ी-बड़ी आंखें। अच्छा व्यवहार। उसने गिटार पर रवींद्र संगीत सुनाया था। पहले तो ललित की समझ में कुछ नहीं आया। बाद में पता चला कि वह वेश्या है। हां, उस दिन ललित डगमगा गया था। शायद इसलिए आज वह संजय से कुछ न कह सका। कल की कमजोरी को रौंदे बिना इंसान क्या सिर उठा कर नहीं चल सकता। आश्चर्य है, इंसान के आज पर कल हमेशा हावी रहता है।

सब चले गये। ललित परीक्षा की कापियां जांचने बैठा। पूजा के बाद से वह स्कूल जाता है। पहले विद्यार्थियों को पढ़ाता-लिखाता नहीं था, अब मन लगा कर पढ़ाता है। इस बार स्कूल मैगजिन की जिम्मेवारी भी उसने स्वेच्छा से स्वीकार की है। अगले सत्र से स्कूल में वह डिबेटिंग क्लब चलायेगा।

ललित ने होंठों में सिगरेट दबायी। माचिस में एक भी तीली नहीं थी। कमीज पहन कर वह माचिस लेने निकला। गली पार कर रास्ते पर कदम रखा ही था कि सिर से पैर तक एक अजीब-सी कपकपी दौड़ गयी। शाश्वती आ रही है।

'इस भरी दोपहर में कहां जा रहे थे।'

'माचिस लाने।'

'सिगरेट बहुत बढ़ गयी है। अच्छी बात नहीं।'—शाश्वती आगे बढ़ी।

'मां नहीं है।'

'कहां गयी हैं?'

'दक्षिणेश्वर। और न जाने कहां-कहां जायेगी। मेरा एक दोस्त गाड़ी लेकर आया था।'

इस पर भी शाश्वती के कदम नहीं रुके। अब ललित क्या करे?

दोनों कमरे में दाखिल हुए। ललित मुस्कराने की कोशिश कर बोला, 'बैठिये।'

रूमाल से कपाल का पसीना पोंछ कर शाश्वती बोली, 'क्या कर रहे थे? इतनी कापियां!'

बोलते-बोलते उसने झुक कर कौतूहल से कापियां देखीं, 'इस! इतनों को फेल कर दिया! आप में जरा भी दया माया नहीं। बड़े निष्ठुर हैं आप।'

ललित कांपते दिल से चुपचाप बैठा रहा। स्त्रियां कितनी निःसंकोच हो सकती हैं। उस दिन मितु आयी थी। वह भी बगैर किसी संकोच के कितनी सारी बातें कर गयी! इतनी सारी घटनाओं के बाद वह तो मर कर भी मितु से बात नहीं कर सकता था।

मां के बिस्तर पर बैठ कर शाश्वती मोहिनी मुस्कान में मुस्करायी। अनायास ही ललित की आंखों में झांक कर बोली, 'बहुत पैदल चली हूं। चाय पीने की इच्छा है।'

ललित उठ खड़ा हुआ।

'यह क्या! कहां चले?'

'चाय लाने।'

'क्षमा करें। चाय बनाने मुझे आता है। चौके में कहां क्या है, मैं जानती हूं।'

ललित बैठ गया। बेचारा ललित!

शायद शाश्वती ललित की मन स्थिति भांप गयी। सिर झुका कर उलाहने में बोली, 'आप मुझ से डरते हैं क्या?'

ललित को बड़ी लाज लगी। कुछ बोलना चाहा, पर शाश्वती बीच में ही बोल उठी, 'तब मैं जाती हूं।'

'नहीं, नहीं, मुझे छोड़ कर न जाओ शाश्वती।'—ललित के मन की बात जुबान पर न आ सकी। गुमसुम बैठा रहा बेचारा।

सहसा शाश्वती बोल उठी, 'मुझ से इतना मत डरा।'

स्तब्ध हो गया ललित। मन में आंधी लिए चुप बैठा रहा बेचारा।

और इधर शीत की दोपहरी आहिस्ते-आहिस्ते निकली गयी।

एक दिन अपर्णा आयी। उसके साथ एक गोरा चिट्टा, तंदुरुस्त आदमी था। अपर्णा शर्मीली मुस्कान में मुस्करायी। साथ का आदमी भी मुस्कराया। और फिर बोला, 'फाल्गुन, शुक्ल पक्ष द्वितीया को हमारी शादी है। तुम जरूर आओगे।'

ललित बड़ा अवाक् हुआ। गुस्सा भी आया। यह क्या, जान न पहचान और तुम-तुम किये जा रहा है।

लेकिन कुछेक क्षण में ही अपनी गल्ती महसूस हुई। अरे! यह तो अपना विमान है। लेकिन इस विमान को देख कर कौन विश्वास करेगा कि यह वही विमान है?

विमान को देख कर अस्पताल और डाक्टरों के प्रति ललित की भक्ति बढ़ गयी। आधुनिक विज्ञान के प्रति उसका मन कृतज्ञता से भर उठा। उसने मन से स्वीकार किया कि मनुष्य के लिए कुछ भी असाध्य नहीं है। मनुष्य सब कुछ कर सकता है। चाहे तो मुर्दा को जिंदा बना सकता है। हे भगवान! मनुष्य को और थोड़ी शक्ति दो कि मेरे मरने से पहले ही वह कैन्सर की दवा खोज निकाले।

और एक दिन आया आदित्य। कमरे में कदम रखते ही कहकहों में फूट पड़ा। उसके बाद बोला, 'लोलिग, पचीस माघ को मेरी शादी है यार। पिता जी ने लड़की देखी है। यूँ तो मुझे देखने कह रहे थे, लेकिन मैं ने जरूरत नहीं समझी। मैं ने तो बहुत कुछ करने की कोशिश की, पर किया कुछ नहीं। इसलिए मैं ने सोच लिया है कि अब जो कुछ करना है, पिता जी की इच्छा के अनुसार करना है। पिता जी ने लड़की पसंद की और मैं बिना देखे-सुने राजी हो गया। वह हँस कर बोला, 'चल यार गणेश की दुकान पर बैठते हैं।'

दोनों गणेश की दुकान में उसी बेंच पर बैठे, जिस पर एक दिन उन दोनों के बीच शाश्वती बैठी थी। शायद दोनों के मन में उस दिन की तस्वीर उभर आयी। शायद उस दिन की कोई तस्वीर ही न उभरी। नहीं, ललित को उस दिन की याद आयी। वह स्वयं को अपराधी समझ कर मन-ही मन बेचैन हो उठा।

आदित्य शुरू हुआ। सवाल ही नहीं है कि अब ललित कुछ बोले। वह तो अच्छी तरह जानता है न कि आदित्य जब चालू होता है, तब बंद नहीं होता। उसने अपने प्रवास के बारे में कहना शुरू किया, 'तीन महीने परकिरति-परकिरति के बीच रह गया लालिग। बड़ा मन लगाता था यार। कभी-कभी इच्छा होती थी कि रमेन की तरह ही उसे खोजने निकल जाऊं जिसकी तलाश में सब कुछ छोड़ कर रमेन निकल गया। लेकिन रात होते ही जी बड़ा घबराने लगता था। कभी-कभी सोचता, घर से पैसा नहीं लेना है। लेकिन न जाने क्यों जेब खाली होते ही दिमाग चकराने लगता था। अच्छा यार, अब मुझे इजाजत दो। बहुत काम है।'

दोनों उठ खड़े हुए। जाते-जाते वह पलट कर बोला, 'पचीस माघ! याद रहेगा न?'

'याद रहेगा!'—ललित मुस्कराया।

लम्बे अरसे बाद बड़ा दिन की छुट्टी में मृदुला अपने मायके आयी है। तुलसी भी साथ आया है। बहुत खुश है मृदुला। उस पर और उसके मायके पर हावी दुष्ट ग्रह हमेशा-हमेशा के लिए खत्म हो गया। एक की मौत किसी के लिए कितनी सुखद होती है। दिल का बोझ कितना हल्का हो जाता है।

पलाशपुर जाने के एक दिन पहले तुलसी ललित से मिलने आया। उसे हंसते-मुस्कराते देख कर ललित को बड़ा आश्चर्य हुआ। तुलसी को शायद ही किसी ने हंसते-मुस्कराते देखा होगा।

आते ही बोला, 'बड़े मजे में हूं ललित। एक दुश्मन था, हमेशा-हमेशा के लिए खत्म हो गया। लोगों पर चाकू चलाता था, खुद किसी ने चाकू से मार डाला गया।'

तुलसी के मुंह से ही उसने सुना कि रमेन कुछ दिन पलाशपुर रह कर कहीं चला गया।

सुबल आजकल पहचान म नहीं आता। बड़ा खोया-खोया-सा रहता है। कभी गणेश की दुकान की सीढ़ी पर बैठा रहता है, तो कभी राय बाबू के बरामदे पर बैठा-बैठा बड़बड़ाता रहता है। कभी-कभार ललित को देख कर कहता है, 'सिगरेट देंगे ललितदा ? चाय पीने की इच्छा है ललितदा।'

ललित उसे चाय पिलाता है। सिगरेट देता है। पहले सुबल ललित से सिगरेट छिपा लेता था, अब नहीं छिपाता। ललित इस पर ध्यान नहीं देता। सुबल को देख कर उसे बड़ा दुःख होता है। क्या हो गया सुबल को ?

शाश्वती मिलती है। हर रोज मिलती है शाश्वती। शाम में दोनों साथ-साथ घूमते हैं। कहीं बैठते हैं। चुपचाप। समय खिसकता जाता है। यूं तो समय के खिसकने की आवाज सुनायी नहीं पड़ती, पर न जाने क्यों कर दोनों एक खास किस्म की आवाज सुना करते हैं। और यह आवाज उनकी निस्तब्धता को भयावह बना डालती है।

कभी-कभार शाश्वती रमेन के विषय में पूछती है, 'वह कहां गये ? आयेंगे न?'

'क्या पता !'—होंठ बिचका कर ललित उत्तर देता है। अब उसे मरने की इच्छा नहीं होती। संसार के लिए वह कुछ करना चाहता है। जल्दी-से-जल्दी कुछ करना चाहता है।

वह मर जायेगा क्या ? कभी-कभी इस प्रश्न का उत्तर वह शाश्वती के चेहरे में तलाशता है। शाश्वती मुस्कराती है। मानों उसे पता चल गया है कि अब ललित नहीं मरेगा। जल्द ही उसकी बीमारी भाग खड़ी होगी।

कभी कभी ललित मां को देख कर सोचता है कि जब वह उसकी गोद में था, तब

समय वह देखने में कैसी थी ? वह चाहता है कि एक बार फिर शिशु होकर इसी माँ की गोद में पले।

रमेन। रमेन क्यों समय पर आयेगा ? रमेन की उपस्थिति में मरते वक्त उसे कोई कष्ट नहीं होगा। शांत स्वर में वह कहेगा, 'हम फिर मिलेंगे ललित।'—यह सुन कर मृत्युपथयात्री ललित का मुख-मंडल आनंद से चमक उठेगा।

रमेन आयेगा क्या ?—यह सोच कर मन-ही मन बड़ा बेचैन हो जाता है ललित। वह आकुल हृदय से रमेन के आने की प्रतीक्षा करता है और आयु बढ़ती जाती है। लेकिन उसे पता नहीं चलता। शायद पता चलता है। भगवान जाने।

कभी-कभी रात में ललित की नींद टूट जाती है। उसे ऐसा लगता है कि रमेन पास ही बैठा है। लेकिन दूसरे ही क्षण भ्रम टूट जाता है। वह करवट बदलता है। न जाने क्यों उसका मन बार-बार कहता है कि रमेन कहीं-न-कहीं जगा बैठा है। हाँ, वह कहीं-न-कहीं, किसी-न किसी के सिरहाने बैठा है।

पलाशपुर।

एक रात मृदुला की चीख से तुलसी की नींद टूट गयी, 'क्या हुआ मृदुला ?'

'मेरे पेट में कुछ चल रहा है।'

'पेट में !'—बड़ा अवाक हुआ तुलसी।

'बड़ा डर लगता है।'

तुलसी को भी डर लगा। मृदुला के पेट पर उसने हाथ रखा।

'देखो !—मृदुला चौंक पड़ी।

'शायद बच्चा चल रहा है !'—तुलसी फुसफुसाया।

हाँ, बच्चा ही चल रहा है। वह कह रहा है कि वह है। वह पृथ्वी पर आ रहा है !

दु खमय संसार में मनुष्य कितना पुराना हो गया ! लेकिन मनुष्य का जन्म आज भी कितना रोमांटिक है।

समाप्त

जन्म नवम्बर १९३५--ढाका
शिक्षा कलकत्ता विश्व विद्यालय से एम० ए०

पिता रेल में मेजारत। आज यहाँ, कल वहाँ में शैशव गुजरा। पूर्वी बंगाल (बांगला देश) बिहार, उत्तर प्रदेश और आसाम के जन-जीवन में रहा। सम्प्रति बंगला दैनिक 'आनन्द बाजार पत्रिका' में कार्यरत।

प्रथम कहानी 'जोल तोरंगा' और प्रथम उपन्यास 'घुनपोका' बंगला साप्ताहिक 'देश' में प्रकाशित। प्रथम किशोर उपन्यास 'मनोजदेर अद्भुत बाड़ि' आनन्द पुरस्कार से पुरस्कृत।

कृतियाँ नाउ पाखि, आश्चर्य भ्रोमण, दिन जाय, लाल नील मानुष, मिडल्टन गोल्थो, कागजेर बो